सन्तों की बानी

जिसमें

श्री हुज़ूर स्वामीजी महाराज, गुरु नानक साहिब, कबीर साहिब, पलटू साहिब, तुलसी साहिब, तुलसीदास जी, दादू साहिब, धर्मदास जी, रविदास जी, नामदेव जी, सहजो बाई, फ़रीद साहिब, पीपा जी, मीराँ बाई, बुल्लेशाह, सुलतान बाहू और सूरदास जी के शब्द-मार्ग और सहज योग के शब्द दिये गये हैं।

दास

चरनसिंह

राधास्वामी सत्संग ब्यास

ज़िला अमृतसर [पंजाब]

संतों की बानी



प्रकाशक :

एस. एल. सोंधी S.L.

सैक्रेट्री

राधास्वामी सत्संग ब्यास



प्रथम संस्करण ३,०००	मार्च, १९६९
द्वितीय संस्करण १०,०००	जनवरी, १९७१
तृतीय संस्करण ११,०००	फरवरी, १९७६
चतुर्थ संस्करण ११,०००	सितम्बर, १९७८
पंचम संस्करण ११,०००	सितम्बर, १९८०
षष्टम संस्करण ८,०००	मार्च, १९८२
सप्तम संस्करण १०,०००	मार्च, १९८३
अष्टम संस्करण ७०००	मार्च, १९८५
नवम संस्करण ३०००	सितम्बर. १९८५
दशम् संस्करण १०,०००	जुलाई, १९८६

मुद्रक :
कुलदीप सिंह गिल
हमदर्द प्रिंटिंग प्रैस,
नजदीक सीतला मन्दिर
जालन्धर शहर ।

भूमिका

सत्संगी भाइयों का बहुत समय से यह अनुरोध था कि कोई ऐसी पुस्तक हो जिसमें बहुत से सन्तों की वाणियाँ हों तथा जिसके अध्ययन से संत-मत के सिद्धान्तों को समझने में सुविधा हो।

इस अभाव को पूरा करने के लिए श्री हुज़ूर महाराज चरनसिंह जी की आज्ञानुसार यह पुस्तक छापी जा रही है। इस पुस्तक के पहले भाग "संत मार्ग" में श्री हुज़ूर महाराज जी ने संत मत के सिद्धान्तों पर अत्यन्त रूप से प्रकाश डाला है। इसके दूसरे भाग में हुज़ूर स्वामी जी महाराज, श्री गुरु ग्रंथ साहिब, कबीर साहिब, दादू दयाल आदि की वाणियाँ हैं। ये वाणियाँ प्रायः सत्संगों में ली जाती हैं और संत-मत के सिद्धान्तों पर पर्याप्त प्रकाश डालती हैं।

आशा है सत्संगी भाई इस पुस्तक के अध्ययन से लाभ उठायेंगे।

तारा चन्द अग्रवाल
चेयरमैन एक्जीक्युटिव कमेटी
राधास्वामी सत्संग ब्यास

अनुक्रमणिका

शब्द	पृष्ठ
शब्द बिना सारा जग अन्धा	२६
सतगुरु आय दिया जग हेला (वाणी राय साहिब सालिग राम)	२२९
सतगुरु कहें करो तुम सोई	२७
सतगुरु का नाम पुकारो	२८
सतगुरु खोजो री प्यारी	२९
सतगुरु सरन गहो मेरे प्यारे	२९
समझ कर चल जगत खोटा	२३०
सावन आया मास दूसरा	२३४
सुन रे मन अनहद बैन	२३०
सुरत क्यों हुई दिवानी	२३१
सुरत बुन्द सत सिंध तज	२३२
सुरत सुन बात री	३०
सोता मन कस जागे भाई	३०
हंसनी क्यों पीवे तू पानी	३१
हंसनी छानो दूध और पानी	२३३
गुरु ग्रन्थ साहिब के शब्द	३२-८१, २५२-२८१
अंतरि पिआस उठी प्रभ केरी	२५२
अलह अगम खुदाई बंदे	२५३
असुर सघारण रामु हमारा	२५५
आतम महि रामु राम महि आतमु	३२
आदि निरंजनु प्रभु निरंकारा	३३
आप वंञाए ता सभ किछु पाए	३४
आपे करता पुरखु बिधाता	३५
इसु जुग का धरमु पड़हु तुम भाई	३६
इसु गुफा महि अखुट भंडारा	३७
करमु होवै सतिगुरू मिलाए	३७
काइआ कंचनु सबदु वीचारा	२५६
काइआ कामणि अति सुआल्हिओ	३८
कामु क्रोधु परहरु पर निंदा	३९
किन बिधि मिलै गुसाई मेरे रामराइ	४०
किरति करम के वीछुड़े	४१
कुदरति करनैहार अपारा	४५
कोई आणि मिलावै मेरा प्रीतमु पिआरा	४६
गुन गोविंद गाइओ नही	४८
गुर की मूरति मन महि धिआनु	५२
गुर परसादो वेखु तू	५२
गुरमुखि कृपा करे भगति कीजै	२५७
गुर सतिगुर का जो सिख अखाए	२५८
गुर सेवा ते भगति कमाई	२५८
गुर सेवे सो ठाकुर जानै	२५९
गुरु गोपालु गुरु गोविंदा	५३
गुरु परमेसरु पूजीऐ	५४
गुरू गुरू गुरु करि मन मोर	५४
गुरु मेरी पूजा गुरु गोबिंदु	५५
चकवी नैन नींद नहि चाहै	२६७
चरन भए संत बोहिथा	२५९
घर महि घरु देखाइ देइ	५५
घरि रहु रे मन मुगध इआने	५५
घरै अंदरि सभु वथु है	५७
जग जीवनु साचा एको दाता	५७
जगि हउमै मैलु दुखु पाइआ	२६०
जह देखा तह दीन दइआला	५८
जा तू ता मै सभु को	२६०
जिउ जननी सुतु जणि पालती	२६१
जिनि तुम भेजे तिनहि बुलाए	६०
जिसु जल निधि कारणि तुम जगि आए	२६२
	२६२
जिस नो प्रेम मंनि वसाए	६०
जिसु मिलिए मनि होइ अनंदु	२६३
जे मनि चिति आस रखहि	६०
जे भुली जे चुकी साई	२६३
जे वडभाग होवहि वडभागी	६१
तेरीआ खाणी तेरीआ बाणी	६२
दरसन भेटत पाप सभि नासहि	२६४
दुनीआ न सालाहि जो मरि	२६६
दुबिधा बउरी मनु बउराइआ	२६७
नदरी भगता लैहु मिलाए	

सन्त-मार्ग

फरीदा सकर खंडु निवात गुड़ु माखिग्रो मांझा दुधु ।।
सभे वसतू मिठीग्रां, रब न पुजनि तुधु ।।

(बाबा फरीद)

(शक्कर, खांड, मिश्री, गुड़, शहद, भैंस का दूध, ये सब चीज़ें मीठी हैं, लेकिन हे परमात्मा! इनमें से कोई भी तुझ तक नहीं पहुँचती अर्थात् तेरी मिठास को नहीं पहुँचती।)

महात्मा चाहे किसी जाति, धर्म देश या समय में क्यों न ग्राए हों, सबका एक ही सन्देश ग्रौर एक ही ग्रनुभव है। वे दुनिया में जाति ग्रौर धर्म बनाने के लिए नहीं ग्राते, न ही हमें एक-दूसरे से लड़ना-भिड़ना सिखाने ग्राते हैं, बल्कि वे हमारे ग्रन्दर मालिक की भक्ति का शौक व प्यार पैदा करने ग्रौर इस देह के बन्धनों से मुक्त करके हमें मालिक से मिलाने के लिए ही ग्राते हैं। लेकिन हम दुनिया के जीव ऐसे मालिक के भक्तों के जाने के बाद बाहर-मुखी हो जाते हैं, कर्म-कांड में उलझ बैठते हैं ग्रौर उन महात्माग्रों के ग्रसली ग्रनुभवों ग्रौर उपदेशों को बिल्कुल भूल जाते हैं। उनकी ग्रसली शिक्षा ग्रौर रूहानियत को जातियों ग्रौर देशों के छोटे-छोटे दायरों में बन्द करने को कोशिश करते हैं ग्रौर एक-दूसरे से लड़ना-भिड़ना शुरू कर देते हैं। जिन महात्माग्रों की शिक्षा सारे संसार के लिए होती है, उनके उपदेश को जब हम छोटे-छोटे दायरों में बन्द करके कौमों-मज़हबों की शक्ल देने की कोशिश करते हैं तो इससे ज़्यादा उन महात्माग्रों के साथ हम ग्रौर क्या बेइंसाफी कर सकते हैं। ये सब कुछ हम ग्रपने पेट की खातिर या मान-प्रतिष्ठा के लिए करते हैं। यदि हम संकीरणता को त्याग कर किसी भी महात्मा के ग्रनुभव की खोज करने का यत्न करें तो पता चलेगा कि हर महात्मा का एक ही उपदेश है, एक ही शिक्षा है।

महात्मा समझाते हैं कि यह जो कुछ भी रचना है, दुनिया को जो हम चलती-फिरती देख रहे हैं, यह सब ग्रपने ग्राप ही पैदा नहीं हुई। इसकी रचना करने वाला कोई न कोई ज़रूर है। वह कौन है? वह एक परमात्मा है, जिसके हमने ग्रनेकों ही नाम ग्रपने प्रेम ग्रौर भक्ति में ग्राकर रखे हैं। यह जो कुछ भी नज़र ग्रा रहा है, इस सबकी रचना उस एक परमात्मा ने

की है। हमारी आत्मा उस परमात्मा का अंश है। हम उस सतनाम रूपी समुद्र की बूँदें हैं, उस एक ही सूरज की किरणें हैं। कबीर साहिब फ़रमाते हैं, "कहु कबीर इहु राम की अंस"। तुलसी साहिब फ़रमाते हैं—

"चौथे लोक बसत इक स्वामी। जीव अंस उस अन्तरयामी ।।"

गोस्वामी तुलसीदासजी भी राम-चरित मानस में लिखते हैं—

"ईश्वर अंस जीव अबिनासी। चेतन अमल सहज सुख रासी ।।"

यह आत्मा उस एक राम या परमात्मा का अंश हैं। गुरु नानक साहिब भी यही उपदेश देते हैं—

"आतम महि रामु राम महि आतमु, चीन्हसि गुर बीचारा ॥"

(आदि ग्रन्थ, ११५३)

आत्मा के अन्दर वह परमात्मा है और परमात्मा के अन्दर यह आत्मा है। मिसाल के तौर पर, एक बड़ का पेड़ कितना बड़ा होता है, लेकिन उसका बीज कितना छोटा-सा होता है। अगर कोई हमें समझाये कि इस छोटे से इस बड़ के बीज के अन्दर इतना बड़ा पेड़ है तो आसानी से हमारी समझ में आना बड़ा मुश्किल है। पर जब हम उस बीज को जमीन में बोते हैं तो वह छोटा-सा पौधा बनकर, पालन-पोषण पाकर, कितना बड़ा बड़ का पेड़ हो जाता है। फिर हमें पता लगता हैं कि उस छोटे से बीज में इतना बड़ा बड़ का पेड़ है और उस पेड़ के अन्दर बड़ का छोटा-सा बीज है। इसी तरह गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं कि जब सन्तों के उपदेश पर चलकर हम अपने अन्दर खोज करेंगे, तब हमें पता लग जायेगा कि परमात्मा के अन्दर आत्मा है और जिस परमात्मा की हमें खोज है वह हमारी आत्मा के अन्दर है।

कर्म सिद्धान्त

हम उस मालिक से बिछुड़ कर इस माया के जाल में उलझे हुए बैठे हैं। यहां आकर हमारी आत्मा ने मन का साथ ले लिया है। हमारा मन इंद्रियों के भोगों, विषयों-विकारों, शराबों-कबाबों दुनिया के धन्धों का आशिक है और मन जो कर्म करता है उसका नतीजा साथ-साथ आत्मा को भी भुगतना पड़ता है, क्योंकि आत्मा और मन की गाँठ बँधी हुई है। इस दुनिया को ऋषियों-मुनियों ने कर्म-भूमि कहा है। मुहम्मद साहिब ने इसे आखिरत (परलोक) की खेती फ़रमाया है। उनके वचन हैं—"अल दुनिया मज़रत उल आख़रत।" गोस्वामी तुलसीदास जी रामचरित मानस में कहते हैं—

"करम प्रधान विश्व रच राखा। जो जस कीन तास फल चाखा ॥"

गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं—

"ददै दोसु न देऊ किसै, दोसु करंमा आपणिआ ।।
जो मै कीआ सो मै पाइआ, दोसु न दीजै अवर जना ।।"

(आदि ग्रन्थ, ४३३)

गुरु अर्जुनदेवजी इसको 'करमा संदड़ा खेत' कहकर वर्णन करते हैं। इस दुनिया में आकर हम जो जो कर्म करते हैं, अच्छे हों या बुरे, सबका ही नतीजा हमेशा हमें भुगतना पड़ता है। इसी प्रकार हज़रत ईसा ने फ़रमाया है, "मनुष्य जो कुछ बोता है, वही काटेगा" (गलीतियों ६ : ७)।

खेत में अगर हम मिर्च बोते हैं तो मिर्च की ही फसल इकट्ठी करने के लिए जायेंगे। अगर कोई आम का पौधा लगाता है, वह आम के ही फल खाने का हकदार होता है। कर्म चाहे नेक हों या बुरे, उनका नतीजा या फल भुगतने के लिए शरीर के बन्धनों में आना पड़ता है। अगर नेक कर्म करते हैं तो सेठ-साहूकार बन कर आ जायेंगे, 'सी-क्लास' के कैदी होने के बजाय 'ए-क्लास' प्राप्त कर लेंगे, झोंपड़ी से बिस्तर उठाकर महल में जा बिछायेंगे, लोहे की ज़ंजीरें उतर जायेंगी और सोने के बन्धन चढ़ जायेंगे। ज़्यादा से ज़्यादा हम स्वर्ग या बैकुण्ठ तक चले जाते हैं। वे भी भोग योनियाँ हैं, उसके बाद फिर हमें चौरासी के जेलखाने में आना पड़ता है। और अगर बुरे कर्म करते हैं, फिर तो नरक और चौरासी हमेशा तैयार ही रहते हैं। स्वामीजी समझाते हैं—

"करम जो जो करेगा तू। वही फिर भोगना भरना ।।"

(सार बचन, १४३)

सहजोबाई कहती हैं—

"पशु पंछी, नर, सुर, असुर, जलचर, कीट पतंग ।
सब ही उतपति करम की, सहजो नाना रंग ।।"

क्या राजा, क्या प्रजा, क्या अमीर, क्या गरीब, क्या औरत, क्या आदमी, हम सब दुनिया के जीव कर्मों के इस जाल में फँसे बैठे हैं। और इन कर्मों के कारण जिस योनि में जाकर जन्म लेना पड़ता है उसमें बैठकर दुःख ही दुःख, मुसीबतें ही मुसीबतें सहनी पड़ती हैं। उस मालिक से बिछुड़कर किसी भी योनि में हम कभी सुख और शांति प्राप्त नहीं कर सकते। हर रोज़ इन्सान की खुराक के लिए हज़ारों तरह के जानवर ज़िबह किये जाते हैं। किस तरह उनके गलों पर छुरियाँ चल रही हैं। क्या हम ऐसे मुर्गी, भेड़ या बकरी के जामे में जाकर सुख प्राप्त कर सकते हैं? हम कभी यह विचार ही

नहीं करते कि अगर हमें अपने कर्मों के कारण उन जामों में जाना पड़ जाये और हमारी गर्दन पर छुरियां और कुल्हाड़ियाँ हों तो हम क्या महसूस करेंगे। कई बार, जिस समय डाक्टर टीका लगाने के लिए एक पतली-सी सूई गरम करता है तो कई लोगों का शरीर डर से कांपना शुरू कर देता है, हालांकि वह टीका हमारे फायदे के लिए ही होता है। ऊँट के जामे की हालत देखें, किस तरह उस पर बोझ लदा हुआ है और किस तरह आगे से खींचा जा रहा है। तांगे के घोड़े की हालत हम देखते हैं कि कितनी सवारियां उस पर सवार हैं और किस तरह उस पर चाबुक धड़ाधड़ पड़ रहे हैं। बैल के जामे के बारे में सोचें। उसे सारा दिन किसान हल में जोतते हैं। अगर वह थक कर गिर भी जाता है तो भी वे लोहे की आर मार-मार कर उसी तरह हल में चलाये जाते हैं। मतलब यही है कि किसी भी जामे को लेकर परख करें, हरएक में दुःख-ही-दुःख, मुसीबतें-ही-मुसीबतें दिखाई देती हैं।

निचले जामों की हालत तो अलग रही, मनुष्य के जामे के बारे में अच्छी तरह विचार करके देख लें, कितने दुःख और कितनी मुसीबतें हर रोज़ उठानी पड़ती हैं। हालाँकि इस जामे को 'टाप आफ दी क्रिएशन' (सृष्टि का सिरमौर) कहते हैं, ऋषि-मुनि इसे नर-नारायणी देह कह कर समझाते हैं. मुसलमान फ़कीर इसे अशरफ़-उल-मख़्लूकात कह कर याद करते हैं और देवी देवता भी इस जामे को लोचते हैं, लेकिन फिर भी इस जामे में बैठ कर कोई भी सुख और शांति प्राप्त नहीं कर सकता। कोई बीमारी के हाथों अति दुःखी हो जाता है, कोई बेरोज़गारी से तंग आ जाता है। किसी को सन्तान पैदा नहीं होती, वह दिन-रात तड़पता है, तो कइयों को बाल-बच्चों ने दुःखी कर रखा है। किसी को कर्ज़ा चुकाना है, वह चिन्ता और फिक्र में सारी रात सो नहीं सकता, किसी को कर्ज़ा वसूल करना है, वह सारा दिन कचहरी में परेशान हो रहा है। हम सरदी और गरमी में रोज़ सड़कों पर कंगालों की हालत देखते हैं कि किस तरह पेट की खातिर वे चिल्ला रहे हैं। इसी तरह अस्पतालों में जाकर बीमारों की चीखें सुनते हैं कि किस प्रकार वे बेचारे दुःखी हो रहे हैं। अगर जेलखानों में अपराधियों के वृत्तान्त सुनने का मौका मिले तो बड़ी दर्दनाक कहानियां सुननी पड़ती हैं। तात्पर्य यही है कि संसार में नज़र डाल कर देखें तो चारों ओर दुःख-ही-दुःख, मुसीबतें-ही-मुसीबतें नज़र आती हैं। कभी भी रेडियो चलाकर या अखबार पढ़ कर देख लें, दुनिया में किसी न किसी कौम, मज़हब या मुल्क के लड़ाई झगडे चलते ही रहते हैं, कितने गरीबों का खून हो रहा है, किस तरह औरतें विधवा

हो रही हैं और बच्चे अनाथ बन रहे हैं। जिस दुनिया में यह हालत है कि रोटी-कपड़े की खातिर दिन-रात भटकते और तड़पते-फिरते हैं और मौत का डर हमेशा बना रहता है कि पता नहीं किस समय और किसके हाथों आ जाये, उस नगरी के अन्दर हम सुख और शांति कैसे प्राप्त कर सकते हैं? यही हालत देख कर गुरु नानक साहिब पुकार उठे कि **हे नानक! सारा संसार ही दुःखी है**। रामचरित-मानस में तुलसीदास जी कहते हैं—

"सकल जीव जग दीन दुखारी।"

अगर मनुष्य के जामे में आकर भी हम इस संसार में सुख और शांति प्राप्त नहीं कर सकते तो फिर और किस जामे में प्राप्त कर सकेंगे। महात्मा उपदेश देते हैं कि इस दुनिया में कभी भी किसी को हमेशा के लिए सुख व शान्ति नहीं मिल सकती, क्योंकि यह दुनिया सुख और दुःख का घर है, पुण्य और पाप की नगरी है। हम अपने पुण्य और पाप के कारण यहाँ आकर सुख और दुःख भुगत रहे हैं। अच्छी तरह दुनिया में खोज करके देख लो, कोई शख्स ऐसा नहीं मिलेगा जिसे इस शरीर में बैठ कर सुख ही सुख मिलते हों, कभी भी दुःखों का सामना न करना पड़ा हो। या किसी को दुःख ही दुःख प्राप्त होते हों और कभी भी सुख की साँस न आई हो। अनुभव में आता है कि अगर दस दिन सुखों के मिल जाते हैं तो फिर दुःखों का सामना करना पड़ता है और अगर दस दिन दुःख के भुगत लेते हैं तो फिर थोड़ी-बहुत सुख की साँस आ जाती है। जितने भी दुःख हमें भुगतने पड़ते हैं, ये हमारे पिछले जन्मों में किये हुए पाप हैं, जिनका नतीजा या फल अब भोग रहे हैं। और जो भी सुख की साँस आ रही है, वे हमारे पिछले जन्मों के पुण्य के कारण हैं। पुण्य और पाप के जोड़ या योग के कारण ही हमें मनुष्य का जामा मिलता है, जिसमें बैठकर हम उन पुण्यों और पापों का हिसाब दे रहे हैं। अगर हमारे सिर्फ पुण्य होते तो हम स्वर्गों में पहुँच जाते और अगर सिर्फ पाप होते तो हम नरकों में सज़ा भुगतते होते। किसी के ज़्यादा पुण्य और थोड़े पाप हैं, तो वह ज़्यादा सुखी और कम दुःखी नज़र आता है। किसी का पापों का बोझ ज़्यादा हो जाता है और पुण्य का कम, तो वह ज़्यादा दुःखी है और कम सुखी है। यही कारण है कि इस दुनिया में अमीरी व गरीबी, बीमारी और तन्दरुस्ती और ऊँच-नीच दिखाई देती है, क्योंकि हरएक जीव के अपने-अपने कर्म हैं जिनका फल वह यहाँ आकर भोग रहा है।

यह दुनिया आज तक न कभी स्वर्ग की नगरी बनी है और न कभी बन सकती है। जब हम इतिहास पढ़ते हैं तो पता लगता है कि दुनिया में लड़ाई-

झगड़े, सुख-दुःख, अमीरी-गरीबी हमेशा से चली आ रही है। इस दुनिया में उच्च कोटि के महात्मा आये हैं और बड़े-बड़े समाज-सुधारक पैदा हुए हैं फिर भी इसकी हालत पहले से कोई बेहतर नहीं हुई है और न ही कभी हो सकती है। सन्त-महात्माओं का ध्येय या मिशन इस दुनिया को स्वर्ग या सुख की नगरी बनाने का नहीं है। बल्कि वे तो हमें ऐसा साधन और मार्ग बतलाते हैं जिस पर चलकर हम हमेशा के लिए इस देह के बन्धनों से मुक्त हो जायें और फिर इस दुनिया में ही न आयें। दुनिया के कांटे इकट्ठे करने में आज तक किसी ने सफलता प्राप्त नहीं की और न ही कोई कर सकता है। लेकिन अगर हम अपने पैरों में मज़बूत जूते पहन लें तो वे काँटे अपना असर नहीं कर सकते। दुनिया की समस्याएं न आज तक किसी ने हल की हैं, न कोई हमेशा के लिए हल कर सकता है। लेकिन महात्माओं के उपदेश पर चल कर हम अपना ख़्याल इतना ऊँचा ले जा सकते हैं कि दुनिया के दुःख-सुख की समस्याएँ हम पर असर ही नहीं कर सकतीं। ईसा मसीह ने बाइबिल में ज़िक्र किया है—

"मैं तो आया हूं कि बेटे को उसके पिता से, और बेटी को उसकी मां से और बहू को उसकी सास से अलग कर दूँ।"

(मेथ्यू १०:३४, ३५)

अर्थात् मैं इस दुनिया को सुख और शांति की नगरी बनाने नहीं आया बल्कि जीवों को यहाँ से आज़ाद करने आया हूँ; माँ-बाप, बेटे-बेटियों वगैरह के आपस के मोह के बन्धनों को काटने आया हूँ, एक-दूसरे के लगाव, मोह और प्यार की ज़ंजीरों को तोड़ कर उनको मुक्त करने आया हूँ।

निस्सन्देह संसार में परोपकारियों और समाज-सुधारकों की कोई कमी नहीं है। यहाँ अनेकों दयालु और नेक पुरुष हुए हैं। परन्तु सन्तों-महात्माओं का जो परोपकार है उसको और कोई परोपकार नहीं पहुँच सकता। यह इस छोटे से उदाहरण के द्वारा समझा जा सकता है। एक जेलखाने में बहुत से कैदी हैं। एक परोपकारी देखता है कि गरमी का मौसम है और उन कैदियों को ठण्डा पानी पीने को नहीं मिलता। वह उन पर तरस खाकर बरफ डालकर शरबत वगैरह पिलाना शुरू कर देता है। दूसरा परोपकारी सोचता है कि कैदियों को अच्छा खाना नहीं मिलता। वह दया करके अच्छे-अच्छे स्वादिष्ट भोजन, मिठाइयाँ आदि बनवा कर उनको खिलाना शुरू कर देता है जिससे कैदी और खुश हो जाते हैं। तीसरा परोपकारी देखता है कि तेज सरदी का मौसम है उन कैदियों के पास सरदी से बचने के लिए गरम कपड़े नहीं है।

उसने काफी रुपए खर्च करके उनको सरदी से बचाने के लिए गरम कपड़े बनवा दिये। इस परोपकारी ने शायद पहले परोपकारियों से ज़्यादा अच्छा परोपकार किया। सभी परोपकारी कैदियों पर तरस खाकर परोपकार कर रहे हैं, जिससे कैदियों की हालत पहले से ज्यादा अच्छी हो रही है। वे 'सी' श्रेणी से 'ए' श्रेणी के कैदी तो बन गये और उनको जेलखाने में ज़्यादा सुख व आराम भी प्राप्त हो गया। लेकिन, इन सब परोपकारियों के होते हुए भी कैदी तो जेलखाने के जेलखाने में ही रहे। चौथे परोपकारी ने, जिसके पास जेलखाने की चाबी थी, कैदियों पर तरस खाकर जेलखाने का दरवाज़ा ही खोल दिया और उन्हें हमेशा के लिए मुक्त कर दिया। अगर इनमें सबसे ऊंचा परोपकार है तो उस जेलखाने की चाबी वाले का है।

सन्त-महात्मा इस चौरासी के जेलखाने की चाबी लेकर संसार में आते हैं और हमारे अन्दर मालिक से मिलने का शौक व प्यार पैदा करके, हमें रास्ता व युक्ति बतलाकर, धुर-धाम पहुँचा कर हमेशा के लिए इस जेलखाने से आज़ाद कर देते हैं। इसलिए सन्तों और महात्माओं का परोपकार किसी भी समाज-सुधारक या राजनैतिक नेता के परोपकार से ऊँचा और सच्चा है।

महात्मा हमें उपदेश देते हैं कि जब तक हमारी आत्मा वापस जाकर उस परमात्मा से मिलाप नहीं करेगी, तब तक हम शरीर के बन्धनों और संसार के दु:खों से छुटकारा नहीं पा सकेंगे। कबीर साहिब फ़रमाते हैं—

"चल हंसा सतलोक को चलिए, छोड़ो यह संसारा हो।"

स्वामीजी का फ़रमान है—

"धाम अपने चलो भाई। पराये देश क्यों रहना॥"

(सार बचन, १५२)

आत्मा और परमात्मा

हमारी आत्मा स्त्री है और परमात्मा इसका पति है। यह आत्मा रूपी स्त्री परमात्मा रूपी पति के चरणों में जाकर ही खुशी प्राप्त कर सकती है और सुहागिन हो सकती है। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं—

"पिर सचे ते सदा सुहागणि॥" (आदि ग्रन्थ, ७५४)

फिर फ़रमाते हैं—

"जिन्ही घरु जाता आपणा, से सुखीए भाई॥" (आदि ग्रन्थ, ४२५)

जो वापस अपने असली घर पहुंच जाते हैं, वे सदा के लिए सुख और

शान्ति प्राप्त कर लेते हैं। मौलाना रूम भी फ़रमाते हैं—

"ईं जहान ज़न्दाँ व माज़न्दानियाँ,
हज़रा कुन ज़न्दाँ व खुद रा दार हाँ"

अर्थात् यह जहान कैदखाना है, जिसमें हम कैद हैं। कैदखाने की छत में सुराख करके यहाँ से निकल भागो।

बहुत से महात्माओं ने आत्मा और परमात्मा के रिश्ते को स्त्री और पति का रिश्ता कह कर समझाया है, क्योंकि स्त्री हमेशा पति के चरणों में जाकर सुख व शान्ति प्राप्त कर सकती है। अगर एक स्त्री अपने पति के चरणों से दूर हो जाती है तो उसे जो चाहे दुनिया की इज्ज़त हम दे दें, कितना ही रुपया पैसा दे दें, उसके मन को कभी सुख-शान्ति नहीं आ सकती। वह अपने प्रीतम या पति के प्यार में ही सुख और शान्ति प्राप्त कर सकती है, जैसा कि कहा गया है—

"हरि नाह न मिलिऐ साजनै कत पाईऐ बिसराम ॥
स्रब सीगार तंबोल रस सणु देही सभ खाम ॥" (आदि ग्रन्थ, १३३)

रामकृष्ण परमहंस परमात्मा और आत्मा के रिश्ते को माँ और बेटे के रिश्ते से याद करते हैं। जब तक बच्चा अपने आपको माँ की निगरानी पर छोड़ देता है, उसे कोई भी चिन्ता नहीं रहती और हर प्रकार से खुश रहता है। ईसा मसीह ने इस रिश्ते को बाप और बेटे के रिश्ते से याद किया है, क्योंकि जब तक लड़के के सिर पर बाप की छत्र-छाया है, उसे कोई गम या फिक्र नहीं हो सकता। मतलब यही है कि आत्मा, परमात्मा को पाकर ही सुख और शान्ति प्राप्त कर सकती है।

संसार की अवस्था

सहजोबाई जो कि एक बहुत प्रसिद्ध महात्मा हुई हैं, कहती हैं—

"धनवंते दुखिये सभी, निरधन दुख का रूप।
साध सुखी सहजो कहे, पाया भेद अनूप ॥"

इसी प्रकार कबीर साहिब फ़रमाते हैं कि राजा और प्रजा सब दुःखी ही दुःखी नज़र आते हैं—

"तन धर सुखिया कोई न दीखा, जो दीखा सो दुखिया हो।
जोगी दुखिया जंगम दुखिया, तपसी को दुःख दूना हो।
आसा त्रिसना सबको बियापै, कोई महल न सूना हो।
घाटे बाढ़े सब जग दुखिया, क्या गिरही बैरागी हो।
सुखदेव अचारज दुख के डर से, गरभ से माया त्यागी हो।

साँच कहौं तो कोई न मानै, झूठ कहा नहिं जाई हो।
ब्रह्मा बिसनु महेसुर दुखिया, जिन यह राह चलाई हो।
अवधू दुखिया भूपत दुखिया, रंक दुखी बिपरीती हो।
कहे कबीर सकल जग दुखिया, संत सुखी मन जीती हो।"

तुलसी साहिब भी अपनी वाणी में संसार के दुःखों के बारे में इस प्रकार कहते हैं—

"कोई तो तन मन दुखी, कोई नित उदास।
एक एक दुख सबन को, सुखी संत का दास॥"

गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं—

"नानक दुखिआ सभ संसारि॥
सो सुखिआ जिस नाम आधार॥"

अर्थात्, सब दुनिया के जीव अपनी अपनी जगह दुःख व मुसीबत से भरे हुए बैठे हैं, असली सुख और शान्ति उसी को है जिसने मालिक की भक्ति और प्यार का आसरा लिया हुआ है। हम दुनिया के जीव उस परमात्मा को तो भूले बैठे हैं, उसकी खोज नहीं करते, उसकी भक्ति की ओर हमारा ख़याल ही नहीं है और दुनिया की शक्लों और पदार्थों में सुख व शान्ति ढूंढने की कोशिश करते हैं। जितने हम उस परमात्मा को भूल कर सुख और शान्ति ढूंढ रहे हैं, उतने ही दिन-रात ज़्यादा दुःखी होते चले जा रहें हैं, क्योंकि जिन शक्लों और पदार्थों में सुख ढूंढ रहे हैं, वे सब चीज़ें अस्थायी और नाशवान् हैं। फिर उनका सुख किस प्रकार स्थायी हो सकता है! जब तक हमें वह वस्तु न मिले जो कभी भी नष्ट और फ़नाह न हो, उसे हम अपना न बना लें, हम कैसे सुख व शान्ति पा सकते हैं, क्योंकि जिस चीज़ के आने में ख़ुशी होती है उसके जाने में वैसा ही दुःख होता है। शादी के समय हमारे मन में कितनी ख़ुशी होती है, लेकिन अगर उसी साथी से झगड़ा या मतभेद हो जाता है तो हम कितने दुःखी हो जाते हैं। जिस सन्तान के जन्म पर हम दावतें करते हैं, ख़ुशियाँ मनाते हैं, अगर वही सन्तान अयोग्य निकल जाये, कहने में न चले, बीमार हो जाये या परमात्मा उसे वापस बुला ले तो ज़रा सोचें कि वह हमारे लिये कितने दुःख का कारण बन जाती है। हम दुनिया की धन-दौलत में सुख ढूंढने की कोशिश करते हैं। इसे कमाने के लिए कितने दुःख, कितनी मुसीबतें सहनी पड़ती हैं, अपने कीमती उसूलों को भी कुरबान करते हैं, स्वास्थ्य का भी सत्यानाश कर लेते हैं और कई प्रकार की मानसिक

बीमारियां सिर पर मोल ले लेते हैं। उसे कमाने में हर तरह की परेशानी उठाते हैं। लेकिन इतने पर भी, उस दौलत को रखने में कौन-सी शान्ति प्राप्त होती है। अगर बैंकों में रखते हैं तो उनके फेल हो जाने का खतरा है, कभी आय-कर और बिक्री-कर का डर और चिन्ता लगी रहती है। कभी यारों-दोस्तों के मुकर जाने की फ़िक्र है कि शायद वे रुपया लेकर वापस न करें। और जिस वक्त वही दौलत जाती है, अच्छी तरह दुःखों और मुसीबतों में फँसा कर ही जाती है। कभी डाक्टर की फीसों में होकर निकल जाती है, कभी मुकदमों में उलझा कर चली जाती है। कितने दुःखों और मुसीबतों से कमाई, लेकिन फिर भी सुख न दिया। उसके जाने पर जो शरीर पर मुसीबतें भुगतनी पड़ती हैं, वे अलग ही हैं। गुरु साहिब का कथन है—

"पापा बाझहु होवै नाही मुइआ साथि न जाई ॥"[१] (आदि ग्रन्थ, ४१७)

फिर यह सोचकर कि शायद दुनिया के एशो-इशरत या भोग-विलासों में सुख हो, शराबों-कबाबों के स्वादों में उलझ जाते हैं। लेकिन ये भी हमारे मन को तबाह कर देते हैं, गिरा देते हैं और हमें बीमारियों में फँसा देते हैं। कभी हम हुकूमत के नशे में सुख ढूंढते हैं या हमें राजनैतिक नेता बनने का शौक हो जाता है। जिस समय लोग हमें आदर और मान-बड़ाई देते हैं, हमारे जुलूस निकालते हैं, अखबारों में तारीफ़ करते हैं, हमारा मन फूला नहीं समाता। लेकिन हम नेताओं के हाल भी रोज़ पढ़ते हैं। रातों रात तख्ते पलट जाते हैं, दूसरी पार्टी का ज़ोर पड़ जाता है, तो वे कभी गोली का शिकार बना देते हैं, कभी फाँसी के तख्तों पर चढ़ा देते हैं, कभी जेलखाने में डाल देते हैं, कभी अखबारों में मिट्टी पलीत करनी शुरू कर देते हैं। जिस हुकूमत के नशे और दुनिया की मान-बड़ाई में सुख ढूंढने की कोशिश की, वही हमारे लिए दुःख का कारण बन बैठती है। कबीर साहिब का कथन है—

"सुखु मांगत दुखु आगै आवै ॥" (आदि ग्रन्थ, ३३०)

सारांश यह कि इस दुनिया में हम कभी भी सुख व शान्ति प्राप्त नहीं कर सकते। ये जो भी थोड़े-बहुत सुख नज़र आ रहे हैं, समय पाकर दुःखों में बदल जाते हैं। महात्मा हमें अपने अनुभव से समझाते हैं कि जब तक हमारी आत्मा परमात्मा से मिलाप नहीं करती, हम सुख व शान्ति प्राप्त नहीं कर सकते। संसार की धन-दौलत और शक्लों में से भी हम तब तक ही

१. पाप किये बगैर इकट्ठी नहीं होती और मरने पर साथ नहीं जाती।

सुख-शान्ति प्राप्त कर सकते हैं, जब तक हमारा ख़याल मालिक की भक्ति की ओर है। उदाहरण के तौर पर, एक बच्चा अपने पिता की अंगुली पकड़ कर प्रदर्शनी में तमाशा देखने जाता है। उसे प्रदर्शनी में हर वस्तु बड़ी ही सुन्दर और अच्छी मालूम देती है। कहीं बिजलियां जल रही हैं, कहीं तरह-तरह के खेल हो रहे हैं, कहीं खिलौनों और मिठाइयों की दुकानें सजी हुई हैं। बच्चा समझता है यह खुशी प्रदर्शनी के साज-सामान से मिल रही है। लेकिन अगर गलती से बच्चे से अपने पिता की अंगुली छूट जाती है तो वह चीखें मारना शुरू कर देता है और रोने-चिल्लाने लगता है, हालांकि प्रदर्शनी के वे ही सब साज-सामान वहीं के वहीं हैं। फिर बच्चा महसूस करता है कि वह प्रदर्शनी में खुशी उतनी देर तक ही पा सकता था जितनी देर तक उसने अपने पिता की अंगुली पकड़ी हुई थी। इसी तरह दुनिया में भी हम सुख और शान्ति उसी समय तक पा सकते हैं, जब तक हमारा ख़याल और लिव उस मालिक की ओर रहती है। इसलिये महात्मा हम सबके अन्दर मालिक से मिलने का प्रेम-प्यार पैदा करते हैं। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं—

"हरि की पूजा दुलंभ है संतहु, कहणा कछू न जाई ॥"

(आदि ग्रन्थ, ९१०)

हम सब दुनिया के जीव किसी न किसी के मोह-प्यार में फँसे हुए हैं, किसी न किसी की भक्ति और पूजा ज़रूर कर रहे हैं। कोई बेटे-बेटियों से प्यार करता है, कोई कौमों, मज़हबों और मुल्कों की भक्ति कर रहा है, कोई धन-दौलत की पूजा करता है। ये शक्लें और ये पदार्थ हमारी भक्ति और प्रीति के योग्य नहीं, क्योंकि इनकी प्रीति और भक्ति हमें बार-बार देह के बन्धनों में खींच कर ले आती है। मालिक की भक्ति और प्यार ही हमें वापस ले जाकर उस परमात्मा से मिलाता है। इसलिए, महात्मा समझाते हैं कि उस मालिक की भक्ति की महिमा कभी बयान ही नहीं की जा सकती। उसकी भक्ति और प्यार के द्वारा वापस जाकर हम मालिक ही बन जाते हैं। भीखाजी फ़रमाते हैं—

"भीखा भूखा को नहीं, सबकी गठरी लाल।
गिरह खोल नहीं जानते, तिस बिध भए कंगाल ॥"

परमात्मा एक है

सब महात्माओं का यही अनुभव है कि जिस परमात्मा से हम मिलना

चाहते हैं, वह एक है। यह नहीं कि हिन्दुओं का कोई और या सिक्खों व ईसाईयों का कोई और है। गुरु नानक साहिब समझाते हैं—

'एकु पिता एकस के हम बारिक ॥" (आदि ग्रन्थ, ६११)

और

"सभना जीआ का इकु दाता ॥" (आदि ग्रन्थ, २)

शेख सॉदी कहते हैं—

'बनी आदम अज़ाये यक दीगर अंद,
चो दर आफ़रीनश ज़ि यक जौहर अंद।"

'अर्थात् सब मनुष्य एक ही स्रोत से निकले हैं और एक-दूसरे के भाई हैं। जितने भी दुनिया के जीव हम देख रहे हैं उन सबको पैदा करने वाला एक ही परमात्मा है। मुसलमान फ़कीर उस परमात्मा को रब्बुल आलमीन कह कर याद करते हैं, कि सारे संसार का एक ही परमात्मा है। और हमेशा से वही परमात्मा चला आ रहा है। यह नहीं कि पहले कोई और परमात्मा था या अब कोई और है। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं--

"जगजीवनु साचा एको दाता ॥" (आदि ग्रन्थ, १०४५)

सारे जग को जीवन देने वाला एक ही दाता है और वह हमेशा से सच्चा हैं, अर्थात् वह जन्म-मरण से रहित है। जपुजी साहब के शुरू में ही गुरु नानक साहिब बड़ी अच्छी तरह से वर्णन करते हैं—

"एक ओ सतिनामु करता पुरखु ॥" (आदि ग्रन्थ, १)

"आदि सचु, जुगादि सचु, है भी सचु, नानक होसी भी सचु ॥"
(आदि ग्रन्थ, १)

कि अनुभव के द्वारा मुझे अपने अन्तर में एक ऐसी सत्ता या शक्ति मिली हैं जो सृष्टि के आदि से, युगों के आदि से सच ही चली आ रही है अर्थात् जो कभी नष्ट या फ़नाह नहीं होती। वह एक परमात्मा है। उस मालिक के अलावा जो कुछ भी हम आँखों से देख रहे हैं, सबको नष्ट या फ़नाह हो जाना है। कोई भी चीज़ यहाँ स्थिर नहीं है। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं—

'हरि बिनु सभु किछु मैला संतहु।" (आदि ग्रन्थ, ९१०)

"थिरु नाराइणु थिरु गुरू थिरु साचा बीचारु॥" (आदि ग्रन्थ, ९३४)

इसी तरह और जगह लिखते हैं—

"कूड़ु राजा कूड़ु परजा कूड़ु सभु संसारु ॥
कूड़ु मंडप कूड़ु माड़ी कूड़ु बैसणहारु ॥

कूड़ु सुइना कूड़ु, रुपा कूड़ु पैन्हणहारु ।।
कूड़ु काइम्रा कूड़ु कपड़ु कूड़ु रूपु अपारु ।।
कूड़ु मीम्रा कूड़ु बीवी खपि होए खारु ।।
कूड़ि कूड़ै नेहु लगा विसरिम्रा करतारु ।।
किसु नालि कीचै दोसती सभु जगु चलणहारु ।।"

(आदि ग्रन्थ, ४६८)

कि हमारा यह शरीर भी कूड़ और नाशवान है। और इसके अन्दर बैठ कर जिस दुनिया को हम अपना बनाने की कोशिश करते हैं, जिसके साथ प्यार किए बैठे हैं, यह भी कूड़ है। दुनिया में कोई भी चीज़ हमारी दोस्ती के योग्य नहीं, सिवाय उस परमात्मा के, क्योंकि उसके सिवाय हर एक चीज़ नाशवान है। सिर्फ एक मालिक ही है जो हमेशा रहता है।

जाति और धर्म

उस मालिक की कोई कौम नहीं है, उसका कोई मज़हब या मुल्क नहीं है। न ही उस मालिक की कोई जाति या रंग-रूप है। अगर हम महात्माओं की वाणियों का ध्यानपूर्वक अध्ययन करें तो पता लगेगा कि वे हमारे विचारों को जात-पाँत, कौम, मज़हब व मुल्क के भेद-भावों से ऊंचा उठा कर हमारे अन्दर परमात्मा की भक्ति का शौक और प्रेम-प्यार पैदा करते हैं। गुरु अर्जुनदेव जी समझाते हैं

"वरनु जाति चिहनु नही कोई सभु हुकमे सृसटि उपाइदा ।।"

(आदि ग्रन्थ, १०७५)

जिस परमात्मा ने अपने हुक्म के द्वारा इस सृष्टि की रचना की है, अगर उसका कोई रंग-रूप और जाति नहीं है तो हमारी आत्मा की—जो उस परमात्मा का अंश है, उस परमात्मा से ही निकली है और वापस जाकर उसमें ही समाना चाहती है—कैसे कोई जाति हो सकती है ? जब समुद्र की कोई जाति नहीं है तो उसकी एक बूंद की क्या जाति हो सकती है ? अगर सूरज की कोई कौम या मज़हब नहीं है तो एक मामूली किरण की कौन-सी कौम, कौन-सा मज़हब हो सकता है ? ये सब जात-पाँत के झगड़े मनुष्य के अपने पैदा किए हुए हैं। परमात्मा ने तो सिर्फ मनुष्य पैदा किये हैं। हम अपने आपको जात-पात, कौम, मज़हब व मुल्कों के छोटे-छोटे दायरों में बांट रहे हैं और एक-दूसरे के भेद-भाव में फँसे हुए हैं। गुरु नानक साहिब समझाते है —

जिथै लेखा मंगीऐ तिथै देह जाति न जाइ ।। (आदि ग्रन्थ, १३४६)

जिस जगह हमारे कर्मों का हिसाब-किताब होगा, उस जगह न तो कोई हमारी जात-पात के बारे में पूछेगा और न हमारा शरीर ही वहां पहुंच सकेगा। किसी का शरीर अग्नि के सुपुर्द हो जाता है, किसी का मिट्टी के अन्दर ही दबा रह जाता है। जात-पाँत या कौमों-मज़हबों का सम्बन्ध इस शरीर के साथ ही रह जाता है। अन्त में किसी की जात-पाँत जल जाती है, किसी की मिट्टी में ही दबी रह जाती है। कबीर साहिब अपनी वाणी में उपदेश देते हैं—

"जात-पाँत पूछे ना कोय। हरि को भजे सो हरि का होय ॥"

किसी को भी आपकी जात-पाँत नहीं पूछना है, जो परमात्मा की भक्ति करता है वह परमात्मा का रूप हो जाता है। जहां हमारे कर्मों का हिसाब-किताब होगा वहां कोई यह सवाल नहीं पूछने वाला है कि तुम हिन्दू थे या ईसाई, हिन्दुस्तान से आए हो, अमेरिका से आये हो या अफ्रीका से। उस जगह तो हमारे भक्ति-भाव, इश्क और प्रेम की ही कदर होती है। इसी तरह साईं बुल्लेशाह, जो जाति के सैयद थे और जो मुसलमानों में एक बेधड़क महात्मा हुए हैं, अपने कलाम में स्पष्ट करते हैं—

"अमलाँ उत्ते होन निबेड़े, खड़ियाँ रहणगिआँ जाताँ ॥"

जो अपने अमलों और कर्मों पर ध्यान देते हैं, वे ही परमात्मा को मंज़ूर हैं। जो जात-पाँत के अभिमान में फँसे हैं, उनकी उस दरगाह में कोई कदर नहीं हैं। तुलसी साहिब भी अपनी वाणी में यही समझाते हैं—

"नीच नीच सब तर गए, संत चरन लवलीन।
जाती के अभिमान से, डूबे बहुत कुलीन ॥"

जो अपने आपको नीचा समझता है, जिसके अन्दर नम्रता और दीनता है, जो सन्तों के चरणों से प्यार रखता है, उनके उपदेश पर चलता है, वह इस भव-सागर से पार हो जाता है। जिनको जात-पाँत का अभिमान है वे इस भव-सागर में गोते खाते हैं। कौमों की कौमें, मज़हबों के मज़हब इस जात-पाँत के अभिमान में डूबे जा रहे हैं। फिर फ़रमाते हैं—

"बड़े बड़ाई पाय कर रोम रोम अहंकार।
सतगुरु के परचे बिना चारों बरन चमार ॥"

अर्थात्, बड़े लोग बड़ाई पाकर रोम-रोम में अहंकार से भर जाते हैं। सतगुरु से मिले बिना, उनके प्यार के बिना चारों वर्ण ही नीच हैं। पलटू

साहिब भी हमें यही समझाते हैं—

"पलटू ऊँची जात का मत कोई करे हंकार ।
साहिब के दरबार में केवल भगति पियार ।।"

मालिक की दरगाह में केवल भक्ति और प्यार की ही कदर है । भक्ति और प्यार ही हमें वापस ले जाकर उस मालिक से मिलायेंगे । किसी के मन में यह विचार न हो कि मैं ब्राह्मण के घर पैदा हो गया हूँ मुझे ही मालिक से मिलने का गौरव प्राप्त हो सकता है, या मैं हिन्दू से ईसाई बन गया हूँ, अब सिर्फ मैं ही परमात्मा से मिल सकूँगा । या कोई यह सोचे कि मैं एक नीच जाति में जन्म ले चुका हूँ, मैं शायद अब कभी भी परमात्मा की भक्ति नहीं कर सकूँगा। गुरु नानक साहिब ने तो इस जात-पाँत का यहां तक खण्डन किया है—

"बिनु नावै सभ नीच जाति है बिसटा का कीड़ा होइ ।।"
(आदि ग्रन्थ, ४२६)

जो मालिक के नाम की कमाई नहीं करता, उससे ज़्यादा नीच जाति वाला और कौन हो सकता है, क्योंकि वह मौत के बाद नीच और अधम योनियों में जायेगा । आगे फ़रमाते हैं—

"जिसु नामु रिदै सोई वड राजा ।। जिसु नामु रिदै तिसु पूरे काजा ।।
जिसु नामु रिदै सो जीवन मुकता ।। जिसु नामु रिदै तिसु सभ ही जुगता ।।
जिसु नामु रिदै सो सभ ते ऊचा ।। नाम बिना भ्रमि जोनी मूचा ।।
(आदि ग्रन्थ, ११५५-५६)

फिर कहा है—

"सबद बसे सोई जन ऊँचा सच्चे आप समावणिआँ ।।"

और

"नानक होरि पतिसाहीआ कूड़ीआ, नामि रते पातसाह ।।"
(आदि ग्रन्थ, १४१३)

जो मनुष्य-शरीर प्राप्त करके उस मालिक के शब्द या नाम को अपने मन में बसा लेता हैं, उठते-बैठते एक शब्द की कमाई में लग जाता है, वही व्यक्ति सबसे ऊँचा है क्योंकि वह मौत के बाद जाकर सच्चे परमात्मा के अन्दर समा जाएगा। अतएव, जो मालिक की जाति, कौम, मज़हब, और मुल्क है, वही हमारी आत्मा की जाति, कौम, मज़हब व मुल्क है; इसलिए हरएक महात्मा हमारे ख़याल को पक्षपात या भेद-भाव के इन छोटे-छोटे दायरों से ऊपर ले

जाने की कोशिश करता है और हमारे अन्दर उस परमात्मा के सच्चे नाम की कमाई और प्यार का शौक पैदा करता है।

परमात्मा हमारे अन्दर है

सभी महात्मा हमें अपने अनुभव से समझाते हैं कि जिस परमात्मा को हम ढूंढना चाहते हैं और जिस परमात्मा से मिलकर हमारी आत्मा हमेशा के लिए जन्म-मरण के दुःखों से बच सकती है, वह कहीं बाहर नहीं है। वह हरएक के शरीर के अन्दर बैठा हुआ है। जिसे मिला है, अपने अन्दर ही मिला है और जिसे भी मिलेगा अपने अन्दर ही मिलेगा। इसलिए अगर कोई प्रयोगशाला है जिसके अन्दर जाकर हमें परमात्मा से मिलने की खोज या रिसर्च करना है, तो वह केवल हमारा शरीर ही है। सब महात्माओं का यही उपदेश है। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं—

"सभ किछु घर महि बाहिर नाही॥
बाहिर टोलै सो भरमि भुलाही॥" (आदि ग्रन्थ, १०२)

और

"काइआ अंदरि जग जीवन दाता वसै सभना करे प्रतिपाला॥"
(आदि ग्रन्थ, ७५४)

जिस परमात्मा ने सारे जग को जीवन दिया है, इस सृष्टि की रचना की है और जो सबका दाता है, सबकी सँभाल और रखवाली करता है, वह परमात्मा इस शरीर के अन्दर रहता है। आप फिर समझाते हैं—

"इसु गुफा महि अखुट भंडारा॥
तिसु विचि वसै हरि अलख अपारा॥" (आदि ग्रन्थ, १२४)

हमारा यह शरीर केवल आत्मा के ही रहने की गुफा नहीं है। वह परमात्मा भी, जो कि अलख और अगम है, इस गुफा अर्थात् शरीर के अन्दर ही है। फिर एक और स्थान पर लिखते हैं—

"काइआ अंदरि आपे वसै अलखु न लखिआ जाई॥
मनमुखु मुगधु बूझै नाही बाहरि भालणि जाई॥"
(आदि ग्रन्थ, ७५४)

वह परमात्मा खुद हमारे शरीर के अन्दर बैठा हुआ है। हम उसे बाहरी आँखों के द्वारा बाहर ढूँढने की कोशिश करते हैं। वह हमें कैसे नज़र आ सकता है? हम मनमुख हैं, बेसुध हैं, गँवार हैं, जो चीज़ हमारे घर के अन्दर है, हम उसे बाहर ढूँढ रहे हैं। कबीर साहिब का भी यही अनुभव है—

"ज्यों तिल में तैल है, ज्यों चकमक में आग ।
तेरा प्रीतम तुझमें, जाग सकै तो जाग ॥"

आप फिर फ़रमाते हैं—

"ज्यों नैनन में पुतली, त्यों खालिक घट माहिं ।
मूरख लोग जाने नहीं, बाहर ढूँढन जाहिं ॥
जा कारन जग ढूँड्या सो तो घट ही माहिं ।
परदा दिया भरम का ताँते सूझे नाहिं ॥"

जिस तरह तिल में तेल है और पत्थर में आग है, उसी तरह परमात्मा भी हमारे शरीर के अन्दर है । जिस प्रकार आँखों के अन्दर पुतली है, उसी प्रकार इस दुनिया को बनाने वाला हमारी देह के अन्दर है । हम लोग मूर्ख हैं, अंधे हैं, उसे अपने शरीर के अन्दर तो ढूँढते नहीं, बाहर तलाश करने की कोशिश करते हैं । जिसकी खोज के लिए हम जंगलों-पहाड़ों में भटकते फिरते हैं, जिसे हम मन्दिरों-मस्जिदों में ढूँढते फिरते हैं, वह हमारे शरीर के ही अन्दर है । हमारे और मालिक के बीच में भ्रम का परदा है इसलिए वह हमें दिखाई नहीं देता। इसी प्रकार महात्मा चरनदास जी का अनुभव है—

"दूध मद्ध ज्यों घीव है, मेंहदी माहीं रंग ।
जतन बिना निकसे नहीं, चरनदास लो ढंग ॥
जो जाने या भेद को, और करे परवेस ।
सो अबिनासी होत है, छूटे सकल कलेस ॥"

इसी प्रकार तुलसी साहिब, जो कि उत्तर प्रदेश में दक्कनी बाबा के नाम से बड़े प्रसिद्ध महात्मा हुए हैं, अपनी वाणी में कहते हैं—

"क्यों भटकता फिर रहा तू ऐ तलाशे यार में ।
रास्ता शाहरग में है दिलबर पै जाने के लिये ॥"

क्यों उस परमात्मा की तलाश में बाहर भटकते फिर रहे हो । परमात्मा हर एक के शरीर के अन्दर है और उस तक पहुँचने का रास्ता भी परमात्मा ने हर एक के अन्दर ही रखा है । ईसा-मसीह ने भी बाइबिल में यही समझाया है, "खुदा की बादशाहत तेरे अन्दर है ।"

पलटू साहिब का भी यही अनुभव है—

"साहब साहब क्या करे, साहब तेरे पास ।"

कि वह परमात्मा तो चौबीस घंटे हमारे साथ-साथ फिरता है, अर्थात् वह परमात्मा हरएक के शरीर के अन्दर है, तुम बाहर किसको दिन-रात ढूँढते फिर रहे हो । गुरु अमरदास जी फ़रमाते हैं—

"सदा हजूरि दूरि न जाणहु ।।गुरसबदी हरि अंतरि पछाणहु ।।"
(आदि ग्रन्थ, ११६)

इसी तरह दादू साहिब फ़रमाते हैं–

"दादू जीव न जाने राम को, राम जीव के पास ।
गुरु के शबद वह बाहिरा, तातें फिरे उदास ।।
दूरि कहे ते दूरि है, राम रह्या भरपूर ।
नैनहुं बिन सूझै नहीं, ताते ओय कित दूर ।।
कोई दौड़े द्वारिका, कोई काशी जाहिं ।
कोई मथुरा को चलै, साहिब घट ही माहिं ।।
सब घट माहिं रमि रह्या, बिरला बूझै कोय ।
सोई बूझै राम को, जो राम सनेही होय ।।"

कि जिस परमात्मा ने दुनिया की रचना की है वह चौबीस घण्टे तुम्हारे साथ-साथ हैं । लेकिन हम दुनिया के जीव अपनी देह के अन्दर जाकर कभी परमात्मा की खोज करने की कोशिश नहीं करते । हमेशा उसे या तो जंगलों और पहाड़ों में ढूंढने की कोशिश करते हैं, या उसे ग्रन्थों-पोथियों में से पाना चाहते हैं या समझते हैं कि वह गुरुद्वारों, मन्दिरों, मस्जिदों या गिरजों में ही मिल सकता है । कभी विचार आता है कि वह कहीं आसमानों के पीछे छिपा बैठा है लेकिन जिस जगह वह परमात्मा है, उस जगह तलाश नहीं करते । गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं–

"गुरमुखि होवै सु काइआ खोजै
होर सभ भरमि भुलाई ।।" (आदि ग्रन्थ, ७५४)

कि जो मालिक के असली भक्त और प्रेमी हैं, जिनको किसी सन्त-महात्मा की संगति मिल चुकी है, वे परमात्मा को शरीर के अन्दर ढूँढते हैं । बाकी सब दुनिया के जीव भ्रमों में फँस कर यहीं भूले फिरते हैं । साईं बुल्लेशाह कहते हैं–

"बुल्ला शौह असाँ तो वख नहीं । बिन शौह थीं दूजा कख नहीं ।।
पर वेखण वाली अक्ख नहीं । तां जान जुदाइयाँ सहिन्दी है ।।"

कबीर साहिब ने तो बड़े ज़ोरदार लफ़्ज़ों में हमारे ख़याल को इस वहम और भ्रम से निकालने की कोशिश की है । आप समझाते हैं–

"कंकर पत्थर जोड़ कर मस्जिद लई चुनाय ।
ताँ चढ़ मुल्ला बाँग दे, बहरा भया ख़ुदाय ।।
मुल्ला चढ़ किलकारिया, अलख न बहरा होय ।
जिस कारन तू बाँग दे, दिल ही अन्दर सोय ।।

तुरक मसीते हिन्दू देहरे, आप आप को धाए।
अलख पुरख घट भीतरे, ता को लखा न जाए॥"

पत्थर और ईंटें इकट्ठी करके हम मस्जिद या मालिक के रहने की जगह बना लेते हैं और उनके ऊपर चढ़कर मौलवी ऊँची-ऊँची बाँग देकर परमात्मा को पुकारता है, जैसे कि परमात्मा बहरा है और हमारी आवाज़ उस तक नहीं पहुँच सकती, आप समझाते हैं कि ऐ मुल्ला! वह खुदा बहरा नहीं है। इतना चिल्लाने की क्या जरूरत है? जिस खुदा के लिये तू इतने ज़ोर-ज़ोर से चिल्ला रहा है वह तो तेरे अन्दर ही मौजूद है। मुसलमान उस खुदा को मस्जिद के अन्दर ढूँढ रहे हैं। हिन्दू मन्दिरों में उस परमात्मा की तलाश कर रहे हैं। सिक्ख और ईसाई गुरुद्वारों और गिरजों में जाकर खोज कर रहे हैं। लेकिन वह अलख पुरुष तो उनके शरीर के अन्दर ही है और अन्दर ही मिलेगा। इसी प्रकार तुलसी साहिब समझाते हैं—

"नकली मन्दिर मसजिदों में जाय सद अफसोस है,
कुदरती मसजिद का साकिन दुःख उठाने के लिये।"

साईं बुल्लेशाह क्या आज़ादी के साथ कहते हैं—

"भठ नमाज़ाँ चिकड़ रोज़े कलमे दे सिर स्याही॥
बुल्ले नूँ शौह अंदरों मिलिया, भुली फिरे लोकाई॥"

फिर फ़रमाया है—

"वेद कुरान पढ़-पढ़ थके, सिजदे करदिआँ घिस गए मत्थे।
ना रब तीरथ ना रब मक्के, जिन पाया तिन दिल विच यार॥"

जो हमने परमात्मा के रहने के स्थान बनाए हैं, कितना अफसोस है कि हम उन स्थानों में जाकर दिन-रात उस परमात्मा की खोज कर रहे हैं और जिस मस्जिद या शरीर के अन्दर वह परमात्मा खुद बैठा हुआ है, वह शरीर उस मालिक की याद में दिन-रात दुःख उठा रहा है। अगर कोई सच्चे से सच्चा गुरुद्वारों, मन्दिर, मस्जिद या गिरजा है तो वह केवल हमारा अपना शरीर है। कबीर साहिब का फ़रमान है—

"सब घट पूरन पूर रह्या है, आदि पुरख निरबानी॥"

सेण्ट पाल ने भी इस शरीर को जीवित परमात्मा का मन्दिर कहकर पुकारा है। ऋषियों-मुनियों ने इसे नर-नारायणी देह कह कर समझाया है; वह देह जो परमात्मा नें खुद पैदा की है, जिसके अन्दर परमात्मा खुद बैठा हुआ है और जिस देह के अन्दर ही हमारी आत्मा को परमात्मा होने का फ़ख्र या गौरव प्राप्त हो सकता है। यही गुरु अमरदास साहिब समझाते हैं—
'हरि मंदरु एहु सरीरु है, गिआनि रतनि परगटु होइ॥' (आदि ग्रंथ, १३४६)

हमारा शरीर ही मालिक के रहने का असली हरि-मन्दिर है और उस मालिक का सच्चा ज्ञान उसी के अन्दर से प्राप्त हो सकता है। ज़रा ग़ौर करके देखें कि उस परमात्मा के रहने के लिए जो स्थान हमने खुद बनाए हैं, जैसे मस्जिद, मन्दिर, गुरुद्वारे, गिरजे वगैरह उनमें हम परमात्मा की खोज कर रहे हैं बनिस्बत उस स्थान के जो परमात्मा ने खुद अपने रहने के लिए बनाया है और जिसमें वह खुद बैठा हुआ है। हम अपने इन धार्मिक स्थानों को कितना साफ-सुथरा रखते हैं। ज़रा गंदगी वहां नहीं रहने देते, धूप वगैरह जलाते हैं, वहां कोई बुरा कर्म या बुरी बात नहीं करते, किसी से कोई अनुचित शब्द तक नहीं कहते, क्योंकि हम समझते हैं कि यह मालिक के रहने का स्थान है। उन स्थानों की पवित्रता बनाए रखना चाहते है। लेकिन जो जगह मालिक ने खुद अपने रहने के लिए बनाई है और जिसके अन्दर वह परमात्मा खुद बैठा हुआ है—यानी हमारा शरीर—उसको किस प्रकार दिन-रात गन्दगी से भर रहे हैं। कभी मांस और शराब उसके अन्दर डालते हैं, कभी उसके अन्दर बैठ कर बुरे बुरे विचार उठाते हैं और पाप व खोटे कर्म करते हैं। अपनी बनाई हुई चीज़ की तो कदर करते हैं, जो मालिक ने खुद अपने रहने के लिए जगह बनाई है उसकी कदर नहीं करते। और कई बार तो इतिहास पढ़कर बड़ी शर्म महसूस होती है कि अगर हमारे बनाये हुए किसी मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारे या गिरजे की, गलती से किसी दीवार में एक दरार भी आ जाती है, तो हम उस परमात्मा के बनाये हुए हरि-मन्दिरों को हज़ारों की संख्या में गिराने को तैयार हो जाते हैं।

"हिन्दू कहत हैं राम हमारा, मुसलमान रहमाना।
आपस में दोऊ लड़ मरत हैं, मरम कोई न जाना॥"

(कबीर साहिब)

इतिहास बतलाता है कि इन धर्म स्थानों को लेकर कितने युद्ध और झगड़े हुए, कितनी खून खराबियां हुई, कितने बच्चे अनाथ हुए, कितनी औरतें विधवा हुई। और हम इस पर फ़ख्र और गौरव का अनुभव करते हैं, अपने आपको धर्म के रक्षक, मजहब के रखवाले समझते हैं और शहीदाने-मिल्लत[१] कहलवाते हैं। अगर एक दूसरे की हत्या और खल्के-खुदा[२] का खून बहाने से ही परमात्मा मिल सकता हो तो इससे ज़्यादा सस्ता सौदा और आसान तरीका और क्या हो सकता है। लेकिन हमारा यह ख़याल गलत है! जिनका परमात्मा से प्यार है वे परमात्मा की सृष्टि और उसके पैदा किए हुए

१. धर्म के लिये शहीद। २. परमात्मा की सृष्टि।

मनुष्य से भी प्यार करते हैं। परमात्मा एक ही है और उस परमात्मा ने ही सबको पैदा किया है, हरएक के अन्दर वह खुद ही बैठा हुआ है और हरएक को अपने अन्दर ही उसकी खोज करना है, अगर फिर भी कोई किसी से नफ़रत करता है तो वह परमात्मा से नफ़रत करता है। अगर एक कौम दूसरी कौम को बुरा-भला कहती है और एक मज़हब दूसरे मज़हब वालों के खून का प्यासा है, तो मेरा अपना ख़याल है कि उस कौम और मज़हब के अन्दर अभी तक मालिक से मिलने का शौक व प्यार ही पैदा नहीं हुआ, क्योंकि जिसका उस परमात्मा से प्यार है, वह परमात्मा की रचना और पैदाइश से भी ज़रूर प्यार करेगा। अगर हम किसी से नफ़रत करते हैं तो इसका मतलब हुआ कि हम उस परमात्मा से ही नफ़रत कर रहे हैं, जोकि उसके अन्दर बैठा हुआ है और जिसने उसे पैदा किया है। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं—

"जो जंत सभि तिसदे सभना का सोई ॥
मंदा किसनो आखीऐ जे दूजा होई ॥" (आदि ग्रन्थ, ४२५)

कि हे परमात्मा! सब दुनिया के जीव तेरे अपने पैदा किए हुए हैं और तू खुद ही हरएक के अन्दर बैठा हुआ है। नीच और बुरा तो मैं उसे कहूं जिसके अन्दर कोई और हो या जिसे किसी और ने पैदा किया हो। कबीर साहिब भी हमें यही उपदेश देते हैं—

"अवलि अलह नूरु उपाइआ कुदरति के सभ बंदे ॥
एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे ॥" (आदि ग्रन्थ, १३४९)

इसी प्रकार बाइबिल में ईसा मसीह ने समझाया है, "वह सच्ची ज्योति जगत में आने वाले हरएक मनुष्य को प्रकाशित करती है।" उस परमात्मा का नूर और प्रकाश हरएक के अन्दर है, न कोई बुरा है, न कोई अच्छा है, सब अपने अपने कर्मों के अनुसार अपना-अपना हिसाब दे रहे हैं। इसलिए, महात्मा समझाते हैं कि उस परमात्मा की खोज और तलाश बाहर नहीं करनी चाहिए, अपने शरीर और देह के अन्दर ही खोज करनी चाहिये।

हौमैं की रुकावट

अब मन में स्वाभाविक ही यह विचार आता है कि अगर परमात्मा हर-एक के अन्दर है तो हमें अपने अन्दर नज़र क्यों नहीं आता? हमारे अन्दर किस चीज़ की रुकावट है? वह रुकावट हमारे अन्दर से किस प्रकार दूर हो सकती है? गुरु अर्जुनदेवजी लिखते हैं—

"एका संगति इकतु गृहि वसते मिलि बात न करते भाई ।।
अंतरि अलखु न जाई लखिआ विचि पड़दा हउमै पाई ।।"

(आदि ग्रन्थ, २०५)

कि दोनों इकट्ठे ही रहते हैं और एक ही घर में दोनों का निवास है, लेकिन आपस में मिलाप नहीं है। आत्मा भी शरीर के अन्दर है, परमात्मा भी इस शरीर के अन्दर है, लेकिन न कभी आत्मा ने परमात्मा को देखा, न कभी आत्मा सुहागिन हुई। फिर खुद ही जवाब देते हैं कि परमात्मा जरूर हमारे शरीर के अन्दर है, लेकिन हमारे और मालिक के बीच हौमैं या अहं की बड़ी ज़बरदस्त रुकावट है। गुरु नानक साहिब का कथन है—

"हउ विचि आइआ, हउ विचि गइआ ।।
हउ विचि जंमिआ, हउ विचि मूआ ।।
हउ विचि दिता, हउ विचि लइआ ।।
हउ विचि खटिआ, हउ विचि गइआ ।।
हउ विचि सचिआरु कूड़िआरु ।।
हउ विचि पाप पुंन वीचारु ।।
हउ विचि नरक सुरगि अवतारु ।।" (आदि ग्रन्थ, ४६६)

फिर फ़रमाते हैं—

हउमै दीरघ रोगु है, दारू भी इसु माहि ।।
किरपा करे जे आपणी, ता गुर का सबदु कमाहि ।।"

(आदि ग्रन्थ, ४६६)

और कहते हैं :—

"जीवन मुकत सो आखीऐ जिसु विचहु हउमै जाइ ।।"

(आदि ग्रन्थ, १०१०)

कि हम जीते-जी मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं अगर हमारे अन्दर से हौमैं की रुकावट दूर हो जाये। गुरु अमरदासजी बयान करते हैं—

"हरि जीउ सचा ऊचो ऊचा, हउमै मारि मिलावणिआ ।।"

(आदि ग्रन्थ, १२३)

वह परमात्मा सच्चा है, ऊँचे से ऊँचा है अर्थात् सचखण्ड का रहने वाला है, लेकिन जब तक हम हौमैं की रुकावट दूर नहीं करेंगे, उस परमात्मा से नहीं मिल सकते। यही दादू साहिब समझाते हैं—

"दादू दावा दूर कर, बिन दावे दिन काट ।
केते सौदा कर गए, पंसारी की हाट ।।"

हे दादू ! दुनिया में किसी चीज़ का दावा न कर । तेरा इस दुनिया में कुछ भी नहीं है । यह सब-कुछ उस परमात्मा का है । इसको परमात्मा का ही समझ, अपना बनाने की कोशिश न कर । न कभी ये किसी के बने हैं और न ही बन सकते हैं । दुनिया में बड़े-बड़े राजा-महाराजा इस संसार को अपना बनाते-बनाते चले गये. यह दुनिया उनकी न बन सकी । यह हमारा मोह और हौमैं ही है जो बार-बार हमें इस देह के बन्धनों में लाता है । बाइबिल में ईसा मसीह ने भी ज़िक्र किया है, "मैं फिर तुमसे कहता हूँ कि परमेश्वर के राज्य में धनवान के प्रवेश करने की बनस्बित ऊँट का सूई के नाके में से निकल जाना कहीं आसान है ।" (मेथ्यू १९:२४)

सुई के नाके में से ऊँट का निकल जाना सम्भव नहीं, इसी तरह अमीर और धनवान लोगों का जो कि दुनिया की दौलत और सुख में डूबे हुए हैं परमात्मा से मिलना असंभव है । बुल्ले शाह का भी यही कलाम है—

"दुई दूर करो कोई शोर नहीं, इहाँ तुरक हिन्दु कोई होर नहीं ।
सब साध लखो कोई चोर नहीं, हरि घट-घट बीच समाया है ॥"

इसी तरह कबीर साहिब फ़रमाते हैं—

"काम तजे तो क्रोध न जाई, क्रोध तजे तो लोभा ।
लोभ तजे अहंकार न जाई, मान बड़ाई शोभा ॥"

हौमैं क्या है ? हम जो सारे दिन सोचते हैं कि यह मेरी औलाद है, मेरी जायदाद है, मेरी धन-दौलत है, ये सब-कुछ वास्तव में तो उस परमात्मा के हैं । हम अपने आपको उस परमात्मा से अलग समझे बैठे हैं. और इनको अपना बनाने की कोशिश करते हैं । लेकिन ये आज तक न किसी के बने, न कभी बन सकते हैं । हम इन्हें अपना बनाने की कोशिश करते हैं वह हमें इनके मोह व प्यार में उलझा देती है और हमारा इन शक्लों और पदार्थों के साथ इतना प्यार हो जाता है कि रात में हमें इनके ही सपने आने शुरू हो जाते हैं और मौत के समय इनकी ही शक्लें हमारी आँखों के सामने आकर सिनेमा की तस्वीरों की तरह फिरनी शुरू हो जाती हैं । जिस ओर भी आखिरी वक्त हमारा ख़याल होता है, हम दुनिया के जीव उसी प्रवाह में बह जाते हैं । यह दुनिया की शक्लों और पदार्थों का मोह और प्यार है जो कि हरएक जीव को बार-बार देह के बन्धनों की ओर खींचकर ले आता है । ईसा मसीह भी बाइबिल में कहते हैं, "और मनुष्य के बैरी उसके परिवार वाले ही होंगे ।" (मेथ्यू १० : ३६) ।

फिर वे आगे बतलाते हैं कि हमारे सच्चे रिश्तेदार कौन हैं—"जो कोई

मेरे परमपिता की इच्छा पर चले वही मेरा भाई, बहिन और माता है।" (मेथ्यू १२:५०)।

हमारा मन

दुनिया की शक्लों और वस्तुओं से कौन प्यार किये बैठा है? यह हमारा मन है। इसलिए, अगर आत्मा और परमात्मा के बीच में कोई रुकावट और परदा है तो वह केवल हमारे मन का परदा है। गुरु नानक साहिब अपनी वाणी में लिखते हैं, "मनि जीतै जगु जीतु।" अगर हम अपने मन को वश में कर लेते हैं तो सारी दुनिया के बनाने वाले को ही वश में कर लेते हैं। दुनिया में अगर कोई हमारा दुश्मन है तो सिर्फ हमारा मन ही हैं। यह कभी किसी को अपना बनाता है, तो कभी किसी को बेगाना समझता है। अच्छी तरह विचार करके देख लें, यह सिर्फ हमारा मन ही है जिसके ताबे या वशीभूत होकर कौम-कौम की दुश्मन है, मज़हब-मज़हब का दुश्मन है, एक देश दूसरे देश को तबाह करना चाहता है, भाई भाई को देखना नहीं चाहता और लोग हमेशा एक-दूसरे के गले काटने की तरकीबें और उपाय सोचते रहते हैं। यह सब-कुछ हमारा मन ही हमसे करवा रहा है। जब तक हम अपने मन को वश में नहीं करते हम वापस जाकर परमात्मा से मिलने के काबिल कैसे हो सकते हैं।

मन को वश में करने का क्या मतलब है? जिस प्रकार हमारी आत्मा उस परमात्मा की अंश है, इसी प्रकार हमारा मन भी कोई छोटी चीज़ नहीं है। यह ब्रह्म का अंश है, त्रिकुटी का रहने वाला है, लेकिन यहां माया के जाल में फँस कर अपने आपको भूल बैठा है। यहां आकर इसने आत्मा का साथ लिया हुआ है। आत्मा और मन की गांठ बंधी हुई है। जब तक आत्मा मन का साथ नहीं छोड़ती, उसे कभी अपने आपका पता नहीं लग सकता और न कभी वह अपने असल या मूल से मिलने के योग्य हो सकती है। मन का साथ आत्मा उस समय ही छोड़ सकेगी जब मन वापस जाकर ब्रह्म या त्रिकुटी में अपने ठिकाने पर पहुँच जायेगा। हमें जो भी कोशिश करनी है, वह मन और आत्मा की गांठ खोलने की करनी है। इसीलिए सुकरात ने कहा है, 'अपने आपको पहचानो।' यही गुरु नानक साहिब समझाते हैं—

"सो जनु निरमलु जिनि आप पछाता।।" (आदि ग्रन्थ, १०४६)

वह व्यक्ति निर्मल और पवित्र है जो अपने आपको पहचानने के योग्य बन जाता है। कबीर साहिब भी यही फ़रमाते हैं —

"साधो, सतगुरु अलख लखाया। जब आप-आप दरसाया ।।"

स्वामीजी महाराज भी फ़रमाते हैं—

"आप आपको आप पहचानो। कहा और का नेक न मानो ।।"

(सार बचन, २०३)

अपने आपको पहचानने का मतलब यह है कि हमें मन और माया के दायरे से पार जाना है। हमें अपनी आत्मा पर से सूक्ष्म, स्थूल और कारण के तीनों गिलाफ या आवरण उतारने हैं और सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण—तीनों गुणों से पार होना है। तब जाकर अपने आप का पता लगेगा, अपने असल की पहचान होगी। हमारी आत्मा तो बिल्कुल निर्मल, पवित्र और पाक थी, लेकिन मन का साथ लेने के कारण अति गन्दी और मैली हो चुकी है। उदाहरण के तौर पर बादलों में पानी कितना साफ़-सुथरा होता है, परन्तु जब वह बरसात बन कर ज़मीन पर आता है तो कितना गन्दा हो जाता है, उसमें से बदबू तक आनी शुरू हो जाती है। वह अपनी असलियत को बिलकुल भूल बैठता है और अपने आपको गन्दगी का ही रूप समझना शुरू कर देता है। परन्तु जब उसे फिर सूरज की तपिश लगती है और वह भाप बन कर उस गन्दगी को छोड़ता है तब उसे अपने आप का होश आता है कि मैं कौन हूँ। जब उसको अपने आपका पता लगता है तब फिर वह अपने असल या मूल के बारे में सोचता है और सीधा जाकर बादल में, अपने असल में ही समा जाता है। यही हमारी आत्मा की हालत है। यह माया के जाल में फँसकर मन के ताबे हो चुकी है, और मन आगे इन्द्रियों के भोगों का आशिक बन चुका है और जो जो कर्म मन करता है उसका नतीजा साथ-साथ आत्मा को भी भुगतना पड़ता है। जब तक यह मन का साथ नहीं छोड़ेगी, यह कभी भी अपने असल के अन्दर समाने के काबिल नहीं हो सकेगी। महात्मा चरनदास जी फ़रमाते हैं—

"इन्द्रियन के बस मन रहे, मन के बस रहे बुद्ध।
कहो ध्यान कैसे लगे; ऐसा जहाँ विरुद्ध ।।"

एक बिजली का तेज़ बल्ब चाहे कितनी ही रोशनी वाला क्यों न हो, परन्तु अगर हम उसके चारों ओर बहुत से काले कपड़े लपेटना शुरू कर दें तो उसकी रोशनी कम होते-होते खतम हो जायेगी। जैसे-जैसे हम वे काले कपड़े उतारते जायेंगे, उसकी रोशनी और ज्योति प्रकट होना शुरू हो जायेगी और सब कपड़े उतर जाने पर उसकी रोशनी पूर्ण रूप से प्रकट हो जायेगी। इसी प्रकार जैसे-जैसे हमारी आत्मा मन का साथ छोड़ती जायेगी या मन के आवरण उस पर से उतरते जायेंगे वह अपने आपको पहचानने के काबिल

बनती जायेगी। इसीलिए कहा है, परमात्मा के साक्षात्कार से पहले ग्रात्म-साक्षात्कार होना ज़रूरी है।

हमें ग्रब जो भी कोशिश करना है, ज़ो कुछ भी तरीका सोचना है, वह ग्रपने मन को वश में करने का ही सोचना है, मन को वापस ब्रह्म या त्रिकुटी में ले जाने की ही कोशिश करना है। हरएक धर्म का यही उद्देश्य है। हम दुनिया के जीव ग्रपनी-ग्रपनी ग्रक्ल के ग्रनुसार हज़ारों युक्तियों ग्रौर तरीकों से मन को वश में करने की कोशिश करते हैं। जप-तप करते हैं, पूजा-पाठ करते हैं, ग्रन्थ, पोथियाँ, वेद, शास्त्र ग्रादि पढ़ते हैं, दान-पुण्य करते हैं, कई प्रकार के हवन वग़ैरह भी करते हैं। यहां तक कि घर-बार छोड़कर जंगलों-पहाड़ों में छिपकर बैठ जाते हैं। ये साधन सिर्फ मन को वश में करने के लिए ही करते हैं। हम हठ-कर्मों के द्वारा नियम व संयम के द्वारा ग्रपने ख़याल को दुनिया से ग्रलग करने की कोशिश करते हैं। लेकिन क्योंकि हमारा ख़याल ग्रौर किसी चीज़ से जाकर नहीं जुड़ता इसलिए लौटकर दुनिया में ही भटकना शुरू कर देता है। दुनिया में से ग्रपने ख़याल को जबरदस्ती निकालना ऐसे ही है जैसे एक ज़हरीले साँप को किसी टोकरी या पिटारी में बन्द कर देना है। जितनी देर वह टोकरी के ग्रन्दर बन्द रहता है, हम उसके ज़हर ग्रौर दंश से बचे रहते हैं। लेकिन जब भी उसको निकलने का मौका मिलेगा, वह ज़रूर डसेगा, कभी भी ग्रपनी ग्रादत से बाज़ नहीं ग्रा सकता। ग्रतएव, एक सांप को टोकरी में बन्द कर देने से हम हमेशा के लिए उसके ज़हर से निश्चिन्त नहीं हो सकते। हमें ग्रपनी जान का खतरा लगा ही रहता है। ग्रगर उसी सांप को पकड़ कर उसकी विष की थैली ही निकाल दें, तो वह विषहीन हो जाता है, डस नहीं सकता ग्रौर हम हमेशा के लिए निर्भय हो जाते हैं, चाहे उसे ग्रब ग्रपने गले में डाले फिरें।

इसी प्रकार, हम जंगलों-पहाड़ों में छिपकर, ग्रन्थ-पोथियां, वेद-शास्त्र पढ़-कर, बाल-बच्चों को त्यागकर समझ लेते हैं कि हमारा मन वश में ग्रा गया है। पर जिस समय दुनिया का सामना करना पड़ता है, वे ही इच्छाएं ग्रौर तृष्णाएं जो हमारे ग्रन्दर दबी पड़ी थीं, हमें फिर उँगलियों पर नचाना शुरू कर देती हैं, बल्कि सच तो यह है कि साधारण मनुष्यों से भी हमारी हालत गई-बीती हो जाती है। जितना हम मन को दबाते हैं, उतना ही वह विद्रोह करता है। जबरदस्ती मन को वश में करना ऐसा ही है जैसा कि सुलगते हुए कोयलों पर राख डाल देना। देखने में मालूम देता है कि ग्राग बुझी हुई है लेकिन जब ज़रा भी हवा चलती है, वह राख उड़ जाती है ग्रौर ग्राग फिर से भड़क उठती है। इसी प्रकार, जब भोगों ग्रौर विषयों की ग्रांधी

आती है तो यह मन फिर जागकर बेकाबू हो जाता है और पहले से भी ज़्यादा मुँहज़ोर हो जाता है। ज़बरदस्ती मन को काबू करना ऐसे ही है जैसे हम किसी बदमाश को पुलिस के हवाले कर देते हैं। जब तक वह पुलिस की हिरासत में रहता है, तब तक हम उसकी शरारतों से ज़रूर बचे रहते हैं। लेकिन जब पुलिस उसे आज़ाद कर देती है, वह बस्ती में आकर फिर वैसी ही शरारतें शुरू कर देता है। अगर उस बदमाश को पुलिस के हवाले करने के बजाय हम समझा-बुझाकर एक शरीफ आदमी बना लेते हैं तो हम हमेशा के लिए उसकी शरारतों से बच जाते हैं। अतएव, महात्मा समझाते हैं कि हठ-कर्मों के द्वारा या संयम के द्वारा हम अपने मन को कभी वश में नहीं कर सकते। कुछ समय के लिए ज़रूर कुछ शान्ति या आराम प्राप्त कर लेंगे।

अगर हम मन को वश में करना चाहते हैं तो मन की आदत और स्वभाव को अच्छी तरह समझना ज़रूरी है। हमारा सबका अनुभव है कि मन लज़्ज़त या स्वादों का आशिक है। एक चीज़ से प्यार करता है, अगर दूसरी चीज़ या शक्ल उससे अच्छी दिखाई देती है तो पहली को छोड़कर दूसरी की ओर दौड़ना शुरू कर देता है। कोई भी मोह या प्यार हमेशा के लिये हमारे मन को बांध कर नहीं रख सकता। हरएक का अपने-अपने जीवन का अनुभव है कि वे शक्लें और वे पदार्थ जिन्हें हम किसी समय अपना बनाने की कोशिश करते थे और समझते थे कि उनके बगैर हमारा ज़िन्दा रहना ही मुश्किल या बिल्कुल असम्भव है, आज उन्हीं शक्लों से मन नफ़रत कर रहा है और उन्हें देखना तक गवारा नहीं करता। यह हम आम तौर पर कहते हैं कि मन विविधता का आशिक है। एक ही चीज़ को देख-देखकर, खा-खाकर हम ऊब जाते हैं। अपनी सारी ज़िन्दगी को आँखों के आगे रखकर गौर से देखें कि बचपन में हमारा माता-पिता से कितना प्यार था, अगर दो मिनिट भी माता हमारी आँखों से दूर हो जाती थी तो हम रोना और चीखना-चिल्लाना शुरू कर देते थे। पर जब दो-तीन भाई-बहिन हो जाते हैं तो वही माता का प्यार भाई-बहिनों के प्यार में बदलना शुरू हो जाता है। जब स्कूलों और कालेजों में जाते हैं, वही प्यार यार-दोस्तों से हो जाता है। शादी के बाद पत्नी और बाल-बच्चों में जाकर समा जाता है। बूढ़े होते हैं तो कौमों, मज़हबों, मुल्कों तक में जाकर फैल जाता है। एक प्यार है, कितनी शक्लें बदलता है! लेकिन कोई भी प्यार हमारे मन को हमेशा के लिए बांध नहीं सकता, क्योंकि हमारा मन लज़्ज़त का आशिक है। जितने समय तक हमारे मन को दुनिया की लज्ज़त और

मोह व प्यार से ऊंची और सच्ची लज्ज़त, मोह या प्यार नहीं मिलता, वह दुनिया की लज्ज़त व मोह-प्यार को किसी भी हालत में छोड़ने के लिए तैयार नहीं होता।

वह लज्ज़त किस चीज़ की है जिसे पाकर हमारा मन दुनिया के मोह और प्यार को छोड़ देगा? महात्मा अपना अनुभव बतलाते हैं कि वह शब्द और नाम की लज्ज़त है। वह लज्ज़त इतनी ऊंची, पवित्र और निर्मल है कि उसे पाकर हमारा मन अपने आप ही दुनिया के मोह व प्यार को छोड़ देता है। जिसको हीरे और जवाहरात मिल जाते हैं, वह कौड़ियों के लिये दर-ब-दर ठोकरें नहीं खाता। लड़कियां गुड़ियों और खिलौनों से तब तक खेलती हैं जब तक उनकी शादी नहीं हो जाती। वैराग्य कभी भी हमारे अन्दर लगाव या आसक्ति पैदा नहीं कर सकता, सिर्फ लगाव ही हमारे अन्दर वैराग्य या अनासक्ति पैदा कर सकता है। अगर एक लड़की को शादी से पहले समझाया जाये कि माता-पिता का प्यार छोड़ दे, भाई-बहिनों, सखियों-सहेलियों को भूल जा ताकि तेरी शादी कर दें, तो यह उसके लिये कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव होगा। जब उसका अपने पति से प्यार हो जाता है तो माता-पिता, भाई-बहिन, सखियों-सहेलियों को आप ही भूल जाती है। एक कंगाल कौड़ियां मांगता फिरता है, उससे अगर हम एक कौड़ी भी छीनने की कोशिश करेंगे तो वह मरने-मारने को तैयार हो जायेगा। लेकिन जब हम उसके हाथ में अशर्फी दे देंगे तो उसकी कौड़ियों वाली मुट्ठी अपने आप खुल जायेगी।

गुरु नानक साहिब मन के बारे में समझाते हैं :

पाठु पढ़िओ अरु बेदु बिचारिओ निवलि भुअंगम साधे ॥
पंच जना सिउ संगु न छुटकिओ अधिक अहंबुधि बाधे ॥
पिआरे इन बिधि मिलणु ना जाई, मै कीए करम अनेका ॥''

(आदि ग्रन्थ, ६४१)

मन को वश में करने के लिये हमने अगिनत ग्रन्थों-पोथियों का पाठ किया, षट-दर्शन, अठारह पुराण; गीता-भागवत और वेदों-उपनिषदों पर भी विचार किया, प्राणायाम, नौलि कर्म और हठयोग की कठिन क्रियाएं करके भी देखीं, कुण्डलिनी साधने का भी यत्न किया, लेकिन पांच डाकुओं—काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार—से पीछा न छूटा। गुरु साहिब आगे समझाते हैं—

''मोनि भइओ करपाती रहिओ नगन फिरिओ बन माही ॥
तट तीरथ सभ धरती भ्रमिओ दुबिधा छुटकै नाही ॥

मन कामना तीरथ जाइ बसिओ सिरि करवत धराए ॥
मन का मैल न उतरै इह बिधि जे लख जतन कराए ॥"
(आदि ग्रन्थ, ६४१)

कि बोलना बन्द करके चुप भी रहे, घर-बार छोड़कर जंगलों-पहाड़ों में भी गये, कपड़े, बरतन वगैरह भी त्यागे और सिर्फ हाथों में ही खाना खाया, धरती के सब तीर्थों में घूमे, सारी धरती की परिक्रमा भी की, और भी ऐसे कितने ही कठिन साधन किये, पर फिर भी मन का मैल न उतरा। मन को वश में करने के लिये काशी जाकर करवत भी लिया अर्थात् आरे के द्वारा अपने शरीर को चिरवा लिया। इस प्रकार के और भी लाखों जतन किये पर मन की दुबिधा न गई। साईं बुल्लेशाह भी यही पुकार-पुकार कर कहते हैं—

"न खुदा मसीते लभदा, न खुदा खाना काबे।
न खुदा कुरान किताबाँ, न खुदा नमाजे।
न खुदा मैं तीरथ डिठा, ऐवें पैंडे झाके[1]।
बुल्ला शौह जद मुरशद मिल गया टूटे सब तगादे।"

मन को वश में करने का तो सिर्फ एक ही उपाय है कि इसे शब्द या नाम की लज्ज़त दी जाये। जैसे जैसे यह शब्द और नाम का स्वाद पायेगा, वैसे ही इसका दुनिया से मोह और प्यार टूटना शुरू हो जाएगा। शब्द की कशिश और लज्ज़त इसे दुनिया से अलग कर देगी। स्वामीजी महाराज समझाते हैं—

"कोट जतन से यह नहिं माने। धुन सुनकर मन समझाई ॥
जोगी जुक्ति कमावें अपनी। ज्ञानी ज्ञान कराई ॥
तपसी तप कर थाक रहे हैं। जती रहे जत लाई ॥
ध्यानी ध्यान मानसी लावें। वह भी धोखा खाई ॥
पंडित पढ़ पढ़ वेद बखाने। विद्या बल सब जाई॥
बुद्धि चतुरता काम न आवे। आलम रहे पछताई॥
और अमल का दखल नहीं है। अमल शब्द लौ लाई ॥
गुरु मिले जब धुन का भेदी। शिष्य विरह धर आई ॥
सुरत शब्द की होय कमाई। तब मन कुछ ठहराई ॥"
(सार बचन, ९३)

एक और शब्द में स्वामीजी महाराज उपदेश देते हैं—

१. यों ही व्यर्थ भटका।

"सोता मन कस जागे भाई । सो उपाव मैं करूँ बखान ।।
तीरथ करे वर्त भी राखे । विद्या पढ़ के हुए सुजान ।।
जप तप संजम बहु विधि धारे । मौनी हुए निदान ।।
अस उपाव हम बहुतक कीन्हे । तो भी यह मन जगा न आन ।।
खोजत खोजत सतगुरु पाए । उन यह जुक्ति कही परमान ।।
सतसंग करो संत को सेवो । तन मन करो कुरबान ।।
सतगुरु शब्द सुनो गगना चढ़ । चेत लगाओ अपना ध्यान ।।
जागत जागत अब मन जागा । झूठा लगा जहान ।।
मन की मदद मिली सूरत को । दोनों अपने महल समान ।।
बिना शब्द यह मन नहिं जागे । करो चाहे कोई अनेक विधान ।।"

(सार बचन, १२५)

एक अन्य शब्द में स्वामी जी महाराज अच्छी तरह समझाते हैं—

"जिन्होंने मार मन डाला । उन्हीं को सूरमा कहना ।।
बड़ा बैरी यह मन घट में । इसी का जीतना कठिना ।।
पड़ो तुम इस ही के पीछें । और सब ही जतन तजना ।।
गुरु की प्रीत कर पहिले । बहुरि घट शब्द को सुनना ।।
मान दो बात यह मेरी । करे मत और कुछ जतना ।।"

(सार बचन, १४३)

गुरु नानक साहिब समझाते हैं :

"सचै नामि सदा मनु सचा ।। सचु सेवे दुखु गवावणिआ ।।"

(आदि ग्रन्थ, ११६)

कि सिर्फ सच्चे शब्द और सच्चे नाम की कमाई करके ही हमारा मन निर्मल, पवित्र और पाक हो सकता है । सच्चे शब्द की कमाई करके ही हम चौरासी के दुःखों से बच सकते हैं । आप एक और बहुत अच्छा दृष्टान्त देते हैं—

"गुरमुखि गारड़ु जे सुणे, मंने नाउ संतोसु ।।" (आदि ग्रन्थ १००९)

अगर किसी को सांप डस लेता है तो उसके इलाज के लिए, उसका ज़हर उतारने के लिये किसी डाक्टर के पास जाते हैं । उसकी दवा के द्वारा सांप का ज़हर उतर जाता है । इसी प्रकार अगर हम मन रूपी सांप का ज़हर अपने अन्दर से निकालना चाहते हैं तो हमें सन्तों के पास जाकर अपने ख़याल को शब्द और नाम के साथ जोड़ना होगा मन को वश में करने का और कोई इलाज या तरीका नहीं है । गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं—

"राम नामि मनु बेधिआ अवरु कि करी वीचारु ।। (आदि ग्रन्थ, ६२)

यह हमारा मन जो विषयों-विकारों में, दुनिया के मोह और प्यार में फँसकर हिरण की तरह भटकता फिरता है, जब राम नाम के साथ जुड़ जाता है। तो हमेशा के लिए बिंध जाता है और कोई विचार करना या इस मन को वश में करने का और कोई उपाय करना व्यर्थ है। यही स्वामीजी महाराज समझाते हैं—

"सुरत शब्द कमाई करना। सब जतन दूर अब धरना ॥"

(सार बचन, १६१)

सच्चा नाम

सभी सन्तों ने अपनी वाणी में नाम या शब्द की महिमा की है। हमारे जितने भी मजहब हैं, हरएक के रीति-रिवाज या शरीयतें अपनी अपनी अलग-अलग हैं। लेकिन जो असली रूहानियत है, सत्य का मूल रूप है, रूहानियत की जड़ है वह हरएक मजहब की तह में एक ही है और सन्त-महात्मा हमारे अन्दर सिर्फ इस रूहानियत को ही प्राप्त करने का शौक व प्यार पैदा करते हैं, उसी की प्राप्ति का तरीका या साधन समझाते हैं। इस रूहानियत को भिन्न भिन्न महात्माओं ने विभिन्न जातियों, धर्मों और देशों में आकर भिन्न-भिन्न लफ़्ज़ों या शब्दों में समझाने की कोशिश की है। ऋषि-मुनि इसको राम नाम, राम-धुन, निर्मल नाद, दिव्य-ध्वनि या कई और शब्दों से याद करते हैं। गुरु नानक साहिब इसे आम तौर पर 'शब्द' या 'नाम' कहकर याद करते हैं। वे इसी को गुरु की वाणी, धुर की वाणी, सच्ची वाणी, अमर, हुकम, अकथ कथा, हरि कीर्तन, और निर्मल नाद कहकर भी याद करते हैं। मुसलमान फ़कीर इसे कलमा, इस्मे-आज़म, बांगे-सुलतानी, कलामे-इलाही या सुलतान-उल-अज़कार कहते हैं। ईसा ने इसे 'वर्ड' या 'लोगास' कहा है। इसे ऋग्वेद में 'वाक्' कहा गया है—"यावत् ब्रह्म श्रेष्ठम् तावती वाक्" अर्थात् शब्द इतना महान है जितना कि ब्रह्म। सत्पथ ब्राह्मण में आता है, "वाक् एव ब्रह्म" अर्थात् शब्द ही ब्रह्म है।

हमें लफ्ज़ों के साथ कोई विवाद नहीं है। हमें तो उस रूहानियत की खोज करना है जिसकी हर महात्मा महिमा करता है। और जिसको पाकर हमारा मन बाँधा जा सकता है, वश में आ जाता है और वापस जाकर अपने ठिकाने पर पहुँच जाता है। जब तक हमें यह समझ न आये कि महात्मा शब्द, नाम, वाक या वाणी किसको कहते हैं, वह किस जगह है, किस प्रकार हमें उसके साथ अपना ख़याल जोड़ना है और उसकी हमें क्या ज़रूरत है, तब तक हम बेशक किसी भी महात्मा की वाणी या ग्रन्थ-पोथी पढ़ते रहें, हम कभी भी

उससे फायदा नहीं उठा सकते।

महात्माओं की वाणी में जगह-जगह सच्चे शब्द, सच्चे नाम या सच्ची वाणी का ज़िक्र आता है। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं—

"सचै सबदि सची पति होई ॥" (आदि ग्रन्थ, १०४६)

इससे मन में यह विचार ज़रूर आता है कि शायद और भी कोई वाणी, शब्द या नाम ऐसा है जो सच्चा नहीं है। सच्चे शब्द का मतलब उस वाणी, शब्द या नाम से है जो कभी नष्ट नहीं होता, फ़नाह नहीं होता। महात्मा समझाते हैं कि शब्द या नाम दो प्रकार का है। एक वर्णात्मक शब्द है, दूसरा धुनात्मक। वर्णात्मक शब्द हम उसे कहते हैं जो हमारे लिखने, पढ़ने और बोलने में आता है। हमने अपने-अपने प्यार में आकर उस परमात्मा के जितने भी नाम रखे हुए हैं, अल्लाह, वाहिगुरु, राधास्वामी, हरिओम, परमात्मा, परमेश्वर आदि, ये सब हमारे वर्णात्मक शब्द हैं, क्योंकि ये लिखने, पढ़ने और बोलने में आते हैं। हमारे कई मुल्क हैं। हर मुल्क में वहाँ की कई-कई भाषाएँ या बोलियाँ हैं और एक-एक बोली में हम कितने ही लफ्ज़ों के द्वारा उस परमात्मा को याद करते हैं। हज़ारों, अनेकों महात्मा संसार में आए हैं और हज़ारों अनेकों ही अभी आयेंगे। उन्होंने अनेकों लफ्ज़ों के द्वारा उस परमात्मा को याद किया है और अनेकों ही लफ्ज़ों के द्वारा अभी याद करेंगे। पिछले रखे हुए नाम हम भूलते जाते हैं और अपने प्यार में आकर कई और नाम रखते चले जा रहे हैं। हरएक नाम का हम इतिहास बतला सकते हैं या उसकी तहकीकात अथवा खोज कर सकते हैं और उसका समय निश्चित कर सकते हैं। स्वामीजी महाराज को आये सिर्फ सौ वर्ष हुए हैं, उनके आने के बाद हमने उस मालिक को 'राधास्वामी' कहना शुरू कर दिया। परन्तु इस बात का हम कभी विचार ही नहीं करते कि स्वामीजी महाराज के आने से पहले भी हम दुनिया के जीव यहीं थे, और वही मालिक था और हम किन्हीं और लफ्ज़ों से उस मालिक को याद करते ही थे। इसी प्रकार, श्री गुरु नानकदेवजी के आने के बाद हमने उस परमात्मा को 'वाहिगुरु' कहकर पुकारना शुरू कर दिया। लेकिन आपको आए केवल पाँच सौ वर्ष हुए हैं। मुहम्मद साहिब के आने के बाद हम उस मालिक को 'अल्लाह' कह कर याद करने लगे। उनको भी आए हुए अधिक समय नहीं हुआ, सिर्फ चौदह सौ साल हुए हैं। और इसी तरह रामचन्द्रजी महाराज के आने के बाद उस मालिक को हम 'राम राम' कह कर पुकारने लगे। आपको आए दस हज़ार साल [illegible] कि हरएक

लफ्ज़ की तारीख बताई जा सकती है, समय या मियाद तय की जा सकती है।

वर्णात्मक शब्द भी चार प्रकार के हैं, वैखरी, मध्यमा, पश्यंती और परा। पहला वह जो ज़बान से बोला जाता है, जैसे हम हर रोज़ एक-दूसरे से बातचीत करते हैं। दूसरा वह जो कण्ठ में धीरे-धीरे बोलते हैं। तीसरा हृदय में और चौथा वह जो नाभि में योगीजन हिलोर उठाते हैं। ये सभी शब्द वर्णात्मक हैं और इनमें से कोई भी सच्चा नाम नहीं है। स्वामीजी महाराज अपनी वाणी में फ़रमाते हैं—

"नाम निर्णय करूँ भाई। दुधा विधि भेद बतलाई॥
वर्ण धुनात्मक गाऊँ। दोऊ का भेद दरसाऊँ॥
वर्ण कहु चाहे कहु अक्षर। जो बोला जाय रसना कर॥
लिखन और पढ़न में आया। उसे वर्णात्मक गाया॥"

(सार बचन, ९५)

जो नाम लिखने, पढ़ने बोलने में आता है, जिसकी अवधि तय की जा सकती है और तारीख बताई जा सकती है उसे महात्मा वर्णात्मक शब्द कहते हैं। जिस नाम की हरएक महात्मा महिमा करता है, जिस नाम की कमाई से हमें मुक्ति प्राप्त करना है, मन को वश में करना है, आत्मा तथा मन की गाँठ को खोलना है और अपने आपको पहचानने के योग्य बनना है वह धुनात्मक नाम है, सच्चा नाम है। महात्मा केवल उस सच्चे नाम की ही महिमा करते हैं। वह सच्चा नाम न लिखने में आता है, न पढ़ने में और न बोलने में। उसको हुज़ूर महाराजजी[१] बिना लिखा कानून (अनरिटन लॉ) और अन-बोली वाणी (अनस्पोकन लेंग्वेज) कह कर समझाया करते थे। ईसा मसीह ने भी बाइबिल में उसी नाम का इशारा किया है। वे कहते हैं, "क्योंकि वे देखते हुए भी नहीं देख पाते और सुनते हुए भी नहीं सुन पाते।"

(मेथ्यू १३:१३)

इसी प्रकार गुरु नानक साहिब उस नाम की महिमा करते हैं—

"अखी बाझहु वेखणा बिणु कंना सुनणा॥
पैरा बाझहु चलणा विणु हथा करणा॥
जीभै बाझहु बोलणा इउ जीवत मरणा॥
नानक हुकमु पछाणि कै तउ खसमै मिलणा॥" (आदि ग्रन्थ, १३९)

इस शब्द को न तो बाहर की आँखें देख सकती हैं, न कान सुन सकते हैं,

१. हुज़ूर महाराज बाबा सावनसिंह जी।

न उस जगह हमारे ये पैर हमें लेकर पहुँच सकते हैं, न वह चीज़ इन हाथों से पकड़ी जा सकती है। उस वस्तु को प्राप्त करने के लिये और उसे प्राप्त करके परमात्मा से मिलने के लिए हमें जीते-जी मरना पड़ता है। ये जितने भी हमारे लफ्ज़ हैं, वर्णात्मक नाम हैं, ये हमारे ज़रिये, साधन या उपाय हैं और वह सच्चा नाम हमारा ध्येय और लक्ष्य है। इन लफ़्ज़ों के प्यार में उलझ कर हमें कोई कौम, मज़हब और मुल्क के झगड़े खड़े नहीं करना है, बल्कि इन लफ़्ज़ों के ज़रिये उस सच्चे शब्द और सच्चे नाम की खोज करनी है। लेकिन हम दुनिया में क्या देखते हैं ? कोई परमात्मा को वाहिगुरु कहकर याद करता है, वह अपने आपको सिख समझना शुरू कर देता है। कोई अल्लाह कहकर पुकारता है, वह मुसलमान बन जाता है। कोई राम कहता है, वह हिन्दू कहलाना शुरू कर देता है। और हमारा एक दूसरे से मिलना-जुलना भी मुश्किल हो जाता है। हम इस बारे में कभी नहीं सोचते कि हमारे लफ़्ज़ हमारे ध्यान या ख़याल को किस ओर ले जाते हैं। अगर आज हमारा ख़याल उस सच्चे शब्द से जुड़ जाता है तो दुनिया के सब झगड़े खत्म हो जाते हैं। यह पहले अर्ज़ किया जा चुका है कि हमारी न कोई कौम है, न मज़हब है और न कोई मुल्क। ये झगड़े तब तक ही हैं जब तक कि हम सच्चे शब्द को भूल बैठे हैं और इन लफ्ज़ों से प्यार लगाये बैठे हैं। हरएक महात्मा हमें इन लफ्ज़ों के भ्रमों से निकाल कर उस सच्चे शब्द से जोड़ने के लिये आता है। जिस प्रकार माता प्यार में आकर अपने बेटे को कई लफ्ज़ों से याद करती है, लेकिन माता का जो बेटे से रिश्ता है वह कोई लफ्ज़ों का रिश्ता नहीं, बल्कि प्यार का रिश्ता है। ये लफ्ज़ तो सिर्फ माता के प्यार को प्रकट करते हैं, उसका वर्णन करते हैं। वह प्यार तो अपने आप में कोई और चीज़ है और ये लफ्ज़ कोई और चीज़ हैं इसी प्रकार मालिक के भक्तों और प्यारों ने कई लफ्ज़ों के द्वारा उस परमात्मा को याद किया है। असल में उस मालिक का कोई नाम नहीं है। जैसा कि कहा गया है—

"बनामे ऊ के ऊ नामे नदारद,
बहर नामे के ख्वानी सर बर आरद।"

अर्थात् उसके नाम से शुरू करता हूं जिसका कि कोई नाम नहीं; जिस नाम से बुलाओ, वह जवाब देता है। ये लफ्ज़ तो मालिक के भक्तों और प्रेमियों के प्यार को प्रकट करते हैं। ये सब लफ्ज़ वर्णात्मक शब्द हैं। जो आत्मा

का परमात्मा से प्यार है, वह सच्चा शब्द और सच्चा नाम है। उस सच्चे शब्द और सच्चे नाम का कोई इतिहास नहीं बतलाया जा सकता और न ही उसका कोई समय निश्चित किया जा सकता है, क्योंकि उस सच्चे शब्द ने दुनिया की रचना की है, उसके आधार पर हमारे खण्ड-ब्रह्माण्ड चल रहे हैं और हम सबको उसका ही आसरा है। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं—

"उतपति परलउ सबदे होवै ॥
सबदे ही फिरि ओपति होवै ॥" (आदि ग्रन्थ, ११७)

शब्द ने ही इस दुनिया की रचना की है। और जिस दिन परमात्मा उस शब्द की ताकत को इस दुनिया से खींच लेगा, यहां प्रलय और महाप्रलय हो जायेगा। यह जितनी भी दुनिया की रचना है, सब पांच तत्वों की बनी हुई है। ये हैं—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश। हरएक वस्तु में कोई न कोई तत्त्व मौजूद है। ये पाँचों ही तत्त्व एक दूसरे के दुश्मन हैं, लेकिन शब्द के कारण और शब्द के आसरे ही ये एक दूसरे का साथ दे रहे हैं। जिस दिन परमात्मा उस शब्द की ताकत को दुनिया से निकाल लेता है, पृथ्वी पानी में घुल जाती है, पानी को अग्नि खुश्क कर देती है, अग्नि को हवा उड़ा ले जाती है और हवा को आकाश खा जाता है और इस सारी दुनिया में धुन्धुकार छा जाता है। उदाहरण के तौर पर, हमारा यह शरीर पाँच तत्त्वों का पुतला है। जब तक उस शब्द की किरण हमारे अन्दर है हम दुनिया में किस तरह दौड़ते फिरते हैं। जिस दिन उस शब्द की किरण या आत्मा को परमात्मा शरीर से निकाल लेता है, हमारा सारा शरीर यानी ये पांचों तत्त्व बेकार हो जाते हैं, ये पांच तत्त्व पांच तत्त्वों में ही जाकर मिल जाते हैं और हमारी हस्ती खत्म हो जाती है। इसी तरह महात्मा समझाते हैं कि उस शब्द के ही आधार पर सारी दुनिया चल रही है। गुरु अर्जुनदेवजी फ़रमाते हैं—

"नाम के धारे सगले जंत ॥ नाम के धारे खंड ब्रहमंड ॥
नाम के धारे आगास पाताल ॥ नाम के धारे सगल आकार ॥"
(आदि ग्रन्थ, २८४)

इसी प्रकार गुरु अमरदास जी लिखते हैं, "नामै ही ते सभ किछु होआ" अर्थात् जो कुछ भी हम दुनिया में देखते हैं सब नाम ने ही पैदा किया है। बाइबिल में सेंट जॉन का कथन है, "आदि में शब्द था और शब्द परमेश्वर के साथ था। यही आदि में परमेश्वर के साथ था। यह सब कुछ उसी के द्वारा उत्पन्न हुआ और जो कुछ उत्पन्न हुआ है उसमें से कोई भी वस्तु

उसके बिना उत्पन्न नहीं हुई।" (जॉन १:१, २, ३)

ऋषि मुनि भी वेदों-शास्त्रों में यही उल्लेख करते हैं कि परमात्मा ने आकाशवाणी के द्वारा संसार की रचना की है। कुरान शरीफ़ में आया है कि उस कलमे या कुन के ज़रिये मालिक ने दुनिया पैदा की। चीन के दर्शन-शास्त्रों में भी यही उल्लेख है कि 'टाओ' ने दुनिया की रचना की है। गुरु नानक साहिब समझाते हैं—

"सबदे धरती सबदे आकास। सबदे सबद भया परगास ॥
सगली सृसटि सबद के पाछे। नानक सबद घटे घट आछे ॥"

शम्स तब्रेज़ भी कहते हैं—

"आलम अज़ सौते ईं ज़हूर गरिफ्त,
अज़ हज़ूरश बिसाते नूर गरिफ्त।"[1]

हम खुद ही अनुमान लगा सकते हैं कि जिस ताकत ने दुनिया की रचना की हो उसका क्या इतिहास हो सकता है, क्या समय और क्या अवधि तय की जा सकती है! उसका समय और उसकी अवधि तो कोई हो ही नहीं सकती।

हमें मुक्ति प्राप्त करने के लिए उस सच्चे शब्द की ज़रूरत है। वह सच्चा शब्द परमात्मा ने सब मनुष्यों के अन्दर रखा है। जब तक हम अपने शरीर के अन्दर उसको खोज करके अपने खयाल को उस सच्चे शब्द से नहीं जोड़ते, अपने आपको उसमें जज़्ब और लवलीन नहीं करते, हम कभी भी मुक्ति प्राप्त नहीं कर सकते। गुरु नानक साहिब समझाते हैं—

"सचै सबदि सची पति होई ॥ बिनु नावै मुकति न पावै कोई ॥"
(आदि ग्रन्थ, १०४६)

तीसरी पातशाही गुरु अमरदास जी फ़रमाते हैं :

"सबदु न जाणहि से अंने बोले, से कितु आए संसारा"
(आदि ग्रन्थ, ६०१)

और

"बिनु सबदै अंतरि आनेरा ॥ न वसतु लहै न चूकै फेरा ॥"
(आदि ग्रन्थ, १२४)

जब तक हम उस शब्द की खोज नहीं करते, हमारे अन्दर से अज्ञान का

१. इस आवाज से आलम या संसार प्रकट हुआ, इसकी उपस्थिति से नूर की चादर प्राप्त हुई।

अँधेरा कभी दूर नहीं हो सकता, न परमात्मा ही मिल सकता है और न कभी देह के बन्धनों से छुटकारा प्राप्त हो सकता है।

"सबदि मरै सोई जनु पूरा ॥ सतिगुरु आख सुणाए सूरा ॥"

(आदि ग्रन्थ, १०४६)

हज़रत ईसा भी बाइबिल में कहते हैं "अगर तुम मेरे शब्द से जुड़े रहते हो तो मेरे सच्चे शिष्य हो ; तभी तुम सच को जान सकोगे और वह सच तुम्हें आज़ाद कर देगा।" (जॉन, ८: ३१, ३२)। आगे फिर कहते हैं कि उस नाम की कमाई के बिना तो मालिक की और कोई भक्ति ही नहीं है। बाइबिल में कथन है, "परमात्मा एक चेतन सत्ता (शब्द) है और जो उसे पूजना चाहें उन्हें चाहिये कि सच्चे और चेतन होकर उसे पूजें।" (जॉन ४:२४)

कबीर साहिब समझाते हैं—

"जब ही नाम हिरदे धरयो, भयो पाप को नास।
जैसे चिनगी आग की, पड़ी पुरानी घास ॥"

जिस समय हमारे हृदय में नाम प्रकट हो जाता है, हमारे सब कर्मों का सिलसिला ख़त्म हो जाता है, जिनकी वजह से हम देह के बन्धनों में फँसे हुए हैं। जिस तरह एक सूखे घास का ढेर चाहे कितना ही बड़ा क्यों न हो, आग की एक चिनगारी उस पूरे ढेर को जला कर खाक कर सकती है; इसी तरह हम संसारी और मनमुख पुरुषों के कितने भी बुरे और खोटे पाप क्यों न हों, यह नाम की कमाई हमारे सब कर्मों का हिसाब ख़त्म कर देती है। दरिया साहिब फ़रमाते हैं—

"दरिया सुमिरै राम को, करम भरम सब खोय।
पूरा गुरु सिर पर तपे, विघन न लागे कोय ॥"

इसी प्रकार गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं—

"आनि आनि समधा बहु कीनी पलु बैसंतर भसम करीजै ॥
महा उग्र पाप साकत नर कीने मिलि साधू लूकी दीजै ॥"

(आदि ग्रन्थ, १३२४)

स्वामीजी कहते हैं :

"शब्द करम की रेख कटावे। शबद शबद से जाय मिलावे ॥"

(सार बचन, ९१)

हज़रत ईसा मसीह भी बाइबिल में कहते हैं—"जो शब्द मैंने तुमसे कहा है उसके द्वारा तुम अब शुद्ध हो गये हो" (जॉन, १५:३)। अर्थात् मैंने जो सच्चा शब्द तुम्हें दिया है उसने तुम्हारे सब पाप धो डाले हैं। कबीर साहिब

तो नाम की यहां तक महिमा करते हैं —

"नाम जपत कोढ़ी भला, चुइ चुइ पड़े जिस चाम।
कंचन देह किस काम की, जा मुख नाहीं नाम।"

कि अगर कोई कोढ़ी भी है, जिसके शरीर से पानी बह रहा है, पर उसका ख़याल अन्दर शब्द या नाम के साथ जुड़ा हुआ है, तो वह उस व्यक्ति से कहीं अच्छा है जो कि सब दुनिया के ऐशो-आराम लेकर बैठा है, मगर परमात्मा को भूले हुए हैं।

जिस सच्चे नाम की महात्मा इतनी महिमा करते हैं, वह नाम कहीं बाहर नही है, हमारे शरीर के अन्दर ही है। गुरु अमरदास साहिब समझाते हैं—

"सरीरहु भालणि को बाहरि जाए ॥
नामु न लहै बहुतु वेगारि दुखु पाए ॥" (आदि ग्रन्थ, १२४)

शरीर के बाहर जो उस नाम को ढूंढने की कोशिश करते हैं वे बेगारियों की तरह अपने कीमती समय को ख़राब करते हैं। बेगारी सारा दिन मेहनत करता है, टूट-टूटकर मरता है, अपना खून पसीना एक करता है, लेकिन आख़िर में उसके पल्ले कुछ भी नहीं पड़ता। अगर कोई चीज़ हमारे घर के अन्दर है तो बाहर खोजने से वह कैसे मिल सकती है?

सुमिरन और ध्यान

हमारा रूहानी सफ़र पैरों के तलवों से लेकर सिर की चोटी तक है और इस सफ़र की दो मंज़िलें हैं। एक आंखों तक है और दूसरी आँखों के ऊपर। हमारे शरीर के अन्दर आत्मा और मन का जो केन्द्र या स्थान है, वह हमारी आंखों के पीछे है, जिसका मुसलमान फ़कीरों ने नुक्ताए-सुवैदा कह कर वर्णन किया है, हज़रत ईसा ने जिसे घर का दरवाज़ा कहकर समझाया है। ऋषियों-मुनियों ने उसका वर्णन शिव-नेत्र और दिव्य-चक्षु कहकर किया है। गुरु नानक साहिब उसे तिल या तीसरा तिल कहते हैं। अगर हम कोई बात भूल जायें और उसे याद करना चाहें तो हमारा हाथ अपने आप ही स्वाभाविक तौर पर माथे पर आकर टिक जाता है। कभी भी हम किसी भूली हुई चीज़ को याद करने के लिये लातों-पैरों पर हाथ नहीं टिकाते। आंखों के बीच व पीछे के स्थान का हमारे सोचने-विचारने के साथ बड़ा गहरा सम्बन्ध है। हरएक मनुष्य का ख़याल यहां से उतर कर नौ द्वारों के ज़रिये तमाम दुनिया के अन्दर फैल रहा है। गुरु रामदास साहिब फ़रमाते हैं

"मनु खिनु खिनु भरमि भरमि बहु धावै, तिलु घरि नही वासा पाईऐ ॥
और
गुरि अंकुसु सबदु दारू सिरि धारिओ, घरि मंदरि आणि वसाईऐ ॥"
(आदि ग्रन्थ, ११७९)

कि हमारा ख़याल तीसरे तिल से उतर कर पल-पल सारी दुनिया में फैलता जाता है और मन एक क्षण के लिये भी आंखों के पीछे नहीं ठहरता जब तक यह आंखों के पीछे नहीं ठहरता तब तक यह अपने घर त्रिकुटी में जाकर नहीं समा सकता।

हमारे शरीर में ये नौ दरवाज़े हैं—दो आंखें, दो कान के छिद्र, दो नाक के छिद्र, मुंह और नीचे दो इन्द्रियों के छिद्र। इन नौ द्वारों के ज़रिये हमारा ख़याल सारी दुनिया में फैलता है। कितनी ही अँधेरी कोठरी के अन्दर जाकर क्यों न बैठ जायें, बाहर कितने ही ताले क्यों न लगे हों, हमारा मन वहां नहीं होगा, बाहर सारी दुनिया मे फैला हुआ होगा। हमारे मन को दलीलें करने की और सोचने की जो आदत पड़ी हुई है, इसको महात्मा सुमिरन करना कहते हैं। सुमिरन करने की हरएक मनुष्य की कुदरती आदत है और जिसके बारे में हम सुमिरन करते हैं उसकी शक्ल भी हमारी आंखों के सामने आकर खड़ी हो जाती है। अगर बच्चों का सुमिरन करते हैं अर्थात् अगर उनकी याद आती है, तो बच्चों की शक्लें आंखों के आगे फिरनी शुरू हो जाती हैं। अगर घर के कारोबार के बारे में ख़याल आता है तो घर के कारोबार आंखों के आगे फिरना शुरू हो जाते हैं। इसको महात्मा ध्यान करना कहते हैं। जिसका हम सुमिरन करते हैं उसका ही ध्यान भी करना शुरू कर देते हैं। जिन-जिन शक्लों और पदार्थों का सुमिरन और ध्यान पकता जाता है, उनके साथ हमारा मोह और प्यार भी पैदा हो जाता है। सुमिरन और ध्यान के द्वारा हम उनके साथ इतना लगाव और प्यार पैदा कर लेते हैं, मन का उनके साथ इतना लगाव और मोह हो जाता है कि रात को हमें सपने भी उनके ही आने शुरू हो जाते हैं। मौत के वक्त उनका ही ख़याल हमारी आंखों के आगे आकर खड़ा हो जाता है और मौत के समय जिस ओर भी हमारा ख़याल होता है उसी रौ में हम बहना शुरू कर देते हैं। 'जहां आसा तहां बासा', मौत के बाद उस मोह के बंधे हुए हम वापस वहीं जाकर जन्म लेते हैं। संसार की शक्लों और पदार्थों का प्यार वापस हमें संसार में ही ले आता है।

महात्मा समझाते हैं कि सुमिरन और ध्यान की हमें स्वाभाविक आदत

पड़ी हुई है। इसलिए, इस स्वाभाविक आदत से फ़ायदा उठाओ और दुनिया के सुमिरन और ध्यान के स्थान पर मालिक के नाम का सुमिरन और ध्यान करो, क्योंकि सुमिरन सुमिरन को काटेगा और ध्यान ध्यान को निकालेगा। पानी की मारी हुई खेती पानी से ही हरी-भरी होती है। दुनिया की नाशवान चीज़ों का सुमिरन करके हम उनसे मोह और प्यार किये बैठे हैं। उनमें से कोई भी चीज़ हमारा साथ देनेवाली नहीं है। उनका मोह और प्यार हमें बार-बार देह के बन्धनों की ओर ले आता है। हमें चाहिए कि उस मालिक के नाम का सुमिरन और ध्यान करें जो कभी फ़नाह नहीं होता, जिसका हमारी आत्मा अंश है और जिसमें जाकर वह समाना चाहती है। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं—

"निहचलु एकु आपि अबिनासी, सो निहचलु जो तिसहि धिआइदा ।।"

(आदि ग्रन्थ, १०७६)

वह परमात्मा निश्चल है। वह कभी जन्म और मरण के दु:खों में नहीं आता। जो उसका ध्यान करते हैं, उससे प्यार करते हैं, उसका सुमिरन करते हैं, वे भी निश्चल हो जाते हैं। उनका भी जन्म और मरण के दु:खों से छुटकारा हो जाता है।

हमें आंखों के पीछे अपना ख़याल जमाकर परमात्मा के नाम का सुमिरन करके अपने फैले हुए ख़याल को वापस इकट्ठा करके इसी केन्द्र पर एकाग्र करना है। यह इतना सरल और आसान तरीका है कि छोटे बच्चे से लेकर बूढ़े तक इसे आसानी से कर सकते है, क्योंकि सुमिरन करने की आदत तो स्वाभाविक ही सबको पड़ी हुई है। हमें दुनिया का सुमिरन करने की इस आदत का फ़ायदा उठाकर उस मालिक के नाम के सुमिरन में मन को लगाना है। जब सुमिरन के द्वारा हमारा ख़याल उलटकर आंखों की तरफ इकट्ठा होता है तो मन उस जगह टिकता और ठहरता नहीं है, क्योंकि उसे बार-बार नौ द्वारों के ज़रिये बाहर दौड़ने की आदत पड़ी हुई है। अँधेरे और शून्य में मन को खड़ा करना बड़ा मुश्किल हो जाता है। जब तक हम मन को किसी के स्वरूप के ध्यान का आधार नहीं देते तब तक उसे वहां ठहराने वाली कोई चीज़ नहीं मिलती और हमारे ख़याल के लिये वहां ठहरना बहुत मुश्किल हो जाता है। इसलिए महात्मा समझाते हैं कि मन को वहां खड़ा करने के लिए किसी-न-किसी के स्वरूप के ध्यान का आधार देना बड़ा ज़रूरी है।

ध्यान किसके स्वरूप का करना चाहिए ? यह बड़ी सोच और विचार

करने योग्य बात है, क्योंकि जिसके भी स्वरूप का ध्यान करेंगे, स्वाभाविक ही हमारा उसके साथ मोह और प्यार पैदा हो जायेगा और जहां वह जायेगा, हम भी उसके मोह और प्यार में बंधे हुए वहीं जायेंगे। इस बात पर विचार और गौर करने के लिए हम सारी दुनिया को अपनी आंखों के आगे रख कर अच्छी तरह परख कर सोचते हैं कि कौन-सी चीज़ हमारे ध्यान के योग्य हो सकती है। जितनी भी दुनिया की चीज़ें बनी हुई हैं यह सब पांच तत्त्वों की बनी हुई हैं। हरएक चीज़ के अन्दर कोई-न-कोई तत्त्व मौजूद है। मनुष्य के अन्दर पाँचों तत्त्व मौजूद हैं, इसलिए महात्मा हमें रचना का सिरमौर या अशरफ़-उल-मख़लूकात और पांच तत्त्वों का पुतला कहते हैं।

तत्त्वों की दृष्टि से हम रचना को पांच श्रेणियों में बांट सकते हैं। पहली श्रेणी वह है जिसमें पानी का तत्त्व प्रधान है। इसमें फल, फूल, सब्जी और पेड़-पौधे आते हैं। अगर हम पांच तत्त्वों के पुतले होकर पेड़ों, पौधों आदि का ध्यान करेंगे तो हम उन्नति नहीं कर सकते; क्योंकि उनका ध्यान हमें उन्हीं के जामे में यानि पेड़ों, पौधों आदि के जामे में ले जायेगा। अतएव, पूरा वनस्पति जगत हमारे ध्यान के योग्य नहीं है। दूसरी श्रेणी कीड़े-मकोड़े, सांप, बिच्छू वगैरह की है जिनके अन्दर दो तत्त्व—पृथ्वी और अग्नि—मौजूद हैं। ये भी हमारे ध्यान के काबिल नहीं हो सकते। तीसरी श्रेणी पक्षियों की है जिनमें तीन तत्त्व हैं, हवा, पानी और अग्नि। अगर हम पांच तत्त्वों वाले मनुष्य होकर गरुड़, मोर, चिड़ियों आदि का ध्यान करेंगे तो हम इन पक्षियों के जामे में आ जायेंगे। हमारा उद्देश्य तो मनुष्य के जामे से भी ऊपर जाने का है। इसलिए यह श्रेणी भी हमारे ध्यान के योग्य नहीं है। चौथी श्रेणी चौपायों, जानवरों की है, जिनमें बुद्धि या आकाश नहीं है, बाकी चार तत्त्व मौजूद हैं। अतएव गाय, बैल, घोड़े वगैरह भी हमारे ध्यान के काबिल नहीं। पांचवीं श्रेणी खुद मनुष्य की है और हर मनुष्य में पांचों ही तत्त्व मौजूद हैं। इसलिए स्वाभाविक तौर पर मन में यह विचार आता है कि मनुष्य मनुष्य का ध्यान धरे तो क्यों धरे? खासकर आजकल के जमाने में जब हमारे सबके अधिकार समान हैं।

अब मनुष्य मनुष्य का ध्यान नहीं धरता, देवी-देवता किसी ने आज तक देखे नहीं और मालिक के स्वरूप का पता नहीं। यहाँ आकर बहुत-से लोग खुदा की हस्ती को ही अस्वीकार कर बैठते हैं। और बाकी सब भी इस उलझन में फंस जाते हैं कि अब कौन-सी चीज हमारे ध्यान के योग्य हो

सकती है। महात्मा एक बहुत अच्छी मिसाल देकर समझाते हैं कि अगर एक कमरे में बहुत से रेडियो रख दें, जिनका सम्बन्ध किसी बैटरी या बिजली से न हो तो हम कभी किसी देश की खबरें नहीं सुन सकते। लेकिन उनका सम्बन्ध अगर किसी बैटरी या बिजली से हो जाए तो हम जिस देश की चाहें खबरें सुन सकते हैं। इसी प्रकार हमें उन मालिक के भक्तों और प्यारों की खोज करनी है जिनका सम्बन्ध या तार उसके साथ जुड़ा हुआ है। वे अपनी भक्ति और प्यार के बंधे हुए वापस जा कर उसी परमात्मा से मिल जाते हैं, इसलिए हम भी उनके स्वरूप का ध्यान करके, उनके साथ प्यार लगाकर वापस जाकर उसी परमात्मा के अन्दर समा जायेंगे। गुरु नानक साहिब समझाते हैं—

"गुर की मूरति मन महि धिआनु ॥" (आदि ग्रन्थ, ८६४)

और

"अकाल मूरति है साध संतन की, ठाहर नीकी धिआन कउ ॥"

(आदि ग्रन्थ, १२०८)

अर्थात् सतगुरु के तसव्वुर या ध्यान को हमेशा मन में रखो। यही स्वामी जी महाराज का भी उपदेश है :

"गुरु का ध्यान कर प्यारे। बिना इसके नहीं छुटना ॥"

(सार बचन, १४३)

ईसा-मसीह भी इसी ओर इशारा करते हैं जब वे कहते हैं कि मैंने उस परमात्मा को देखा है, तुमने मुझे देखा है, इसलिए तुमने भी उस परमात्मा को देखा है, "और जो मुझे देखता है वह मेरे भेजनेवाले को देखता है।" (जॉन १२:४५)

तात्पर्य यही है कि सत्गुरु के स्वरूप के ध्यान के द्वारा ही हम वापस जाकर उस परमात्मा में समायेंगे। ध्यान के द्वारा हमारे ख़याल को आंखों के पीछे ठहरने की आदत पड़ जाती है। ध्यान हमें अपने सत्गुरु का करना है जिन्होंने मालिक की भक्ति का तरीका और रास्ता हमें बताया है।

जब ध्यान के द्वारा हमारा ख़याल एकाग्र हो जाता है तब हमें अपने आप पता लग जाता है कि आंखों के पीछे एक बहुत मीठी और सुरीली आवाज़ आ रही है। यह आवाज़ मालिक की दरगाह से उठ रही है और यह हरएक मनुष्य के अन्दर है। यहां किसी कौम, मज़हब या मुल्क का सवाल नहीं हैं, चाहे हम हिन्दू होकर अन्दर जायें या सिक्ख, मुसलमान या ईसाई धर्म में होकर जायें। जो भी भाग्यशाली अपने ख़याल को आँखों के पीछे

एकाग्र करता है, उसका खयाल उस आवाज़ के साथ जुड़ जाता है। इस अमल या क्रिया को महात्मा जीते जी मरना कहते हैं, क्योंकि खयाल को आंखों के पीछे एकाग्र करके उस मीठी और सुरीली आवाज़ को सुनने से आत्मा और मन नौ द्वारों से आज़ाद हो जाते हैं और इनका संम्बन्ध इस दुनिया से बिल्कुल टूट जाता है। दुनिया के सब दुःख भूलकर मनुष्य अपने अन्दर शब्द की स्थायी खुशी का अनुभव करने लगता है। कबीर साहिब इस बारे में लिखते हैं—"कबीर जिसु मरने ते जगु डरै, मेरे मनि आनंद।" गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं—

"नानक जीवतिआ मरि रहीऐ ।। ऐसा जोगु कमाईऐ ।।"

(आदि ग्रन्थ, ७३०)

बाइबिल में सेण्ट पॉल भी कहते हैं, "मैं प्रतिदिन मरता हूं।"

अहले इस्लाम की हदीस भी कहती है, "मौतूआ कबलन्ता मौतू" अर्थात् मौत से पहले मरो।

दादू साहिब जो कि एक प्रसिद्ध महात्मा हुए हैं अपनी वाणी में लिखते हैं—

"जीवत माटी हो रहो, साईं सनमुख होय।
दादू पहले मर रहो, पीछे मरे सब कोय ।।"

तीसरी पातशाही गुरु अमरदास जी फ़रमाते हैं—

"सतिगुरु सेवे ता मलु जाए ।। जीवतु मरै हरि सिउ चितु लाए ।।"

(आदि ग्रन्थ, ११६)

दरिया साहिब फ़रमाते हैं—

"दरिया गुरु गरवा मिला, करम किया सब रद्द।
झूठा भरम छुड़ाय कर, पकड़ाया सत शब्द।।"

इसी प्रकार गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं—

"मिटै अंधेरा अज्ञानता भाई, कमल होवै परगासु ।।
गुरबचनी सुखु ऊपजै भाई, सभि फल सतिगुर पासि ।।" (आदि ग्रन्थ, ६३९)

उस मीठी और सुरीली आवाज़ को ही, जो कि आँखों के पीछे आ रही है, महात्मा शब्द या नाम कह कर पुकारते हैं। ये जितने भी हमारे मज़हब हैं, सबके रीति-रिवाज या शरीयत अलग-अलग हैं, परन्तु जो वास्तविक आध्यात्मिकता है, असलियत है, हकीकत है, रूहानियत की बुनियाद और सच्चाई का मूल है, वह हर धर्म या मज़हब की तह में एक ही है। उस रूहानियत को भिन्न-भिन्न महात्माओं ने भिन्न-भिन्न लफ्ज़ों के द्वारा

समझाने की कोशिश की है, लेकिन मतलब सबका उसी रूहानियत से है, उसी नाम या शब्द से है जो हरएक मनुष्य के अन्दर मौजूद है। हमें बाहरी लफ़्ज़ों की भिन्नता में नहीं उलझना चाहिये। हमें तो अपने शरीर के अन्दर उस केन्द्र पर अपने ख़याल को एकाग्र करना है, जहां वह शब्द दिन-रात धुनकारें दे रहा है। गुरु नानक साहिब समझाते हैं–

"नउ दर ठाके धावतु रहाए ।। दसवै निज घरि वासा पाए ।।
ओथै अनहद सबद वजहि दिनु राती, गुरमती सबदु सुणावणिआ ।।"

(आदि ग्रन्थ, १२४)

अर्थात् जब हम अपने शरीर के नौ द्वारों से ख़याल को निकालकर आंखों के पीछे एकाग्र करते हैं तो हम अपने असली घर के दरवाज़े पर आ जाते हैं। हमारा असली घर सचखंड है जहां परमात्मा का निवास है। उसका दरवाज़ा आंखों के पीछे तीसरा तिल है। घर के उस दरवाज़े की निशानी का वर्णन करते हुए कहते हैं कि उस जगह अनहद शब्द दिन-रात धुनकारें दे रहा है। जब तक उस घर के दरवाज़े पर ख़याल को इकट्ठा करके शब्द को नहीं पकड़ते, तब तक हमारा मुक्ति प्राप्त करने का सवाल ही पैदा नहीं होता। हज़रत ईसा भी इसी ओर इशारा करते हैं जब वे कहते हैं, "ढूंढो और तुम्हें मिलेगा, खटखटाओ और वह तुम्हारे लिये खोला जायेगा।" (मैथ्यू ७:७)

आन्तरिक मार्ग

अगर हमें अपने घर के अन्दर जाना है तो सबसे पहले घर के दरवाज़े की तलाश करनी पड़ती है। निज-घर का वह दरवाज़ा आंखों के पीछे तीसरी आंख, एक आँख या तीसरा तिल है। उसी को खोलने के लिये हम उसको खटखटाते हैं अर्थात् बार-बार सुमिरन और ध्यान के द्वारा अपने फैले हुए ख़याल को आंखों के पीछे उलट कर इकट्ठा करते हैं। जब बार-बार खटखटाने से अर्थात् सुमिरन और ध्यान से हमारा ख़याल इकट्ठा हो जाता है, तब उस घर का दरवाज़ा खुल जाता है। फिर हमें घर जाने का रास्ता मिलता है। जब हम अपने ख़याल को वहां जाकर शब्द के साथ जोड़ते हैं तो वह शब्द का मार्ग खुल जाता है। उसके द्वारा हम वापिस जाकर परमात्मा को पा सकते हैं। तुलसी साहिब समझाते हैं–

"कुदरती काबे की तू महराब में सुन गौर से,
आ रही धुर से सदा तेरे बुलाने के लिये ।।"

मुसलमानों का ख़याल है कि हज अथवा काबे की यात्रा करने से हम

मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं। तुलसी साहिब फ़रमाते हैं कि जो असली काबा है वह हमारा शरीर है। पैरों के तलवों से हमारा हज शुरू होता है और सिर की चोटी पर जाकर ख़त्म होता है। इस हज की दो मंज़िलें हैं। एक आंखों तक और दूसरी आंखों से ऊपर। मौलवी हमेशा मेहराब के अन्दर खड़ा होकर बांग देता है। हमारे माथे की बनावट भी मेहराब की तरह है। जो मालिक की दरगाह की ओर से कुदरती कलमा आ रहा है, वह इस मेहराब यानी माथे के अन्दर आ रहा है। जब हम उस आवाज़ या कलमे को पकड़ते हैं, तो हम उसके पीछे-पीछे चलकर अपनी मंज़िले-मकसूद पर पहुंच जाते हैं। गुरु अमरदास जी फ़रमाते हैं—

इसु काइआ अंदरि वसतु असंखा ।। गुरमुख साचु मिले ता वेखा ।।
नउ दरवाजे दसवै मुकता, अनहद सबदु वजावणिआ ।।"

(आदि ग्रन्थ, ११०)

हमारा यह शरीर सिर्फ हड्डियों और मांस का ही नहीं बना हुआ है और न सिर्फ पांच-छः फुट लम्बा मिट्टी का पुतला ही है। परमात्मा ने इसके अन्दर अनगिनत सामान अर्थात् ख़ज़ाने रखे हैं। बल्कि वह परमात्मा भी इसके अन्दर बैठा हुआ है। जब तक कोई सच्चा सतगुरु नहीं मिलता तब तक हम शरीर में उस परमात्मा को देखने और अन्दर खोज करने के तरीके का पता नहीं लगा सकते। आप समझाते हैं कि शरीर के दो हिस्से हैं, एक आँखों से नीचे और दूसरा आँखों से ऊपर। आँखों के नीचे नौ द्वारों में सिर्फ इन्द्रियों के भोग और विषयों-विकारों के स्वाद हैं। जब तक हमारा ख़याल आंखों से नीचे-नीचे है, हम मुक्ति प्राप्त नहीं कर सकते, क्योंकि मुक्ति का दरवाज़ा आंखों के पीछे है। उसकी यही पहचान है कि उस जगह अनहद शब्द धुनकारें दे रहा है। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं—

"गुर सबदि मिलहि से विछुड़हि नाही सहजे सचि समावणिआ ।।"

(आदि ग्रन्थ, १२३)

जब हम सतगुरु के ज़रिये शब्द को पकड़ लेते हैं तब शब्द फिर हमे छोड़ता नहीं, अपने साथ लेकर परमात्मा में ही समा जाता है। हमको उस शब्द के ज़रिये अपने अन्दर अपने घर का रुख या दिशा स्थिर करना है और शब्द के प्रकाश के द्वारा अपने घर का रास्ता देखना है। हमारी आत्मा की जो देखने की शक्ति है उसे महात्मा निरत कहते हैं और जो सुनने की शक्ति है उसे सुरत कहते हैं। सुरत के द्वारा शब्द की आवाज़ को सुनना है और निरत के द्वारा उसके प्रकाश को देखना है। उदाहरण के तौर पर अगर हम

अपने घर से शाम को सैर करते हुए कहीं दूर निकल जाते हैं, रात का अँधेरा सिर पर छा जाता है, हाथ को हाथ नहीं सूझता, अपने घर के रास्ते का कुछ पता नहीं लगता और न घर की दिशा का ही कुछ अन्दाज़ रहता है, तब हम वापस अपने घर पर पहुंचने के लिए उस अँधेरे में चुपचाप खड़े होकर बड़े गौर से किसी न किसी आवाज़ को सुनने की कोशिश करते हैं जो कि हमारे घर की ओर से आ रही हो। कहीं रेडियो की आवाज़ हो या कोई कुत्ता भौंकता हो या ऐसी ही कोई और आवाज़ आती हुई सुनाई दे, तो हम उस आवाज़ को सुनकर अपने घर की दिशा स्थिर कर लेते हैं कि हमारा घर आगे की तरफ है या पीछे की ओर है अथवा दाईं या बाईं तरफ है। दिशा का पता लग जाने पर भी रास्ते में अँधेरा है, ऊंची-नीची ज़मीन है, पानी या झाड़ियां वगैरह हैं, इसलिये अगर हमारे हाथ में कोई टार्च या लालटेन हो तो हम उसके प्रकाश के द्वारा ऊंची-नीची जमीन देखते हुए, कांटों, झाड़ियों वगैरह से बचते हुए अपना रास्ता ढूंढकर सही-सलामत वापस अपने घर पहुंच जाते हैं। इसी प्रकार महात्मा उपदेश देते हैं कि हमारे हरएक के अन्दर परमात्मा ने हमारे लिये वह आवाज़ भी रखी है और वह रोशनी भी रखी है। हमें उस आवाज़ को सुनकर अपने घर की दिशा स्थिर करनी है और रोशनी के द्वारा अपना रूहानी सफर तय करना है। कबीर साहिब भी उसकी ओर इशारा करते है—"दीवा बले अगम का, बिन बाती बिन तेल"। वह अगम की जोत हमारे सबके अन्दर बगैर बत्ती और तेल के जल रही हैं। पलटू साहिब भी अपना यही अनुभव समझाते हैं—

"उलटा कुआँ गगन में तिसमें जरै चिराग।
तिसमें जरै चिराग बिना रोगन बिन बाती।
छः रुत बारह मास रहत जरता दिन राती॥"

हमारे सिर के ऊपर के हिस्से को आप उलटा कुआं कहकर वर्णन करते हैं। कुएं का मुंह ऊपर और पैंदा नीचे होता है। हमारे सिर का पैंदा ऊपर और मुंह नीचे की ओर है अर्थात् उसकी बनावट कुएं से उलटी है। आप फ़रमाते हैं कि जब हम नौ द्वारों से ख़याल को निकाल कर आंखों के पीछे इकट्ठा करेंगे तो हम उस उलटे कुएं के अन्दर आ जायेंगे। उस जगह हरएक के अन्दर एक जोत जल रही है। उस जोत को जलने के लिये न तो किसी बत्ती की ज़रूरत है और न ही किसी तेल की। बाहर हम जितनी जोतें जलाते हैं उनको बत्ती और तेल की ज़रूरत होती है। अगर बत्ती ख़त्म हो जाये या तेल समाप्त हो जाये तो वे बुझ जाती हैं। परन्तु जिस

जोत का पलटू साहिब वर्णन करते हैं वह जोत चौबीस घण्टे हमारे सबके अन्दर जल रही है। छहों ऋतु, बारहों महीने और दिन-रात यह जोत हर वक्त हर मनुष्य के अन्दर जलती रहती है। यही स्वामीजी महाराज फ़रमाते हैं—

"बसो तुम आय नैनन में, सिमट कर एक यहां होना।
दुई यहां दूर हो जाये, दृष्टि जोत में धरना।।" (सार बचन, १५२)

जिस समय हम नौ द्वारों से ख़याल को निकालकर आंखों के पीछे एकाग्र करते हैं, तो हम द्वैत से एकता में आ जाते हैं। जब तक हमारी तवज्जह या हमारा ध्यान दोनों आंखों के द्वारा बाहर की ओर फैल रहा है, हम द्वैत में बैठे हैं। जब ख़याल को समेट कर आंखों के पीछे इकट्ठा करते हैं, तो एकता में आ जाते हैं। फिर हमें इस केन्द्र पर उस जोत के दर्शन होते हैं। हज़रत ईसा ने बाइबिल में इसी का ज़िक्र किया है, "शरीर की ज्योति आंख है। इसलिये अगर तेरी आंख एक हो जाये तो तेरा सारा शरीर प्रकाश से भर जायेगा" (मेथ्यू ६:२२)। कि अगर तुम एक आंख वाले हो जाओगे अर्थात् दोनों आंखों के पीछे ख़याल को इकट्ठा कर लोगे, तो तुम्हारा सारा शरीर नूर और प्रकाश से भर जायेगा। गुरु नानक साहिब भी यही उपदेश देते हैं—

"अंतरि जोति निरंतरि बाणी साचे साहिब सिउ लिव लाई।।"
(आदि ग्रन्थ, ६३४)

हरएक मनुष्य के अन्दर वह जोत जल रही है। उस जोत के अन्दर से एक बहुत मीठी और सुरीली आवाज़ निकल रही है। जो उस जोत के दर्शन करते है और उस वाणी की सुरीली आवाज़ को सुनते हैं, उनका दुनिया से मोह व प्यार उठ जाता है और मालिक से प्यार पैदा हो जाता है। हम सबको मालूम है कि जितने हमारे धार्मिक स्थान हैं, क्या गुरुद्वारा, क्या मस्जिद, क्या मन्दिर, क्या गिरजा, सबके अन्दर हम जोत जलाते हैं और घण्टे और शंख जैसी आवाज़ पैदा करते हैं। किसी गिरजे में चले जायें, वहां मोमबत्तियां जलाई जाती हैं और सबसे ऊपर घण्टा लटका रहता है जो प्रार्थना आदि शुरू होने से पहले बजाया जाता है। इसी तरह बौद्ध मन्दिरों में भी हमेशा जोत जलती रहती है, जिसे वे अखंड जोत कहते हैं और जिसे कभी बुझने नहीं देते। लेकिन जिस अखंड जोत का उल्लेख महात्मा बुद्ध ने किया है वह तो हमारे सबके अन्दर है। उनके मन्दिरों में बिगुल वगैरह भी बजाये जाते हैं। जैनियों और हिन्दुओं के मन्दिरों में भी जोत

जलाई जाती है और घण्टे बजाये जाते हैं। मुसलमान भी मज़ारों पर रात को चिराग जलाते हैं। मौलवी ऊंची-ऊंची आवाज़ से बांग देता है या नक्कारा बजाता है। हमने कभी भी यह विचार नहीं किया होगा कि हरएक धार्मिक स्थान पर जोत क्यों जलाई जाती है, घण्टा क्यों बजाया जाता है? असल में ऋषियों-मुनियों, सन्तों-महात्माओं, पीरों-पैगम्बरों ने समझाया था कि हमारा शरीर ही सबसे बड़ा और असली गुरुद्वारा, मन्दिर, मस्जिद या गिरजा है और इस शरीर के अन्दर जोत जल रही है और शब्द की आवाज़ (जो शुरू-शुरू में घण्टे और शंख जैसी है) हो रही है। लेकिन हम दुनिया के जीव ऐसे मालिक के भक्तों के जाने के बाद उनकी असली शिक्षा को भूल गये और बाहरमुखी हो गये।

अन्दर उस शब्द की आवाज़ को सुनकर और प्रकाश को देखकर हमारा मन बिंध जाता है, वश में आ जाता है और वापस अपने ठिकाने पहुँच जाता है। आत्मा और मन की गांठ खुल जाती है। गुरु अमरदास साहिब समझाते हैं—

"गुर गिआन अंजनु सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥
जोती जोति मिली मनु मानिआ,
हरि दरि सोभा पावणिआ ॥" (आदि ग्रन्थ, १२४)

जब सतगुरु के ज्ञान और अनुभव के अनुसार हम आंखों में शब्द रूपी सुरमा डालते हैं तो अज्ञानता का अंधेरा हमारे रास्ते से दूर हो जाता है तथा परमात्मा का नूर और प्रकाश नज़र आना शुरू हो जाता है। हिन्दुस्तान में यह आम रिवाज है कि किसी को दिखाई कम देता है तो उसे सुरमे का प्रयोग करने की सलाह दी जाती है। आम धारणा है कि सुरमा डालने से नज़र फिर ठीक हो जाती है और अच्छी तरह दिखाई देना शुरू हो जाता है। गुरु अमरदास जी यह मिसाल देकर समझाते हैं कि हम दुनिया के जीव आंखों के होते हुए भी अन्धे हुए बैठे हैं, हमें अपने अन्दर कुछ भी नज़र नहीं आता, अगर हम शब्द के सुरमे का प्रयोग करेंगे अर्थात् अपने ख़याल को अन्दर समेट कर शब्द के साथ जोड़ेंगे, तो हमारा अज्ञानता का अँधेरा दूर हो सकेगा और हमें अपने अन्दर प्रकाश दिखाई दे सकेगा, जिसे देखकर हमारा मन मान जायेगा अर्थात् वश में आ जायेगा। यह मन जो इन्द्रियों के भोगों का गुलाम बना बैठा है उस प्रकाश में लीन हो जायेगा और हर समय शब्द की आवाज़ को सुनकर व पकड़कर ब्रह्म अथवा त्रिकुटी में अपने

ठिकाने पर पहुंच जायेगा। तब कहीं हमारी आत्मा मन के पंजे से आज़ाद होती है और तब जाकर हमारी 'जोती' (आत्मा) उस 'जोत' (परमात्मा) में मिलती है और मालिक की दरगाह में जाकर असली इज़्ज़त और शोभा प्राप्त करती है। हज़रत ईसा भी बाइबिल में कहते हैं, "मैं इस जगत में न्याय के लिये आया ताकि जो नहीं देखते वे देखें और जो देखते हैं वे अन्धे हो जावें।" (जॉन ९:३९)। अर्थात् मैं इस दुनिया में इसलिये आया हूं कि जो लोग आंखें होने के बावजूद अन्धे हैं और उस मालिक को नहीं देखते मैं उनको इस दुनिया की शक्लों और पदार्थों की ओर से अन्धा कर दूँ और मालिक की ओर से आंखोंवाला अथवा सुजाखा कर दूँ। गुरु अमरदास साहिब यही समझाते हैं—

"जिन अंतरि सब्रदु आपु पछाणहि गति मिति तिनही पाई॥"

(आदि ग्रन्थ, ९१०)

जो अन्दर उस शब्द को पकड़कर अपने आपको पहचानने के योग्य बनते हैं असली गति और मालिक से मिलने का रास्ता उन्हीं को प्राप्त होता है। फिर आप उपदेश करते हैं—

"सबदै सादु जाणहि ता आपु पछाणहि॥" (आदि ग्रन्थ, ११५)

कि शब्द और नाम की लज्ज़त प्राप्त करके ही हम अपने आपको पहचानने के काबिल बनते हैं। हम अपने आपको तब पहचानते हैं जब हमारी आत्मा के ऊपर से सब गन्दे-गन्दे गिलाफ या आवरण उतर जाते हैं। इसलिए महात्मा हमें मुक्ति प्राप्त करने का सिर्फ यही साधन समझाते हैं कि हम अपने ख़याल को अन्दर शब्द या नाम के साथ जोड़ें। गुरु नानक साहिब एक और स्थान पर फ़रमाते हैं—

"सबदि मरै सो मरि रहै फिरि मरै न दूजी वार॥" (आदि ग्रन्थ, ५८)

स्वामीजी महाराज समझाते हैं—

"नाम के रंग में रंग जा। मिले तोहे धाम निज अपना॥"

(सार बचन, १४३)

ग्रंथों-पोथियों, वेदों-शास्त्रों में महात्मा उस नाम या शब्द की महिमा लिखते हैं। उनको पढ़ने से हमें समझ आ जाती है कि हमें नाम की कमाई क्यों करनी है और किस तरह करनी है। लेकिन ग्रंथों-पोथियों में वह नाम नहीं है, सिर्फ नाम को प्राप्त करने का तरीका है। उनके पढ़ने में मुक्ति नहीं है, जो पढ़ते हैं उस पर अमल करने में मुक्ति है। जिस तरह डॉक्टर की किताबों में नुस्खे या बीमारियों का इलाज करने के तरीके लिखे हुए हैं,

लेकिन किताबों में दवाइयां नहीं हैं। कोई बीमार सारा दिन डाक्टरी की किताब पढ़कर ही स्वास्थ्य लाभ नहीं कर सकता। बल्कि, जो कुछ उस किताब में लिखा है उसके अनुसार दवा का उपयोग करके ही ठीक हो सकता है। दवा अपने आप में कोई और चीज़ है और किताबों में दवा का ज़िक्र कुछ और है। इसी प्रकार अगर कोई सारा दिन खाना बनाने की किताबें पढ़ता रहे जिनमें तरह-तरह के पकवान बनाने के तरीके लिखे हुए हैं तो उनको पढ़ने से उसे न तो खाने का स्वाद आ सकता है और न पेट ही भर सकता है। जब वह किताब के अनुसार खाना बनाकर खा लेता है तो पेट भी भर जाता है और स्वाद भी आ जाता है। इसी प्रकार अगर किसी को रेल से सफ़र करना है तो पहले टाइमटेबल या मार्ग-दर्शिका को अच्छी तरह पढ़ा जाता है। उससे पता चलता है कि रेल की यात्रा कितनी लम्बी है, कौन-कौन से स्टेशन रास्तें में आयेंगे, कितना किराया लगेगा और कितने बजे गाड़ी स्टेशन से रवाना होगी। परन्तु उस टाइमटेबल को सिर्फ पढ़ने से ही हम अपनी मंज़िले-मक्सूद पर नहीं पहुंच जाते। जब स्टेशन पर जाकर, टाइम-टेबल के अनुसार टिकिट लेकर गाड़ी पर सवार हो जाते हैं, तभी हम मंज़िले-मक्सूद पर पहुंचने के अधिकारी बनते हैं। इस नुक्ते और स्थान पर आकर आज आम दुनिया भूली बैठी है। हम अपने ग्रन्थों-पोथियों, वेदों और शास्त्रों के पढ़ने-पढ़ाने को ही मुक्ति का साधन समझे बैठे हैं। और अक्सर तो हम खुद भी नहीं पढ़ते, बल्कि कोई पण्डित या ज्ञानी हमारे घर में पढ़ता रहता है और हम दुनिया के काम-काज में डूबे रहते हैं और मन में समझ लेते हैं कि न मालूम हम कितना फायदा उठा रहे हैं। अगर खुद बैठकर पढ़ें या सुनें तो उन महात्माओं के वचन हमारे कानों में पड़ें, हमें अपनी कमज़ोरियों और कमियों का पता लगे और फिर उनको दूर करने का मन में शौक पैदा हो, तरीके और साधन का पता लगे, तब तो उस पढ़ने-पढ़ाने का भी फायदा हो। हमने तो उसे सिर्फ एक रस्म-रिवाज या परिपाटी बनाया हुआ है कि शायद उस पण्डित के पढ़ने से ही हम मुक्ति प्राप्त कर लें। महात्मा हमारे खयालों को इन भ्रमों में से निकालते हैं। स्वामी जी महाराज फ़रमाते हैं—

"वेद शास्त्र सिमृत और पुराणा। पढ़-पढ़ सब पंडित हारा॥
बिन सतगुरु और बिन शब्द सुरत। कोई न उतरे भौ पारा॥"

(सार बचन, ११४)

इसी प्रकार गुरु नानक साहिब उपदेश देते हैं–

"पड़ीअहि जेते बरस बरस, पड़ीअहि जेते मास ।।
पड़ीऐ जेती आरजा, पड़ीअहि जेते सास ।।
नानक लेखै इक गल होरु हउमै झखणा झाख ।। (आदि ग्रन्थ, ४६७)

चाहे हम सब दिन पढ़ते रहें, सारे महीने, सारे साल पढ़ते रहें, सारी ज़िन्दगी और सांस-सांस पढ़ते रहें तो भी सिर्फ एक ही चीज़ हमारे हिसाब में लिखी जाएगी कि क्या हमारी सुरत अथवा आतमा उस शब्द या नाम को पकड़ती है ? अगर नहीं, तो हमारा सब पढ़ना-पढ़ाना फ़िज़ूल है। यही तुलसी साहिब अपनी वाणी में लिखते हैं–

"चार अठारह नौ पढ़े, खट पढ़ खोया मूल।
सुरत शबद चीन्हें बिना, ज्यों पंछी चण्डूल ।।"

चाहे कोई चारों वेद, अठारहों पुराण, नौ व्याकरण और छः शास्त्र भी पढ़ ले, लेकिन अगर उसने शब्द-सुरत का ज्ञान प्राप्त नहीं किया तो उसकी हालत चण्डूल पक्षी के जैसी है, जिसके लिए कहा जाता है कि जैसी बोली वह सुनता है उसी की नकल कर लेता है। कबीर साहिब का कथन हैं–

"पोथी पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोय ।
ढाई अच्छर प्रेम के, पढ़ै सो पंडित होय ।।"

बुल्ले शाह भी यही उपदेश देते हैं–

"इलमों बस करीं ओ यार, इक्को अलफ़ तेरे दरकार।
बहुता इल्म इज़राईल[1] ने पढ़िया, झुगा झाहा उसदा सड़िआ।।"

बाइबिल में हज़रत ईसा भी यही कहते हैं, "हे पिता ! लोक परलोक के स्वामी ! मैं तेरा शुक्रिया करता हूं कि तूने इन बातों को ज्ञानियों और बुद्धिमानों से छिपाकर रखा और बालकों पर प्रकट किया है।"(मैथ्यू (११:२५)। आपके कहने का तात्पर्य है कि हे मालिक ! तूने इस गूढ़ रहस्य को सांसारिक और तर्क बुद्धिवाले लोगों से परे रखा है और केवल उन्हीं पर प्रकट किया है जो बच्चों के समान सरल और निष्कपट हैं।

हम ग्रन्थों-पोथियों, वेदों-शास्त्रों को पढ़कर वाचक ज्ञानी बन जाते हैं। वाद-विवाद करने की आदत पैदा हो जाती है। अपने आपको बड़े गुणी-ज्ञानी, आलिम-फ़ाज़िल समझना शुरू कर देते हैं और दूसरों को नासमझ व अज्ञानी मानने लग जाते हैं। मन में हौमैं, घमंड और अहंकार आ जाता है, जबकि मालिक की भक्ति के मार्ग पर तो पढ़-लिखकर भी बच्चों के

१. शैतान ।

समान सरल बनना पड़ता है। ग्रन्थ-पोथियां और वेद-शास्त्र क्या हैं? गुरु साहिबानों, ऋषियों-मुनियों, पीरों-पैगम्बरों ने मेहनत की और मालिक से मिलाप किया। जो कुछ नज़ारे उन्होंने अन्दर देखे और जो रुकावटें उन्होंने अन्दर महसूस कीं और देखीं, उन्होंने हमारे फायदे के लिए इन धर्म-पुस्तकों में उनका वर्णन कर दिया। ये पवित्र पुस्तकें उन महात्माओं के निजी अनुभवों का रेकार्ड या लेखा है। हमें उनके पढ़ने से वे अनुभव नहीं हो सकते, जब तक, जो कुछ हम पढ़ते हैं, उसके अनुसार अपने अन्दर खोज और जांच-पड़ताल नहीं करते। यह खोज और तहकीकात करने का तरीका सिर्फ शब्द या नाम की कमाई है। वह नाम कहीं बाहर नहीं है, हमारे सबके शरीर के अन्दर है और हमारे लिए ही परमात्मा ने हमारे अन्दर रखा है। लेकिन उसकी खोज किस तरह करनी है, इसके भेद या तरीके का हमें सन्तों से ही पता लगता है। गुरु नानक साहिब समझाते हैं—

"अनहद बाणी पूंजी, संतन हथि राखी कूंजी॥" (आदि ग्रन्थ, ८९३)

गुरु अमरदासजी का कथन है—

"सतिगुर हथि कुंजी होरतु दर खुल्है नाही,
गुर पूरै भागि मिलवणिआ॥" (आदि ग्रन्थ, १२४)

सन्तों की संगति

जिस परमात्मा ने हमें पैदा किया है, उसने हमारे लिये नाम की दौलत हमारे अन्दर रखकर उसका भेद सन्तों के हवाले कर दिया है। इसलिए उसे प्राप्त करने के लिए हमें सन्तों-महात्माओं की संगति करनी पड़ती है।

"जिसका गृहु तिनि दीआ ताला, कुंजी गुर सउपाई॥
अनिक उपाव करे नही पावै, बिनु सतिगुर सरणाई॥"
(आदि ग्रन्थ, २०५)

गुरु अमरदास जी लिखते हैं:

"बिनु गुर दाते कोइ न पाए, लख कोटि जे करम कमाए॥"
(आदि ग्रन्थ, १०५७)

पांचवी पातशाही गुरु अर्जुनदेव जी का कथन है:

"कहु नानक प्रभि इहै जनाई॥ बिनु गुर मुकति न पाइऐ भाई॥"
(आदि ग्रन्थ, ८६४)

गुरु नानक साहिब फिर फ़रमाते हैं:

"सतिगुरु सेवे सदा सुखु पाए॥
सतिगुरि अलखु दिता लखाई॥" (आदि ग्रन्थ, ७५४)

और :

"मत को भरमि भुलै संसारि ॥ गुरु बिनु कोइ न उतरसि पारि ॥"

(आदि ग्रन्थ, ८६४)

गुरु रामदास जी फ़रमाते हैं :

"संतहु सुनहु सुनहु जन भाई गुरि काढी बाह कुकीजै ॥
जे आतम कउ सुखु सुखु नित लोड़हु तां सतिगुर सरनि पवीजै ॥"

(आदि ग्रन्थ, १३२६)

महात्मा सतगुरु की संगति व सोहबत पर बहुत ही ज़ोर देते हैं कि उनके बगैर हमारा मुक्ति प्राप्त करने का कोई सवाल ही पैदा नहीं होता। गुरु अर्जुनदेवजी फिर कहते हैं—

"सासत बेद सिमृति सभि सोधे, सभि एका बात पुकारी ॥
बिनु गुर मुकति न कोऊ पावै, मनि वेखहु करि बीचारी ॥"

(आदि ग्रन्थ, ४९५)

"बिनु सतिगुर को नाउ न पाए, प्रभि ऐसी बणत बणाई हे ॥"

(आदि ग्रन्थ, १०४६)

मालिक ने अपने मिलने का यही कुदरती कानून रखा है। जब भी वह मिलता है, सन्तों-महात्माओं के ज़रिए ही मिलता है। हज़रत ईसा भी बाइबिल में यही कहते हैं, "हे सब मेहनत करने वालो और बोझ से दबे हुए लोगो ! मेरे पास आओ, मैं तुम्हें चैन प्रदान करूँगा।" (मेथ्यू ११:२८) अर्थात् ऐ दुनिया वालो, तुम जो गुनाहों के बोझ से लदे और थके हुए हो, मेरे पास आओ, मैं तुमको आराम और शान्ति दूंगा। आगे फिर कहते हैं—

"मैं ही मार्ग, हकीकत और जीवन हूँ। बिना मेरे जरिए कोई भी पिता के पास नहीं पहुंच सकता। अगर तुमने मुझे पहचाना होता तो मेरे पिता को भी पहचान लेते; पर अब से तुम उसे जानते हो और तुमने उसे देखा भी है।" (जॉन १४:६,७)

अर्थात् तुम अपने पिता से सिर्फ मेरे ही द्वारा मिल सकते हो। मैं ही उससे मिलाने का साधन और रास्ता हूं। अगर तुमने मुझे पहचान लिया है तो तुमने उस परमात्मा को पहचान लिया और देख लिया है। आगे फिर कहते हैं, "और जो मुझे देखता है वह मेरे भेजनेवाले को देखता है।" (जान १२:४५) अर्थात् मैंने उस परमात्मा को देखा है, तुमने मुझे देखा है, इसलिए तुमने भी उस परमात्मा को देखा है। इसी प्रकार एक और जगह कहते हैं, "जगत की ज्योति मैं हूं; जो मेरे पीछे चलेगा वह अँधेरे में नहीं

चलेगा, बल्कि जीवन की ज्योति पा जाएगा।'' (जान ८:१२)। तुलसी साहिब भी यही उपदेश देते हैं—

''तुलसी या संसार में, पांच रतन हैं सार।
साध-संग, सतगुरु-शरन, दीन, दया, उपकार॥''

कबीर साहिब भी फ़रमाते हैं—

''सोना काई ना लगे, लोहा घुन नहीं खाय।
बुरा भला जो गुरु भगत, कबहुँ नरक न जाय॥''

अपनी बाणी में स्वामीजी महाराज भी यही ज़िक्र करते हैं—

''यह देही फिर हाथ न आवे। फिरो चौरासी बन में॥
गुरु सेवा कर गुरू रिझाओ। आओ तुम इस ढंग में॥
गुरु बिन तेरा और न कोई। धार वचन यह मन में॥''

(सार बचन, ११६)

फिर फ़रमाते हैं—

''बिन मेहर गुरु नहि पावे। बिन शब्द हाथ नहि आवे॥
सुर्त खैंच चढ़ावो गगनी। धुन शब्द सुनो यह करनी॥

(सार बचन, १६१)

कबीर साहिब भी फ़रमाते हैं—

''कबीर गुरु की भगति बिन, नार कूकरी होय।
गली गली घूमत फिरे, टूक न डाले कोय॥
कबीर गुरु की भगति बिन, राजा गदहा होय।
माटी लदे कुम्हार की, घास न डारे कोय॥
उज्जल पहने कापड़ा, पान सुपारी खाय।
कबीर गुरु की भगति बिन, बांधा जमपुर जाय॥''

फिर फ़रमाते हैं—

''गुरु बिन माला फेरते, गुरु बिन करते दान।
गुरु बिन सब निस्फल गया, बूझौ बेद पुरान॥''

चौथी पातशाही गुरु रामदास जी का कथन है—

''बिनु गुरु साकतु कहहु को तरिआ॥ हउमै करता भवजलि परिआ॥
बिनु गुरु पारु न पावे कोई॥ हरि जपिऐ पारि उतारा हे॥''

(आदि ग्रन्थ, १०३०)

और फ़रमाते हैं :

''जिना सतिगुरु पुरखु न भेटिओ से भागहीण वसि काल॥

ओइ फिरि फिरि जोनि भवाईअहि विचि विसटा करि विकराल ।।"

(आदि ग्रन्थ, ४०)

जिन्हें पूरा सतगुरु नहीं मिला वे बड़े भाग्यहीन हैं। वे हमेशा काल के मातहत या अधीन रहते हैं। उन्हें बार-बार जन्म-मरण के दुःखों में आना पड़ता है, यहां तक कि उनको अन्त में गन्दगी के कीड़े तक बनकर दुःख उठाना पड़ता है। जो पूरे सतगुरु की खोज नहीं करते, वे शब्द या नाम के साथ कभी नहीं जुड़ सकते। वे अपने कर्मों के अनुसार चौरासी के जेलखाने में दुःख और मुसीबतें भुगतते है। असल में वे दुनिया में आकर जीते हुए भी मुर्दे के समान ही रहते हैं।

गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं—

"सतिगुर की सेव न कीनीआ, हरि नामि न लगो पिआरु ।।
मत तुम जाणहु ओइ जीवदे, ओइ आपि मारे करतारि ।।"

(आदि ग्रन्थ, ५८६)

हरएक मनुष्य खुशी और शान्ति की तलाश करना चाहता है और भिन्न-भिन्न वस्तुओं में अलग-अलग स्थानों में जाकर सुख व शान्ति ढूंढता है। लेकिन असली खुशी सिर्फ शब्द में ही है, जिसके साथ हमारा ख़याल सिर्फ सतगुरु के ज़रिये ही जुड़ सकता है। वह शब्द बेशक हमारे अन्दर है, लेकिन अगर हमें किसी सन्त-महात्मा की संगति नहीं मिली है तो हम उस ऊँची, सच्ची और पवित्र धुन को कभी भी नहीं पकड़ सकते। अतएव, हमें चाहिए कि पूरे गुरु की तलाश करें, जो हमारे ख़याल को उस शब्द से जोड़ कर हमें मालिक से मिला दे। और कोई वस्तु हमें असली और सच्ची खुशी नहीं दे सकती। तीसरी पातशाही श्री अमरदास जी फ़रमाते हैं कि मनुष्य अगर संसार में अनेक प्रकार के भोग भोग रहा है, नौ खण्ड पृथ्वी का राज भी कर रहा है, तो भी उसे बिना सतगुरु के सच्चा सुख नहीं मिल सकेगा और वह बार-बार जन्मता और मरता रहेगा।

साँई बुल्ले शाह क्या ज़ोर के साथ पुकारते हैं—

"बिन मुरशद कामिल बुल्लया तेरी एवें गई इबादत कीती।"

फिर कहा है—

"बुल्ला शौह दी सुनो हिकायत, हादी फड़यां होई हिदायत।
मेरा साँई शाह इनायत, ओहू लंघावे पार ।।"

सन्तों-महात्माओं को हमारे अन्दर घोलकर कुछ नहीं डालना है। वह दौलत हमारे अन्दर ही है, हमारे लिये ही परमात्मा ने रखी है और अन्दर

से ही मिलेगी। सन्त तो सिर्फ युक्ति और साधन समझाते हैं। जिस तरह विद्या की ताकत हरएक मनुष्य के अन्दर जन्म से ही है, लेकिन सोयी हुई है। जब हम स्कूलों-कॉलेजों में जाते हैं, शिक्षकों के आदेश में चलते हैं, रातों को जागते हैं, तब वह सोयी हुई ताकत हमारे अन्दर से ही जाग उठती है। फिर हम बी. ए., एम. ए. कर लेते हैं, विद्वान बन जाते हैं। जो विद्यार्थी शिक्षकों से डरकर स्कूलों-कॉलेजों में नहीं जाते, विद्या की ताकत उनके अन्दर भी है, लेकिन वह सोती आई है और सोती ही चली जाती है। जो विद्या प्राप्त कर लेते हैं उनके अन्दर शिक्षक घोलकर तो कुछ नहीं डालते, सिर्फ उनकी संगति करने से ही विद्यार्थियों की बुद्धि और प्रतिभा तेज़ हो जाती है। हम सबको यह मालूम है कि दूध के अन्दर घी है, परन्तु अगर हमें युक्ति या तरीका पता न लगे तो हम कभी भी उस घी को दूध में से प्राप्त नहीं कर सकते। घी हमेशा दूध से ही निकलता है, लेकिन युक्ति के बिना प्राप्त नहीं किया जा सकता।

गुरु नानक साहिब समझाते हैं—

"कासट महि जिउ है बैसंतरु, मथि संजमि काढि कढीजै ॥
रामु नामु है जोति सबाई, ततु गुरमति काढि लईजै ॥"

(आदि ग्रन्थ, १३२३)

जिस प्रकार लकड़ी के अन्दर आग होती है, परन्तु वह हमें दिखाई नहीं देती और न हम उस अग्नि से कोई फायदा उठा सकते हैं। जब लकड़ी पर लकड़ी रगड़ते हैं तो इस युक्ति के द्वारा अग्नि भी प्रकट कर लेते हैं और उससे फायदा भी उठा लेते हैं। इसी तरह वह राम नाम की जोत हमारे सबके अन्दर है, परन्तु सतगुरु के उपदेश पर चलकर ही हम उसे प्राप्त कर सकते हैं। गुरु नानक साहिब बड़ी अच्छी मिसाल देकर समझाते हैं—

"घरि रतन लाल बहु माणक लादे मनु भ्रमिआ लहि न सकाईऐ ॥
जिउ ओडा कूपु गुहज खिन काढै तिउ सतिगुरि वसतु लहाईऐ ॥"

(आदि ग्रन्थ, ११७६)

हमारे घर के अन्दर अर्थात् शरीर के अन्दर परमात्मा ने नाम रूपी अपार दौलत रखी है, परन्तु हमारा मन बाहरमुखी होकर भ्रमों में उलझा बैठा है। जब तक हम अपने शरीर में प्रवेश करके खोज नहीं करते, उस दौलत को प्राप्त नहीं कर सकते। आम तौर पर पुरानी आबादियों के नीचे बने बनाए कुए मिट्टी से भरकर दब जाते हैं। हम उन ज़मीनों पर चलते-फिरते हैं परन्तु हमें मालूम नहीं होता कि इस जगह कुआ मिट्टी के नीचे

दबा हुआ है। लेकिन ओड[1] लोग हमें विद्या और हुनर के द्वारा बता देते हैं कि अमुक जगह मिट्टी की खुदाई करो तो बना बनाया कुआ मिल जायेगा। ओड लोग कुआ बनाकर उसे मिट्टी से दबाकर हमें पता नहीं देते हैं उनको यह ज्ञान और इल्म होता है, जिसका फायदा उठाकर हम उस कुए का उपयोग शुरू कर सकते हैं। इसी तरह महात्माओं को भी हमारे अन्दर कोई वस्तु नहीं डालनी है। उनको इल्म और ज्ञान है कि हमारे अन्दर वह परमात्मा है और उससे मिलने का रास्ता भी हमारे अन्दर ही है। सन्त हमें अन्तर में उस रास्ते पर लगा देते हैं। इसलिए हमें सन्तों-महात्माओं की तलाश करनी पड़ती है, उनकी संगति और सोहबत में रहना पड़ता है। हमारा मन हमेशा संगति का असर लेता है। अगर हम शराब पीने वालों की संगति करते हैं तो हमें भी वैसी ही आदत पड़ जाती है। अगर जुआरियों की संगति करते हैं तो वैसे-वैसे ख़याल हमारे मन में भी लहरें उठाना शुरू कर देते हैं। अगर हम मालिक के भक्तों और प्रेमियों की संगति करते हैं तो उनको देखकर हमारे अन्दर भी परमात्मा से मिलने का शौक और प्यार पैदा हो जाता है क्योंकि वे परमात्मा की भक्ति में लगे हुए हैं। गुरु नानक साहिब समझाते हैं—

"साकत सूतु बहु गुरझी भरिआ, किउ करि तानु तनीजै ॥
तंतु सूतु किछु निकसै नाही, साकत संगु न कीजै ॥" (आदि ग्रन्थ, १३२४)

अगर सूत में बहुत सारी गुत्थियां हों, तो उससे कभी भी कपड़ा नहीं बुना जा सकता। इसी प्रकार, मनमुखों का मन सारी दुनिया में फैला हुआ हैं। वे दिन-रात इन्द्रियों के भोगों, विषयों-विकारों में ही लगे रहते हैं। उनकी संगति और सोहबत में जाकर हमारा ख़याल किस प्रकार परमात्मा की भक्ति की ओर जा सकता है? फिर उपदेश देते हैं—

"साकत नर प्रानी सद भूखे, नित भूखन भूख करीजै ॥
धावतु धाइ, धावहि प्रीति माइआ, लख कोसन कउ बिथि दीजै ॥"
(आदि ग्रन्थ, १३२३)

मनमुख लोग हमेशा भूखे रहते हैं। परमात्मा उन्हें जो वे चाहें चीज़ बख़्श दे, कितनी ही नेक संतान हो, धन-दौलत हो, दुनिया में मान, इज्ज़त और बड़ाई हो, स्वास्थ्य हो, लेकिन वे फिर भी कभी परमात्मा से परमात्मा को नहीं मांगते, वे हमेशा परमात्मा से अपनी दुनिया की इच्छाएं और

१. ओड—जल-गणक या पानी-पंडित जो ज़मीन के अन्दर पानी की उपस्थिति बतलाते हैं।

तृष्णाएँ पूरी करवाना चाहते हैं। जो लोग हमेशा दुनिया के पदार्थों और शक्लों की ओर ही भागते हैं, गुरु नानक साहिब समझाते हैं कि ऐसे लोगों की कभी भूले भटके भी संगति नहीं करना चाहिये, बल्कि उनसे लाख कोस दूर रहना चाहिये। फिर किसकी संगति करना चाहिए ? आप उपदेश करते हैं–

"गोबिंद जीउ सत संगति मेलि हरि धिआईऐ ॥" (आदि ग्रन्थ, ११७६)

कि हे परमात्मा ! सन्तों-महात्माओं की संगति और सोहबत दे, ताकि तेरा पता लगे, तेरी ओर हमारा ख़याल जाये। महात्मा हमेशा संगति पर ज़ोर देते हैं, क्योंकि सन्तों के सत्संग में जाकर ही पता लगता है कि आत्मा और परमात्मा का रिश्ता क्या है ? आत्मा और परमात्मा के बीच में रुकावट किस चीज़ की है ? और वे रुकावटें हमारे अन्दर से किस तरह दूर हो सकती हैं ? महात्मा सत्संग उसको नहीं कहते जहां एक कौम दूसरी कौम की निन्दा करती हो, जिस जगह एक मजहब दूसरे मज़हब का गला काटने के उपाय सोचता हो या जहां पुराने राजा-महाराजाओं की पुरानी कथा-कहानियां सुनाई जाती हों। सन्तों के सत्संग में किसी की भी निन्दा और बुराई नहीं की जाती। वे सिर्फ हमारे अन्दर मालिक से मिलने का शौक और प्यार पैदा करते हैं और हमें मालिक से मिलने का रास्ता, तरीका और साधन बतलाते हैं। यह तो बहुत ही अनुचित बात है कि अगर कोई हमारी बुद्धि और इच्छा के अनुसार परमात्मा की भक्ति नही करता तो हम उसे डंडे मारना और तलवारों सें डराना शुरू कर दें। बल्कि हमें उन लोगों को प्यार से समझाना चाहिये कि इस रास्ते पर चलकर हमें यह फायदा प्राप्त हुआ है, अगर तुम्हारी बुद्धि और समझ में आता है तो तुम भी इस रास्ते पर चलकर यह फायदा उठा सकते हो। यह तो बहुत ही बुरी और नामुनासिब बात है कि अगर कोई किसी की अक्ल के अनुसार मालिक की भक्ति नहीं करता तो उसे भला-बुरा कहना शुरू कर दिया जाये। गुरु नानक साहिब समझाते हैं–

"सत संगति कैसी जाणीऐ, जिथै एको नामु वखाणीऐ ॥" (आदि ग्रन्थ, ७२)

असली सत्संग तो पूरे गुरु की मौजूदगी में ही हो सकता है। जब तक पूरा और सच्चा गुरु न हो जो आन्तरिक शब्द का रास्ता बता सके, जो खुद शब्द और परमात्मा के साथ मिला हुआ हो और दूसरों को भी उसके साथ मिलाने की शक्ति रखता हो, तब तक उसको असलो सतसंग नहीं कह सकते। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं–

"सतिगुर बाझहु संगति न होई ।। बिनु सबदे पारु न पाए कोई ।।"

(आदि ग्रन्थ, १०६८)

कबीर साहिब भी सतसंग की इस प्रकार महिमा करते हैं—

"कबीर संगत साध की, जौ की भूसी खाय।
खीर खांड भोजन मिले, साकत संग न जाय ।।"

इसलिये आगे समझाते हैं—

"एक घड़ी आधी घड़ी, आधी से भी आध।
कबीर संगत साध की, कटे कोट अपराध ।।"

यही स्वामीजी महाराज का उपदेश है—

"मित्र तेरा कोई नहीं संगियन में । पड़ा क्यों सोवे इन ठगियन में।
चेत कर प्रीत करो सतसंग में । गुरु फिर रंग दे नाम अरंग में ।।"

(सार बचन, ११६)

एक और स्थान पर समझाते हैं—

"अटक तू क्यों रहा जग में । भटक में क्या मिले भाई ।।
खटक तू धार अब मन में । खोज सतसंग में जाई ।।"

(सार बचन, १२१)

मौलाना रूम भी अपने कलाम में फ़रमाते हैं—

"हम नशीनीं साअ़ते बा औलिया, बहतर अज़ सद साला ताअ़त बेरया।"

कि मालिक के भक्तों और प्यारों की एक घड़ी की भी संगति या सोहबत मन और बुद्धि की सौ साल की बन्दगी से बेहतर है। अगर रास्ता पूरब की तरफ है और हम पश्चिम की तरफ दौड़ रहे हैं तो हम अपनी मंज़िले-मक्सूद से और दूर होते चले जा रहे हैं। हरएक महात्मा सत्संग के ज़रिये ही हमारे अन्दर मालिक से मिलने का शौक और प्यार पैदा करता है।

सन्तों का असली स्वरूप

सन्तों का असली स्वरूप शब्द और नाम ही होता है। वे शब्द या नाम में से ही आते हैं और हमारे ख़याल को शब्द या नाम के साथ जोड़कर उसी नाम में वापस जाकर समा जाते हैं। मनुष्य का उस्ताद या शिक्षक मनुष्य ही हो सकता है। देवी-देवता किसी ने देखे नहीं, परमात्मा के स्वरूप का किसी को पता ही नहीं, जब तक कोई हमें हमारे जैसा मनुष्य होकर न समझाये तब तक उस मालिक के बारे में हमें कुछ भी समझ नहीं आ सकती। हज़रत ईसा ने उन महात्माओं को 'देह-धारी शब्द' कहा है, अर्थात् वह शब्द जब मनुष्य के जामे में आ जाता है हमारे लिए देहधारी गुरु बन

जाता है। परमात्मा और शब्द एक ही चीज़ हैं। हज़रत ईसा कहते हैं–

"मैं और मेरे पिता एक ही हैं।" (जान १०:३०)

"आदि में शब्द था, शब्द परमात्मा के साथ था और शब्द ही परमात्मा था।" (जॉन १:१)

"और शब्द देहधारी हुआ और हमारे बीच में आकर रहा।" (जान १:१४)

"और यीसू, पवित्र आत्मा (शब्द) से परिपूर्ण, जोर्डन से लौटा।" (ल्यूक ४:१)

हज़रत ईसा खुद अपने बारे में लिखते हैं, "मैं पिता में से प्रकट हुआ, और इस दुनिया में आया हूँ, मैं दुनिया को छोड़ूंगा और वापस पिता में समा जाऊँगा" (जान १६:२८)। आगे कहते हैं, "जब मैं दुनिया में उनके साथ था मैंने उन्हें तेरे नाम से जोड़े रखा। जिनको तूने मुझे दिया था उनको मैंने सँभाला और किसी को भी नहीं खोया" (जान १७:१२) अर्थात् हे मालिक! जितने समय मैं दुनिया में रहा, मैंने उन सब रूहों की सँभाल की जो तूने मेरे सुपुर्द की थीं और उनमें से किसी को भी गुमराह नहीं होने दिया।

मालिक और मालिक के भक्तों में कोई भिन्नता या भेद नहीं है। वे मालिक की भक्ति करके मालिक का ही रूप हो जाते हैं। श्रुति का कथन है, "ब्रह्म वेत्ता ब्रह्म एव भवति" कि ब्रह्म को जानने वाला ब्रह्म ही हो जाता है। जिस प्रकार, समुद्र की लहरें समुद्र में से उठती हैं और वापस समुद्र में ही जाकर समा जाती हैं। इसी प्रकार जो लहर का समुद्र के साथ रिश्ता है, वही मालिक के भक्तों का, सन्तों का उस मालिक से रिश्ता होता है। सन्त उस सतनाम के समुद्र की लहर होते हैं जो दुनिया में आकर हमारे ख़याल को शब्द या नाम के साथ जोड़कर, बल्कि हमको साथ ले जाकर, उसी सतनाम के समुद्र में समा जाते हैं। परमात्मा जब हमें देह के बन्धनों से छुड़ाना चाहता है तो वह खुद सतगुरु के अन्दर बैठकर, हमारे ख़याल को शब्द के साथ जोड़ कर हमें वापस ले जाकर अपने में ही मिला लेता हैं। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं–

"हरि का सेवकु सो हरि जेहा ॥ भेदु न जाणहु माणस देहा ॥
जिउ जल तरंग उठहि बहु भाती, फिरि सललै सलल समाइदा ॥"

(आदि ग्रन्थ, १०७६)

फिर फ़रमाते हैं–

"सतिगुर विचि आपु रखीओनु करि परगटु आखि सुणाइआ ॥"

(आदि ग्रन्थ, ४६६)

गुरु और परमात्मा एक ही है । दोनों में सिर्फ इतना ही भेद है कि परमात्मा गुरु का ही वास्तविक स्वरूप है और गुरु मनुष्य के चोले में परमात्मा है। जब तक परमात्मा, गुरु का रूप धारण करके हम मनुष्यों के चोले में हमारी सतह पर नहीं आता, वह हमारे साथ अपना सम्बन्ध पैदा नहीं कर सकता। परमात्मा गुरु के अन्दर बैठकर ही बोलता है।

"बिन काया ब्रह्म कैसे बोले। ब्रह्म बोले काया के ओले ।।"

गुरु नानक साहिब समझाते हैं–

"गुरु महि आपु रखिआ करतारे ।।" (आदि ग्रन्थ, १०२४)

एक अन्य स्थान पर लिखते हैं :

"समुंदु विरोल सरीरु हम देखिआ, इक वसतु अनूप दिखाई ।।
गुर गोविंदु गोविंदु गुरू है, नानक भेदु न भाई ।।" (आदि ग्रन्थ, ४४२)

गुरु साहिब समझाते हैं कि हमने शरीर के अन्दर शब्द की कमाई करके देखा है कि परमात्मा और गुरु एक ही हैं, दोनों में कोई अन्तर नहीं। फिर लिखते हैं, "गुरु परमेसर एको जान।" मौलाना रूम फ़रमाते हैं—

"दर बशर रू पोश कर्द अस्त आफ़ताब ।।"

अर्थात् मनुष्य के अन्दर (रूहानी) सूर्य ने खुद को छिपा रखा है। यही बुल्लेशाह समझाते हैं, "मौला आदमी बन आया ।" कबीर साहिब भी यही फ़रमाते है—

"राम कबीरा एक है, कहन सुनन को दोय।
दोय कर सोइ जाने, जे सतगुरु मिला न होय।।"

बाइबिल में ईसा मसीह कहते हैं, मुझमें विश्वास करो, मैं पिता में हूँ और पिता मुझमें है।" (जॉन १०:३८ तथा १४:११)।

स्वामीजी महाराज भी यही फ़रमाते हैं—

"राधास्वामी धरा नर रूप जगत में।
गुरु होय जीव चिताये ।।" (सार बचन, ६)

राधास्वामी से मतलब उस कुल मालिक से है। नामदेवजी कहते हैं—

"आतम राम देह धरिओ, तन मन हरि को देखो।
कहत नामदेव बलि बलि जाऊँ, हरि भज अवर न लेखो ।।"

शम्स तब्रेज़ का कथन है—

"आँ पादशाहे आज़म दर बस्तः बूद मुहकम।

पोशीदा दल्के आदम यानी के बर दर आमद ॥"[1]

सच्चे गुरु हमें बाहरी रीति-रिवाजों या परिपाटियों में नहीं फँसाते, बल्कि अन्दर शब्द की कमाई करने का तरीका बतलाते हैं। पूर्ण गुरु हमें अपने शरीर के अन्दर ही असली घर जाने का रास्ता दिखाते हैं। गुरु नानक साहिब समझाते हैं—

"घर महि घरु देखाई देइ सो सतिगुरु पुरखु सुजाणु ॥
पंच सबद धुनिकार धुनि तह बाजै सबदु निसाणु ॥" (आदि ग्रन्थ, १२९०)

यही स्वामीजी महाराज का अनुभव है—

"घर में घर गुरु दिखलावें। धुन शब्द पाँच बतलावें ॥"
(सार बचन, १६१)

महात्मा समझाते हैं कि हमारे निज घर सचखण्ड के मार्ग में हमारे अन्दर पाँच मंज़िलें हैं। हज़रत ईसा ने भी यही इशारा किया है, "मेरे पिता के घर में बहुत से निवास स्थान हैं।" (जॉन १४:२)। हरएक मंज़िल का अपना-अपना शब्द या धुन है। सच्चा गुरु हमें उन पाँच मंज़िलों से ले जाकर, पाँचों शब्दों या धुनों से जोड़कर परमात्मा तक पहुंचा देता है। असल में शब्द तो एक ही है, परन्तु हर मंज़िल में उसकी अलग-अलग आवाज़ है और अलग-अलग प्रकाश है। उदाहरण के तौर पर, एक नदी अपने स्रोत से निकलती है और समुद्र में जाकर समाती है। लेकिन, उस नदी की भिन्न-भिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न आवाज़ होती है। जहाँ से निकलती है वहाँ उसकी और आवाज़ है जिस समय बड़ी-बड़ी चट्टानों और खड्डों में से गुज़रती है उसकी आवाज़ और है, जब वह झरना बनकर गिरती है तो आवाज़ बदल जाती है, जब वह मैदानों में फैलती है उसकी आवाज़ और ही हो जाती है और जब नदी समुद्र में समाती है तो आवाज़ भिन्न हो जाती है। परन्तु हर जगह नदी एक ही होती है। कबीर साहिब भी अपने प्रसिद्ध पद "कर नैनों दीदार महल में प्यारा है" में पाँच शब्दों का ज़िक्र करते हैं और शब्द की साधना पर ज़ोर देते हैं—

"साधो सबद साधना कीजै।
जा सबद से परगट भये सब, सोई सबद गह लीजै ॥"

१. उस महान बादशाह ने हमें बाहर निकालकर दरवाज़ा पक्के तौर पर बन्द कर दिया है। फिर वह आदमी की पोशाक में छिपकर खुद ही दरवाज़ा खोलने आ गया है।

मौलाना रूम साहिब फ़रमाते हैं—

"बहफ्तम फलक नौबत पंज याबी।
चो खेमा ज़ शश ज़हत बरकन्दा बाशी॥"

कि जब तू नीचे के छः चक्रों से निकल कर सातवें आसमान में पहुँच जाएगा तो वहाँ पाँच नौबतें बजती हुई सुनेगा। इसी प्रकार शम्स तबरेज़ अपने कलाम में लिखते हैं—

"खामोश पंज नौबत विशनौज़ आसमाने।
काँ आसमाने बेरूँ ज़ाँ हफ़्तो ईं शश आमद॥"

कि खामोशी के साथ आसमान की पांच नौबतें या धुनें सुन। वह आसमान हमारे सात आसमानों और छः चक्रों के परे है। फिर एक अन्य स्थान पर लिखते हैं—

"हर रोज़ पंज नौबत बर दरे ऊ।
हमें को बन्द कोसे कि ब्रयाई॥"

कि हर रोज़ उसके दरवाज़े पर पांच खुदाई नक़्क़ारे बजते हैं। आनंद साहिब में हम रोज़ पढ़ते हैं—

"बाजे पंच सबद तितु घरि सभागै॥
घरि सभागै, सबद बाजे, कला जितु घरि धारीआ॥
पंच दूत तुध वसि कीते, काल कंटकु मारिआ॥" (आदि ग्रन्थ, ९१७)

क़बीर साहिब फ़रमाते हैं:

"पंजे सबद अनाहद बाजे, संगे सारिंगपानी॥
कबीरदास तेरी आरती कीनी निरंकार निरबानी॥"(आदि ग्रन्थ, १३५०)

बेणीजी ग्रन्थ साहिब में फ़रमाते हैं:

"पंच सबद निरमाइल बाजे॥ढुलके चवर संख घन गाजे॥
दलि मलि दैतहु गुरमुखि गिआनु, बेणी जाचै तेरा नाम॥"
(आदि ग्रन्थ, ९७४)

पूर्ण गुरु

पूरा गुरु वही है जो इन पांचों शब्दों के द्वारा हमें अपने सच्चे घर ले जाता है। स्वामीजी महाराज भी अपनी वाणी में यही लिखते हैं कि शब्द स्वरूपी, शब्द-अभ्यासी गुरु की ही तलाश करनी चाहिये—

"गुरु सोई जो शब्द सनेही। शब्द बिना दूसर नहिं सेई॥
शब्द कमावे सो गुरु पूरा। उन चरनन की हो जा धूरा॥

और पहिचान करो मत कोई। लक्ष अलक्ष न देखो सोई ।।
शब्द भेद लेकर तुम उनसे । शब्द कमाओ तुम तन-मन से ।।''

(सार बचन, १०५)

हज़रत ईसा भी यही कहते हैं कि अगर पूरा महात्मा नहीं होगा तो वह खुद अपने शिष्यों के साथ डूब जायेगा । फ़रमाया है, "अगर अन्धा अन्धे का मार्ग-दर्शन करेगा, तो दोनों गड्ढे में गिरेंगे ।" (मेथ्यू १५:१४) । गुरु नानक साहिब भी यही समझाते हैं --

"सतिगुरु पूरा सबदु सुनाए ।। अनदिनु भगति करहु लिव लाए ।।" (पृ. १०५५)

पलटू साहिब भी यही कहते हैं-

"धुन आने जो गगन की, सो मेरा गुरुदेव ।"

पूरे और सच्चे गुरु की यही पहचान है कि वे हमारी आत्मा को अनहद शब्द के साथ जोड़ देते हैं। जिसे ऐसा गुरु मिल जाता है वह अपने अन्दर उस शब्द की ऊंची और मीठी आवाज़ को सुनना शुरू कर देता है, जो कि शुरू-शुरू में घण्टे की आवाज़ के समान होती है । गुरु अर्जुनदेव लिखते हैं, "घंटा जाका सुनिऐ चहु कुंट ।" गुरु नानक साहिब पूरे गुरु की महिमा में फ़रमाते हैं-

"कहु नानक जिसु सतिगुरु पूरा ।। बाजे ताकै अनहद तूरा ।।"

(आदि ग्रन्थ, ३९३)

आगे फ़रमाते हैं :

"अखंड कीरतनु तिनि भोजनु चूरा ।। कहु नानक जिसु सतिगुरु पूरा ।।"

(आदि ग्रन्थ, २३६)

वह अनहद शब्द ही अनन्त और कभी बन्द न होने वाला और ऊंचा और सच्चा संगीत है। वह शब्द ही हमेशा हमारे अन्दर गूंजने वाली ईश्वरीय आवाज़ है। सच्चे गुरु अपने सेवक को उस शब्द को सुनने का भेद और तरीका बतलाते हैं, उस अनहद शब्द को अन्तर में सुनने और उसी में जाकर समाने की रीति बतलाते हैं। गुरु खुद उस शब्द या नाम के साथ जुड़ा होता है। वह हमें भी उस शब्द या नाम के साथ जोड़कर परमात्मा में लीन कर देता है। हजरत ईसा ने भी यही इशारा किया है कि तुम मेरे अन्दर समाये हुए हो, मैं उस परमात्मा के अन्दर समाया हुआ हूं, इसलिए तुम भी उस परमात्मा के अन्दर समाये हुए हो । वे इस प्रकार कहते हैं, "जिसने मुझे देखा है उसने पिता को देखा है। क्या तुम सच नहीं मानते कि मैं पिता में और पिता मेरे अन्दर है ।" (जॉन १४:९:१०) ।

स्वामीजी महाराज लिखते हैं–

"शब्द भेद तुम गुरु से पाओ। शब्द माहिं फिर जाय समाओ ॥"

(सार बचन, ९१)

"वास्तव में गुरु का असली रूप शब्द ही है। शरीर तो उस शब्द ने सिर्फ दुनिया के जीवों को समझाने-बुझाने और चेताने के लिए ही धारण कर रखा है। और न ही जीवों का असली रूप यह शरीर है। यह शरीर तो गुरु और शिष्य दोनों को ही यहीं छोड़ जाना है। शिष्य का असली रूप भी आत्मा है, जो अन्त में जाकर उस शब्द में ही समायेगी। गुरु अपना शरीर छोड़ देने के बाद भी शब्द-स्वरूप से शिष्य की सँभाल करता है। बाइबिल में हज़रत ईसा कहते हैं, "ये बातें मैंने तुमसे कहीं जब कि मैं तुम्हारे साथ मौजूद हूं। लेकिन वह सान्त्वना प्रदान करनेवाला (शब्द) जो कि पवित्र आत्मा है, जिसे पिता मेरे नाम से भेजेगा वह तुम्हें सब बातें सिखाएगा और जो कुछ मैंने तुमसे कहा है वह सब तुम्हें याद दिलायेगा।" (जॉन १४:२५-२६)।

अर्थात् जब मैं इस शरीर को छोड़कर चला जाऊंगा, तो वह मालिक मेरे नूरानी स्वरूप में उस शब्द को तुम्हारे अन्दर प्रकट करेगा और फिर वह नूरानी स्वरूप तुम्हारी सँभाल और रहनुमाई करेगा।

गुरु वास्तव में शब्द ही है। जीवों के लिए वह इस दुनिया में शरीर धारण करके उनको मालिक तक पहुंचाने का ज़रिया अथवा माध्यम बनता है और फिर अपना काम पूरा करके उस शब्द में ही जा समाता है। इसी तरह मनुष्य की आत्मा भी उस शब्द की ही किरण है और किसी सच्चे गुरु को पाकर वह भी वापस उस शब्द में ही जा समाती है। गुरु नानक साहिब भी यही फ़रमाते हैं, "सबदु गुरू सुरति धुनि चेला।"

जो सन्त पहले हो चुके हैं वे ज़रूर पूर्ण सन्त थे। परन्तु हम उनसे अब लाभ नहीं उठा सकते। हमें अब किसी जीवित देहधारी महात्मा की खोज करनी पड़ेगी। अगर कोई बीमार आज कहे कि उसे लुकमान हकीम से अपना इलाज करवाना है तो वह अब उसका इलाज करने के लिए नहीं आयेगा। उसे किसी मौजूदा डाक्टर या हकीम के पास जाना पड़ेगा। अगर कोई सिक्ख कहे कि वह अपने मुकदमे का फ़ैसला महाराजा रणजीतसिंह से करायेगा तो अब महाराजा रणजीतसिंह तो उसका फ़ैसला करने नहीं आ सकते। उसे आज किसी मौजूदा न्यायाधीश या हाकिम की अदालत में ही जाना होगा। अगर कोई स्त्री कहे कि वह राजा विक्रमादित्य से शादी करना चाहती है तो राजा विक्रमादित्य तो उससे शादी करने नहीं आयेगा।

अतएव जिस प्रकार वक्त का हकीम, वक्त का हाकिम और मौजूदा पति ही इस समय काम आ सकते हैं, इसी प्रकार हमें भी मौजूदा गुरु की ही ज़रूरत है और उसी से हमारा काम बन सकेगा। यही इशारा हज़रत ईसा ने बाइबिल में जॉन दि बैपटिस्ट के बारे में किया है–

"वह तो जलता और चमकता हुआ ज्योति-पुंज था और तुम्हें एक वक्त तक उसकी ज्योति में मग्न होना मंज़ूर था।" (जॉन ५:३५)

फिर अपने बारे में हज़रत ईसा खुद बिल्कुल साफ लफ्ज़ों में कहते हैं, "जिसने मुझे भेजा है मुझे उसका काम करना ज़रूरी है, जब तक कि दिन है (मेरे जीवन-काल में); रात आती है, जब कोई मनुष्य काम नहीं कर सकता। जब तक मैं दुनिया में हूँ, मैं दुनिया की ज्योति हूँ।" (जॉन ६:४-५)।

गुरु की ज़रूरत सिर्फ इसलिए है कि वह हमारे जैसा मनुष्य होकर हमें हर चीज़ अच्छी तरह समझा सकता है। अगर हम मौजूदा गुरु के बगैर ही मालिक की भक्ति कर सकते तो जिन पुराने महात्माओं की हम आज टेक लिए बैठे हैं, वे क्यों देह में आते। वे अपना काम करके फिर उसी परमात्मा के स्तर पर जाकर उसी में समा गये हैं। अब तो हमें उस जीवित देहधारी महात्मा की ज़रूरत है जो हमारे जैसा मनुष्य होकर हमें समझाये। संसार का कोई भी कार्य हम उस्ताद या शिक्षक के बगैर नहीं सीख सकते। हम देखते हैं कि इंजीनियरिंग और डाक्टरी पर लोगों द्वारा लिखी कितनी खोजपूर्ण पुस्तकें पुस्तकालयों में भरी पड़ी हैं, परन्तु कोई व्यक्ति ऐसा नहीं मिलेगा जो उन किताबों को पढ़कर ही इंजीनियर या डाक्टर बन गया हो। पन्द्रह-बीस साल शिक्षकों की संगति करके, मेहनत करके इन विद्याओं की जानकारी प्राप्त होती है और उसके बाद व्यवहारिक अभ्यास भी करना पड़ता है, तब कहीं जाकर इनका कुछ ज्ञान प्राप्त होता है। हमें बचपन से ही हर मंज़िल पर, हर कदम पर किसी शिक्षक या रहबर की ज़रूरत रही है। रूहानियत का विषय तो बहुत ही पेचीदा है। जब तक हमें कोई ऐसा रहबर या मार्ग-दर्शक न मिले, जो अन्दर की रूहानी मंज़िलों पर गया हो और हम उसके अनुभव से फायदा न उठायें, तब तक हम कभी अन्दर एक कदम भी नहीं जा सकते। बेशक हमारा असली गुरु वह शब्द या नाम है जो कि हमारे सबके अन्दर है। परन्तु फिर भी हम उस शब्द को अपने अन्दर पकड़ नहीं सकते, जब तक वही शब्द या नाम देह धारण करके अर्थात् मनुष्य के चोले में गुरु के रूप में प्रकट होकर हमारी मदद न करे। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं–

"बाणी गुरू गुरू है बाणी विचि बाणी अंमृतु सारे ॥
गुरु बाणी कहै सेवकु जनु मानै परतखि गुरू निसतारे ॥" (आदि ग्रन्थ, ९८२)

सत्गुरु शब्द है और शब्द ही सत्गुरु है। उस शब्द के अन्दर ही असली अमृत है। सत्गुरु अपने शिष्यों को हमेशा उस शब्द की ओर ही प्रेरित करते हैं। शिष्य उनके आदेश में चलकर अपने ख़याल को शब्द से जोड़ता है। लेकिन मुक्ति केवल देहधारी गुरु ही दे सकता है।

हम मनुष्य हैं इसलिए हम मनुष्य को ही गुरु चाहते हैं, जिससे हम सब कुछ पूछ सकें, बोल सकें, जिससे प्यार कर सकें और जो हमारे अन्दर उस शब्द की धारा को प्रकट कर सके। गुज़रे हुए महात्मा या उनकी लिखी पुस्तकें यह काम नहीं कर सकतीं। वे महात्मा पूर्ण थे और जो उनकी संगति में आये उनको वे फायदा पहुँचा गये। जब तक हमने परमात्मा को नहीं देखा हम उससे किस तरह प्यार कर सकते हैं? यह मानना कि हम परमात्मा से प्यार कर रहे हैं, सिर्फ हमारे मन की भूल है। इसी प्रकार जो महात्मा पहले हो चुके हैं उनसे हमारा प्यार करना भी मन की एक झूठी और व्यर्थ की कल्पना है, क्योंकि अब वे परमात्मा के पास पहुँच चुके हैं, इस दुनिया में नहीं हैं, हमारा उनके साथ किसी प्रकार भी सीधा सम्बन्ध स्थापित नहीं हो सकता। अब तो कोई ज़िन्दा देहधारी गुरु मिले तब ही हमारा उसके साथ प्यार पैदा हो सकता है और उसका प्यार ही हमें परमात्मा के प्यार में लगा सकता है।

सच्चे और पूरे गुरु दो प्रकार के होते हैं। एक तो वे जो सीधे सचखंड से आते हैं और जन्म से ही सन्त होते हैं। दूसरे वे जो शब्द का अभ्यास करके अपने गुरु की दया-मेहर से सचखंड तक पहुंच जाते हैं और अपनी ज़िन्दगी में ही सन्त बन जाते हैं। जब हम सत्गुरु की शरण प्राप्त करते हैं तो वे हमें नाम देकर बेफ़िक्र नहीं हो जाते, बल्कि हमें धुर-धाम पहुँचाने के ज़िम्मेदार होते हैं। गुरु अर्जुन साहिब फ़रमाते हैं: "गुरु मेरे संगि सदा है नाले।" फिर फ़रमाते हैं–

"गुरु की दाति न मेटै कोई ॥ जिसु बखसे तिसु तारे सोई ॥" (पृ. १०३०)

हज़रत ईसा कहते हैं, "और मैं उन्हें अनन्त जीवन देता हूँ और वे कभी नष्ट न होंगे और कोई उन्हें मेरे हाथ से छीन न सकेगा।" (जॉन १०:२८)

जिन पर सतगुरु अपनी छाप लगा देते हैं, उनको मृत्यु के बाद यमदूतों के साथ नहीं जाना पड़ता। वे नाम की जो बख़्शिश करते हैं, उसे कोई नहीं छीन सकता। एक अन्य स्थान पर हज़रत ईसा ने ज़ोरदार लफ्ज़ों में कहा है,

"पृथ्वी और आकाश मिट जायेंगे पर मेरे शब्द कभी नहीं मिट सकते।" (मैथ्यू २४:३५) अर्थात् यह जमीन और आसमान चाहे नष्ट हो जायें, लेकिन मेरा दिया हुआ शब्द कभी व्यर्थ नहीं जा सकता। इसी प्रकार स्वामीजी महाराज फ़रमाते हैं—

"संत डारिया बीज घट धरती जेहि जीव के।
को अस समरथ होय, जो जारे उस बीज को॥" (सार वचन, ३४४)

पाँचवीं पातशाही गुरु अर्जुनदेवजी भी फ़रमाते हैं—

"मेरा गुरु परमेसरु सुखदाई।।
पारब्रहम का नामु दृड़ाए अंते होइ सखाई॥" (आदि ग्रन्थ, ९१५)

ऐसे सतगुरु मृत्यु के समय सेवक को खुद लेने आते हैं और यमदूतों के साथ नहीं जाने देते। सतगुरु हमारे सच्चे दोस्त और रक्षक हैं, सिर्फ इस दुनिया में ही नहीं मौत के वक्त भी वे ही अपने नूरी स्वरूप में हमारी मदद और रखवाली करते हैं। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं—

"सजण सेई नालि मै चलदिआ नालि चलंन्हि॥
जिथै लेखा मंगीऐ तिथै खड़े दिसंन्हि॥" (आदि ग्रन्थ, ७२९)

गुरु अर्जुनदेवजी का कथन है :

"नानक कचड़िआ सिउ तोड़ि, ढूढि सजण संत पकिआ॥
ओइ जीवंदे विछुड़हि, ओइ मुइआ न जाही छोड़ि॥" (आदि ग्रन्थ, ११०२)

दुनिया में हमारे बहुत से रिश्तेदार, दोस्त, मित्र हमसे जीते जी ही अलग हो जाते हैं। आखिर तक तो यदा-कदा ही कोई दोस्त मुश्किल से रहता है। लेकिन, सन्त वे असली दोस्त हैं, जो मृत्यु के समय भी हमें नहीं छोड़ते, बल्कि हमें यमदूतों के पंजों से भी छुड़ाते हैं। ऐसे सतगुरु की शरण में आने के बाद हमारा धर्मराज का हिसाब-किताब खत्म हो जाता है। गुरु साहिब फ़रमाते हैं—

"धरमराइ दरि कागद फारे, जन नानक लेखा समझा॥"(आदि ग्रन्थ, ६९८)

फिर लिखते हैं :

"सिमरत नामु किलबिख सभि काटे॥ धरमराइ के कागर फाटे॥"
(आदि ग्रन्थ, १३४८)

और

"धरमराइ अब कहा करैगो जउ फाटिओ सगलो लेखा॥"
(आदि ग्रन्थ, ६१४)

बाइबिल में हज़रत ईसा कहते हैं "धन्य हैं वे जो प्रभु का शब्द सुनते और

सँभालते हैं।" (ल्यूक ११:२८)

आगे फिर कहते हैं, "जो मेरा शब्द सुनता है......उसका जीवन अनन्त है......वह मृत्यु से पार होकर जीवन में प्रवेश कर चुका है" (जॉन ५:२४)। अर्थात् जिनको मैं उस शब्द से जोड़ देता हूँ वे मौत के पंजे से हमेशा के लिए छूटकर अनन्त जीवन प्राप्त कर लेते हैं।

ऐसे सन्त दुर्लभ हैं, परन्तु वे संसार में हमेशा मौजूद रहते हैं। हरएक युग में सच्चे जिज्ञासुओं को शब्द या नाम का रास्ता बताने के लिए वे आते हैं। गुरु नानक साहिब लिखते हैं—

"जुगि जुगि संत भले प्रभ तेरे॥" (आदि ग्रन्थ, १०२५)

यह नहीं कि पूर्ण महात्मा क़िसी खास समय या काल में ही आते हैं या वे किसी खास कौम या खास मुल्क से बँधे हुए होते हैं। हरएक युग में महात्मा होते आये हैं और वे किसी भी कौम, मज़हब या मुल्क में आ सकते हैं। गुरु साहिब फ़रमाते हैं —

"हरि जुगह जुगो जुग जुगह जुगो सद पीड़ी गुरू चलंदी॥
जुगि जुगि पीड़ी चलै सतिगुर की, जिनी गुरमुखि नामु धिआइआ॥"
(आदि ग्रन्थ, ७९)

एक समय में एक से अधिक महात्मा भी हो सकते हैं। ऐसे महात्मा दुनिया में समाज या जाति पर बोझ बनकर नहीं आते बल्कि अपनी मेहनत की कमाई करके संगत की मुफ्त सेवा करते हैं। गुरु नानक साहिब ने खुद अपने हाथों से खेती की, अपने बाल-बच्चों की परवरिश की और संगत की मुफ्त सेवा की। आप अपनी वाणी में समझाते हैं—

"गुरु पीरु सदाए मंगण जाइ॥ ताकै मूलि न लगीऐ पाइ॥
घालि खाइ किछु हथहु देइ॥ नानक राहु पछाणहि सेइ॥" (पृ. १२४५)

कि अगर कोई गुरु और पीर बनकर अपने शिष्यों और सेवकों से माँगता फिरता है, तो उसके पैरों पर मत्था ही मत टेको। जो महात्मा खुद अपनी मेहनत की कमाई करके अपना जीवन बिताता है और संगत की मुफ्त सेवा करता है, ऐसे महात्मा की खोज करनी चाहिए। हज़रत ईसा भी बाइबल में कहते हैं, "तुम्हें मुफ्त मिला है, मुफ्त ही दो।" (मेथ्यू १० ८)

कबीर साहिब के जीवन के वृत्तान्तों से पता चलता है कि आपने सारी उमर कपड़े बुनकर गुज़ारा किया, अपने बाल-बच्चों की परवरिश की और साध-संगत की मुफ्त सेवा की, हालाँकि शाह बलख-बुख़ारा जैसे आपके सेवक थे जो आपको दुनिया की हर नियामत और आराम दे सकते थे। आप अपनी

वाणी में लिखते हैं—

"सिष तो ऐसा चाहिये, गुरु को सरबस देय ।
गुरु तो ऐसा चाहिये, सिष का कछू न लेय ।।"

फिर फ़रमाते हैं—

"मर जाऊँ माँगूं नहीं अपने तन के काज ।
परमारथ के कारने, मोहि न आवे लाज ।।"

सन्त-महात्मा हमारा रुपया-पैसा दुनिया के फायदे में लगा देते हैं, ताकि हमारी कमाई नेक और सफल हो सके । परन्तु अपने लिए कभी किसी के आगे हाथ नहीं पसारते । स्वामीजी महाराज भी अपनी वाणी में यही फ़रमाते हैं—

"गुरु नहीं भूखा तेरे धन का । उन पै धन है भक्ति नाम का ।।
पर तेरा उपकार करावें । भूखे प्यासे को दिलवावें ।।" (स. ब. १२९)

महात्मा रविदास ने सारी उमर जूतियाँ गाँठकर गुज़ारा किया, हालाँकि राजा पीपा, जो कि एक क्षत्रिय राजा था, आपका सेवक था और मीराबाई भी, जो कि मेवाड़ की रानी थी, आपकी शिष्या थी । मीराबाई के जीवन-वृत्तान्त में आता है कि उसे बिरादरी वालों ने ताने सुनाये कि तू तो महलों में रानी बनी बैठी है और तेरा गुरु जूतियाँ गांठने का काम करता है । सेवकों के लिए अपने गुरु के बारे में ताना सुनना बड़ा मुश्किल है । उसने एक कीमती हीरा लेकर रविदासजी के पास जाकर अर्ज़ की कि हे गुरुदेव ! लोग मुझे ताने सुनाते हैं । आप इस हीरे को बेचकर अपने लिए एक अच्छा मकान बनाकर इज्ज़त की ज़िन्दगी बसर करें । लेकिन महात्मा रविदास ने समझाया कि बेटी ! मुझे जो कुछ मिला है वह इन जूतियों के गाँठने और इस कुंड के पानी से मिला है । मुझे इस हीरे की कोई ज़रूरत नहीं ।

महात्मा खुद मिसाल बनकर दिखाते हैं कि किस तरह दुनिया में रहते हुए, दुनिया के काम-काज करते हुए मालिक की भक्ति करना है । वे यह नहीं कहते कि घरबार छोड़कर जंगलों-पहाड़ों की ओर चले जाओ और संन्यास आदि धारण कर लो । जंगलों-पहाड़ों में जाकर हमारे अन्दर मालिक से मिलने का कोई शौक और प्यार पैदा नहीं हो जाता, क्योंकि वही इच्छाएँ, वही तृष्णाएँ हमारे अन्दर वहाँ भी दबी रह जाती हैं । जिस समय फिर दुनियां का सामना करना पड़ता है, हमारी वे ही इच्छाएँ हमें उँगलियों पर नचाना शुरू कर देती हैं, बल्कि साधारण मनुष्यों से भी हमारी हालत बुरी और गयी-बीती हो जाती है । हमें दुनिया में किस चीज़ की ज़रूरत है ? शरीर

को ढकने के लिए और गरमी व सरदी से बचने के लिए कपड़े की ज़रूरत है; पेट को भोजन की और रहने के लिए किसी कोठरी या मकान की ज़रूरत है। इन ज़रूरतों को हम जितना भी चाहें बढ़ा लें या कम कर लें; लेकिन जहाँ भी हम जाते हैं, ये ज़रूरतें हमारे साथ ही जाती हैं। जंगलों-पहाड़ों में जाने से क्या होता है। हम सफेद कपड़े उतार देते हैं, भगवे पहन लेते हैं। लेकिन कपड़े की ज़रूरत तो फिर भी महसूस हुई। एक अपनी स्त्री के हाथ का बनाया हुआ भोजन छोड़कर, लोगों के आगे जाकर पेट की खातिर हाथ फैलाना पड़ता है, लेकिन पेट ने खाना तो फिर भी माँगा। अपने घर का सुख और आराम छोड़कर गुफाओं और कन्दराओं का यह किसी आश्रम का सहारा लिया। सिर ढकने के लिए किसी न किसी जगय की तो फिर भी ज़रूरत पड़ी। हमसे उन चीज़ों में से कोई भी चीज़ नहीं छूटी, उलटे हम अपना बोझ समाज पर डाल देते हैं और आलसी बन जाते हैं। लोगों की कई तरह की खुशामदें करनी पड़ती हैं और कई तरह के झूठ-सच अपने पेट की खातिर बोलने पड़ते हैं। महात्मा समझाते हैं कि दुनिया में हमें सूरमा और बहादुर बनकर रहना है। दुनिया में रहते हुए भी दुनिया की गन्दगी और वासनाओं में नहीं फँसना है। गुरु नानक साहिब बड़ी अच्छी मिसाल देकर समझाते हैं—

"जैसे जल महि कमलु निरालमु मुरगाई नैसाणे ॥
सुरति सबदि भवसागरु तरीऐ नानक नामु वखाणे ॥" (आदि गन्थ, ६३८)

जिस तरह कमल का फूल पानी में पैदा होता है पर पानी से बाहर रहता है; हालाँकि उसकी नाल और जड़ पानी के अन्दर होती है, जिस प्रकार मुर्गाबी (जल-कुक्कुट) पानी के अन्दर रहते हुए भी सूखे परों से उड़ जाती है, इसी तरह हमें भी दुनिया में रहते हुए अन्तर में अपनी सुरत को शब्द के साथ जोड़कर भव-सागर से पार होना है। एक मक्खी जो शहद के किनारे पर बैठती है शहद का स्वाद भी लेती है और सही-सलामत उड़ भी जाती है। लेकिन अगर वह शहद के बीच में बैठ जाये तो तड़प-तड़प कर अपनी जान दे देती है। दुनिया में हमें इस प्रकार रहना है जिस प्रकार एक विवाहिता लड़की अपने माता-पिता के पास रहती है। वह माता-पिता की सेवा भी करती है और घर का काम-काज भी करती है। लेकिन माता-पिता के घर रहते हुए भी वह अपने पति को कभी नहीं भूलती। उसका मन सदा अपने पति के चरणों में लगा रहता है। इसी प्रकार हमें भी दुनिया में रहते हुए, दुनिया के लेन-देन का हिसाब खत्म करते हुए अपनी लिव उस मालिक की

भक्ति और प्यार में लगाए रखना है। अतएव सच्चे महात्मा हमें यही उपदेश देते हैं कि अपने घरबार में रहते हुए, अपने हाथों की मेहनत की कमाई करते हुए मालिक की भक्ति करो। हमें ऐसे महात्मा की खोज करके उन्हीं से शब्द या नाम का भेद लेना है। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं—

"संतहु गुरमुखि पूरा पाई, नामो पूज कराई ॥" (आदि ग्रन्थ, ९१०)

सच्ची भक्ति और पूजा

गुरु अमरदास जी का कथन है :

"सचै सबदि सची पति होई ॥ बिनु नावै मुकति न पावै कोई ॥
बिनु सतिगुर को नाउ न पाए, प्रभि ऐसी बणत बणाई हे ॥"
(आदि ग्रन्थ, १०४६)

अर्थात् मालिक ने अपने मिलने के लिए यही कानून बनाया है कि सच्चे शब्द या नाम की कमाई के बगैर हम कभी भी मुक्ति प्राप्त नहीं कर सकते और सतगुरु के बिना हमें नाम की कमाई करने के तरीके और साधन का पता ही नहीं लग सकता। हज़रत ईसा भी इस ओर इशारा करते हैं, "मैं तुझसे सच कहता हूँ, जब तक मनुष्य दुबारा जन्म नहीं लेता, वह खुदा की बादशाहत नहीं देख सकता" (जान ३:३)। नया जन्म लेने से मतलब उस नाम या शब्द से लगना है, जिसे पाकर इस नाशवान संसार से हमारा सम्बन्ध टूट जाता है और हम अपने परम पिता परमात्मा के घर जाने के हकदार बन जाते हैं। जैसा कि गुरु नानक साहिब ने अपनी वाणी में फ़रमाया है—

"सतिगुर कै जनमे गवनु[1] मिटाइआ ॥" (आदि ग्रन्थ, ९४०)

एक और स्थान पर हज़रत ईसा फ़रमाते हैं, "अब उस शब्द के द्वारा जो मैंने तुमसे कहा है, तुम शुद्ध हो" (जान १५:३)। अर्थात् मैंने जिस शब्द से तुम्हें जोड़ा है उसने तुम्हें पापों के भार से मुक्त कर दिया है।

वह मालिक खुद-मुख़्तार है, स्वाधीन है, जो चाहे अपने मिलने का तरीका बना सकता है। इसमें किसी का कोई दखल नहीं। जो भक्ति उस परमात्मा को मंज़ूर है, वह शब्द या नाम की कमाई है। गुरु नानक साहिब समझाते हैं—

"बिनु नावै होर पूज न होवी, भरमि भुली लोकाई ॥" (आदि ग्रन्थ, ९१०)

कि दुनिया व्यर्थ भ्रमों में फँसकर इस चौरासी के जेलखाने में भूली हुई भटकती फिरती है। उस नाम के बगैर तो मुक्ति का कोई और रास्ता ही नहीं है। फिर समझाते हैं—

"नामु विसारि चलहि अन मारगि, अंत कालि पछुताही ॥" (पृ. ११५३)

१. आवागमन।

नाम की कमाई करने का रास्ता छोड़कर अगर हम किसी और रास्ते पर चलने की कोशिश करते हैं तो अन्त में मृत्यु के समय पछताना पड़ता है कि यों ही अपने कीमती समय को व्यर्थ की बातों में नष्ट कर दिया। आप फिर समझाते हैं—

"विणु नावै दरि ढोई नाही, ता जमु करे खुआरी ॥" (आदि ग्रन्थ, ७५४)

शब्द या नाम की कमाई के बगैर मालिक के दरबार में जाने की कभी इजाज़त नहीं मिलती और यमदूतों के हाथों ख़राब होना पड़ता है। यही स्वामीजी महाराज समझाते हैं—

"गुरु कहें खोल कर भाई। लग शब्द अनाहद जाई ॥
बिन शब्द उपाव न दूजा। काया का छूटे न कूज़ा ॥" (सार बचन, १६१)

शब्द या नाम की कमाई के सिवाय और कोई उपाय और तरीका नहीं है जिससे कि हम देह के बन्धनों से छुटकारा प्राप्त कर सकें। बाकी जितने भी साधन जप-तप, पूजा-पाठ, दान-पुण्य वगैरह हैं, सबका फल हमें ज़रूर मिलता है। लेकिन उनका फल लेने के लिये हमें फिर से देह के बन्धनों में आना पड़ता है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, हम राजा-महाराजा होकर आ जाते हैं, सेठ-साहूकार बन जाते हैं, जाति, धर्म और देशों का शासन प्राप्त करके आ जाते हैं। ज़्यादा से ज़्यादा बैकुण्ठों-स्वर्गों तक पहुंच जाते हैं। लेकिन ये भी भोग-योनियां हैं, किसी नियत अवधि के लिए ही हैं। उसके बाद हमें फिर चौरासी के जेलखाने में आना पड़ता है। परन्तु नाम की कमाई हमें हमेशा के लिये देह के बन्धनों से मुक्त कर देती है। गुरु नानक साहिब का कथन है—

"सचहु ओरै सभु को, उपरि सच आचारु ॥" (आदि ग्रन्थ, ६२)

कि इन सब चीज़ों का फल शब्द की कमाई के फल के नीचे रहता है यानी हमें काल के दायरे में ही रखता है। शब्द की कमाई का फल सबसे ऊंचा है। वह हमें काल के दायरे से पार ले जाता है; क्योंकि वही चीज़ हमें मन और माया की सीमा से पार ले जा सकती है जो मन और माया की सीमा के परे से आती हो। वह शब्द सचखण्ड से उठता है। काल की सीमा ब्रह्म और त्रिलोकी तक है। इसलिये, हम शब्द को पकड़ कर काल की सीमा से पार चले जाते हैं। स्वामीजी महाराज फ़रमाते हैं—

"शब्द कमाई कर है मीत। शब्द प्रताप काल को जीत ॥
शब्द घाट तू घट में देख। शब्दहि शब्द पीव को पेख ॥
शब्द कर्म की रेख कटावे। शब्द शब्द से जाय मिलावे ॥

शब्द बिना सब झूठा ज्ञान । शब्द बिना सब थोथा ध्यान ॥
शब्द छोड़ मत अरे अजान । राधास्वामी कहें बखान ॥" (स.ब. ९१)

गुरु नानक साहिब भी यही कहते हैं—

"हरि नामै तुलि न पुजई, सभ डिठी ठोकि वजाइ ॥" (आदि ग्रन्थ, ६२)

कि हमने अच्छी तरह ठोक-बजाकर देख लिया है कि कोई वस्तु नाम-भक्ति की बराबरी नहीं कर सकती। फिर आप लिखते हैं—

"सूहटु पिंजरि प्रेम कै बोलै बोलणहारु ॥
सचु चुगै अंमृतु पीऐ उडै त एका वार ॥" (आदि ग्रन्थ, १०१०)

हमारी आत्मा तोते के समान है और यह शरीर एक पिंजरे के समान है। जिस प्रकार तोता पिंजरे से प्यार करके तरह-तरह की बोलियां बोलता है, इसी तरह हमारी आत्मा भी इस शरीर से प्यार लगाये बैठी है। कभी उसके अन्दर बैठ कर रोती है, कभी हंसती है, कभी सुख और कभी दुःख महसूस करती है। अगर हमारी आत्मा इस देह का प्यार छोड़ दे और इसके अन्दर परमात्मा ने जो सच या शब्द का भोजन रखा है, उसको ग्रहण करने लगे और उस शब्द रूपी अमृत को पीना शुरू कर दे तो यह हमेशा के लिए इस देह के बन्धनों से आज़ाद हो जाये। गुरु अर्जुन साहिब एक और बड़ी अच्छी मिसाल देकर समझाते हैं—

"अनिक करम कीए बहुतेरे ॥ जो कीजै सो बंधनु पैरे ॥
कुरुता बीजु बीजे नही जंमै, सभु लाहा मूलु गवाइदा ॥
कलजुग महि कीरतनु परधाना ॥ गुरमुखि जपीऐ लाइ धिआना ॥
आपि तरै सगले कुल तारे, हरि दरगह पति सिउ जाइदा ॥"
(आदि ग्रन्थ, १०७५)

नाम की कमाई के बग़ैर जो भी साधन या तरीके हम मुक्ति की प्राप्ति के लिए अपनाते हैं, वे हमें देह के बन्धनों में और ज़्यादा फंसा देते हैं। अगर हम धरती में एक बे-मौसम का बीज बोते हैं तो हम कितना भी हल चला लें, अच्छी से अच्छी खाद डाल लें और पानी आदि समय पर दें, तो भी वह फसल हमारे घर नहीं आ सकती, हमारी सब मेहनत, बीज और खर्च फिज़ूल चले जाते हैं। इसी तरह कलियुग में आकर जो मुक्ति प्राप्त करने का असली बीज या तरीका है, वह शब्द या नाम की कमाई है जिसके बारे में हमें सिर्फ पूरे गुरु से ही पूरी-पूरी जानकारी प्राप्त हो सकती है। स्वामीजी महाराज भी लिखते हैं—

"कलजुग कर्म धर्म नहिं कोई। नाम बिना उद्धार न होई ॥" (स. ब. ३३७)

गुरु रामदास साहिब भी फ़रमाते हैं–

"कलिजुगि रामनामु बोहिथा, गुरमुखि पारि लघाई ।।" (आदि ग्रन्थ, ४४३)

कलियुग में आकर अगर कोई ऊंचे से ऊंचा, श्रेष्ठ से श्रेष्ठ कर्म है तो वह सिर्फ नाम की कमाई है। इस बात को गुरु अमरदास साहिब और भी अच्छी तरह समझाते हैं–

"इसु जुग का धरमु पड़हु तुम भाई ।।पूरै गुरि सभ सोझी पाई ।।
ऐथै अगै हरि नामु सखाई ।।" (आदि गन्थ, २३०)

चार युग एक-दूसरे के बाद चक्कर लगा रहे हैं। हरएक युग में हमारे जीवन की परिस्थितियां बिलकुल अलग-अलग होती हैं। सतयुग में हमारी उम्र बहुत लम्बी थी, हमारा स्वास्थ्य भी अच्छा था और हमारा ख़याल भी दुनिया में इतना फैला हुआ नहीं था। मामूली से इशारे से हमारा ख़याल मालिक की भक्ति की ओर हो जाता था। जैसे-जैसे युग पलटते गये उम्र छोटी होती गई, स्वास्थ्य कमज़ोर होता गया और ख़याल भी दुनिया में पूरी तरह फैल गया। जो साधन हमें सतयुग में काम देते थ, वे अब कलियुग में काम नहीं दे सकते। कलियुग में तो कोई भाग्यशाली मनुष्य ही सत्तर या अस्सी साल गुज़ार जाता है, स्वास्थ्य भी इतना कमज़ोर है कि एक डेढ़ घंटे भी हम लगातार मालिक की भक्ति एक आसन पर बैठकर नहीं कर सकते और ख़याल भी इतना फैला हुआ है कि पांच मिनिट के लिए भी किसी विषय पर विचार करने के लिए हमारा मन पूरी तवज्जह के साथ नहीं टिक सकता। गुरु साहिब समझाते हैं कि अगर हम कलियुग में आकर ज़िन्दगी के चन्द रोज़ सुख और शान्ति से गुज़ारना चाहते हैं और वापस जाकर परमात्मा से मिलना चाहते हैं तो सिर्फ नाम की कमाई का ही रास्ता है। कलियुग में आकर तो महात्माओं ने बड़ी उदारतापूर्वक नाम का प्रचार किया है।

हमारा मन हमें उस शब्द या नाम की कमाई की ओर जाने ही नहीं देता, बल्कि हमेशा पूजा-पाठ, कर्म-कांड, जप-तप, दान-पुण्य आदि में ही लगाये रखता है। गुरु अमरदास जी फ़रमाते हैं–

"पूजा करै सभु लोकु संतहु, मनमुखि थाइ न पाई ।।
सबदि मरै मनु निरमलु संतहु, एह पूजा थाइ पाई ।।" (आदि ग्रन्थ, ९१०)

हम सब दुनिया के जीव अपनी-अपनी बुद्धि के अनुसार उस परमात्मा की भक्ति करने की कोशिश ज़रूर करते हैं, क्योंकि आत्मा का रुझान अपने असल या मूल की ओर होता है। इसी रुझान के फलस्वरूप हम परमात्मा

को ढूंढते हैं, लेकिन मन के पीछे लग कर मालिक की भक्ति करते हैं। यह भक्ति हमें कभी भी हमारे ठिकाने पर नहीं पहुंचाती। हमारा ठिकाना सचखंड है और मन की हद ब्रह्म तक ही रह जाती है। शब्द या नाम की कमाई करने से ही हमारा मन निर्मल होता है। और यह नाम की कमाई ही हमें अपने असली धाम या असली घर सचखंड पहुंचाती है। हरएक भक्ति हमें परमात्मा से नहीं मिलाती, सिर्फ नाम की कमाई ही मालिक तक ले जाती है। स्वामीजी महाराज समझाते हैं—

"अब यह देह मिली किरपा से। करो भक्ति जो करम दहा।।"

(सार बचन, ११९)

अर्थात् यह मनुष्य का चोला परमात्मा की अपार कृपा से प्राप्त हुआ है। इसमें बैठकर वह भक्ति करो जिससे कर्मों का सिलसिला खत्म हो जाये। वह भक्ति सिर्फ नाम या शब्द की कमाई है। गुरु अमरदास जी फ़रमाते हैं—
"पूजा करहि परु बिधि नही जाणहि, दूजै भाइ मलु लाई।।" (आदि ग्रन्थ, ९१०)

हमें असली भक्ति करने के तरीके का पता नहीं लगता, गलत रास्ते पर पड़कर मैल और पापों को और इकट्ठा कर लेते हैं। बाइबिल में यही हज़रत ईसा ने कहा है, "तू पूजा करता है पर नहीं जानता कि क्या कर रहा है।" स्वामीजी महाराज भी इसी प्रकार समझाते हैं—

"फोकट धर्म पकड़ कर जूझे। बूझे न शब्द जुगत पारा।।
पानी मथे हाथ कुछ नाहीं। क्षीर मथन आलस भारा।।
जीव अभाग कहूं मैं क्या क्या। बाहर भरमे भौ जारा।।
अंतरमुख जो शब्द कमाई। ता में मन को नहिं गारा।।"

(सार बचन, ११४)

जो मालिक की भक्ति का असली तरीका है अर्थात् शब्द की कमाई है, उसे तो हम पकड़ने की कोशिश नहीं करते, हमेशा बाहर रीति-रिवाजों में ही फंसे और कर्म-कांड में उलझे रहते हैं। इन बातों को स्वामीजी महाराज 'फोकट धर्म' कहकर समझाते हैं। हम छिलकों से प्यार करते है, जो उनके अन्दर गूदा या गुर है उसे ग्रहण नहीं करते। स्वामीजी मिसाल देते हैं कि सारी उमर अगर हम पानी बिलोते रहेंगे तो उसमें से कुछ नहीं निकलेगा। लेकिन अगर दूध को मथेंगे तो उसमें से मक्खन प्राप्त कर सकेंगे। इसलिए वे समझाते हैं कि अपने मन को अन्दर शब्द के साथ जोड़ना चाहिये, उससे जुड़कर ही यह निर्मल और पवित्र हो सकता है। गुरु नानक साहिब का कथन है—

"सबदु विसारनि तिना ठउरु न ठाउ।। भ्रमि भूले जिउ सुंञै घरि काउ ।।
हलतु पलतु तिनी दोवै गवाए, दुखे दुखि विहावणिग्रा ।।"(ग्रादि ग्रन्थ, १२३)

जो शब्द या नाम की खोज नहीं करते उनका न तो इस दुनिया में कहीं ठिकाना है ग्रौर न ही ग्रगली दुनिया में कोई ठिकाना बनता है । जैसे खाली घर के ग्रन्दर कौग्रा दिन-भर कूदता फिरता है, परन्तु उसे खाने के लिए कुछ नहीं मिलता, इसी प्रकार हम इस चौरासी के जेलखाने में भटकते फिरते हैं। ऐसे लोगों ने ग्रपने दीन ग्रौर दुनिया दोनों खराब कर लिये । हज़रत ईसा भी शब्द या नाम के महत्त्व के बारे में कहते हैं कि जो लोग उससे मुख मोड़ लेते हैं ग्रौर उसकी निन्दा करते हैं उनका गुनाह न इस दुनिया में माफ हो सकता है न ग्रगली दुनिया में।

"जो कोई भी पवित्र ग्रात्मा (शब्द) के विरोध में कुछ कहेगा उसका गुनाह न तो इस लोक में ग्रौर न परलोक में बख़्शा जायेगा। (मेथ्यू १२:३२)

जप-तप, पूजा-पाठ, दान-पुण्य ग्रादि सबका जो भी फल है, वह सब शब्द या नाम की कमाई में ग्रा जाता है, जैसे कि कहावत है, 'हाथी के पांव में सबका पांव ।' जिस समय हमारी ज़बान पर दिन-रात उस मालिक का नाम चढ़ा होता है यानी हम उस मालिक के नाम के सुमिरन में लगे होते हैं, तो उससे बड़ा जप ग्रौर कौन-सा हो सकता है। जब हम ग्रपने ग्रापको उस मालिक के हवाले किये बैठे हैं ग्रौर उसकी रज़ा में रह रहे हैं तो इससे बड़ा ग्रौर तप क्या हो सकता है। जब हम ग्रपने ग्रन्तर में दिन-रात उस शब्द की वाणी को सुन रहे हैं तो इससे बड़ा ग्रौर पाठ क्या कर सकते हैं। जब गुरुमुखों के स्वरूप को दिन-रात प्यार में ग्रपने साथ-साथ लिए फिरते हैं तो इससे बड़ी ग्रौर पूजा क्या हो सकती है। जिस समय उस नाम रूपी ग्रमृत को पीकर मन दुनिया से उदास ग्रौर उचाट हो जाता है तो इससे बड़ा ग्रौर वैराग्य क्या हो सकता है । न घर-बार छोड़ने की ज़रूरत है, न बाल-बच्चों को त्यागने की ज़रूरत है, न ही कहीं बाहर जंगलों-पहाड़ों में भटकने की ज़रूरत है। हमें संसार में रहते हुए, संसार का कारोबार ग्रपना फर्ज़ ग्रौर कर्त्तव्य समझकर करते हुए ग्रपने ग्रन्दर ही उस शब्द का ग्रभ्यास करना है। सतगुरु से शब्द या नाम की बख़्शिश लेकर ग्रपने ग्रन्दर ही उसका स्वाद प्राप्त करना है । कहीं बाहर भटकने की ज़रूरत नहीं ।

नाम की कमाई करके हम जन्म-जन्मान्तरों के देह के बंधनों से छुटकारा प्राप्त कर लेते हैं ग्रौर वापस जाकर परमात्मा से मिल जाते हैं। हमें नाम की कमाई लोगों की मान-बढाई पाने के लिए नहीं करना है, ऋद्धि-सिद्धि

ग्रौर करामातें दिखाने के लिए नहीं करना है। नाम की कमाई हमें मालिक की कृपा ग्रौर बख़्शिश प्राप्त करने के लिए करना है, लोगों को करामातें दिखाकर मालिक के हिस्सेदार बनने के लिए नहीं करना है। इसलिए महात्मा समझाते हैं कि उस नाम की बख़्शिश को हमें ग्रपने ग्रन्दर ही हज़म करना चाहिये, इस ग्रनमोल पदार्थ को कौड़ियों की तरह बिखेरना नहीं चाहिये जितना भी हम उस मालिक की बख़्शिश को ग्रपने ग्रन्दर हज़म करेंगे, उतनी ही वह हम पर ग्रौर बख़्शिश व मेहर करेगा। कबीर साहिब फ़रमाते हैं–

"नाम रतन धन पाय कर, गांठ बांध, ना खोल।
नहीं पटन नहिं पारखी, नहिं गाहक, नहिं मोल ॥"

उस नाम रूपी दौलत को प्राप्त करके उसे ग्रपने ग्रन्दर इतना दबाकर रखो कि उसकी खुशबू तक बाहर न जाये, क्योंकि न तो दुनिया में कोई उसका ग्रधिकारी है, न किसी को खोटे ग्रौर खरे की पहचान है ग्रौर न ही उसका कोई खरीददार है। लोग तो बेटे-बेटियों के याचक हैं, धन-दौलत के ग्रभिलाशी हैं। वे उस नाम रूपी दौलत की कीमत देने को तैयार नहीं। उसकी कीमत क्या देनी पड़ती है ? ग्रपने ग्रापको ही मालिक के हवाले करना पड़ता है, जिस हालत में भी वह मालिक रखे उसी हालत में रहते हुए नाम की कमाई करनी पड़ती है। कबीर साहिब फिर समझाते हैं–

"सभी रसायन हम करी, नाहिं नाम सम कोय।
रंचक घट में संचरै, कंचन सब तन होय ॥"

हमने दुनिया के सब रसायनों को देख लिया, मगर नाम के बराबर कोई रसायन नहीं है। उसकी एक रत्ती भी ग्रगर शरीर में रच जाये तो हमारा शरीर सोना हो जाता है, ग्रर्थात् इस शरीर में ग्राने का उद्देश्य पूरा हो जाता है। इसी प्रकार गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं–

"पारखीग्रा वथु समालि लई, गुर सोझी होई ॥
नामु पदारथु ग्रमुलु सा, गुरमुखि पावै कोई ॥" (ग्रादि ग्रन्थ, ४२५)

जिनको इस चीज़ की परख ग्रौर कदर है, वे इसे बहुत सँभाल-सँभालकर रखते हैं। ग्रौर यह कदर भी संतों की संगति में जाकर ग्राती है। ग्रगर हमें कोई कीमती हीरा मिल जाता है तो हम उसे किस तरह सँभाल-सँभालकर रखते हैं। रुई में लपेटकर मज़बूत पेटियों में रखते हैं, उसकी चाबी को हमेशा छाती से लगाये रखते हैं, ग्रपने बीवी-बच्चों तक को पता नहीं देते कि वे कहीं उसे खो न दें। यह एक मामूली दुनिया की चीज़ है, जिसकी

कीमत लगाई जा सकती है। लेकिन जिस नाम की कोई कीमत ही नहीं लगाई जा सकती, जिसे महात्मा अमूल्य और अमोलक कहते हैं, जिसे पाकर हम खुद मालिक ही बन जाते हैं, हमें उसकी कितनी सँभाल करनी चाहिये इसका अन्दाज़ा आप खुद ही लगा सकते हैं। हज़रत ईसा कहते हैं, "पवित्र वस्तु कुत्तों को न दो, और न अपने मोतियों को सूअरों के सामने डालो। ऐसा न हो कि वे उन्हें पैरों तले रौंद डालें और पलटकर तुम पर हमला कर बैठें।" (मेथ्यू ७:६)। अर्थात् उस दौलत का ग्राहक साधारण तौर पर दुनिया में नहीं है, उस बहुमूल्य मोती को जानवरों के आगे मत डालो, वे उसकी कदर नहीं जानते। स्वामीजी महाराज फ़रमाते हैं—

"प्रीत प्रतीत गुरू की करना। नाम रसायन घट में जरना॥"

(सार बचन, १२३)

जिस प्रकार रसायन हमारे शरीर के अन्दर जाकर रच जाता है और शरीर की सब बीमारियां दूर कर देता है इसी प्रकार हमको अपने अन्दर नाम को रचाना और हज़म करना है। हमें नाम की कमाई हमेशा परमात्मा के ग्राहक बनकर करना है, परमात्मा से मिलने के लिए करना है। बाल-बच्चों का प्यार प्राप्त करने के लिए नहीं करना है और न ही कोई दुनियावी यश या अधिकार प्राप्त करने के लिए करना है। जितना सच्चा प्यार और इश्क लेकर हम उस मालिक को चाहते हैं उतनी ही वह हम पर अपनी दया-मेहर की बख़्शिश करता है। जिस तरह पपीहा स्वाति की बूंद के लिए तड़पता है, दिन-रात उसी की रट लगाए रहता है, उसी तरह हमारे अन्दर मालिक से मिलने की व उसके दर्शन करने की तड़प होनी चाहिए। हमें यह सोचकर मालिक की भक्ति नहीं करना चाहिए कि अगर ऐसा नहीं करेंगे तो हमारे कारोबार में घाटा पड़ जायेगा, धन-दौलत में कमी आ जायेगी या दुनिया में मान-सम्मान खो बैठेंगे या और कोई इसी प्रकार का दुनियावी नुकसान हो जायेगा। यह मालिक की भक्ति करने का एक बहुत तुच्छ अथवा घटिया तरीका है। हम मालिक की भक्ति इसलिए करते हैं कि हमारे अन्दर उससे मिलने का सच्चा इश्क और सच्चा प्यार है। दुनियावी लाभ के लिए मालिक की भक्ति करना ऐसा ही है जैसे लोग अक्सर साँप की पूजा करते हैं। वे साँप की भक्ति इसलिए नहीं करते कि उनको साँप से प्यार है। वे तो साँप के दंश और ज़हर से बचने के लिए उसकी भक्ति करते हैं। वास्तव में धर्म की बुनियाद प्रेम है, न कि डर। इसलिए हमें अपने अन्दर मालिक का सच्चा इश्क और प्यार पैदा करना चाहिये।

सांसारिक इच्छाएँ

तुलसी साहिब उपदेश देते हैं—

"दिल का हुजरा साफ कर, जाना के आने के लिए।
ध्यान गैरों का उठा उसके बिठाने के लिए ॥"

दिल तो हमारा दुनिया के पदार्थों और शक्लों के लिए भटकता है, मिलना हम मालिक से चाहते हैं। ये दोनों बातें कैसे हो सकती हैं। मन तो एक ही है। उसे चाहे दुनिया के प्यार में लगा लें चाहे मालिक की भक्ति में। हमारा कोई मामूली-सा रिश्तेदार या प्यारा हमसे कहीं दूर चला जाता है, हमसे बिछुड़ जाता है, तो हम उसकी याद में किस तरह तड़पते हैं, सारी रात जागते और आँसू बहाते रहते हैं। हमने कभी मालिक के विछोह में रात भी जागकर काटी है? हमारी आँखों में उस मालिक की याद में एक आँसू भी आया है? हम अपने बच्चे को बाहर खेलने के लिये आया के साथ भेज देते हैं। आया तरह-तरह से उसका मन बहलाने की कोशिश करती है, कभी उसे मीठी-मीठी कहानियाँ सुनाती है, कभी मिठाई देती है, कभी खिलौनों से दिल बहलाती है। लेकिन फिर भी अगर बच्चा माता-पिता के लिए रोना शुरू कर देता है और आया के किसी भी खिलौने से अपने मन को नहीं बहलाता, तो फिर माता-पिता भी उसकी तड़प बर्दाश्त नहीं कर सकते, फ़ौरन जाकर बच्चे को हृदय से लगा लेते हैं। इसी प्रकार, जब तक हम उस मालिक की रचना के साथ ही मोह और प्यार किए बैठे हैं, अपने मन को इसी में उलझाये बैठे हैं, हम इस रचना का ही हिस्सा बने हैं। जब इस रचना से अपने प्यार को निकाल कर पूरी तरह से मालिक की ओर लगा देते हैं तो वह भी दया-मेहर करके हमें अपने साथ ही मिला लेता है।

गुरु अमरदास साहिब फ़रमाते हैं—

"हरि का गाहकु होवै सो लए पाए रतनु वीचारा ॥ (आदि ग्रन्थ ४२५)

जो मालिक के ग्राहक या प्रेमी बनकर उसकी भक्ति करते हैं वे मालिक को ही पा लेते हैं। इसलिए हमें दुनिया की इच्छाओं और तृष्णाओं को छोड़कर उस परमात्मा की भक्ति करना चाहिए। पलटू साहिब समझाते हैं—

"नाम नाम सब कहत हैं नाम न पाया कोय।
नाम न पाया कोय नाम की गति है न्यारी।
वही शखस को मिले जिन्होंने आसा मारी।"

नाम रूपी दौलत या धन को पाना इतना आसान नहीं जितना कि लोग

समझते हैं। वही शख़्स प्राप्त कर सकता है जो अपने अन्दर से कामनाओं और तृष्णाओं को निकाल देता है। तुलसी साहिब का कथन है—

"एक दिल लाखों तमन्ना उस पै और ज़्यादा हवस।
फिर ठिकाना है कहाँ उसके टिकाने के लिये॥"

अर्थात् हमारा मन तो एक है और हज़ारों लाखों इच्छाएँ दिन रात हम करते रहते हैं। पिछली इच्छाएँ और तृष्णाएँ पूरी नहीं होती हैं कि मन और नई इच्छाएँ पैदा करना शुरू कर देता है। जो इच्छाएँ हमारी मरज़ी के अनुसार पूरी नहीं होतीं, वे हमारे लिये दुःख का कारण बन जाती हैं। जब हमारे मन की यह हालत है तो परमात्मा हमारे अन्दर आकर कैसे बिराज सकता है। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं—

"देदा दे लैदे थकि पाहि॥ जुगा जुगंतरि खाही खाहि॥"

(आदि ग्रन्थ, २)

कि परमात्मा देते-देते कभी नहीं थकता, हम दुनिया के जीव लेते-लेते थक जाते हैं। मन जो-जो इच्छाएँ करता है उनको पूरी करने के लिये परमात्मा हमें फिर जन्म दे देता है। हम और इच्छाएँ और तृष्णाएँ पैदा करते हैं। मालिक फिर जन्म दे देता है और उस जामे में जन्म देता है जिसमें जाकर उन इच्छाओं को अच्छी तरह पूरा किया जा सके। जिस समय हम उन इच्छाओं से तंग आकर परमात्मा से परमात्मा को माँगते हैं तो फिर परमात्मा हमें अपने साथ मिला लेता है। फिर फ़रमाते हैं—

"आसाँ परबत जेडीयाँ मौत तनावाँ हेठ॥"

हमारी इच्छाएँ और तृष्णाएँ तो शायद हिमालय पर्वत से भी बड़ी हैं। अगर परमात्मा हज़ारों साल की भी उमर दे तो भी शायद उनको पूरा न कर सकें। लेकिन मौत हमारे सिरहाने खड़ी है, पता नहीं ज़िन्दगी के चन्द और साल मिलने वाले हैं या नहीं और मौत किस वक्त आ जाये—

"जीव सब लोभ में भूले। काल से कोई नहीं बचना॥
तृष्णा अग्नि जग जारा। पड़ा सब जीव को तपना॥
नहीं कोइ राह बचने की। जलें सब नर्क की अगिना॥
जलेंगे आग में निस दिन। बहुरि भोगें जनम मरना॥
भटकते वे फिरें खानी। नहीं कुछ ठीक उन लगना॥
कहूं क्या दुक्ख वह भोगें। कहन में आ नहीं सकना॥"

(सार बचन, १२१)

हम सब दुनिया के जीव लोभ और लालच में फँसे हुए हैं और अपनी मौत

को भी भूले बैठे हैं। हौमैं या मैं-मेरी के प्रभाव में आकर कई प्रकार के कर्म करते हैं, कई प्रकार की इच्छाएँ और तृष्णाएँ पैदा करते हैं। वे पूरी नही होतीं, हम तृष्णा की अग्नि में जलते हैं और उन्हें पूरी करने की कोशिश करते हैं, फलस्वरूप मौत के बाद नरकों की आग में जलना पड़ता है। ये इच्छाएँ हमें फिर खींचकर चौरासी के जेलखाने में ले आती हैं। और जो जो दुःख और मुसीबतें उन ज़ामों में जाकर हमें भुगतनी पड़ती हैं उनका वर्णन ही नहीं किया जा सकता। इसलिए महात्मा हमें समझाते हैं कि हमेशा मालिक की मौज, मालिक के 'भाणे' में और उसके हुक्म में रहना चाहिये। मालिक के भाणे में रहने का मतलब है कि मन में कोई इच्छा और तृष्णा नहीं उठानी चाहिए, जो कुछ परमात्मा बख़्शे, उसकी इच्छा समझकर स्वीकार करना चाहिये। सन्त नामदेवजी का कथन है—

"जौ राजु देहि त कवन बडाई ।। जौ भीख मंगावहि त किआ घटि जाई ।।"

(आदि ग्रन्थ, ५२५)

गुरु अर्जुनदेवजी कहते हैं—

"जे तखति बैसालहि तउ दास तुम्हारे, घासु बढावहि केतक बोला ।।"

(आदि ग्रन्थ, १२११)

हे परमात्मा ! अगर मुझे दुनिया का राज-पाट भी दे देगा तो भी मुझे तेरी ही महिमा गाना है, तेरी ही भक्ति करना है। अगर मुझे दर-दर ठोकरें खानी पड़ेंगी तो मुझे कौन सा अपने दाता का दरवाज़ा छोड़ जाना है। जिस प्रकार एक समुद्री जहाज़ के पक्षी को जहाज़ के अलावा और कोई ठिकाना नही होता, इसी प्रकार हमारी आत्मा को भी परमात्मा के सिवाय और कोई ठिकाना नहीं हैं।

यह बात ध्यानपूर्वक विचार करने की है कि ये इच्छाएँ और तृष्णाएँ कौन पैदा करता है ? ये सब हमारा मन पैदा करता है । और हम पूरी किससे करवाना चाहते हैं ? परमात्मा से। हम मन को कभी समझाने की कोशिश नहीं करते कि तू मालिक की मरज़ी के अनुसार अपने आपको ढालने की कोशिश कर, उसके हुक्म और उसकी मौज में रह। उलटे दिन-रात परमात्मा को समझाने की कोशिश करते हैं कि तू हमारे मन की मरज़ी के अनुसार चलने की कोशिश कर। भक्ति हम परमात्मा की कर रहे हैं या मन की ? स्वामीजी महाराज भी यही समझाते हैं—

"गुरू की मौज रहो तुम धार। गुरू की रज़ा सम्हालो यार ।।
गुरू जो करें सो हितकर जान। गुरू जो कहें सो चित धर मान ।।" (स. ब. १३७)

गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं :

"हरि साचे भावै सा पूजा होवै भाणा मनि वसाई।।" (आदि ग्रन्थ, ९१०)

सन्तों ही को मालिक की भक्ति और पूजा का ढंग मालूम है, क्योंकि वे भाणे में रहकर ही मालिक की भक्ति करते हैं। फिर फ़रमाते हैं :

"भाणे ते सभि सुख पावै संतहु, अंते नामु सखाई।।" (आदि ग्रन्थ, ९१०)

कि भाणे में ही सुख व शान्ति है और अन्त में मालिक हमारी सहायता करता है। हज़रत ईसा भी यही कहते हैं, "मैं अपनी इच्छा नहीं बल्कि अपने पिता की इच्छा चाहता हूँ जिसने कि मुझे भेजा है।" (जॉन ५:३०) एक अन्य स्थान पर कहते हैं, "पुत्र स्वयं कुछ नहीं कर सकता, जो पिता को करते देखता है वही करता है।" (जान ५:१९)। एक महात्मा फ़रमाते हैं—

"जिसको कछु न चाहिए वही शाहंशाह।।"

जिसको किसी भी चीज़ की ज़रूरत नहीं है, जो हमेशा मालिक के हुक्म में ही रहता है, उससे बड़ा शाहंशाह कौन हो सकता है।

मुसलमानों में भी दो प्रकार के फ़क़ीर होते हैं। एक अहले-दुआ[1] और दूसरे अहले-रज़ा[2]। अहले-रज़ा का पद अहले-दुआ से कहीं ऊँचा है। इसलिए हमें मालिक के भाणे, मालिक की मौज में रहते हुए ही नाम की कमाई करना चाहिये।

मनुष्य-जन्म का उद्देश्य

परमात्मा ने इस सृष्टि की रचना करके उसे चौरासी लाख योनियों में बाँटा है। ऋषि-मुनियों ने इन चौरासी लाख प्रकार की योनियों का इस प्रकार हिसाब लगाया है—

तीस लाख प्रकार के वृक्ष, पेड़-पौधे, सत्ताईस लाख प्रकार के कीड़े-मकौड़े, चौदह लाख तरह के पक्षी, नौ लाख प्रकार के पानी के जीव और चार लाख प्रकार के पशु, जिन्न, भूत-प्रेत, देवी-देवता, मनुष्य आदि।

हम अपने कर्मों के अनुसार इस चौरासी के जेलखाने में फँसे हुए हैं, हमारी आत्मा परमात्मा से मिलकर ही इस जेलखाने से निकल सकती है और परमात्मा हमें यह मनुष्य-चोला केवल इसीलिए प्रदान करता है कि हम उस की भक्ति करके देह के बन्धनों से छुटकारा प्राप्त कर सकें। अगर मनुष्य के

१. अहले-दुआ—जो फ़क़ीर मालिक से दुआ माँगने या प्रार्थना करने में विश्वास रखते हैं।

२. अहले-रज़ा—जो मालिक की रज़ा या इच्छा में प्रसन्न रहते हैं और उससे कुछ माँगते नहीं।

चोले में आने का कोई लाभ है तो सिर्फ यही है। इस चोले को यह फ़ख़् या गौरव प्राप्त है कि इसमें बैठकर परमात्मा से मिलाप किया जा सकता है। गुरु अर्जुनदेवजी समझाते हैं—

"लख चउरासीह जोनि सबाई।। माणस कउ प्रभि दीई वडिआई ।।
इसु पउड़ी ते जो नरु चूकै, सो आइ जाइ दुखु पाइदा ।।" (आदि ग्रन्थ, १०७५)

परमात्मा ने मनुष्य के जामे को सबसे ऊँचा रखा है। यह इस सीढ़ी का आखरी डण्डा है। अगर कोशिश करते हैं तो मालिक से मिल जाते हैं, अगर पैर फिसलता है तो नीचे फिर चौरासी के जेलखाने में आ जाते हैं। गुरु अर्जुनदेवजी फिर समझाते हैं—

"कई जनम भए कीट पतंगा ।। कई जनम गज मीन कुरंगा ।।
कई जनम पंखी सरप होइओ ।। कई जनम हैवर बृख जोइओ ।।
मिलु जगदीस मिलन की बरीआ ।। चिरंकाल इह देह संजरीआ ।।"
(आदि ग्रन्थ, १७६)

कई जन्म कीड़ों-पतंगों के पाये, कई जन्म हाथी मछली और हिरणों के पाये, कई जन्म पक्षियों और साँपों के मिले और कई जन्म घोड़ों, पशुओं और पेड़ों-पौधों के पाये। चिर-काल के बाद परमात्मा ने अपनी भक्ति के लिए अब यह मनुष्य का जन्म बख़्शा है। हमें इससे पूरा फायदा उठाना चाहिए। मौलाना रूम फ़रमाते हैं—

"हमचो सब्ज़ा बारहा रोईदा अम, हफ्तो सद हफ्ताद कालिब दीदा अम।"[१]

एक और फ़कीर लिखते हैं—

"गाहे नखल दर बागहा—गाहे सपर बर शाखहा ।।"

कि कई बार मैं घास और सब्जी की तरह पैदा हुआ हूँ और सैंकड़ों शरीर मैंने देखे हैं। कभी बाग में दरख़्त बना हूँ, कभी दरख़्तों पर फल बनकर लगा हूँ।

इसलिए ऋषियों ने मनुष्य देह को नर-नारायणी देह कहकर वर्णन किया है, मुसलमान फ़कीर इसे अशरफ़-उल-मख़्लूकात कहते हैं और यहूदियों का ख़याल है कि परमात्मा ने हमें अपनी खुद की शक्ल पर बनाया है। कबीर साहिब भी यही समझाते हैं—

"कबीर मानस जनमु दुलंभु है होइ न बारैबार ।।
जिउ बन फल पाके भुइ गिरहि बहुरि न लागहि डार ।।" (आदि ग्रन्थ, १३६६)

---

१. अर्थात् वनस्पति की तरह मैं कई बार पैदा हुआ हूँ और सात सौ सत्तर शरीर मैंने देखे हैं।

जिस तरह वृक्ष से फल पक कर नीचे गिरता है तो वह फिर वृक्ष से वापस नहीं जुड़ सकता, इसी तरह अगर हम मनुष्य के जन्म को अब व्यर्थ गवाँ बैठेंगे तो फिर यह अवसर बार-बार नहीं मिलेगा। स्वामीजी महाराज भी यही उपदेश देते हैं–

"मिलो नर देह यह तुम को। बनाओ काज कुछ अपना ॥
पचो मत आय इस जग में। जानियो रैन का सुपना ॥
देह और ग्रेह सब झूठा। भर्म में काहे को खपना ॥"

(सार बचन, १२१)

यह इन्सान का जामा परमात्मा ने हमें अपना काम करने के लिये बख़्शा है। अपना काम वही है जो हमें वापस ले जाकर परमात्मा से मिलाता है। वह काम परमात्मा की भक्ति है। यह दुनिया एक रात के सपने की तरह है। इसकी कोई असलियत नहीं है। इसे देखकर इसके मोह में नहीं फंसना चाहिये। हमारी ज़मीन-जायदाद, धन-दौलत, रिश्तेदार और यहां तक कि हमारा शरीर भी एक दिन हमारा साथ छोड़ देगा। इसलिये आप उपदेश देते हैं कि इस अमूल्य अवसर से लाभ उठाओ। बाल-बच्चे, दुनिया का खाना-पीना, ऐशो-इशरत आदि सब हमें पिछले जन्मों में भी मिलते आये हैं। अगर कोई ऐसी चीज़ है जो हम पहले नहीं कर सके और केवल अब कर सकते हैं, तो वह परमात्मा की भक्ति है। लेकिन जिस उद्देश्य और ध्येय की पूर्ति के लिये परमात्मा ने यह मौका बख़्शा है, उसे हम इस देह में बैठकर बिलकुल भूल जाते हैं। विषयों-विकारों, शराबों-कबाबों, कौमों, मज़हबों और मुल्कों के झगड़ों और इन्द्रियों के भोगों से हमें फ़ुरसत ही नहीं मिलती। हम समझते हैं 'बाबर ब-ऐश कोस के आलम दोबारा नेस्त' कि मनुष्य का जामा शायद फिर न मिले, अब ख़ूब ऐश कर लें। इस प्रकार हम इस सुनहरी मौके को मुफ्त हाथ से खो बैठते हैं। हम इन्द्रियों के भोगों में इतने फँस जाते हैं कि अपनी मौत को भी भूल जाते हैं। रोज़ देखते हैं कि हमारे साथी हमारा साथ छोड़े जा रहे हैं, बल्कि हम खुद उनको श्मशान भूमि में छोड़ कर आते हैं और अपनी आंखों से देखते हैं कि दुनिया की कोई चीज़ उनके साथ नहीं जा रही है। लेकिन हम मन में हमेशा यही सोचते हैं कि मौत शायद औरों के लिए है, हमारे लिये नहीं। गुरु नानक साहिब हमारी हालत का इस प्रकार वर्णन करते हैं–

"धंधै धावत जगु बाधिआ ना बूझै वीचारु ॥
जमण मरणु विसारिआ मनमुख मुगधु गवारु ॥" (आदि ग्रन्थ, १०१०)

हम दुनिया के जीव हमेशा, दिन-रात पेट के धन्धों में भटकते फिरते हैं और उस ध्येय के बारे में कभी नहीं सोचते जिसके लिये मालिक ने हमें यहां भेजा है। हमारे अपने घर में आग लगी हुई है और हमें लोगों की आग बुझाने की फिकर लगी हुई है अपना घर लूटा जा रहा है, हम दूसरों के घरों की चौकीदारी कर रहे हैं। हम अपना बोझ उठा नहीं सकते, पराये गधे बने बैठे हैं। अपने आपको भी धोखा दे रहे हैं और दुनिया को भी धोखा दे रहे हैं। हम कितने मनमुख, नासमझ और गंवार हैं कि अपने जन्म-मरण को भी भूले बैठे हैं। स्वामीजी महाराज समझाते हैं—

"कहूं क्या काल जग मारा। जीव सब घेर भरमाई।।
नहीं कोई मौत से डरता। ख़ौफ़ जम का नहीं लाई।।" (सार बचन, १२१)

यही कबीर साहिब का कथन है—

"क्या लेकर जनम लियो है, क्या लेकर चले जाओगे।
मुट्ठी बांध कर जनम लिया है, हाथ पसारे जाओगे।
यह तन है कागज की पुड़िया, बूंद पड़त गल जाओगे।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, इक नाम बिना पछताओगे।"

आप समझाते हैं कि दुनिया में हम खाली हाथ ही पैदा हुए हैं और खाली हाथ ही यहां से चले जायेंगे। न कोई आज तक यहां कुछ साथ लेकर आया है और न कभी कोई चीज़ अपने साथ ले जा सकता है। हमारा यह शरीर भी कागज़ की पुड़िया के समान है। कागज़ की पुड़िया पर ज़रा-सा पानी गिरे तो वह गल जाती है। इसी तरह हमारे इस शरीर को भी मौत के बाद अग्नि या मिट्टी के सुपुर्द हो जाना है। यदि मालिक की भक्ति नहीं करेंगे तो आखिर मौत के समय पछताना पड़ेगा। अगर यह दुनिया की धन-दौलत किसी के साथ जाती होती तो दुनिया के लोग अब तक उसे साथ ले गये होते और हमारे हिस्से में शायद कुछ भी न आता। यह तो हमें इसलिए मिली है कि इसने कभी किसी का साथ नहीं दिया। महमूद गज़नवी ने हिन्दुस्तान पर सत्रह हमले किये और बहुत सा सोना-चांदी, हीरे-जवाहिरात यहां से लूटकर ले गया। उसको प्राप्त करने के लिये उसने कितने गरीबों का खून किया, कितनी औरतों को विधवा और बच्चों को अनाथ किया। जब उसकी मौत का समय आया तो उसने अपने अनुचरों को हुक्म दिया कि जो भी मैं हिन्दुस्तान से लूटकर लाया हूं उसको एक खेमे में लगाकर दिखाओ। जब सारी दौलत को नज़र भर कर देखा तो उसकी आंखों में आंसू भर आये। एक ठंडी आह भर कर उसने सोचा कि जिस

दौलत को हासिल करने के लिए इतने ज़ुल्म और अत्याचार किये, आज उसमें से मेरे साथ कोई भी चीज़ नहीं जा रही है। उसने हुक्म दिया कि मौत के बाद मेरे हाथ कफ़न से बाहर निकाल दिये जायें ताकि लोग देखें कि मैं खाली हाथ जा रहा हूं और मेरी ज़िन्दगी से सबक लें।

जो चीज़ें यहीं रह जाने वाली हैं उनके साथ हम कितना प्यार करते हैं। उनको प्राप्त करने के लिए दिन-रात भटकते फिरते हैं। जो पापों के किए बिना प्राप्त नहीं होती और मरने पर साथ नहीं जाती उस पर हम जान देते हैं और जो चीज़ वास्तव में हमारी अपनी है और जिसे हमें अपनी बनाना चाहिये, उसके बारे में कभी नहीं सोचते। हज़रत ईसा भी यही कहते हैं, "नाशवान पदार्थों के लिए मेहनत न करो, बल्कि उस पदार्थ के लिए मेहनत करो जो अनन्त जीवन तक रहेगा, जो मनुष्य का पुत्र तुम्हें देगा, क्योंकि पिता परमेश्वर ने उस पर उसके (पुत्र के) लिए मुहर लगाई है।" (जॉन ६:२७)

अर्थात् दुनिया की नाशवान धन-दौलत और पदार्थों को प्राप्त करने की कोशिश न करो, बल्कि उस नाम की दौलत को प्राप्त करो जो कभी नष्ट नहीं होती। जो दौलत अर्थात् नाम मैं तुमको दूंगा उस पर मेरे पिता ने मुहर लगाई हुई है। वह कभी नाश को प्राप्त नहीं होती, क्योंकि मैं उसे मालिक की ओर से तुम्हें दूंगा। स्वामीजी महाराज समझाते हैं—

"भटक भटक नर देही पाई। इन्द्री मन मिल यहाँ मारा।।"

(सार बचन, ११४)

बड़ी मुश्किल से हमें यह मनुष्य का जामा मिला है। लेकिन यहां इस जामे में आकर मन के अधीन होकर हम इन्द्रियों के भोगों में फँसे बैठे हैं। जितना भी हमारा दुनिया से ताल्लुक या सम्बन्ध है सब हमारे शरीर के ज़रिए ही है। जब तक हम शरीर में बैठे हैं हमें ये यार-दोस्त, रिश्तेदार, भाई-बहिन और दुनिया की धन-दौलत, कौम, मुल्क वगैरह सब अपने ही नज़र आते हैं या कम से कम हम उन्हें अपना बनाने की कोशिश ज़रूर करते हैं। जिस समय शरीर से हमारा साथ छूट जाता है, इन सब चीज़ों से भी सम्बन्ध टूट जाता है। हमें चाहिए कि जब तक परमात्मा ने इस शरीर में बैठने का मौका दिया है, इससे काम ले लें। इसमें बैठकर न तो इसे इतना दु:ख देना है कि मालिक की भक्ति ही न हो सके और न ही इसे इतने सुख और आराम में रखना है कि हमारा ख़याल ऐशो-इशरत की ओर चला जाये। मालिक की भक्ति ही हमारा असली काम है और हमें वही इससे करवाना है। स्वामीजी महाराज का कथन है—

"धाम अपने चलो भाई। पराये देश क्यों रहना ।।
काम अपना करो जाई। पराये काम नहीं फँसना ।।
नाम गुरु का सम्हाले चल। यही है दाम गँठ बंधना ।।
जगत का रंग सब मैला। धुला ले मान यह कहना ।।" (सार बचन, १५२)

हमारा यह शरीर काल का पिंजरा है, किराये का मकान है। जितने सांस मालिक ने हमें बख़्शे हैं उनको भुगतने के बाद इसे यहीं छोड़ जायेंगे। यह शरीर कभी किसी का साथ नहीं देता। बड़े-बड़े राजा, महाराजा, बादशाह, सुल्तान, शासक, तानाशाह, जिनसे दुनिया थर-थर कांपती थी, आज उनकी कब्रों को हम किस तरह तिरस्कार भरी दृष्टि से देखते हैं। कभी हमारी कब्रों को भी लोग इसी तरह से देखेंगे। लोगों की हड्डियां हमारे पैरों के नीचे आकर रौंदी जा रही हैं, किसी दिन हमारी हड्डियां भी औरों के पैरों के नीचे आकर रौंदी जायेंगी। लोगों की खाक उड़कर आज हमारी आंखों में गिरती है, किसी दिन लोगों की आंखों में हमारी खाक उड़कर गिरेगी। इसलिए महात्मा हमें बेसुधी की नींद से सचेत करते हैं कि उस समय को अपनी आंखों के सामने रखो, जब कोई भी चीज़ तुम्हारी मदद नहीं करेगी। यह बहिन-भाई, रिश्तेदार, मित्र, परिजन सब हमारे आसपास ही बैठे रह जाते हैं, उन्हें यह भी पता नहीं लगता कि मौत के फ़रिश्ते किस समय और किस रास्ते से आकर हमें पकड़ कर ले जाते हैं। हमारे रिश्तेदार और सगे-सम्बन्धी रोने-धोने के सिवाय और क्या कर सकते हैं। और वे हमारी क्या मदद कर सकते हैं, ! उन सबके साथ हमारा लेने-देने का सम्बन्ध है, गरज का प्यार है, स्वार्थ का लगाव है। कोई पत्नी बनकर आ गई, कोई पति और बाल-बच्चे बनकर आ गये। उनसे हमारा जो भी हिसाब-किताब होता है, उसके पूरे हो जाने पर कभी वे हमें छोड़ कर चले जाते हैं, और कभी हम उनको छोड़कर चल देते हैं। जिस तरह एक स्टेज या रंग मंच पर हरएक अभिनेता अपना-अपना पार्ट अदा करता है, कोई राजा का, कोई रानी का, कोई किसी दुष्ट पात्र का, इसी तरह यह दुनिया भी एक बहुत बड़ी स्टेज है और हम सब दुनिया के लोग यहाँ अपने-अपने कर्मों के अनुसार अपना-अपना पार्ट अदा कर रहे हैं। असल में हमारा किसी के साथ कोई रिश्ता या सम्बन्ध नहीं है। जिस तरह नाटक के समाप्त हो जाने पर, रंगमंच से उतरने के बाद न कोई राजा होता है, न कोई रानी, इसी तरह इस देह को छोड़ने के बाद हमारा सम्बन्ध भी किसी से नहीं रहता। जिस समय किसी को मौत आती है, उसके रिश्तेदार रोते हैं लेकिन

जिस जगह जाकर वह फिर जन्म लेता है, वहां खुशियां मनाई जाती हैं। आज जबकि हम अपने पिछले जन्मों के रिश्तेदारों को बिलकुल भूले बैठे हैं तो जिनके लिए हम आज भटकते फिरते हैं, तरसते और तड़पते हैं, उनको अगले जन्मों में क्या याद रख लेंगे। गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं—

"मात पिता माइआ देह सि रोगी, रोगी कुटंब संजोगी ॥"

(आदि ग्रन्थ, ११५३)

कि माता-पिता को भी हमारा साथ छोड़ देना है। जो कुछ भी हम दुनिया में देख रहे हैं इसे भी हमारे साथ नहीं जाना है। हमारे रिश्तेदार भी रोगी हैं, अर्थात् नाशवान हैं। यहां तक कि जिस शरीर में हम बैठे हुए हैं, जिससे इतना प्यार रखते हैं और जिसके बनाव-शृंगार में हम क्या-क्या नहीं करते, वह भी यहीं रह जाता है। स्वामीजी महाराज समझाते हैं—

"धन दारा सुत नाती कहियन। यह नहिं आवें काम ॥
स्वाँस दुधारा नित ही जारी। इक दिन खाली चाम ॥
मशक समान जान यह देही। बहती आठों जाम ॥"

(सार बचन, ११९)

कोई भी रिश्तेदार मौत के समय में काम नहीं आता। जिस प्रकार एक तालाब में कितना भी पानी क्यों न भरा हो, उसमें एक नल लगाकर खोल दें तो पूरा तालाब खाली हो जाता है। इसी प्रकार हमारा यह शरीर सांसों का भंडार है। जब तक हमें सांस आ रही है, हम किस तरह इस दुनिया में एक-दूसरे के लिए भाग-दौड़ कर रहे हैं। दुनिया में अपने पेट के लिये और लोगों के लिये हम क्या नहीं करते। परन्तु हम उस समय को भूल जाते हैं जिस समय यह सांसों का भंडार समाप्त हो जायेगा। लोग हमारी मौत पर तार और टेलीफोन करेंगे, सगे-सम्बन्धी इकट्ठे होकर इस शरीर को, जिससे हमें इतना प्यार था, या तो अग्नि के सुपुर्द कर देंगे या मिट्टी में दफ़ना देंगे। स्वामीजी महाराज एक और अच्छा उदाहरण देकर समझाते हैं कि जब तक एक चमड़े की मशक में हवा भरी रहती है, वह पानी के ऊपर तैरती रहती है, हम भी उसका सहारा लेकर पानी पर तैरते हैं। लेकिन जब उस मशक से हवा निकल जाती है तो वह पानी की तह में बैठ जाती है और जो उसका सहारा लेता है वह भी गोते खाने लग जाता है। इसी तरह जब तक हमारे शरीर के अन्दर सांस आ रही है, इस दुनिया के काम-काज करते हैं और लोग भी हमारा आसरा लेकर अपना वक्त गुज़ार रहे हैं। परन्तु जब इस मशक अर्थात् शरीर से हवा निकल

जाती है तो यह शरीर भी निस्सार हो जाता है और जो इसका आसरा लेकर वक्त काट रहे हैं वे भी रोना-पीटना शुरू कर देते हैं और घबरा जाते हैं। महात्माओं के समझाने का सिर्फ इतना ही मतलब है कि हम उस मौत के वक्त को अपनी आंखों के सामने रखें, उससे पहले-पहले अपना रूहानी सफर तय कर लें और मंज़िले-मक्सूद पर पहुंच जायें। स्वामीजी महाराज समझाते हैं—

"कुटुम्ब परिवार मतलब का। बिना धन पास नहिं आई॥"

(सार बचन, १२१)

हमारे जो भी रिश्तेदार, यार-दोस्त हैं ये सब गरज़ और स्वार्थ के साथी हैं। इनके मोह और प्यार में फंसकर हम मालिक को भूले बैठे हैं, इस शरीर में आने का उद्देश्य और मतलब भूले बैठे हैं। जब हमारे पास धन-दौलत नहीं रहती तो हमको अपने भी छोड़ जाते हैं।

नम्रता

सब महात्मा हमें यही उपदेश देते हैं कि इस मनुष्य जन्म में आकर अपनी देह के अन्दर मालिक की खोज करो। लेकिन हम देह के अन्दर मालिक को ढूंढने के बजाय उलटे इस देह के ही मान और अहंकार में फंस जाते हैं। ज़रा गौर करके देखें कि हम इस शरीर में बैठकर किस चीज़ का मान और अहंकार करते हैं। क्या जवानी का मान करते हैं? हमने किसी का बुढ़ापा नहीं देखा? क्या हमें भी इस बुढ़ापे की उमर में नहीं पहुंचना है? स्वास्थ्य और तन्दरुस्ती का गरूर करते हैं? क्या कभी अस्पतालों में बीमारों की हालत नहीं देखी? रुपये पैसे का अहंकार करते हैं? क्या बड़े-बड़े राजा-महाराजाओं, सेठों-साहूकारों को कंगालों की तरह सड़कों पर भटकते नहीं देखा या सुना? हम दुनिया की हुकूमत या इज़्ज़त और मान-प्रतिष्ठा का अहंकार करते हैं? क्या बड़े-बड़े लीडरों, नेताओं और तानाशाहों को फांसी के तख्तों पर चढ़ते नहीं सुना या गोलियों के शिकार बनते नहीं देखा? रातों-रात अचानक हुकूमत के तख्ते पलट जाते हैं, दूसरी पार्टी उनको उठाकर जेलखानों में डाल देती है या तोपों का शिकार बना देती है। फिर हम ग़रूर और अहंकार किस बात का करते हैं? कबीर साहिब समझाते हैं—

"लकड़ी कहे लुहार को, तू क्या जारे मोहि।
इक दिन ऐसा होयगा, मैं जारूंगी तोहि॥
माटी कहे कुम्हार को, तू क्या रूंदे मोहि।
इक दिन ऐसा होयगा, मैं रूंदूंगी तोहि॥"

लुहार लकड़ी को जला-जलाकर उसके कोयले बनाता है, पर लकड़ी उससे कहती है कि कभी उस वक्त को भी अपनी आंखों के आगे रखकर सोच; जब मैं तुझे साथ लेकर तेरे भी इसी तरह कोयले बना दूंगी। कुम्हार मिट्टी को रौंद-रौंद कर उसके बर्तन बनाता है, लेकिन मिट्टी उससे कहती है कि एक दिन मैं भी तुझे अपने साथ लेकर इसी तरह रूंध डालूंगी। स्वामीजी महाराज भी यही फ़रमाते हैं –

"मन रे क्यों गुमान अब करना।
तन तो तेरा ख़ाक मिलेगा। चौरासी जा पड़ना ॥" (सार बचन, १२३)

महात्मा इसलिये हमें उपदेश देते हैं कि मन में हमेशा नम्रता, विनय और दीनता रखना चाहिये। जितनी नम्रता और दीनता हमारे अन्दर होगी, उतना ही हमारा ख़याल मालिक की भक्ति की ओर जायेगा और हमें मालिक की बख़्शिश मिलेगी। बाइबिल में भी इस नम्रता और दीनता के बारे में लिखा है—

"धन्य हैं वे जो अन्तर में दीन हैं, क्योंकि स्वर्ग का राज्य उन्हीं का है।" (मेथ्यू ५:३)

"जो नम्र हैं वे धन्य हैं, क्योंकि वे ही पृथ्वी के अधिकारी होंगे।" (मेथ्यू ५:५)

"जो अपने आपको इस बालक के समान छोटा करेगा, वह स्वर्ग के राज्य में सबसे बड़ा होगा।" (मेथ्यू १८:४)।

और फिर कहते हैं, "मैं तुमसे सच कहता हूँ कि अगर तुम बदल कर छोटे बच्चों के समान नहीं बनते, तुम प्रभु के दरबार में प्रवेश नहीं कर सकते।" (मेथ्यू १८:३)

स्वामीजी महाराज का भी यही उपदेश है—

"दीन ग़रीबी चित में धरना। काम क्रोध से बचना ॥"
(सार बचन, १२३)

इसी प्रकार गुरु नानक साहिब प्रार्थना करते हैं–

"कहु नानक हम नीच करंमा। सरणि परे की राखहु सरमा ॥"
(आदि ग्रन्थ, ३७८)

इस कोटि के महात्मा होकर अपने बारे में कितने नम्र और दीनतापूर्ण शब्दों का उपयोग करते हैं। गुरु नानक साहिब अपनी वाणी में कई जगह अपने आपको "लाला गोला' (सेवक और गुलाम), 'दासों का दास', 'नीच करम्मा' कहते हैं। हमें इन महात्माओं के जीवन से शिक्षा लेनी चाहिये जो

धुर-धाम पहुँच कर, कुल-मालिक बनकर भी डींग नहीं मारते। हमारे हाथ कोई साधारण-सी भी सत्ता या हुकूमत आ जाये तो हम इन्सान को इन्सान ही नहीं समझते। कबीर साहिब समझाते हैं—

"बुरा जो देखन मैं चला, बुरा न मिलिया कोय।
जब मन खोजा आपना, मुझसा बुरा न होए॥
कबीर सब से हम बुरे, हम तें भल सब कोय।
जिन ऐसा करि बूझिया, मीत हमारा सोय॥"

महात्माओं का हमें समझाने का सिर्फ यही मतलब है कि घमण्ड और अहंकार किसी चीज़ का नहीं करना चाहिए। मनुष्य के चोले में बैठकर मन में नम्रता, दीनता और आजिज़ी रखना चाहिए और नाम की कमाई करना चाहिये, क्योंकि नाम की कमाई ही हमारा साथ देगी और तभी हमारा देह में आने का ध्येय पूर्ण हो सकेगा। दादू साहिब का कथन है—

"क्या मुख ले हँस बोलिए, दादू दीजे रोय॥
जनम अमोलक आपना, चले अकारथ खोय॥"

यही महात्मा चरनदासजी अपनी वाणी में लिखते है—

"हाथी घोड़े धन घना, चन्द्रमुखी बहु नार।
नाम बिना जमलोक में, पावत दुःख अपार॥"

यही गुरु नानक साहिब लिखते हैं—

"बिनु नावै को संगि न साथी, मुकते नाम धिआवणिआ॥"
(आदि ग्रन्थ, १०९)

परमात्मा की कृपा

जब हमारे अन्दर नम्रता और दीनता आयेगी तो हमारा ध्यान मालिक की भक्ति और प्यार की ओर जायेगा। यह केवल संतों की संगति के द्वारा ही सम्भव हो सकता है। और ऐसे सन्तों की संगति मालिक की बख्शिश और कृपा से ही मिलती है, सच तो यह है कि मालिक बख्शिश करे तब ही हमारा ख़याल उसकी भक्ति और प्यार की ओर जाता है। गुरु अमरदासजी फ़रमाते हैं—

"हरि साचे भावै सा पूजा होवै भाणा मनि वसाई॥" (आदि ग्रन्थ, ९१०)

अर्थात् उस मालिक को मंज़ूर होगा तब ही हम उसकी भक्ति कर सकेंगे। हम दुनिया के जीव अन्धे हैं। अन्धे की ताकत नहीं कि वह आँखों वाले को पकड़ सके, जब तक कि आँखों वाला अंधे को आवाज़ देकर पास नहीं बुलाता या अपनी अँगुली पकड़ा कर उसे अपने साथ नहीं ले चलता। हम दुनिया

के जीव इस माया के जाल में फँसकर मालिक को भूलकर अन्धे और बहरे हो गए हैं। मालिक ही कृपा करे तो हमारा खयाल उसकी भक्ति की ओर जा सकता है। गुरु नानक साहिब समझाते हैं—

"जीवणु मरणा सभु तुधै ताई ॥ जिसु बखसे तिसु दे वडिआई ॥"

(आदि ग्रन्थ, ११०)

इसी प्रकार कबीर साहिब फ़रमाते हैं—

"साहिब से सब होत है, बन्दे ते कछु नाहिं।
राई ते परबत करै, परबत राई नाइँ॥
ना कछु किया न करि सका, न करने जोग सरीर।
जो कछु किया साहिब किया, तातें भया कबीर॥
न कछु किया न कर सके, नहिं कछु करने जोग।
जो कछु किया सो हरि किया, दूजा थापे लोग॥
जो कछु किया सो तुम किया, मैं कछु कीया नाहिं।
कहौं कहीं जो मैं किया, तुम ही थे मुझ माहिं॥"

इसी तरह हज़रत ईसा भी बाइबिल में कहते हैं, "इसीलिए मैंने तुमसे कहा था कि कोई भी मनुष्य मेरे पास नहीं आ सकता, जब तक कि मेरे पिता से उसे यह बख़्शिश न मिली हो।" (जॉन ६:६५)।

"कोई मनुष्य मेरे पास नहीं आ सकता जब तक कि पिता जिसने मुझे भेजा है उसे खींच न ले।" (जॉन ६:४४)

अर्थात् जीव की कोई ताकत नहीं कि वह मालिक की ओर आये, जब तक कि मालिक ही उस पर यह बख़्शिश न करे।

पाँचवीं पातशाही गुरु अर्जुनदेवजी 'बारहमाहा' शुरू करने से पहले लिखते हैं—

"किरति करम के बीछुड़े करि किरपा मेलहु राम ॥" (आदि ग्रन्थ, १३३)

हे परमात्मा! हम अपने कर्मों के कारण तुझसे बिछुड़े हुए फिर रहे हैं। हमारे अपने वश में नहीं कि तुझ तक पहुँच सकें। तू ही हम पर दया मेहर और बख़्शिश करे तो हम तुझ तक पहुँच सकते हैं। आगे फ़रमाते हैं—

"आपण लीआ जे मिलै, बिछुड़ि किउ रोवंनि॥
साधू संगु परापते नानक रंग माणंनि॥" (आदि ग्रन्थ, १३४)

हे परमात्मा! अगर हमारे अपने वश में हो कि तुझ तक पहुँच सकें, तो किसका दिल करता है कि तुझ से बिछुड़ कर इस चौरासी के जेलखाने में भटकता फिरे। हमारे वश में ही नहीं कि हम अपने आप तुझ तक पहुँच सकें।

हज़रत ईसा भी यही कहते हैं कि परमात्मा ने ही मेरे सुपुर्द जो जीव किए हैं, मैं उनके लिए दुआ करता हूँ, न कि तमाम दुनिया के लिए। उनका कथन है, "मैं दुनिया के लिए विनती नहीं करता, बल्कि सिर्फ उनके लिए करता हूँ जिन्हें तूने मुझे दिया है, क्योंकि वे तेरे हैं।" (जॉन १७:९)

गुरु नानक साहिब ने तो मालिक के बारे में यहाँ तक कहा है—

"खोटे खरे तुधु आपि उपाए।। तुधु आपे परखे लोक सबाए।।
खरे परखि खजानै पाइहि, खोटे भरमि भुलावणिआ।।"

(आदि ग्रन्थ, ११९)

हे परमात्मा! सब दुनिया के जीव तूने आप पैदा किए हैं। खोटे भी तूने ही पैदा किये हैं और खरे भी तूने ही बनाये हैं। और तू खुद ही दोनों को परखने बैठ गया है कि कौन खरा है और कौन खोटा। जिनको तू खुद अपनी परख के काबिल बना लेता है उनको तू अपने ख़जाने में दाखिल या जमा कर लेता है। बाकी सब भ्रमों में फँस कर भूले फिरते हैं।

परमात्मा जब भी दया-मेहर करता है सन्तों-महात्माओं के ज़रिये ही करता है, बल्कि खुद मनुष्य के चोले में बैठकर हमारे अन्दर अपने मिलने का शौक और प्यार पैदा करता है, हमसे अपनी भक्ति करवाकर अपने साथ मिला लेता है। तीसरी पातशाही गुरु अमरदास जी लिखते हैं—

"करम होवै सतिगुरू मिलाए।। सेवा सुरति सबदि चितु लाए।।"

(आदि ग्रन्थ, १०९)

मालिक ने कृपा की तो हमें सतगुरु की सोहबत और संगति प्राप्त हुई। उसके बाद हम पर सतगुरु की बख़्शिश हुई और उन्होंने हमारी सुरत या आत्मा को शब्द से जोड़ दिया, जिसका अभ्यास करके दुनिया से हमारा मोह निकल जाता है और मालिक का प्यार पैदा हो जाता है। हज़रत ईसा भी कहते हैं, "तुमने मुझे नहीं चुना, बल्कि मैंने तुम्हें चुना है और तुम्हें आदेश दिया है ताकि तुम जाकर फल लाओ।" (जान १५:१६)। फिर फ़रमाते हैं, "जब तक मनुष्य को परमात्मा की ओर से न दिया जाये, तब तक वह कुछ नहीं पा सकता।" (जान ३:२७) अर्थात् जीव के वश में कुछ नहीं जब तक कि उस पर मालिक और गुरु की बख़्शिश न हो।

इसी प्रकार गुरु नानक साहिब समझाते हैं—

"आपे करता करे कराए, आपे सबदु गुर मंनि वसाए।।"

(आदि ग्रन्थ, १२५)

जो कुछ भी करता है वह परमात्मा खुद करता है। जब वह हमें अपने

साथ मिलाना चाहता है तो सतगुरु के ज़रिये हमारे ख़याल को शब्द से जोड़ देता हैं। सन्त-महात्मा मालिक के भेजे हुए ही आते हैं और जिन जीवों पर मालिक की बख़्शिश होती है उन्हीं को अपने साथ लेकर मालिक के अन्दर समा जाते हैं। हज़रत ईसा ने भी इसी का ज़िक्र किया है, "मैं उनमें और तू मुझ में, कि वे पूर्ण होकर एक हो जावें और संसार जान ले कि तूने मुझे भेजा है, और उन्हें प्यार किया है जैसा कि तूने मुझे प्यार किया है।" (जॉन १७:२३)।

सन्तों का संदेश

हरएक महात्मा का केवल यही उपदेश है कि परमात्मा एक है, हमारी आत्मा उस परमात्मा का अंश है, उससे मिलकर ही हम जन्म-मरण के दुखों से बच सकते हैं। वह परमात्मा हरएक के शरीर के अन्दर है और मनुष्य के चोले में आकर ही हम उसे प्राप्त कर सकते हैं। हमारे अन्दर हमारे मन की रुकावट है जिसके कारण हम उस परमात्मा को अपने अन्दर देख नहीं सकते। यह मन की रुकावट शब्द या नाम की कमाई के द्वारा ही हमारे अन्दर से दूर होती है। वह नाम या शब्द और मालिक से मिलने का रास्ता भी खुद मालिक ने हमारे अन्दर ही रखा है। सन्तों की संगति से ही हम अपने अन्दर उस रास्ते को ढूंढ सकते हैं और नाम या शब्द से अपना खयाल जोड़ सकते है।

इसी नाम या शब्द को हज़रत ईसा ने 'वर्ड' (शब्द) और 'चेतन जल' कहा है। वे कहते हैं, "जो कोई उस जल में से पियेगा, जो मैं उसे दूंगा, वह फिर कभी प्यासा न होगा। लेकिन वह जल जो मैं उसे दूंगा, उसके अन्तर में एक जल का सोता बन जायेगा जो अनन्त जीवन में उमड़ पड़ेगा।" (जान ४:१४)।

गुरु नानक साहिब इसी को अमृत कहकर समझाते हैं। मुसलमान फ़कीर इसे आबे-कौसर और आबे-हयात कहते हैं, क्योंकि इसको प्राप्त करके हम हमेशा के लिए जीवित या जागृत हो जाते हैं और देह के बन्धनों से बच जाते हैं। ऐसे अमृत को प्रदान करने वाले सन्तों की संगति हमें हमेशा परमात्मा की दया-मेहर और बख़्शिश से ही प्राप्त हो सकती है। सन्त दुनिया में मालिक से मिलने की कोई नई फिलॉसॉफी, शिक्षा या रीति लेकर नहीं आते। सब सन्त उस एक ही फिलॉसॉफी और सिद्धान्त को समझाते हैं। लेकिन हम उनके जाने के बाद बाहर-मुखी हो जाते हैं, असलियत और सच्चाई को भूल जाते हैं। फिर कोई और महात्मा किसी और जगह

आकर हमें उसी असलियत की याद दिलाता है और हमारे विचारों को वहमों और भ्रमों से निकालता है। यह मालिक ने अपने मिलने का कुदरती कानून व तरीका बना रखा है। वे महात्मा इस कुदरती कानून के बारे में ही याद दिलाते हैं, अपने पास से कोई नई शिक्षा नहीं देते। हज़रत ईसा बाइबिल में कहते हैं, क्योंकि मैंने अपनी ओर से कुछ नहीं कहा, बल्कि पिता जिसने मुझे भेजा है उसी ने मुझे हुक्म दिया है कि मैं क्या कहूं और क्या समझाऊं।" (जॉन १२:४९)

एक और स्थान पर कहते हैं, "मेरा उपदेश मेरा नहीं, बल्कि मेरे भेजने वाले का है।" (जॉन ७:१६)

सन्तों की शिक्षा का आधार उनका निजी अनुभव होता है। वे ग्रन्थ-पोथियां पढ़कर सुनी-सुनाई बातें नहीं करते। वे तो जो कुछ आंखों से देखते हैं और जो उनका अपना अनुभव होता है, उसी का वर्णन करते हैं।

गुरु नानक साहिब फ़रमाते हैं—

"संतन की सुणि साची साखी ॥ सो बोलहि जो पेखहि आखी ॥"

(आदि ग्रन्थ, ८९४)

फिर समझाते हैं :

"जैसी मै आवै खसम की बाणी, तैसड़ा करी गिआनु वे लालो ॥"

(आदि ग्रन्थ, ७२२)

महात्मा जो भी ज्ञान परमात्मा से लेकर आते हैं, वही हमें समझाते हैं। दादू साहिब भी यही कहते हैं—

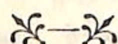
"दादू देखा दीदा सब कोई कहत शुनीदा।"

इसी प्रकार तुलसी साहिब फ़रमाते हैं—

"निज नैना देखा हिये आंखी, जस-जस तुलसी कह कह भाखी।"

अर्थात् मैंने जो कुछ आंखों से देखा है, वही समझा रहा हूं। दुनिया के लोग तो सुनी सुनाई बातें करते हैं।

हज़रत ईसा भी यही कहते हैं, "मैं तुझसे सच कहता हूं कि हम जो जानते हैं वही कहते हैं और जिसे हमने देखा है उसी की गवाही देते हैं।" (जान ३:११)



स्वामी जी महाराज के

शब्द

चितावनी भाग २

बचन १५ : शब्द १२

अटक तू क्यों रहा जग में। भटक में क्या मिले भाई ॥१॥
खटक तू धार अब मन में। खोज सतसंग में जाई ॥२॥
विरह की आग जब भड़के। दूर कर जगत् की काई ॥३॥
लगा लो लगन सतगुरु से। मिले फिर शब्द लौ लाई ॥४॥
छुटेगा जन्म और मरना। अमर पद जाय तू पाई ॥५॥
भाग तेरा जगे सोता। नाम और धाम मिल जाई ॥६॥
कहूँ क्या काल जग मारा। जीव सब घेर भरमाई ॥७॥
नहीं कोइ मौत से डरता। ख़ौफ़ जम का नहीं लाई ॥८॥
पड़े सब मोह की फाँसी। लोभ ने मार धर खाई ॥९॥
चेत कहो होय अब कैसे। गुरू के संग नहिं धाई ॥१०॥
काम और क्रोध बिच बिच में। जीव से भाड़ झोंकवाई ॥११॥
गुरू बिन कोइ नहीं अपना। जाल यह कौन तुड़वाई ॥१२॥
कुटुम्ब परिवार मतलब का। बिना धन पास नहिं आई ॥१३॥
कहाँ लग कहूँ इस मन को। उन्हीं से मास नुचवाई ॥१४॥
गुरू और साध कहें बहु विधि। कहन उनकी न पतियाई[1] ॥१५॥
मेहर बिन क्या कोई माने। कही राधास्वामी यह गाई ॥१६॥

१. प्रीत करना

चितावनी भाग १

बचन १४ : शब्द ४

करो री कोई सतसंग आज बनाय ॥ टेक ॥

नर देही तुम दुर्लभ पाई । अस औसर फिर मिले न आय ॥१॥
तिरिया सुत धन धाम बड़ाई । यह सुख फिर दुख मूल दिखाय ॥२॥
या से बचो गहो गुर सरना । सतसंग में तुम बैठो जाय ॥३॥
यह सब खेल रैन का सुपना । मैं तुम को अब दिया जगाय ॥४॥
झूठी काया झूठी माया । झूठा मन जो रहा लुभाय ॥५॥
सतसंग सच्चा सतगुरु सचा । नाम सचाई क्या कहुँ गाय ॥६॥
मान बचन मेरा तू सजनी । जनम मरन तेरा छुट जाय ॥७॥
नभ चढ़ चलो शब्द में पेलो । राधास्वामी कहत बुझाय ॥८॥

उपदेश शब्द अभ्यास

बचन २० : शब्द २७

कोमल चित्त दया मन धारो । परमारथ का खोज लगाना ॥१॥
इन्द्री थान विषय को त्यागो । सुरत शब्द में नित्त लगाना ॥२॥
सार पदारथ गुरु से पाओ । चरन कँवल में प्रीत बढ़ाना ॥३॥
धारा अगम पकड़ सुर्त जोड़ो । इस सतसंग में सदा समाना ॥४॥
चली सुरत नभ द्वारा झाँका । अण्डा तीन लोक दरसाना ॥५॥
परे जाय ब्रह्मण्ड समानी । सुन्न सरोवर कँवल खिलाना ॥६॥
अब तो काल कला सब हारा । मानसरोवर पैठ अन्हाना ॥७॥
अक्षर रूप निरखती चाली । छोड़ दिया अब देश बिगाना ॥८॥
सूरत साफ़ उड़ी ऊँचे को । छूट गया सब महल पुराना ॥९॥
आगे चढ़ चढ़ अधर समानी । शब्द शब्द का मर्म पिछाना ॥१०॥
संत बिना कोइ समझे नाहीं । आगे जो जो भेद दिखाना ॥११॥
कहने में आवे नहिं पूरा । उलटा सुलटा करत बखाना ॥१२॥
बाचक अपनी उक्ति लगावें । अमल बिना नहिं बूझ बुझाना ॥१३॥
संतन की गति संतहि जानें । और कहो कैसे पहिचाना ॥१४॥
अपनी उक्ति चतुरता त्यागो । संत बचन को करो प्रमाना ॥१५॥
वह कहते देखी निज अपनी । तू सुन सुन क्यों बुद्धि लड़ाना ॥१६॥
राधास्वामी सब से कहते । संत भेद कोइ भेदी जाना ॥१७॥

चितावनी भाग १

बचन १४ : शब्द ९

क्यों फिरत भुलानी जगत में। दिन चार बसेरा ॥१॥
स्वारथ के संगी सभी। जिन तुझ को घेरा ॥२॥
मात पिता सुत इस्तरी। कोइ संग न हेरा ॥३॥
बिन गुरु सतगुरु कौन है। जो करे निबेड़ा ॥४॥
नाम बिना सब जीव। करें चौरासी फेरा ॥५॥
मन दुलहा गगना चढ़े। सज सूरत सेहरा ॥६॥
धुन दुलहिन को पाय कर। बसे जाय त्रिकुटी देहरा[1] ॥७॥
राधास्वामी ध्यान धर। तू साँझ सबेरा ॥८॥

उपदेश सतगुरु भक्ति का

बचन १८ : शब्द १

गुरु करो खोज कर भाई। बिन गुरु कोइ राह न पाई ॥१॥
जग डूबा भौजल धारा। कोई मिला न काढ़नहारा ॥२॥
जग पंडित भेख बिचारे। क्या जोगी ज्ञानी हारे ॥३॥
संतन से प्रीत न धारी। क्यों उतरें भौजल पारी ॥४॥
तप तीरथ बर्त पचे रे। पढ़ विद्या मान भरे रे ॥५॥
भक्ति रस नेक न पाया। भक्तों की सरन न आया ॥६॥
भक्ति का भेद न जाना। गुरु को सतपुरुष न माना ॥७॥
गुरु सब को पार लगावें। जो जो उन चरन ध्यावें ॥८॥
गुरु से तू बेमुख फिरता। मन के नित सन्मुख रहता ॥९॥
करमों में पचता खपता। नर देही बाद[2] गँवाता ॥१०॥
अब चेतो समझो भाई। कर प्रीत गुरू सँग आई ॥११॥
कह कर राधास्वामी गाई। करनी कर मिले बड़ाई ॥१२॥

उपदेश शब्द अभ्यास

बचन २० : शब्द १०

गुरु कहें खोल कर भाई। लग शब्द अनाहद जाई ॥१॥
बिन शब्द उपाव न दूजा। काया का छुटे न कूज़ा[3] ॥२॥

१. डेरा २. निष्फल ३. बरतन

घर में घर गुरु दिखलावें। धुन शब्द पाँच बतलावें ॥३॥
धुन में अब सुरत लगावो। इस घर से उस घर जावो ॥४॥
वह घर है अगम अपारा। दसवें के पार निहारा ॥५॥
दस द्वारा घट चढ़ खोलो। सत शब्द अधर पै तोलो ॥६॥
बिन मेहर गुरू नहिं पावे। बिन शब्द हाथ नहिं आवे ॥७॥
सुर्त खैंच चढ़ावो गगनी। धुन शब्द सुनो यह करनी ॥८॥
मन चंचल थिर न रहावे। चित निर्मल कस होय आवे ॥९॥
सुर्त शब्द कमाई करना। सब जतन दूर अब धरना ॥१०॥
निश्चय दृढ़ इस पर धरना। आलस कर कभी न फिरना ॥११॥
यह सार सार सब गाया। संतन मत भाख सुनाया ॥१२॥
राधास्वामी भेद लखाया। सुन मान सार समझाया ॥१३॥

गुरु और नाम भक्ति

बचन १६ : शब्द १३

गुरु कहें जगत सब अन्धा। कोइ गहै न घट की संधा[1] ॥१॥
बाहर-मुख भरमें सारे। अन्तर-मुख शब्द न धारे ॥२॥
मन जगत भोग रस बंधा। नित करे कर्म बस धंधा ॥३॥
फँस मरे काल के फंदा। अब हुआ जीव अति गंदा ॥४॥
गुरु कहैं नित्त समझाई। कर खोज शब्द घट जाई ॥५॥
यह सुने न गुरु के बैना। कस खुलैं हिये के नैना ॥६॥
बिरला कोइ जिव अधिकारी। गुरु बचन करे आधारी ॥७॥
जो बचन सम्हारे गुरु के। मन फंद लगावे छल के ॥८॥
ज्यों त्यों कर जीव भुलावे। काल अपने खेल खिलावे ॥९॥
गुरु भक्ति न करने पावे। बहु भाँति उपाधि लगावे ॥१०॥
कभी मित्र होय भरमावे। कभी वैरी बन धमकावे ॥११॥
कभी रोगन माहिं झुमावे। नाना विधि जाल बिछावे ॥१२॥
शब्दा रस लेन न पावे। यों जीव सदा दुख पावे ॥१३॥
गुरु मेहर करें जिस जन पर। सो बचे शब्द धुन सुन कर ॥१४॥
तब गहे शब्द रस जाँची। फिर जले न जग की आँची[2] ॥१५॥
सब बात लगी अब काँची। गुरु भक्ति मिली अब साँची ॥१६॥

१. निशान अर्थात् शब्द २. अग्नि

राधास्वामी की लीन्ही सरनी। सो जीव लगे भौ तरनी[1] ॥१७॥

महिमा दर्शन राधास्वामी

बचन ४ : शब्द ८

गुरु का दरस तू देख री। तिल आसन डार ॥१॥
शब्द गुरू नित सुनो री। मिल बासन[2] जार ॥२॥
गुरू रूप सुहावन अति लगे। घट भान उजार ॥३॥
कँवल खिलत सुख पावई। भौंरा कर प्यार ॥४॥
गुरु ज्ञान न पाया हे सखी। जिन घट अंधियार ॥५॥
पूरा सतगुरु ना मिला। भरमत भौ जार[3] ॥६॥
मैं तो सतगुरु पाइया। जाऊँ बलिहार ॥७॥
ज्यों चकोर चन्दा गहे। रहूँ रूप निहार ॥८॥
सतगुरु शब्द स्वरूप हैं। रहें अर्श मँझार ॥९॥
तू भी सुरत स्वरूप है। रहो गुरू की लार ॥१०॥
नैनन में गुरु रूप है। तू नैन उघार[4] ॥११॥
सरवन में गुरु शब्द है। सुन गगन पुकार ॥१२॥
राधास्वामी कह रहे। यह मारग सार ॥१३॥
जो जो मानें भाग से। सो उतरें पार ॥१४॥

गुरु और नाम भक्ति

बचन १६ : शब्द १६

गुरु क्यों न सम्हार। तेरा नर तन बीता भर्म में ॥१॥
दारा सुत परिवार। ठगियन संग क्यों खोवही ॥२॥
क्यों नहिं करत विचार। जग मिथ्या यह है सही ॥३॥
मन है बड़ा गँवार, मोह रहा कर प्यार। छूटे कैसे जार से ॥४॥
बिन गुरु चले न दाव। थाके सभी उपाय कर ॥५॥
नाम सम्हारो मीत। धीरज धर घट में रहो ॥६॥
मौज निहारो पीव। जो करिहैं सो सब भला ॥७॥
तेरी बुद्धि मलीन। मन चँचल घाटा गहे ॥८॥
तू नहिं जाने भेद। भर्म जाल में फँस रहा ॥९॥

१. संसार से पार होने लगे २. बासना ३. जाल ४. खोल

या ते कर विश्वास। गुरु बिन और न दूसरा ॥१०॥
गुरु का घाट निहार। सुरत बाँध निज शब्द में ॥११॥
शब्द बिना कोइ नाहिं। जो काढ़े इस फंद से ॥१२॥
ता ते शब्द किवाड़। खोलो गुरु कुँजी पकड़ ॥१३॥
महल माहिं धस जाय। गुरुमुख को रोकें नहीं ॥१४॥
मनमुख भटका खाय। चढ़ उतरे गिर गिर पड़े ॥१५॥
ठीका[1] ठौर न पाय। क्यों कर गुरु समझावहीं ॥१६॥
मन मत छोड़े नाहिं। गुरु को दोष लगावहीं ॥१७॥
गुरु जो कहें उपाय। उसमें मन बाँधे नहीं ॥१८॥
क्योंकर होय निबाह। जम धक्के खावत फिरे ॥१९॥
राधास्वामी कहत सुनाय। मन बैरी को मीत कर ॥२०॥

महिमा सतगुरु

बचन ८ : शब्द १५

गुरु चरन धूर कर अंजन। हिये नैन खुलें मन मंजन ॥१॥
घट तिमिर[2] अनादि नाशन। गुरु रूप भान परकाशन ॥२॥
मेरे हिरदे प्रेम बढ़ावन। पल पल में उमंग समावन ॥३॥
सुर्त चढ़े गगन गुरु पावन। सतगुरु पद शब्द सुनावन ॥४॥
सो सतगुरु जग माहिं बिराजन। जग जीव अचेत चितावन ॥५॥
क्या महिमा सतगुरु गावन। जिव अधम नीच किये पावन[3] ॥६॥
मन माया जोर चलावन। ठोकर दे दूर करावन ॥७॥
दासन का दास दसावन। सेवा पर तन मन वारन ॥८॥
मैं किंकर कुटिल अपावन[4]। गुरु गोद लिया और किया अपनावन ॥९॥
यह मानुष जन्म जितावन। गुरु रूप लखा मन भावन ॥१०॥
यह आरत दोना[5] गावन। राधास्वामी किया बखानन ॥११॥

सतगुरु भक्ति

बचन १८ : शब्द ४

गुरु चरन पकड़ दृढ़ भाई। गुरु का संग करो बनाई ॥१॥

---

१. असली ठिकाना २. अंधेरा ३. पवित्र ४. अपवित्र ५. जिसकी यह आरती है उसका नाम

गुरु बचन करो आधारा । गुरु दरस निहारो सारा ॥२॥
गुरु की गति अगम अपारा । गुरु अस्तुति करो सँवारा ॥३॥
गुरु राखो हिरदे माहीं । तो मिटे काल परछाहीं[1] ॥४॥
भोगों की आसा त्यागो । मन्सा तज ज़ग से भागो ॥५॥
आसा गुरु शब्द लगाओ । मन्सा गुरु पद में लाओ ॥६॥
आसा और मन्सा मोड़ी । मन इन्द्री गुरु में जोड़ी ॥७॥
दिन रात रहे गुरु ध्याना । गुरु बिन कोइ और न जाना ॥८॥
गुरु स्वाँस गिरास न बिसरे । तू पल पल गा गुरु जस[2] रे ॥९॥
गुरु हैं हितकारी तेरे । गुरु बिन कोई मित्र न है रे ॥१०॥
गुरु फंद छुड़ावें जम के । गुरु मर्म लखावें सम के ॥११॥
भौजल से पार उतारें । छिन छिन में तुझे सँवारें ॥१२॥
ज्यों निज अंडा सेवे कच्छा[3] । त्यों गुरु राखैं तेरी पच्छा[4] ॥१३॥
गुर सम और नहीं को रक्षक । कुल कुटुम्ब सब जानो तक्षक[5] ॥१४॥
ताते गुरु को कभी न छोड़ो । कनक कामिनी से मन मोड़ो ॥१५॥
गुरु की भक्ति सदा सुखदाई । गुरु बिन मन बुद्धि भी दुखदाई ॥१६॥
गुरु विश्वास चित्त में धरो । गुरु परशाद जगत से तरो ॥१७॥
मान मोह मद गुरु सब हरें । काम क्रोध भी तुझ से डरें ॥१८॥
लोभ लहर सब देयँ निकारी । माया ममता बाज़ी हारी ॥१९॥
तुझ से जीत सके नहिं कोई । गुरु का बल जो मन में होई ॥२०॥
गुरु से पावे नाम रसायन । घट से भागे तृष्णा डायन ॥२१॥
गुरु चरनामृत गुरु परशादी । प्रीत सहित ले मिटे उपाधी[6] ॥२२॥
गुरु पै तन मन दोनों वारो । हिरदे में गुरु रूप निहारो ॥२३॥
गुरु हैं दाता गुरु हैं दानी । गुरु आराधो[7] छिन छिन प्रानी ॥२४॥
सत्तपुरुष सतनाम गुरू हैं । अलख रूप और अगम गुरू हैं ॥२५॥
राधास्वामी गुरु का नाम । निज पद पाय करो बिसराम ॥२६॥
गुरु सब विधि है अन्तरजामी । गावो ध्यावो राधास्वामी ॥२७॥

भेद मार्ग और शोभा सत्तलोक

बचन ५ : शब्द ४

गुरु मता अनोखा दरसा । मन सुरत शब्द जाय परसा ॥१॥

१. छाया २. महिमा ३. कछुआ ४. पक्ष ५. साँप ६. झगड़ा ७. पूजा करो

लीला घट देखी भारी। हुइ सुरत गगन पनिहारी ॥२॥
अमृत रस भर भर पीया। तन मन सब सीतल हूआ ॥३॥
चोरी अब चोरन त्यागी। घर उनके अगनी लागी ॥४॥
साहू अब घट में जागे। पहरा दे शब्द अनुरागे ॥५॥
गुन गावत मन हुलसाया। धुन धावत अधर चढ़ाया ॥६॥
जगमग हुइ जोत उजियारी। घट खिल गइ कँवल कियारी ॥७॥
सुन्दर की खिड़की खोली। सुखमन में धुन नित बोली ॥८॥
चढ़ बंक किवाड़ी खोली। त्रिकुटी जा हुई अमोली ॥९॥
ज्यों फेरत पान तमोली। यों धुन घट सूरत रोली[1] ॥१०॥
क्या महिमा गुरु पद गाऊँ। छिन-छिन में उमंग बढ़ाऊँ ॥११॥
सुर नर मुनि गति नहिं जानी। यह अचरज अकथ कहानी ॥१२॥
सुन्न में जा शब्द समानी। अद्भुत धुन किंगरी छानी ॥१३॥
गई महा सुन्न के नाके। गुरु दया अचंभा[2] ताके ॥१४॥
फिर भँवरगुफा लगी डोरी। सोहंग जा सूरत जोड़ी ॥१५॥
सतगुरु पद सत कर जाना। गति मति क्या कहूँ बखाना ॥१६॥
शशि सूर अनेकन पाँती। देखे और आगे जाती ॥१७॥
लख अलख अगम दरसाना। मिला राधास्वामी नाम निशाना ॥१८॥
यह अजब परम पद पाया। अब तक कोई भेद न गाया ॥१९॥
नहिं वेद कतेब सुनाया। जोगी नहिं ज्ञानी धाया ॥२०॥
यह वस्तु अमोलक पाई। कोइ बिरले संत बताई ॥२१॥
मेरे राधास्वामी परम दयाला। जिन कीन्हा मोहिं निहाला ॥२२॥
मैं आरत उनकी करता। तन मन दोउ चरनन धरता ॥२३॥
मैं हरदम यहीं पुकारूँ। मत अगम अगाध सम्हारूँ ॥२४॥
मेरा भाग उदय हो आया। राधास्वामी चरन धियाया ॥२५॥
जग स्वाद लगा सब फीका। राधास्वामी नाम मैं सीखा ॥२६॥
गति मति मेरी उलटी पलटी। गुरु कर दइ सूरत[3] सुल्टी[4] ॥२७॥
मेरा काज हुआ सब पूरा। मैं राधास्वामी चरनन धूरा ॥२८॥

गुरु और नाम भक्ति

बचन १९ : शब्द २

गुरू का ध्यान कर प्यारे। बिना इसके नहीं छुटना ॥१॥

१ छाँटी २. अचरज ३. मुत ४. सीधी

नाम के रंग में रंग जा। मिले तोहि धाम निज अपना ॥२॥
गुरू की सरन दृढ़ कर ले। बिना इस काज नहीं सरना[1] ॥३॥
लाभ और मान क्यों चाहें। पड़ेगा फिर तुझे देना ॥४॥
करम जो जो करेंगा तू। वही फिर भोगना भरना ॥५॥
जगत के जाल से ज्यों त्यों। हटो मरदानगी[2] करना ॥६॥
जिन्हों ने मार मन डाला। उन्हीं को सूरमा कहना ॥७॥
बड़ा बैरी यह मन घट में। इसी का जीतना कठिना ॥८॥
पड़ो तुम इसही के पीछे। और सब ही जतन तजना ॥९॥
गुरू की प्रीत कर पहिले। बहुरि घट शब्द को सुनना ॥१०॥
मान दो बात यह मेरी। करें मत और कुछ जतना ॥११॥
हार जब जाय मन तुझ से। चढ़ा दे सुर्त को गगना ॥१२॥
और सब काम जग झूठा। त्याग दे इसही को गहना[3] ॥१३॥
कहैं राधास्वामी समझाई। गहो अब नाम की सरना ॥१४॥

सतगुरु भक्ति

बचन १८ : शब्द ८

गुरू की मौज रहो तुम धार। गुरू की रज़ा[4] सम्हालो यार ॥१॥
गुरू जो करें सो हितकर जान। गुरू जो कहें सो चित धर मान ॥२॥
शुकर की करना समझ विचार। सुक्ख दुख देंगे हिकमत धार ॥३॥
ताड़ और मार करें सोइ प्यार। भोग सब इन्द्री रोग निहार ॥४॥
कहूं क्या दम दम शुकर गुज़ार। बिना उन और न करनेहार ॥५॥
दुखी चित से न हो दुख लार। सुखी होना नहीं सुख जार ॥६॥
बिसारो मत उन्हें हर बार। दुक्ख और सुक्ख रहो उन धार ॥७॥
गुरू और शब्द ये दोउ मीत। नहीं कोइ और इन धर चीत ॥८॥
यही सतपुरुष यही करतार। लगावें तोहि इक दिन पार ॥९॥
बिना उन कोइ नहीं संसार। देव मन सूरत उन पर वार ॥१०॥
करें वह नित्त तेरी सार[5]। तेरे तन मन के हैं रखवार ॥११॥
शुकर कर राख हिरदे धार। मिटावें दुक्ख सबही झाड़ ॥१२॥
करें क्या मन तेरा नाकार। नहीं तू छोड़ता विष धार ॥१३॥
भोग में गिरे बारम्बार। न माने कहन उन की सार ॥१४॥
इसी से मिले तुझ को दंड। नहीं तू मानता मतिमंद ॥१५॥

१. होना २. बहादुरी ३ ग्रहन करना ४. भाना, मौज ५. खबरदारी

सहो अब पड़े जैसी आय । करो फ़र्याद गुरु से जाय ॥१६॥
पकड़ फिर उन्हीं को तू धाय । करेंगे वोही तेरी सहाय ॥१७॥
बिना उन और नहीं दरबार । रहो उन चरन में हुशियार ॥१८॥
गुनह तुम किये दिन और रात । गुरू की कुछ न मानी बात ॥१९॥
इसी से भोगते दुख घात । बचावेंगे वही फिर तात ॥२०॥
रहो राधास्वामी के तुम साथ । लगे फिर शब्द अगम तुम हाथ ॥२१॥

महिमा सतगुरु स्वरूप राधास्वामी की

बचन ८ : शब्द १

गुरू गुरू मैं हिरदे धरती । गुर आरत की सामाँ[1] करती ॥१॥
गुरु मेरे पूरण पुरुष विधाता । नित चरनन पर मन मेरा राता[2] ॥२॥
गुरु हैं अगम अपार अनामी । गुरु बिन दूसर और न जानी ॥३॥
नहिं ब्रह्मा नहिं विष्णु महेशा । नहिं ईश्वर परमेश्वर शेषा ॥४॥
राम कृष्ण नहिं दस औतारी । व्यास वशिष्ठ न आदि कुमारी[3] ॥५॥
ऋषि मुनि देवी देव न कोई । तीरथ बर्त धर्म नहिं होई ॥६॥
जोगी जती तपी ब्रह्मचारी । जनक सनक संन्यास विचारी ॥७॥
आतम परमातम नहिं मानूं । अक्षर निःअक्षर नहिं जानूं ॥८॥
सत्तनाम जानूं न अनामी । लिख ग्रन्थ सब करत बखानी ॥९॥
सब को करूं प्रनाम जोड़ कर । पर कोई नहिं सतगुरु सम सर[4] ॥१०॥
सतगुरु कृपा सबन को जाना । बिन सतिगुरु कैसे पहिचाना ॥११॥
सतगुरु भेद दिया इक इक का । तब जाना इन सब का ठेका ॥१२॥
सतगुरु सब का भेद बखानें । अब किसको गुरु से बढ़ जाने ॥१३॥
गुरु ने सब का पद दरसाई । जस जस जिनकी गति तस गाई ॥१४॥
ताँते सतगुरु सब के करता । सतगुरु ही हैं सब के हरता ॥१५॥
याते सतगुरु का पद भारी । सतगुरु सम नहिं कोइबिचारी ॥१६॥
जब जिव सरन गुरू की आवे । कर्म धर्म और भर्म नसावे ॥१७॥
जो गुरु मारग देहिं लखाई । सोइ निज कर्म धर्म हुआ भाई ॥१८॥
गुरु आज्ञा से जो शिष करई । वह करतूत भक्ति फल देई ॥१९॥
ताते प्रथमे गुरु को खोजो । शब्द बतावें सो गुरु सोधो[5] ॥२०॥

१. सामान　२. मोहित　३. देवी, माया　४. बराबर　५. धारण करो

अस गुरु सम कोइ और न आना[१] । गुरू मिले फिर कहा[२] कमाना ॥२१॥
या ते मो मत निश्चय येही । गुरु बिन दूसर और न सेई ॥२२॥
जाके हिरदे गुरु परतीती । काल कर्म वा से नहिं जीती ॥२३॥
सब के सिर पर उसका डंका । काहू की उस के नहिं संका ॥२४॥
बड़े बड़े उधरें उस संगा । गुरुमुख है इन सब से चंगा[३] ॥२५॥
गुरुमुख की गति सब से भारी । गुरुमुख कोटिन जीव उबारी ॥२६॥
कहाँ लग महिमा गुरुमुख गाऊँ । कोई न जाने किस समझाऊँ ॥२७॥
जग में पड़ा काल का घेरा । जीव करें चौरासी फेरा ॥२८॥
जो चौरासी छूटन चावें । तो गुरुमुख सेवा चित लावें ॥२९॥
और काम सब देहिं बहाई । शब्द गुरु की करें कमाई ॥३०॥
कोटिन जन्म रहे कोइ काशी । वेद पाठ और तीरथ बासी ॥३१॥
जप तप संजम बहु विधि करई । भेख बनावे विद्या पढ़ई ॥३२॥
पिछलों की जो धारें टेका । जिनको कभी आँख नहिं देखा ॥३३॥
पोथिन में सुनी उनकी महिमा । टेक बाँध मन सब का भरमा ॥३४॥
अब इन को जो कोइ समझावे । टेक छोड़ते जिव सा जावे ॥३५॥
कोई शिव और कोई विष्णु की । कोइ राम और कोई कृष्ण की ॥३६॥
कोइ देवी कोइ गंगा जमना । कोइ मूरत कोइ चारों धामा[४] ॥३७॥
कोइ मथुरा कोइ टेक मुरारी । मदन मोहन कोइ कुँज बिहारी ॥३८॥
कोइ गोकुल कोइ बलभाचारी । कोइ कंठी माला गल धारी ॥३९॥
कोइ अचार कोइ संध्या तर्पन । गया गायत्री करें समर्पन ॥४०॥
कोइ गीता कोइ भागवत पढ़ते । कथा पुरान नेम से सुनते ॥४१॥
क्या दादू क्या नानकपंथी । क्या कबीर क्या पलटू संती ॥४२॥
सब मिल करते पिछली टेका । वक्त गुरू का खोज न नेका[५] ॥४३॥
बिन गुरु वक्त भक्ति नाहिं पावे । बिना भक्ति सतलोक न जावे ॥४४॥
यह कहना उन जीवन कारन । जिनके विरह अनुराग की धारन ॥४५॥
विषई संसारी और रागी । इन को टेक न चहिये त्यागी ॥४६॥
इन को टेक सहारा भारी । टेक बिना कुछ नाहिं अधारी ॥४७॥
उनको नहिं उपदेश हमारा । उनको जगत कामना मारा ॥४८॥
कोइ कुटुम्ब कोइ धन आधीना । कोइ कोइ मान प्रतिष्ठा लीना ॥४९॥

१. दूसरा २. क्या ३. अच्छा ४. चार तीर्थ के स्थान यानी बद्रीनाथ, द्वारका जगन्नाथ और रामेश्वर ५. कुछ

मारे डर के टेक न छोड़ें । वक्त गुरू में मन नहिं जोड़ें ॥५०॥
जो अनुरागी विरही भाई । भक्ति गुरू की उन प्रति गाई ॥५१॥
वक्त गुरू जब लग नहिं मिलई । अनुरागी का काज न सरई ॥५२॥
परिथम सीढ़ी भक्ति गुरु की । दूसर सीढ़ी सुरत नाम की ॥५३॥
जब लग गुरु भक्ति नहीं पूरी । मन मनसा यह होयँ न चूरी ॥५४॥
मन चूरे बिन सुरत न निर्मल । कैसे चढ़े और लगे शब्द चल ॥५५॥
गुरु भक्ति अस कैसे आवे । सतसंग कर गुरु सेवा धावे ॥५६॥
गुरु को पल पल माहिं रिझावे । गुरु प्रसन्नता नित्य कमावे ॥५७॥
गुरु जब इसको प्यारे होई । गुरु को प्यारा जब यह होई ॥५८॥
पूरन दया गुरू जब करई । भक्ति पदारथ जबही मिलई ॥५९॥
यह भी जोग मेहर से होगा । दया मेहर बिन जानो धोखा ॥६०॥

॥ दोहा ॥

क्या हिन्दू क्या मुसलमान, क्या ईसाई जैन ।
गुरु भक्ती पूरन बिना, कोइ न पावे चैन ॥६१॥

परिथम सीढ़ी है गुरु भक्ती । गुरु भक्ती बिन काज न रत्ती ॥६२॥
और उपाय अनेकन करते । गुरु भक्ती को मुख्य न रखते ॥६३॥
यही कसर है सब के मत में । सिद्धान्त[1] न पावें ओछे चित में ॥६४॥

॥ दोहा ॥

गुरु भक्ती दृढ़ के करो, पीछे और उपाय ।
बिन गुरु भक्ति मोह जग, कभी न काटा जाय ॥६५॥
मोटे बंधन जगत के, गुरु भक्ती से काट ।
झीने[2] बंधन चित के, कटें नाम परताप[3] ॥६६॥
मोटे जब लग जायँ नहिं, झीने कैसे जायँ ।
ताते सबको चाहिये, नित गुरु भक्ति कमायँ ॥६७॥
एक जन्म गुरु भक्ति कर, जन्म दूसरे नाम ।
जन्म तीसरे मुक्तिपद, चौथे में निज धाम ॥६८॥

अब आरत गुरु करूँ संवारा । काया थाल मन दीपक बारा ॥६९॥
भक्ति जोत और भोग अनुरागा । दृष्टि जोड़ चित चरनन लागा ॥७०॥
यों आरत अब करी बनाई । सतगुरु पूरे रहें सहाई ॥७१॥

१. असली मतलब २. सूक्ष्म ३. प्रभाव

फ़र्याद और पुकार

बचन ३३ : शब्द १५

गुरू मोहिं अपना रूप दिखाओ ।। टेक ।।

यह तो रूप धरा तुम सर्गुन । जीव उबार कराओ ।।१।।
रूप तुम्हारा अगम अपारा । सोई अब दरसाओ ।।२।।
देखूँ रूप मगन होय बैठूँ । अभय दान दिलवाओ ।।३।।
यह भी रूप पियारा मो को । इस ही से उसको समझाओ ।।४।।
बिन इस रूप काज नहिं होई । क्यों कर वाहि लखाओ ।।५।।
ता ते महिमा भारी इसकी । पर वह भी लखवाओ ।।६।।
वह तो रूप सदा तुम धारो । या ते जीव जगाओ ।।७।।
यह भी भेद सुना मैं तुमसे । सुरत शब्द मारग नित गाओ ।।८।।
शब्द रूप जो रूप तुम्हारा । वा में भी अब सुरत पठाओ ।।९।।
डरता रहूं मौत और दुख से । निर्भय कर अब मोहिं छुड़ाओ ।।१०।।
दीनदयाल जीव हितकारी । राधास्वामी काज बनाओ ।।११।।

पहिचान पूरे गुरू की और सच्चे परमार्थी की

बचन १३ : शब्द १

गुरू सोई जो शब्द सनेही[१] । शब्द बिना दूसर नहिं सेई[२] ।।१।।
शब्द कमावे सो गुरु पूरा । उन चरनन की हो जा धूरा ।।२।।
और पहिचान करो मत कोई । लक्ष[३] अलक्ष[४] न देखो सोई ।।३।।
शब्द भेद लेकर तुम उन से । शब्द कमाओ तुम तन मन से ।।४।।

चितावनी भाग १

बचन १४ : शब्द १२

जग में घोर अँधेरा भारी । तन में तम का भंडारा ।।१।।
स्वप्न जाग्रत दोनों देखी । भूल भुलइयाँ धर मारा ।।२।।
जीव अजान भया परदेसी । देस बिसर गया निज सारा ।।३।।
फिरे भटकता खान खान में । जोनि जोनि बिच झख मारा ।।४।।
दम दम दुखी कष्ट बहु भोगे । सुने कौन अब बहु हारा ।।५।।

१. प्रेमी २. सेवन करना ३. लक्षण, पूरा ४. बे-लक्षण, अधूरा

करे पुकार कारगर[1] नाहीं। पड़े नर्क में जम धारा ॥६॥
भटक भटक नर देही पाई। इन्द्री मन मिल यहाँ मारा ॥७॥
सतगुरु संत कहें बहुतेरा। राह बतावें दस द्वारा ॥८॥
बचन न माने कहन न पकड़े। फिर फिर भरमे नौ वारा ॥९॥
फोकट[2] धर्म पकड़ कर जूझे। बूझे न शब्द जुगत पारा ॥१०॥
पानी मथे हाथ कुछ नाहीं। क्षीर[3] मथन आलस भारा ॥११॥
जीव अभाग कहूं मैं क्या क्या। बाहर भरमे भौ जारा ॥१२॥
अन्तरमुख जो शब्द कमाई। ता में मन को नहिं गारा[4] ॥१३॥
वेद शास्त्र स्मृत और पुराना। पढ़ पढ़ सब पंडित हारा ॥१४॥
बिन सतगुरु और बिना शब्द सुर्त। कोइ न उतरे भौ पारा ॥१५॥
यही बात भाखी मैं चुन कर। अब तो मानो गुरु प्यारा ॥१६॥
राधास्वामी कहा बुझाई। सुरत चढ़ाओ नभ द्वारा ॥१७॥

चितावनी भाग २

बचन १५ : शब्द ६

तजो मन यह दुख सुख का धाम। लगो तुम चढ़ कर अब सतनाम ॥१॥
दिना चार तन संग बसेरा। फिर छूटे यह ग्राम ॥२॥
धन दारा[5] सुत नाती कहियन[6]। यह नहिं आवें काम ॥३॥
स्वाँस दुधारा नित ही जारी। इक दिन खाली चाम ॥४॥
मशक समान जान यह देही। बहती आठों जाम ॥५॥
तू अचेत ग़ाफ़िल हो रहता। सुने न मूल कलाम[7] ॥६॥
माया नारि पड़ी तेरे पीछे। क्यों नहिं छोड़त काम ॥७॥
बिन गुरु दया छुटो नहिं या से। भजो गुरू का नाम ॥८॥
गुरु का ध्यान धरो हिरदे में। मन को राखो थाम ॥९॥
वे दयाल तेरी दया विचारें। दम दम करें सहाम[8] ॥१०॥
छोड़ भोग क्यों रोग बिसावे[9]। या में नहिं आराम ॥११॥
गुरु का कहना मान पियारे। तो पावे विश्राम ॥१२॥
दुख तेरा सब दूर करेंगे। देंगे अचल मुक़ाम ॥१३॥
राधास्वामी कहत सुनाई। खोज करो निज नाम ॥१४॥

१. असर-दार २. खाली ३. दूध ४. गलाया ५. स्त्री ६. कहावे ७. शब्द ८. सहायता ९ खरीदना

फ़र्याद और पुकार

बचन ३३ : शब्द १६

देख पियारे मैं समझाऊँ । रूप हमारा न्यारा ॥१॥
वह तो रूप लखे नहिं कोई । जब लग देउँ न सहारा ॥२॥
करनी करो मार मन डालो । इन्द्री रोक दुआरा ॥३॥
सुरत चढ़ाय गगन पर धाओ । सुन्न शिखर के पारा ॥४॥
सत्त पुरुष का रूप दिखाऊँ । अलख अगम दर सारा ॥५॥
ता के आगे राधास्वामी । वह निज रूप हमारा ॥६॥
धीरज धरो करो सतसंगत । मेहर दया से लेउँ सुधारा ॥७॥
वह तो रूप दिखा कर छोड़ूँ । तुम जल्दी क्यों करो पुकारा ॥८॥
तुम्हरी चिन्ता मैं मन धारी । तुम अचिंत रह धरो पियारा ॥९॥
संशय छोड़ करो दृढ़ प्रीती । और परतीत सँवारा ॥१०॥
यह करनी मैं आप कराऊँ । और पहुचाऊँ धुर दरबारा ॥११॥
राधास्वामी कहत सुनाई । जब जब जैसी मौज विचारा ॥१२॥

चितावनी भाग २

बचन १५ : शब्द १०

देखो सब जग जात बहा ॥ टेक ॥
देख देख मैं गति या जग की । बार बार यों वर्ण कहा ॥१॥
चारों जुग चौरासी भोगी । अति दुख पाया नर्क रहा ॥२॥
जन्म जन्म दुख पावत बीते । एक छिन कहीं न चैन लहा[1] ॥३॥
पाप पुन्य बस बिपता भोगी । नहिं सतगुरु का चरन गहा ॥४॥
अब यह देह मिली किरपा से । करो भक्ति जो कर्म दहा[2] ॥५॥
अब की चूक माफ़ नहिं होगी । नाना विधि के कष्ट सहा ॥६॥
ग़फ़लत छोड़ भुलाओ जग को । नाम अमल अब घोट पिया ॥७॥
मन से डरो करो गुरु सेवा । राधास्वामी भेद दिया ॥८॥

महिमा शब्द स्वरूप सतगुरु की

बचन ६ : शब्द १

धन्न धन्न धन धन्न पियारे । क्या कहुं महिमा शब्द की ॥१॥

१. मिला २. जलें

जो परचे[1] हैं शब्द से। सो जानें महिमा शब्द की ॥२॥
छिन छिन रक्षा हो रही। क्या उपमा कहुं मैं शब्द की ॥३॥
बिन शब्द फिरें भरमातियाँ। नहिं जानी गति मति शब्द की ॥४॥
जिन गुरु पाया शब्द का। और प्रीति करी जिन शब्द की ॥५॥
बड़ भागी वह जीव हैं। जो करें कमाई शब्द की ॥६॥
बिना शब्द मन बस नहीं। तुम सुरत करो अब शब्द की ॥७॥
वे क्यों आये इस जगत में। जिन मिली न पूँजी शब्द की ॥८॥
धुन घट में हर दम हो रही। क्यों सुने न बाणी शब्द की ॥९॥
तू बैठ अकेला ध्यान धर। तो मिले निशानी शब्द की ॥१०॥
तज आलस निद्रा काहिली[2]। तू लगन लगा ले शब्द की ॥११॥
पाँच शब्द घट में बजें। यह निर्णय कर ले शब्द की ॥१२॥
गुरु ज्ञान बताया शब्द का। तू हो जा ध्यानी शब्द की ॥१३॥
मैं शब्द शब्द बहुतक कहा। कोई न माने शब्द की ॥१४॥
जन्म अकारथ खो दिया। जो चढ़े न घाटी शब्द की ॥१५॥
राधास्वामी कह कह चुप हुए। बिन भाग न धारा शब्द की ॥१६॥

गुरु और नाम भक्ति

बचन १९ : शब्द १८

धाम[3] अपने चलो भाई। पराये देश क्यों रहना ॥१॥
काम अपना करो जाई। पराये काम नहिं फँसना ॥२॥
नाम गुरु का सम्हाले चल। यही है दाम गँठ बँधना ॥३॥
जगत का रंग सब मैला। धुला ले मान यह कहना ॥४॥
भोग संसार कोइ दिन के। सहज में त्यागते चलना ॥५॥
सरन सतगुरु गहो दृढ़ कर। करो यह काज पिल[4] रहना ॥६॥
सुरत मन थाम अब घट में। पकड़ धुन ध्यान धर गगना ॥७॥
फँसे तुम जाल में भारी। बिना इस जुक्ति नहिं खुलना ॥८॥
गुरु अब दया कर कहते। मान यह बात चित धरना ॥९॥
भटक में क्यों उमर खोते। कहीं नहिं ठीक तुम लगना ॥१०॥
बसो तुम आय नैनन में। सिमट कर एक यहँ होना ॥११॥
दुई यहँ दूर हो जावे। दृष्टि जोत में धरना ॥१२॥

१. परिचित हैं, जानते हैं २. सुस्ती ३. स्थान ४. तगड़े होकर लगना

श्याम तज सेत को गहना । सुरत को तान धुन सुनना ॥१३॥
बंक के द्वार धस बैठो । तिरकुटी जाय कर लेना ॥१४॥
सुन्न चढ़ जा धसो भाई । सुरत से मानसर न्हाना ॥१५॥
महासुन्न चौक अंधियारा । वहाँ से जा गुफा बसना ॥१६॥
लोक चौथे चलो सज[1] के । गहो[2] वहँ जाय धुन बीना ॥१७॥
अलख और अगम के पारा । अजब एक महल दिखलाना ॥१८॥
वहीं राधास्वामी से मिलना । हुआ मन आज अति मगना ॥१९॥

महिमा शब्द

बचन ६ : शब्द ६

धुन सुन कर मन समझाई ॥ टेक ॥

कोटि जतन से यह नहिं माने । धुन सुन कर मन समझाई ॥१॥
जोगी जुक्ति कमावें अपनी । ज्ञानी ज्ञान कराई ॥२॥
तपसी तप कर थाक रहे हैं । जती[3] रहे जत लाई ॥३॥
ध्यानी ध्यान मानसी लावें । वह भी धोखा खाई ॥४॥
पण्डित पढ़ पढ़ वेद बखानें । विद्या बल सब जाई ॥५॥
बुद्धि चतुरता काम न आवे । आलम[4] रहे पछताई ॥६॥
और अमल[5] का दख़ल नहीं है । अमल शब्द लौ लाई ॥७॥
गुरु मिले जब धुन का भेदी । शिष्य विरह धर आई ॥८॥
सुरत शब्द की होय कमाई । तब मन कुछ ठहराई ॥९॥
हिर्स[6] हवस से हाथ न आवे । तन मन देव चढ़ाई ॥१०॥
बुल्हवसी[7] और कपटी जन को । नेक[8] न धुन पतियाई[9] ॥११॥
यह धुन है धुर लोक अधर की । कोइ पकड़ें संत सिपाही ॥१२॥
मन को मार करें असवारी । गगन कोट वह लेयँ घिराई ॥१३॥
खाई सुन्न पार मैदाना । महासुन्न नाका[10] परमाना ॥१४॥
भँवरगुफा का फाटक तोड़ा । शीश महल सतगुरु दिखलाई ॥१५॥
अद्भुत लीला अजब वहाँ की । किरन किरन सूरज दरसाई ॥१६॥
सूरज सूरज जोत निरारी । चन्द्र चन्द्र कोटिन छबि छाई ॥१७॥

१. तैयार हो कर २. पकड़ो ३. इन्द्रियों को दमन न करने वाला ४. विद्वान् ५. अभ्यास ६. जो देखा देखी इच्छा पैदा हो ७. हिरसी ८. ज़रा भी ९. प्रतीति करना १०. सीमा

घट अकाश औघट[1] परकाशा। लख अकाश कोटिन परसाई ॥१८॥
यह लीला कुछ अजब पेच की। उलट पलट कोइ गुरुमुख पाई ॥१९॥
कहाँ लग बरनूँ भेद अगाधा। जो कोई लावे सुन्न समाधा ॥२०॥
समझ बूझ गूंगे गुड़ खाई।
अकथ अकह की बात निराली। क्योंकर कहूँ बनाई ॥२१॥
राधास्वामी राज़ छिपे को। परगट कर सरसाई[2] ॥२२॥

निर्णय शब्द अथवा नाम का

बचन १० : शब्द १

रेख़ता

नाम निर्णय करूँ भाई। दुधा[3] विधि भेद बतलाई ॥१॥
वर्ण[4] धुनआत्मक गाऊँ। दोऊ का भेद दरसाऊँ ॥२॥
वर्ण कहु चाहे कहु अक्षर। जो बोला जाय रसना[5] कर ॥३॥
लिखन और पढ़न में आया। उसे वर्णात्मक गाया ॥४॥
लखायक है यही धुन का। बिना गुरु फल नहीं किनका[6] ॥५॥
मिलें गुरु नाम धुन भेदी। सुरत धुन धुनी संग बेधी[7] ॥६॥
एकता नाम और नामी। करावें जो मिलें स्वामी ॥७॥
नाम वर्णात्मक गाया। नामी धुनआत्मक पाया ॥८॥
वर्ण से सुरत मन माँजो। बहुरि चढ़ गगन धुन साधो ॥९॥
धुनी धुन एक कर जानो। सुरत से शब्द पहिचानो ॥१०॥
शब्द और सुरत भये एका। नाम धुनआत्मक देखा ॥११॥
गुरू बिन और बिना करनी। मिले कस कहो यह रहनी ॥१२॥
चाह अनुराग जिस होई। भाग बड़ गुरुमुखी सोई ॥१३॥
नाम नामी दोऊ गाया। अभेदी भेद समझाया ॥१४॥
गुरू की मौज में सब कुछ। जिसे चाहें करें गुरुमुख ॥१५॥
गुरूमुख होय तन धन से। करे फिर प्रीत निज मन से ॥१६॥
लगे तब जाय सुन धुन से। गये तब तीन गुन तन से ॥१७॥
वर्ण धुन भेद दोउ बरना। वाच[8] और लक्ष[9] इन कहना ॥१८॥

१. उलटा २. दिखाया ३. दोनों ४. अक्षर ५. जबान ६. बहुत कम
७. प्रवेश करना ८. प्रगट ९. गुप्त

वाच वर्णात्मक जानो । लक्ष धुन धुनी पहिचानो ॥१९॥
वर्ण में भेख जग भूला । मर्म धुन संत कोइ तोला ॥२०॥
वर्ण जप जप पचें भेखी । मिले कुछ फल नहीं नेकी[1] ॥२१॥
भेद धुन का नहीं पाया । नाम फल हाथ नहिं आया ॥२२॥
जपें नित सहस और लाखा । खुलें नहिं नेक उन आँखा ॥२३॥
तिमर संसार नहिं जावे । मोह मद काम भरमावे ॥२४॥
धुनी धुन भेद नहिं चीन्हा । सुरत और शब्द नहिं लीन्हा ॥२५॥
मिला नहिं गुरु धुन भेदी । लखावे धुन मिटे खेदी[2] ॥२६॥
काल ने बुद्धि उन छेदी । मुफ़्त नर देह उन दे दी ॥२७॥
दया कर सन्त गोहरावें । ज़रा नहिं चित्त में लावें ॥२८॥
पाँच धुन भेद बतलावें । सुरत की राह दिखलावें ॥२९॥
धुनों के नाम दरसावें । रूप अस्थान कह गावें ॥३०॥
सुरत का जोग लखवावें । जीव नहिं कहन उन मानें ॥३१॥
सुरत ले गगन चढ़वावें । पिंड में सार बतलावें ॥३२॥
चढ़े ब्रहमंड तब परखे । सहसदल मध्य कुछ निरखे ॥३३॥
बंक चढ़ तिरकुटी धावे । सुन्न दस द्वार गति पावे ॥३४॥
महासुन्न जाय हरखानी । भँवर में जा सुनी बानी ॥३५॥
अमर पद मूल जा देखा । बीन धुन का मिला लेखा ॥३६॥
अलख और अगम भी देखा । नाम का मूल अब देखा ॥३७॥
कहूं क्या खोल राधास्वामी । सैन यह समझ परमानी ॥३८॥

महिमा सतगुरु

बचन ८ : शब्द १०

प्रेमी सुनो प्रेम की बात ॥ टेक ॥

सेवा करो प्रेम से गुरु की । और दर्शन पर बल बल जात ॥१॥
बचन पियारे गुरु के ऐसे । जस माता सुत तोतरि बात ॥२॥
जस कामी को कामिन प्यारी । अस गुरुमुख को गुरु का गात[3] ॥३॥
खाते पीते चलते फिरते । सोवत जागत बिसर न जात ॥४॥
खटकत[4] रहे भाल ज्यों हियरे । दरदी के ज्यों दर्द समात ॥५॥
ऐसी लगन गुरू संग जा की । वह गुरुमुख परमारथ पात ॥६॥

१. ज़रा २. दुःख ३. शरीर ४. चुभता

जब लग गुरु प्यारे नहिं ऐसे । तब लग हिरसी जानो जात ॥७॥
मनमुख फिरे किसी का नाहीं । कहो क्यों कर परमारथ पात ॥८॥
राधास्वामी कहत सुनाई । अब सतगुर का पकड़ो हाथ ॥९॥

उपदेश शब्द अभ्यास

बचन २० : शब्द ५

भजन कर मगन रहो मन में ॥ टेक ॥

जो जो चोर भजन के प्रानी । सो सो दुक्ख सहें ॥१॥
आलस नींद सतावे उनको । नित नित भर्म बहें ॥२॥
काम क्रोध के धक्के खावें । लोभ नदी में डूब मरें ॥३॥
गुरु सँग प्रीत करें नहिं पूरी । नाम न डोर गहें ॥४॥
तृष्णा अग्नि जलें निस बासर । नर्कन माहिं पड़ें ॥५॥
संतन साथ विरोध बढ़ावें । उलटी बात कहें ॥६॥
सतसंग महिमा मूल न जानें । भेड़ चाल में नित्त पचें ॥७॥
धन और मान भोग रस चाहें । रोग सोग में आन फसें ॥८॥
भाग हीन मत हीन पराणी । नर देही बरबाद करें ॥९॥
ऐसी दशा माहिं नित बरतें । हम क्यों कर समझाय सकें ॥१०॥
साध गुरू का कहा न मानें । मनमत अपनी ठानठनें[1] ॥११॥
खर[2] कूकर सम वे नर जानो । बिरथा उदर भरें ॥१२॥
जमपुर जाय बहुत पछतावें । व्हाँ फिर उनकी कौन सुने ॥१३॥
जन्म जन्म चौरासी भोगें । यह शरीर फिर नाहिं धरें ॥१४॥
दुर्लभ देह मिली यह औसर । ऐसी कर जो बात बने ॥१५॥
सतगुरु सरण पकड़ ले अबकी । तो सब काज सरें[3] ॥१६॥
हित का बचन दया कर बोलें । तू नहिं कान सुने ॥१७॥
अंधा बहरा फिरे जगत में । कुल कुटुम्ब तेरी हानि करें ॥१८॥
कर सतसंग मान यह कहना । कान आँख फिर दोऊ खुलें ॥१९॥
देखे घट में जोत उजाला । सुने गगन में अजब धुनें ॥२०॥
सुन्न जाय तिरबेनी न्हावे । हीरे मोती लाल चुने ॥२१॥
महासुन्न में सुरत चढ़ावे । तब सतगुरु तेरे संग चलें ॥२२॥
भँवरगुफा की बंसी बाजी । महाकाल भी सीस धुने[4] ॥२३॥

१. हठ करके रखते हैं २. गधा ३. बनें ४. सिर पटके

अब चढ़ गई पुरुष दरबारा। वहाँ जाय धुन बीन गुने ॥२४॥
ले दुरबीन चली आगे को। अलख अगम का भेद भने ॥२५॥
य्हाँ से आगे चली उमंग से। तब राधास्वामी चरन मिलें ॥२६॥
मिला अधार पार घर पाया। लीला वहाँ की कहे न बने ॥२७॥

चितावनी भाग २

बचन १५ : शब्द ३

मत देख पराये औगुन। क्यों पाप बढ़ावे दिन दिन ॥१॥
पर जीव सतावे खिन खिन। छोड़ अपने औगुन गिन गिन ॥२॥
मक्खी सम मत कर भिन भिन। नहिं खावे चोट तू छिन छिन ॥३॥
देखा कर सबके तू गुन। सुख मिले बहुत तोहि पुन पुन ॥४॥
मैं कहूं तोहि अब गुन गुन। तू मान बचन मेरा सुन मुन ॥५॥
गति गाई मैं यह हंसन। यों वर्ण सुनाई संतन ॥६॥
अब कान धरो इन बचनन। नहिं रोवोगे सिर धुन धुन ॥७॥
यह बात कही मैं चुन चुन। कर राधास्वामी चरन स्पर्शन ॥८॥

चितावनी भाग २

बचन १५ : शब्द १५

मन रे क्यों गुमान अब करना ॥ टेक ॥

तन तो तेरा ख़ाक मिलेगा। चौरासी जा पड़ना ॥१॥
दीन ग़रीबी चित में धरना। काम क्रोध से बचना ॥२॥
प्रीत प्रतीत गुरू की करना। नाम रसायन घट में जरना ॥३॥
मन मलीन के कहे न चलना। गुरु का बचन हिय बिच रखना ॥४॥
यह मतिमंद गहे नहिं सरना। लोभ बढ़ाय उदर को भरना ॥५॥
तुम मानो मत इसका कहना। इसके संग जगत बिच गिरना ॥६॥
इस मूरख को समझ पकड़ना। गुरु के चरन कभी न बिसरना ॥७॥
गुरु का रूप नैन में धरना। सुरत शब्द से नभ पर चढ़ना ॥८॥
राधास्वामी नाम सुमिरना। जो वह कहें चित में धरना ॥९॥

१. वर्णन करती है २. पराया ३. क्षण-क्षण ४. विचार कर ५. छूना
६. लीन करना ७. पेट

चितावनी भाग २

बचन १५ : शब्द ५

मित्र तेरा कोई नहीं संगियन में । पड़ा क्यों सोवे इन ठगियन में ॥१॥
चेत कर प्रीत करो सतसंग में । गुरू फिर रंग दें नाम अरँग[1] में ॥२॥
धन सम्पत तेरे काम न आवे । छोड़ चलो यह छिन में ॥३॥
आगे रैन अंधेरी भारी । काज करो कुछ दिन में ॥४॥
यह देही फिर हाथ न आवे । फिरो चौरासी बन में ॥५॥
गुरु सेवा कर गुरू रिझाओ । आओ तुम इस ढंग में ॥६॥
गुरु बिन तेरा और न कोई । धार बचन यह मन में ॥७॥
जगत जाल में फँसो न भाई । निस दिन रहो भजन में ॥८॥
साध गुरू का कहना मानो । रहो उदास जगत में ॥९॥
छल बल छोड़ो और चतुराई । क्यों तुम पड़ो कुगति[2] में ॥१०॥
सुमिरन करो गुरू को सेवो । चल रहो आज गगन में ॥११॥
कल की ख़बर काल फिर लेगा । वहाँ तुम जलो अगिन में ॥१२॥
अबही समझ देर मत करियो । न जानूँ क्या होय इस पन[3] में ॥१३॥
यों समझाय कहें राधास्वामी । मानो एक बचन में ॥१४॥

चितावनी भाग २

बचन १५ : शब्द १३

मिली नर देह यह तुम को । बनाओ काज कुछ अपना ॥१॥
पचो मत आय इस जग में । जानियो रैन का सुपना ॥२॥
देह और ग्रेह[4] सब झूठा । भर्म में काहे को खपना ॥३॥
जीव सब लोभ में भूले । काल से कोइ नहीं बचना ॥४॥
तृष्णा अग्नि जग जारा । पड़ा सब जीव को तपना ॥५॥
नहीं कोइ राह बचने की । जलें सब नर्क की अगिना ॥६॥
जलेंगे आग में निस दिन । बहुरि[5] भोगें जनम मरना ॥७॥
भटकते वे फिरें खानी । नहीं कुछ ठीक उन लगना ॥८॥
कहूं क्या दुक्ख वह भोगें । कहन में आ नहीं सकना ॥९॥
दया कर संत और सतगुरु । बतावें नाम का जपना ॥१०॥
न माने जुक्ति यह उनकी । सुरत और शब्द का गहना[6] ॥११॥

१. निर्मल २. बुरी हालत ३. अवस्था, उमर ४. घर ५. फिर ६. पकड़ना

बिना सतगुरु बिना करनी। छुटे नहिं खान का फिरना ॥१२॥
कहाँ लग मैं कहूँ उनको। कोई नहिं मानता कहना ॥१३॥
हुये मनमुख फिरें दुख में। वचन गुरु का नहिं माना ॥१४॥
पुजावें आप को जग में। गुरू की सेव नहिं करना ॥१५॥
फ़िकर नहिं जीव का अपने। पड़ेगा नर्क में फुकना ॥१६॥
समझ कर धार लो मन में। कहें राधास्वामी निज बचना ॥१७॥

चितावनी भाग ३

उपदेश सतगुरु भक्ति का

बचन १६ : शब्द १

यह तन दुर्लभ तुमने पाया। कोटि जन्म भटका जब खाया ॥१॥
अब या को बिरथा मत खोवो। चेतो छिन छिन भक्ति कमावो ॥२॥
भक्ति करो तो गुरु की करना। मारग शब्द गुरू से लेना ॥३॥
शब्द मारगी गुरू न होवे। तो झूठी गुरुवाई लेवे ॥४॥
गुरु सोई जो शब्द सनेही। शब्द बिना दूसर नहिं सेई ॥५॥
शब्द कहा मैं गगन शिखर का। शब्द कहा मैं सुन्न शहर का ॥६॥
शब्द कहा मैं भंवर डगर का। शब्द कहा मैं अगम नगर का ॥७॥
गुरु पहिचान ख़ूब मैं गाई। धोखा या में कुछ न रहाई ॥८॥
शब्द कमावे सो गुरु पूरा। उन चरनन की हो जा धूरा ॥९॥
और पहिचान करो मत कोई। लक्ष[1] अलक्ष[2] न देखो सोई ॥१०॥
शब्द भेद लेकर तुम उनसे। शब्द कमाओ तुम तन मन से ॥११॥
अपने जीव की कुछ दया पालो। चौरासी का फेर बचा लो ॥१२॥
नहिं नर्कन में अति दुख पइहो। अग्नि कुँड में छिन छिन दहिहो ॥१३॥
यह सुख चार दिनों का भाई। फिर दुख सदा होय दुखदाई ॥१४॥
बार बार मैं कहूँ चिताई। दया तुम्हारी मोहिं सताई[3] ॥१५॥
मेरे मन करुणा[4] अस आई। चेतो तुम गुरु होयँ सहाई ॥१६॥
बिन गुरु और न पूजो कोई। दर्शन कर गुरु पद नित सेई ॥१७॥
गुरु पूजा में सब की पूजा। जस समुद्र सब नदी समाजा ॥१८॥
देवी देवा ईश महेशा। सूरज शेष और गौर गनेशा ॥१९॥
ब्रह्म और पारब्रह्म सतनामा। तीन लोक और चौथा धामा ॥२०॥

१. सुलक्षण २. औगुण, कुलक्षण ३. दुख देती है ४. दया

गुरु सेवा में सब की सेवा । रंचक[1] भर्म न मानो भेवा[2] ॥२१॥
ता ते बार बार समझाऊँ । गुरु की भक्ति छिन छिन गाऊँ ॥२२॥
गुरुमुख होय गुरु आज्ञा बरते । गुरु बरती इक छिन में तरते ॥२३॥
गुरु महिमा मैं कहाँ लग गाऊँ । गुरु समान कोइ और न पाऊँ ॥२४॥
गुरु अस्तुत है सब मत माहीं । गुरु से बेमुख ठौर[3] न पाई ॥२५॥
भोग बिलास हुकूमत जग की । धन और हाकिम के बस रहती ॥२६॥
हाकिम सेवा तुम कस करते । धन और मान बड़ाई लेते ॥२७॥
आज्ञा उसकी अस सिर धरते । खान पान निंद्रा भी तजते ॥२८॥
सो धन जोड़ किया क्या भाई । जगत लाज में दिया उड़ाई ॥२९॥
सो जग की गति पहले भाखी । चार दिनां फिर है नहिं बाका ॥३०॥
सो धन कारण हाकिम सेवा । ऐसी करते क्या कहुं भेवा[4] ॥३१॥
गुरु सेवा जो सदा सहाई । ताको ऐसी पीठ दिखाई ॥३२॥
दिन नहिं पक्ष मास नहिं बरसा । कभी न दर्शन को मन तरसा ॥३३॥
कहो कैसे तुम्हारा उद्धारा । नर्क निवास दुक्ख चौ धारा ॥३४॥
उस दुख में कहो कौन सहाई । गुरु से प्रीत न करी बनाई ॥३५॥
जो इसकी परतीत न लाओ । तौ मन अपना यों समझाओ ॥३६॥
रोग दुक्ख नित प्रती सताई । मौत पियादे हैं यह भाई ॥३७॥
मृत्यु होने में नहिं कुछ संसा । वह तो करे सकल जिव हिंसा ॥३८॥
यह हिंसा तुम पर भी आवे । इक दिन काल सीस पर धावे ॥३९॥
उस दिन का कुछ करो उपाई । धन हाकिम कुछ काम न आई ॥४०॥
पर जो समझवार तुम होते । तो धन से कुछ कारज लेते ॥४१॥
कारज लेना यह है भाई । गुरु सेवा में खर्च कराई ॥४२॥
गुरु नहिं भूखा तेरे धन का । उन पै धन है भक्ति नाम का ॥४३॥
पर तेरा उपकार करावें । भूखे प्यासे को दिलवावें ॥४४॥
उनकी मेहर मुफ़्त तू पावे । जो उनको परसन्न करावे ॥४५॥
उनका खुश होना है भारी । सत्तपुरुष निज किरपा धारी ॥४६॥
गुरु प्रसन्न होयँ जा ऊपर । वही जीव है सबके ऊपर ॥४७॥
गुरु राज़ी तो करता राज़ी । कर्म काल की चले न बाज़ी[5] ॥४८॥
गुरु की आन[1] सभी मिल मानें । शुकदेव नारद ब्यास बखानें ॥४९॥
ताते गुरु को लेव रिझाई । औरन रीझे कुछ न भलाई ॥५०॥

१. ज़रा भी २ भेद ३. जगह ४. चाल ५. पक्ष

गुरु प्रसन्न और सब रूठे। तो भी उसका रोम न टूटे ॥५१॥
औरन को प्रसन्न जो करता। गुरु से द्रोह[1] घात जो रखता ॥५२॥
गुरु की निन्दा से नहिं डरता। गुरु को मानुष रूप समझता ॥५३॥
सो नरकी जानो अपघाती[2]। उस संग दूत करें उतपाती ॥५४॥
याते[3] समझो बूझो भाई। गुरु को प्रसन्न करो बनाई ॥५५॥
कुल कुटुम्ब कुछ काम न आई। और बिरादरी करे न सहाई ॥५६॥
यह तो चार दिना के संगी। इन निज स्वारथ में बुधि रंगी ॥५७॥
लज्जा डर इन का मत करो। गुरु भक्ति में अब चित धरो ॥५८॥
गुरु सहायता यहाँ व्हाँ करें। उन से करता भी कुछ डरे ॥५९॥
कुल कुटुम्ब से कुछ नहिं सरे। इन के संग नर्क में पड़े ॥६०॥
कार्य मात्र बरतो इन माहीं। बहुंत मोह में बहु दुख पाई ॥६१॥
ताते सतसंग सतगुरु सेवो। नाम पदारथ दम दम लेवो ॥६२॥
गुरु समान और नाम समाना। तीसर सतसंग और न जाना ॥६३॥
इन से सब कारज होयँ पूरे। कर्म काट पहुँचो घर मूरे[4] ॥६४॥
यह कहना मेरा अब मानो। नहीं अंत को पड़े पछतानो ॥६५॥
धन और मान काम नहिं आवे। हुकुम हाकिमी सभी नसावे ॥६६॥
ता ते कुछ भक्ती कर लीजे। यह भी सुफल कमाई कीजे ॥६७॥

चितावनी भाग २

बचन १५ : शब्द १४

यहाँ तुम समझ सोच कर चलना ॥ टेक ॥

यह तो राह बड़ी अति टेढ़ी। मन के साथ न पड़ना ॥१॥
भौजल धार बहे अति गहरी। बिन गुरु कैसे पार उतरना ॥२॥
गुरु से प्रीत करो तुम ऐसी। जस कामी कामिन संग धरना ॥३॥
संग करो चेटक[5] चित राखो। मन से गुरु के चरन पकड़ना ॥४॥
छल वल कपट छोड़ कर बरतो। गुरु के बचन समझना ॥५॥
डरते रहो काल के भय से। ख़बर नहीं कब मरना ॥६॥
स्वाँसो स्वाँस होश कर बौरे। पल पल नाम सुमिरना ॥७॥
यहाँ की ग़फलत बहुत सतावे। फिर आगे कुछ नहिं बन पड़ना ॥८॥
जो कुछ बने सो अभी बनाओ। फिर का कुछ न भरोसा धरना ॥९॥

१. बैर २. अपने जोव का घात करने वाला ३. इससे ४. मूल ५. चाह

जग सुख की कुछ चाह न राखो। दुख में इसके दुखी न रहना ॥१०॥
दुख की घड़ी ग़नीमत[1] जानो। नाम गुरू का छिन छिन भजना ॥११॥
सुख में ग़ाफ़िल[2] रहत सदा नर। मन तरंग में दम दम बहना ॥१२॥
ता ते चेत करो सतसंगत। दुख सुख नदियाँ पार उतरना ॥१३॥
अपना रूप लखो घट भीतर। फिर आगे को सूरत भरना ॥१४॥
राधास्वामी कहें बुझाई। शब्द गुरू से जाकर मिलना ॥१५॥

आरती

बचन १ : शब्द २

राधास्वामी धरा नर रूप जगत में। गुरु होय जीव चिताये ॥१॥
जिन जिन माना बचन समझ के। तिनको संग लगाये ॥२॥
कर सतसंग सार रस पाया। पी पी तृप्त अघाये[3] ॥३॥
गुरु संग प्रीत करी उन ऐसी। जस चकोर चन्दाये ॥४॥
गुरु बिन कल नहिं पड़त घड़ी इक। दम दम मन अकुलाये[4] ॥५॥
जब गुरु दर्शन मिलें भाग से। मगन होत जस बछड़ा गाये ॥६॥
ऐसी प्रीत लगी जिन गुरुमुख। सो सो गुरु अपनाये ॥७॥
तन की लगन भोग इन्द्री के। छिन में सब बिसराये[5] ॥८॥
गुरु की मूरत बसी हिये में। आठ पहर गुरु संग रहाये ॥९॥
अस गुरु भक्ति करी जिन पूरी। ते ते नाम समाये ॥१०॥
स्वाँति बूँद जस रटत पपीहा। अस धुन नाम लगाये ॥११॥
नाम प्रताप सुरत अब जागी। तब घट शब्द सुनाये ॥१२॥
शब्द पाय गुरु शब्द समानी। सुन्न शब्द सत शब्द मिलाये ॥१३॥
अलख शब्द और अगम शब्द ले। निज पद राधास्वामी आये ॥१४॥
पूरा घर पूरी गति पाई। अब कुछ आगे कहा न जाये ॥१५॥

महिमा शब्द

बचन ६ : शब्द ५

शब्द बिना सारा जग अन्धा। काटे कौन मोह का फंदा ॥१॥
शब्द बिना बिरथा सब धंधा। शब्द बिना जिव बंधन बंधा ॥२॥
शब्दहि सूर शब्द ही चंदा। शब्द बिना जिव रहता गंदा ॥३॥

१. अच्छी [illegible] ... भूले

शब्द बिना सबही मतिमंदा । शब्दहि नासहिं[1] शब्दहि पंदा[2] ॥४॥
शब्द कमावे मिले अनंदा । शब्द बिना सबही की निन्दा ॥५॥
ताते शब्दहि शब्द कमाओ । शब्द बिना कोइ और न ध्याओ ॥६॥
शब्द भेद तुम गुरु से पाओ । शब्द माहिं फिर जाय समाओ ॥७॥
शब्द अधर में करे उजारा । शब्द नगर तुम झाँको द्वारा ॥८॥
शब्द रहे सबही से न्यारा । शब्द करे सब जीव गुज़ारा[3] ॥९॥
शब्द जानियो सब का सारा । शब्द मानियो होय उबारा ॥१०॥
शब्द कमाई कर हे मीत । शब्द प्रताप काल को जीत ॥११॥
शब्द घाट तू घट में देख । शब्दहि शब्द पीव को पेख ॥१२॥
शब्द कर्म की रेख कटावे । शब्द शब्द से जाय मिलावे ॥१३॥
शब्द बिना सब झूठा ज्ञान । शब्द बिना सब थोथा ध्यान ॥१४॥
शब्द छोड़ मत अरे अजान । राधास्वामी कहें बखान ॥१५॥

सतगुरु भक्ति

बचन १८ : शब्द ६

सतगुरु कहें करो तुम सोई । मन के कहे चलो मत कोई ॥१॥
यह भौ में ग़ोते दिलवावे । सतगुरु से बेमुख करवावे ॥२॥
काल चक्र में डाल घुमावे । मोह जाल में बहुत फँसावे ॥३॥
मित्र न जानो बैरी पूरा । गुरु भक्ति से डारे दूरा ॥४॥
दारा सुत सम्पति परिवारा । डारे काम क्रोध की धारा ॥५॥
इन्द्री भोग बास[4] भरमावे । भक्ति विवेक नाश करवावे ॥६॥
सतगुरु प्रीतम मिलें न जब तक । कभी न छूटें मन के कौतुक[5] ॥७॥
छल वल मन के कहँ लग बरनूँ । ऋषि मुनी कोइ जाने न मरमूँ ॥८॥
ता ते सतगुरु खोजो निज के । बिन सतगुरु कोइ चले न बच के ॥९॥
सतगुरु सम प्रीतम नहिं कोई । मन मलीन को धोवें वोही ॥१०॥
मेरा भाग उदय हुआ भारी । सतगुरु की मैं हुइ अति प्यारी ॥११॥
जगत जीव कहा[6] जानें महिमा । वेद कतेब न जानें मरमा ॥१२॥
ज्ञानी जोगी सब थक हारे । सतगुरु महिमा कोई न विचारे ॥१३॥
ता ते सतगुरु सरन पुकारूँ । आरत उनकी नित प्रति धारूँ ॥१४॥
आरत करूँ प्रेम से जबही । कुल परिवार तरे मेरा तब ही ॥१५॥

१. उपदेशक २. उपदेश ३. निर्वाह ४. वासना ५. खेल ६. क्या

आरत बिधि अब करूँ सिंगारा । राधास्वामी मेरे हुए दयारा ॥१६॥
राधास्वामी परम दयाल । कर आरत उन हुआ निहाल ॥१७॥

सतगुरु भक्ति

बचन १८ : शब्द ५

सतगुरु का नाम पुकारो । सतगुरु को हियरे धारो ॥१॥
सतगुरु का करो भरोसा । फिर करो न कुछ अफ़सोसा ॥२॥
सतगुरु तोहि छिन छिन पोसें[1] । हँगता[2] तेरी सब विधि खोसें[3] ॥३॥
तू कर उन चरनन होशें । सतगुरु से मत कर रोसें[4] ॥४॥
सतगुरु गति अब सुन मो से । कहि जात न रंचक[5] मुँह से ॥५॥
दसवें में खैंचें नौ से । फिर एक करें तोहि दो से ॥६॥
शब्दा रस तोहि पिलावें । जमपुर से फेर बचावें ॥७॥
घर अगम तोहि दरसावें । मारग सब तोहि लखावें ॥८॥
जो संगत उनकी करते । सो जग से कभी न डरते ॥९॥
जो बेमुख गुरु से फिरते । सो भौ सागर में गिरते ॥१०॥
चौरासी चक्कर खावें । फिर जन्म जन्म दुख पावें ॥११॥
तुम सोचो अपने मन में । कोई नाहिं गुरू सम जग में ॥१२॥
जिन जिन गुरु भक्ति धारी । सो पहुंचे निज दरबारी ॥१३॥
गुरु भक्ति न जिनको प्यारी । तिन जीती बाज़ी हारी ॥१४॥
गुरु चरनन आशिक़ होना । यह बात बड़ी क्या कहना ॥१५॥
गुरु लगें जिसे अति प्यारे । तिन कुल कुटुम्ब सब तारे ॥१६॥
धन मात पिता उन जन के । जिन भक्ति करी कुल तज के ॥१७॥
जिन सही मलामत[6] जग की । तिन मिली रास[7] सुख घर की ॥१८॥
जो कुल लाज जगत से डरे । गुरु भक्ति से वह पुनि गिरे ॥१९॥
सूरा रण से कभी न टरे । सती सदा मुरदे संग जरे ॥२०॥
रण छोड़े कायर कहलाय । सती फिरे भंगी घर जाय ॥२१॥
पपिहा अपना पन[8] नहिं त्यागे । जले पतंगा जोती आगे ॥२२॥
मछली को जैसे जल धारा । गुरुमुख को सतगुरु अस प्यारा ॥२३॥
जिन पर बख़्शिश गुरु की होई । गुरुमुख ऐसा बिरला कोई ॥२४॥

१. रक्षा करें २. अहंकार ३. दूर करें ४. रूठना ५ थोड़ी ६. निन्दा
७. भंडार, राशि ८. प्रण

राधास्वामी कही बनाय। सेवक को गुरु दिया जगाय ॥२५॥

पहिचान परमार्थी की

बचन १३ : शब्द ४

सतगुरु खोजो री प्यारी। जगत में दुर्लभ रतन यही ॥१॥
जिन पर मेहर दया सतगुरु की। उनको दरस दई ॥२॥
दरस पाय सतलोक सिधारी। सत्तनाम पद कीन सही ॥३॥
सही नाम पाया सतगुरु से। बिन सतगुरु सब जीव बही ॥४॥
जीव पड़े चौरासी भरमें। खान पान मद मान लई ॥५॥
मान मनी का रोग पसरिया[1]। बड़े बने जिन मार सही ॥६॥
छोटा रहे चित्त से अन्तर। शब्द माँहि तब सुरत गई ॥७॥
शब्द बिना सारा जग अन्धा। बिन सतगुरु सब भर्म मई[2] ॥८॥
शब्द भेद और शब्द कमाई। जिन जिन कीन्ही सार लई ॥९॥
शब्द रता सतगुरु पहिचानो। हम यह पूरा पता दई ॥१०॥
खोलो आँख निकट ही देखो। अब क्या खोलूँ खोल कही ॥११॥
आगे भाग तुम्हारा प्यारी। नहिं परखो तो जून रही ॥१२॥
कहना था सोई कह डाला। राधास्वामी खूब कही ॥१३॥

महिमा सतगुरु

बचन ८ : शब्द १३

सतगुरु सरन गहो मेरे प्यारे। कर्म जगात[3] चुकाय ॥१॥
भूल भरम में सब जग पचता। अचरज बात न काहु सुहाय ॥२॥
भागहीन सब जग माया बस। यह निरमल गति कोइ न पाय ॥३॥
जिन पर दया आदि करता की। सो यह अमृत पीवन चाहि ॥४॥
कहाँ लग महिमा कहुँ इस गति की। बिरले गुरुमख चीन्हत ताहि ॥५॥
बिन गुरु चरन और नहिं भावे। इस आनंद में रहे समाय ॥६॥
दर्शन करत पिंड सुध भूली। फिर घर बाहर सुधि क्या आय ॥७॥
ऐसी सुरत प्रेम रंग भीनी। तिनकी गति क्या कहूँ सुनाय ॥८॥
जोग बैराग ज्ञान सब रूखे। यह रस उन में दीखे न ताय[4] ॥९॥

१. फैला २. भरा हुआ ३. महसूल, कर ४. उसको

बड़ भागी कोइ बिरला प्रेमी । तिन यह न्यामत[1] मिली अधिकाय ॥१०॥
राधास्वामी कहत सुनाई । यह आरत कोई गुरुमुख गाय ॥११॥

गुरु और नाम भक्ति

बचन १६ : शब्द ६

सुरत सुन बात री तेरा धनी बसे आकाश ॥१॥
तजो संग जार री तू देख पिया परकाश ॥२॥
चलो गुरू की लार[2] री तू पावे अजर निवास ॥३॥
गहो सरन कोई साध री जो मिले शब्द घर बास ॥४॥
तन पिंजरा यह काल का क्यों करें पराई आस ॥५॥
दस इन्द्री के भोग की तेरे पड़ी गले में फाँस ॥६॥
नौ द्वारन में बँध रही अब चैन नहीं इक स्वाँस ॥७॥
दसवीं खिड़की खोल री कर परम बिलास ॥८॥
सतगुरु पूरे कह रहे तू मान बचन विश्वास ॥९॥
राधास्वामी नाम भज होयँ कर्म सब नाश ॥१०॥

चितावनी भाग २

बचन १५ : शब्द १९

सोता मन कस जागे भाई । सो उपाय मैं करूँ बखान ॥१॥
तीरथ करे बर्त भी राखे । विद्या पढ़ के हुए सुजान ॥२॥
जप तप संजम बहु विधि धारे । मौनी हुए निदान ॥३॥
अस उपाव हम बहुतक कीन्हे । तो भी यह मन जगा न आन ॥४॥
खोजत खोजत सतगुरु पाये । उन यह जुक्ति कही परमान ॥५॥
सतसंग करो संत को सेवो । तन मन करो क़ुरबान ॥६॥
सतगुरु शब्द सुनो गगना चढ़ । चेत लगाओ अपना ध्यान ॥७॥
जागत जागत अब मन जागा । झूठा लगा जहान ॥८॥
मन की मदद मिली सूरत को । दोनों अपने महल समान ॥९॥
बिना शब्द यह मन नहिं जागे । करो चाहे कोइ अनेक विधान ॥१०॥
यही उपाव छाँट कर गाया । और उपाय न कर परमान ॥११॥
बिरथा बैस[3] बितावें अपनी । लगे न कभी ठिकान ॥१२॥

१. उत्तम पदार्थ　　२. संग　　३. उमर

संत बिना सब भटके डोलें । बिना संत नहिं शब्द पिछान ।।१३।।
शब्द शब्द मैं शब्दहि गाऊँ । तू भी सुरत लगा दे तान ।।१४।।
घर पावे चौरासी छूटे । जन्म मरन की होवे हान ।।१५।।
राधास्वामी कहें बुझाई । बिना संत सब भटके खान ।।१६।।

उपदेश शब्द अभ्यास

बचन २० : शब्द १९

हंसनी क्यों पीवे तू पानी ।। टेक ।।

सागर क्षीर भरा घट भीतर । पीवो सूरत तानी ।।१।।
जग को जार धसो नभ अन्दर । मंदर परख निशानी ।।२।।
गुरु मूरत तू धार हिये में । मन के संग क्यों फिरत निमानी[1] ।।३।।
तेरा काज करें गुरु पूरे । सुन ले अनहद बानी ।।४।।
कर्म भर्म बस सब जग बौरा । तू क्यों होत दिवानी ।।५।।
सुरत सम्हार करो सतसंगत । क्यों विष अमृत सानी ।।६।।
तेरा धाम अधर में प्यारी । क्यों धर[2] संग बँधानी ।।७।।
जल्दी करो चढ़ो ऊँचे को । राधास्वामी कहत बखानी ।।८।।

१. हीन २. देह

श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी की बानी में से चुने हुऐ

शबद

रागु भैरउ

भैरउ असटपदीआ महला १ घरु २॥

१ ओ सतिगुर प्रसादि ॥

आतम महि रामु राम महि आतमु चीन्हसि[1] गुर बीचारा ॥
अंमृत बाणी सबदि पछाणी दुख काटै हउ मारा ॥१॥
नानक हउमै रोग बुरे ॥
जह देखां तह एका बेदन[2] आपे बखसै सबदि धुरे[3] ॥१॥रहाउ॥
आपे परखे परखणहारै बहुरि सूलाकु[4] न होई ॥
जिन्ह कउ नदरि भई गुरि मेले प्रभ भाणा सचु सोई ॥२॥
पउणु पाणी बैसंतरु रोगी रोगी धरति[5] सभोगी ॥
मात पिता माइआ देह सि रोगी रोगी कुटम्ब संजोगी ॥३॥
रोगी ब्रहमा बिसनु सरुद्रा[6] रोगी सगल संसारा ॥
हरि पदु चीनि भए से मुकते गुर का सबदु वीचारा ॥४॥
रोगी सात समुंद स नदीआ खंड पताल सि रोगि भरे ॥
हरि के लोक सि साचि सुहेले सरबी थाई नदरि करे ॥५॥
रोगी खट दरसन भेखधारी नाना हठी अनेका ॥
बेद कतेब करहि कह बपुरे नह बूझहि इक एका ॥६॥
मिठ रसु खाइ सु रोगि भरीजै कंद मूलि सुखु नाही ॥
नामु विसारि चलहि अनमारगि[7] अंत कालि पछुताही ॥७॥

---

१. पहचाने २ पीड़ा ३. आदि के, धुरधाम के शब्द द्वारा ४. प्राचीन रीति यह थी कि रुपयों को परखते समय खोटा होने पर काट देते थे जिस को सूलाक बोलते थे, भाव खोटा या बेकार होकर दुःख नहीं पाता ५. धरती, समस्त भोगों सहित ६. शिव सहित ७. दूसरा मार्ग

तीरथि भरमै रोगु न छूटसि पड़िआ बादु बिबादु भइआ ॥
दुबिधा रोगु सु अधिक वडेरा माइआ का मुहताजु भइआ ॥८॥
गुरमुखि साचा सबदि सलाहै मनि साचा तिसु रोगु गइआ ॥
नानक हरि जन अनदिनु निरमल
जिन कउ करमि नीसाणु[1] पइआ ॥९॥१॥

मारू सोलहे महला ५ ॥

आदि निरंजनु प्रभु निरंकारा ॥ सभ महि वरतै आपि निरारा ॥
वरनु जाति चिहनु नही कोई सभु हुकमे सृसटि उपाइदा ॥१॥
लख चउरासीह जोनि सबाई ॥ माणस कउ प्रभि दीई वडिआई ॥
इसु पउड़ी ते जो नरु चूकै सो आइ जाइ दुखु पाइदा ॥२॥
कीता होवै तिसु किआ कहीऐ ॥ गुरमुखि नामु पदारथु लहीऐ ॥
जिसु आपि भुलाए सोई भूलै सो बूझै जिसहि बुझाइदा ॥३॥
हरख सोग का नगरु इहु कीआ ॥ से उबरे जो सतिगुर सरणीआ ॥
तृहा गुणा ते रहै निरारा सो गुरमुखि सोभा पाइदा ॥४॥
अनिक करम कीए बहुतेरे ॥ जो कीजै सो बंधन पैरे[2] ॥
कुरुता[3] बीजु बीजे नही जंमै सभु लाहा मूलु गवाइदा ॥५॥
कलजुग महि कीरतनु परधाना ॥ गुरमुखि जपीऐ लाइ धिआना ॥
आपि तरै सगले कुल तारे हरि दरगह पति सिउ जाइदा ॥६॥
खंड पताल दीप सभि लोआ[4] ॥ सभि कालै वसि आपि प्रभि कीआ ॥
निहचलु एकु आपि अबिनासी सो निहचलु जो तिसहि धिआइदा ॥७॥
हरि का सेवकु सो हरि जेहा ॥ भेदु न जाणहु माणस देहा ॥
जिउ जल तरंग उठहि बहु भाती फिरि सललै[5] सलल समाइदा ॥८॥
इकु जाचिकु मंगै दानु दुआरै ॥ जा प्रभ भावै ता किरपा धारै ॥
देहु दरसु जितु मनु तृपतासै[6] हरि कीरतनि मनु ठहराइदा ॥९॥
रूड़ो[7] ठाकुरु कितै वसि न आवै ॥
हरि सो किछु करे जि हरि किआ संता भावै ॥
कीता लोड़नि सोई कराइनि दरि फेरु न कोई पाइदा ॥१०॥
जिथै अउघटु[8] आइ बनतु है प्राणी ॥

१. चिह्न, ईश्वर के पास पहुँचने का परवाना २. पांव में ३. जिसकी ऋतु नहीं
४. लोक ५. पानी ६. सन्तुष्ट हो ७. सुन्दर ८. कठिन मार्ग

तिथै हरि धिआईऐ सारिंग पाणी ॥
जिथै पुतु कलतु न बेली कोई तिथै हरि आपि छडाइदा ॥११॥
बडा साहिबु अगम अथाहा ॥ किउ मिलीऐ प्रभ वेपरवाहा ॥
काटि सिलक[1] जिसु मारगि पाए सो विचि संगति वासा पाइदा ॥१२॥
हुकमु बूझै सो सेवकु कहीऐ ॥ बुरा भला दुइ समसरि[2] सहीऐ ॥
हउमै जाइ त एको बूझै सो गुरमुखि सहजि समाइदा ॥१३॥
हरि के भगत सदा सुखवासी ॥ बाल सुभाइ अतीत[3] उदासी ॥
अनिक रंग करहि बहु भाती जिउ पिता पूतु लाडाइदा ॥१४॥
अगम अगोचरु कीमति नही पाई ॥ ता मिलीऐ जा लए मिलाई ॥
गुरमुखि प्रगटु भइआ तिन जन कउ
जिन धुरि मसतकि लेखु लिखाइदा ॥१५॥
तू आपे करता कारण करणा ॥ सृसटि उपाइ धरी सभ धरणा[4] ॥
जन नानकु सरणि पइआ हरि दुआरै हरि भावै लाज रखाइदा ॥१६॥

माझ महला ३ ॥

आपु वञाए[5] ता सभ किछु पाए ॥ गुर सबदी सची लिव लाए ॥
सचु वणंजहि सचु संघरहि[6] सचु वापारु करावणिआ ॥१॥
हउ वारी जीउ वारी हरिगुण अनदिनु गावणिआ ॥
हउ तेरा तूं ठाकुरु मेरा सबदि वडिआई देवणिआ ॥१॥ रहाउ ॥
वेला वखत सभि सुहाइआ ॥ जितु सचा मेरे मनि भाइआ ॥
सचे सेविऐ सचु वडिआई गुर किरपा ते सचु पावणिआ ॥२॥
भाउ भोजनु सतिगुरि तुठै[7] पाए ॥ अनरसु चूकै हरि रसु मंनि वसाए ॥
सचु संतोखु सहज सुखु बाणी पूरे गुर ते पावणिआ ॥३॥
सतिगुरु न सेवहि मूरख अंध गवारा ॥
फिरि ओइ किथहु पाइनि मोख दुआरा ॥
मरि मरि जंमहि फिरि फिरि आवहि जम दरि चोटा खावणिआ ॥४॥
सबदै सादु जाणहि ता आपु पछाणहि ॥
निरमल बाणी सबदि वखाणहि ॥
सचे सेवि सदा सुखु पाइनि नउ निधि नामु मंनि वसावणिआ ॥५॥

१. फाँसी २ एक समान ३. माया से रहित ४. पृथ्वी ५. खोये ६. इकट्ठा करते हैं ७. प्रसन्न होने पर

सो थानु सुहाइआ जो हरि मनि भाइआ ।।
सत संगति बहिं हरि गुण गाइआ ।।
अनदिनु हरि सालाहहि साचा निरमल नादु वजावणिआ ।।६।।
मनमुख खोटी रासि खोटा पासारा ।। कूड़ु कमावनि दुखु लागै भारा ।।
भरमे भूले फिरनि दिन राती मरि जनमहि जनमु गवावणिआ ।।७।।
सचा साहिबु मै अति पिआरा ।। पूरे गुर कै सबदि अधारा ।।
नानक नामि मिलै वडिआई दुखु सुखु सम करि जानणिआ ।।८।।१०।।११।।

रागु मारू महला १ ।।

आपे करता पुरखु बिधाता ।। जिनि आपे आपि उपाइ पछाता ।।
आपे सतिगुरु आपे सेवकु आपे सृसटि उपाई हे ।।१।।
आपे नेड़ै नाही दूरे ।। बूझहि गुरमुखि से जन पूरे ।।
तिन की संगति अहिनिसि लाहा गुर संगति एह वडाई हे ।।२।।
जुगि जुगि संत भले प्रभ तेरे ।। हरि गुण गावहि रसन[1] रसेरे[2] ।।
उसतति करहि परहरि दुखु दालदु[3] जिन नाही चिंत पराई हे ।।३।।
ओइ जागत रहहि न सूते दीसहि ।। संगति कुल तारे साचु परीसहि[4] ।।
कलिमल मैलु नाही ते निरमल ओइ रहहि भगति लिव लाई हे ।।४।।
बूझहु हरि जन सतिगुर बाणी ।। एहु जोबनु सासु है देह पुराणी ।।
आजु कालि मरि जाईऐ प्राणी हरि जपु जपि रिदै धिआई हे ।।५।।
छोडहु प्राणी कूड़ कबाड़ा ।। कूड़ु मारे कालु उछाहाड़ा[5] ।।
साकत कूड़ि पचहि मनि हउमै दुहु मारगि पचै पचाई हे ।।६।।
छोडहु निंदा ताति[6] पराई ।। पड़ि पड़ि दझहि[7] साति न आई ।।
मिलि सतसंगति नामु सलाहहु आतम रामु सखाई हे ।।७।।
छोडहु काम क्रोधु बुरिआई ।। हउमै धंधु छोडहु लंपटाई ।।
सतिगुर सरणि परहु ता उबरहु इहु तरीऐ भवजलु भाई हे ।।८।।
आगै बिमल[8] नदी अगनि बिखु झेला[9] ।।
तिथै अवरु न कोई जीउ इकेला ।।
भड़ भड़ अगनि सागरु दे लहरी पड़ि दझहि[10] मनमुख ताई हे ।।९।।
गुर पहि मुकति दानु दे भाणै ।। जिनि पाइआ सोई बिधि जाणै ।।

१. जीभ, जिह्वा २. रसदायक ३. ग़रीबी, दरिद्र ४. परोसते हैं, बाँटते हैं ५. उछाल कर ६. जलन, ईर्ष्या ७. जलते हैं ८. महा मलीन नदी ९. विष रूपी ताप १०. जलते हैं

जिन पाइआ तिन पूछहु भाई सुखु सतिगुर सेव कमाई हे ॥१०॥
गुर बिनु उरझि[1] मरहि बेकारा ॥ जमु सिरि मारे करे खुआरा ॥
बाधे मुकति नाही नर निंदक डूबहि निंद पराई हे ॥११॥
बोलहु साचु पछाणहु अंदरि ॥ दूरि नाही देखहु करिनंदरि[2] ॥
बिघनु[3] नाही गुरमुखि तरु तारी इउ भवजलु पारि लंघाई हे ॥१२॥
देही अंदरि नामु निवासी ॥ आपे करता है अबिनासी ॥
ना जीउ मरै न मारिआ जाई करि देखै सबदि रजाई हे ॥१३॥
ओहु निरमलु है नाही अंधिआरा ॥ ओहु आपे तखति बहै सचिआरा ॥
साकत कूड़े बंधि भवाईअहि[4] मरि जनमहि आई जाई हे ॥१४॥
गुर के सेवक सतिगुर पिआरे ॥ ओइ बैसहि तखति सु सबदु वीचारे ॥
ततु लहहि अंतर गति जाणहि सत संगति साचु वडाई हे ॥१५॥
आपि तरै जनु पितरा तारे ॥ संगति मुकति सु पारि उतारे ॥
नानकु तिस का लाला गोला जिनि गुरमुखि हर लिव लाई हे ॥१६॥६॥

रागु गउड़ी महला ३ ॥

इसु जुग का धरमु पड़हु तुम भाई ॥ पूरै गुरि सभ सोझी पाई ॥
ऐथै अगै हरि नामु सखाई ॥१॥
राम पड़हु मनि करहु बीचारु ॥ गुर परसादी मैलु उतारु ॥१॥रहाउ॥
वादि विरोधि न पाइआ जाइ ॥ मनु तनु फीका दूजै भाइ ॥
गुर कै सबदि सचि लिव लाइ ॥२॥
हउमै मैला इहु संसारा ॥ नित तीरथि नावै न जाइ अहंकारा ॥
बिनु गुर भेटे जमु करे खुआरा ॥३॥
सो जनु साचा जि हउमै मारै ॥ गुर कै सबदि पंच संघारै ॥
आपि तरै सगले कुल तारै ॥४॥
माइआ मोहि नटि बाजी पाई ॥ मनमुखि अंध रहे लपटाई ॥
गुरमुखि अलिपत रहे लिव लाई ॥५॥
बहुते भेख करै भेख धारी ॥ अंतरि तिसना फिरै अहंकारी ॥
आपु न चीनै बाजी हारी ॥६॥
कापड़ पहिरि करे चतुराई ॥ माइआ मोहि अति भरमि भुलाई ॥
बिनु गुर सेवे बहुतु दुखु पाई ॥७॥

१. फँस कर २. (कर्ण अन्तर) शरीर में ३. रुकावट, बाधा ४. जन्म मरण में भरमाये अथवा फिराये जाते हैं

नामि रते सदा बैरागी ।। गृही अंतरि साचि लिवलागी ।।
नानक सतिगरु सेवहि से वडभागी ।।८।।३।।

रागु माझ महला ३ ।।

इसु गुफा महि अखुट भंडारा ।।
तिसु विचि वसै हरि अलख अपारा ।।
आपे गुपतु परगटु है आपे गुर सबदी आपु वंञावणिआ[1] ।।१।।
हउ वारी जीउ वारी अंमृत नामु मंनि वसावणिआ ।।
अंमृत नामु महा रसु मीठा गुरमती अंमृतु पीआवणिआ ।।१।।रहाउ।।
हउमै मारि बजर कपाट खुल्हाइआ ।।
नामु अमोलकु गुर परसादी पाइआ ।।
बिनु सबदै नामु न पाए कोई गुर किरपा मंनि वसावणिआ ।।२।।
गुर गिआन अंजनु सचु नेत्री पाइआ ।।
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ।।
जोती जोति मिली मनु मानिआ हरि दरि सोभा पावणिआ ।।३।।
सरीरहु भालणि को बाहरि जाए ।।
नामु न लहै बहुतु वेगारि दुखु पाए ।।
मनमुख अंधे सूझै नाही फिरि घिरि आइ गुरमुखि वथु पावणिआ ।।४।।
गुर परसादी सचा हरि पाए ।। मनि तनि वेखै हउमै मैलु जाए ।।
बैसि[2] सुथानि[3] सद हरि गुण गावै सचै सबदि समावणिआ ।।५।।
नउ दरि ठाके धावतु रहाए ।। दसवै निज घरि वासा पाए ।।
ओथै अनहद सबद वजहि दिनु राती गुरमती सबदु सुणावणिआ ।।६।।
बिनु सबदै अंतरि आनेरा ।। न वसतु लहै न चूकै फेरा ।।
सतिगुर हथि कुंजी होरतु दरु खुल्है नाही गुरु पूरै भागि मिलावणिआ ।।७।।
गुपतु परगटु तूं सभनी थाई ।। गुर परसादी मिलि सोझी पाई ।।
नानक नामु सलाहि सदा तूं गुरमुखि मंनि वसावणिआ ।।८।।

माझ महला ३ घरु १।।

करमु होवै सतिगुरू मिलाए ।। सेवा सुरति सबदि चितु लाए ।।

१. आपा भाव खोया जाता है २. बैठ कर ३. अच्छे स्थान पर अर्थात् अन्तरमुख होकर

हउमै मारि सदा सुखु पाइआ माइआ मोहु चुकावणिआ ॥१॥
हउ वारी जीउ वारी सतिगुर कै बलिहारणिआ ॥
गुरमति परगासु होआ जी अनदिनु हरि गुण गावणिआ ॥१॥रहाउ॥
तनु मनु खोजे ता नाउ पाए ॥ धावतु राखै ठाकि रहाए ॥
गुर की बाणी अनदिनु गावै सहजे भगति करावणिआ ॥२॥
इसु काइआ अंदरि वसतु असंखा ॥ गुरमुखि साचु मिलै ता वेखा ॥
नउ दरवाजे दसवै मुकता अनहद सबदु वजावणिआ ॥३॥
सचा साहिबु सची नाई[1] ॥ गुर परसादी मंनि वसाई ॥
अनदिनु सदा रहै रंगि राता दरि सचै सोझी पावणिआ ॥४॥
पाप पुंन की सार न जाणी ॥ दूजै लागी भरमि भुलाणी ॥
अगिआनी अंधा मगु न जाणै फिरि फिरि आवण जावणिआ ॥५॥
गुर सेवा ते सदा सुखु पाइआ ॥ हउमै मेरा ठाकि रहाइआ ॥
गुर साखी मिटिआ अंधिआरा बजर कपाट खुलावणिआ ॥६॥
हउमै मारि मंनि वसाइआ ॥ गुर चरणी सदा चितु लाइआ ॥
गुर किरपा ते मनु तनु निरमलु निरमल नामु धिआवणिआ ॥७॥
जीवणु मरणा सभु तुधै ताई ॥ जिसु बखसे तिसु दे वडिआई ॥
नानक नामु धिआइ सदा तूं जंमणु मरणु सवारणिआ ॥८॥१॥२॥

रागु सूही महला ३॥

काइआ कामणि[2] अति सुआल्हिओ[3] पिरु वसै जिसु नाले ॥
पिर सचे ते सदा सुहागणि गुर का सबदु सम्हाले ॥
हरि की भगति सदा रंगि राता हउमै विचहु जाले ॥१॥
वाहु वाहु पूरे गुर की बाणी ॥
पूरे गुर ते उपजी साचि समाणी ॥१॥रहाउ॥
काइआ अंदरि सभु किछु वसै खंड मंडल पाताला ॥
काइआ अंदरि जग जीवन दाता वसै सभना करे प्रतिपाला ॥
काइआ कामणि सदा सुहेली गुरमुखि नामु सम्हाला ॥२॥
काइआ अंदरि आपे वसै अलखु न लखिआ जाई ॥
मनमुखु मुगधु बूझै नाही बाहरि भालणि जाई ॥
सतिगुरु सेवे सदा सुखु पाए सतिगुरि अलखु दिता लखाई ॥३॥

१. सच्चे नाम वाला २. स्त्री ३. सुन्दर

काइआ अंदरि रतन पदारथ भगति भरे भंडारा ॥
इसु काइआ अंदरि नउ खंड प्रिथमी हाट पटण बाजारा ॥
इसु काइआ अंदरि नामु नउ निधि पाईऐ गुर कै सबदि वीचारा ॥४॥
काइआ अंदरि तोलि तुलावै आपे तोलणहारा ॥
इहु मनु रतनु जवाहर माणकु तिस का मोलु अफारा[1] ॥
मोलि कितही नामु पाईऐ नाही नामु पाईऐ गुर बीचारा ॥५॥
गुरमुखि होवै सु काइआ खोजै होर सभ भरमि भुलाई ॥
जिसनो देइ सोई जनु पावै होर किआ को करे चतुराई ॥
काइआ अंदरि भउ भाउ वसै गुर परसादी पाई ॥६॥
काइआ अंदरि ब्रहमा बिसनु महेसा सभ ओपति[2] जितु संसारा ॥
सचै आपणा खेलु रचाइआ आवा गउणु पासारा ॥
पूरै सतिगुरि आपि दिखाइआ सचि नामि निसतारा ॥७॥
सा काइआ जो सतिगुरु सेवै सचै आपि सवारी ॥
विणु नावै दरि ढोई नाही ता जमु करे खुआरी ॥
नानक सचु वडिआई पाए जिसनो हरि किरपा धारी ॥८॥२॥

रागु मारू महला १ ॥

कामु क्रोधु परहरु पर निंदा ॥ लबु लोभ तजि होहु निर्चिदा[3] ॥
भ्रम का संगलु तोड़ि निराला हरि अंतरि हरि रसु पाइआ ॥१॥
निसि दामिनि[4] जिउ चमकि चंदाइणु[5] देखै ॥
अहिनिसि जोति निरंतरि पेखै[6] ॥
आनंद रूपु अनूपु सरूपा गुरि पूरै देखाइआ ॥२॥
सतिगुर मिलहु आपे प्रभु तारे ॥ ससि[7] घरि सूरु[8] दीपकु[9] गैणारे[10] ॥
देखि अदिसटु[11] रहहु लिव लागी सभु त्रिभवणि[12] ब्रहमु सबाइआ[13] ॥३॥
अंमृत रसु पाए तृसना भउ जाए ॥ अनभउ पदु पावै आपु गवाए ॥
ऊची पदवी ऊचो ऊचा निरमल सबदु कमाइआ ॥४॥
अदृसट अगोचरु नामु अपारा ॥ अति रसु मीठा नामु पिआरा ॥
नानक कउ जुगि जुगि हरि जसु दीजै हरि जपीऐ अंतु न पाइआ ॥५॥

---

१. बहुत २. रचना की ३. निश्चिन्त ४. बिजली ५. चन्द्र का प्रकाश ६. देखे ७. चन्द्र ८. सूर्य ९. दीपक १०. तारे, नक्षत्र ११. जो देखा न जा सके, अलख १२. तीन लोक १३. सभी

अंतरि नामु परापति हीरा ॥ हरि जपते मनु[1] मन ते धीरा ॥
दुघट[2] घट भउ भंजनु पाईऐ बाहुड़ि जनमि न जाइआ ॥६॥
भगति हेति गुर सबदि तरंगा[3] ॥ हरि जसु नामु पदारथु मंगा ॥
हरि भावै गुर मेलि मिलाए हरि तारे जगतु सबाइआ ॥७॥
जिनि जपु जपिओ सतिगुर मति वाके ॥
जम कंकर कालु सेवक पग[4] ता के ॥
ऊतम संगति गति मिति ऊतम जगु भउजलु पारि तराइआ ॥८॥
इहु भवजलु जगतु सबदि गुर तरीऐ ॥
अंतर की दुबिधा अंतरि जरीऐ ॥
पंच[5] बाण ले जम कउ मारै गगनंतरि[6] धणखु[7] चड़ाइआ ॥९॥
साकत नरि सबद सुरति किउ पाईऐ ॥
सबद सुरति बिनु आईऐ जाईऐ ॥
नानक गुरमुखि मुकति पराइणु हरि पूरै भागि मिलाइआ ॥१०॥
निरभउ सतिगुरु है रखवाला ॥ भगति परापति गुर गोपाला ॥
धुनि अनंद अनाहदु वाजै गुर सबदि निरंजनु पाइआ ॥११॥
निरभउ सो सिरि नाही लेखा ॥ आपि अलेखु कुदरति है देखा ॥
आपि अतीतु अजोनी संभउ[8] नानक गुरमति सो पाइआ ॥१२॥
अंतर की गति सतिगुरु जाणै ॥ सो निरभउ गुर सबदि पछाणै ॥
अंतरु देखि निरंतरि बूझै अनत न मनु डोलाइआ ॥१३॥
निरभउ सो अभ[9] अंतरि बसिआ ॥ अहिनिसि नामि निरंजन रसिआ ॥
नानक हरि जसु संगति पाईऐ हरि सहजे सहजि मिलाइआ ॥१४॥
अंतरि बाहरि सो प्रभु जानै ॥ रहै अलिपतु[10] चलते[11] घरि आणै ॥
ऊपरि आदि सरब तिहु[12] लोई सचु नानक अंमृत रसु पाइआ ॥१५॥४॥२१॥

रागु गउड़ी पूरबी महला ५ ॥

किन बिधि मिलै गुसाई मेरे राम राइ ॥

१. पिण्डी मन को निज मन द्वारा धैर्य मिलता है २. कठिन काम को सुगम करके घटना में ले आने वाला ३. उत्कण्ठा, कामना ४. पांव, पद, पैर ५. पाँचों ध्वनियाँ ६. गगनान्तर, गगन के अन्दर ७. धनुष ८. अपने आप होने वाला, स्वयम्भू ९. हृदय १०. निर्लेप ११. चञ्चल मन को स्थिर करके ब्रह्म में लीन करे १२. तीन लोक

कोई ऐसा संतु सहज सुख दाता मोहि मारगु देइ बताई ॥१॥ रहाउ ॥
अंतरि अलखु न जाई लखिआ विचि पड़दा हउमै पाई ॥
माइआ मोहि सभो जगु सोइआ इहु भरमु कहहु किउ जाई ॥१॥
एका संगति इकतु गृहि बसते मिलि बात न करते भाई ॥
एक बसतु बिन पंच दुहेले ओह बसतु अगोचर ठाई ॥२॥
जिसका गृहु तिनि दीआ ताला कुंजी गुर सउपाई ॥
अनिक उपाव करे नही पावै बिनु सतिगुर सरणाई ॥३॥
जिन के बंधन काटे सतिगुर तिन साध संगति लिव लाई ॥
पंच जना मिलि मंगलु गाइआ हरि नानक भेदु न भाई ॥४॥
मेरे राम राइ इन बिधि मिलै गुसाई ॥
सहजु भइआ भ्रमु खिन महि नाठा मिलि जोति जोति समाई ॥
१ ॥ रहाउ दूजा ॥१॥१२२॥

बारह माहा माझ महला ५ घरु ४
ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

किरति[१] करम के वीछुड़े करि किरपा मेलहु राम ॥
चारि कुंट दहदिस भ्रमे थकि आए प्रभ की साम[२] ॥
धेनु[३] दुधै ते बाहरी कितै न आवै काम ॥
जल बिनु साख[४] कुमलावती उपजहि नाही दाम ॥
हरि नाह न मिलीऐ साजनै कत पाईऐ बिसराम ॥
जितु घरि हरि कंतु न प्रगटई भठि नगर से ग्राम ॥
स्रब सीगार तंबोल[५] रस सणु देही सभ खाम[६] ॥
प्रभ सुआमी कंत विहूणीआ मीत सजण सभि जाम[७] ॥
नानक की बेनंतीआ करि किरपा दीजै नामु ॥
हरि मेलहु सुआमी संगि प्रभ जिस का निहचल धाम ॥१॥
चेति गोविंदु अराधीऐ होवै अनंदु घणा ॥
संत जना मिलि पाईऐ रसना नामु भणा[८] ॥
जिनि पाइआ प्रभु आपणा आए तिसहि[९] गणा ॥
इकु खिनु तिसु बिनु जीवणा बिरथा जनमु जणा[१०] ॥

१. पिछले (पूर्व जन्मों में) किये हुए कर्म २. शरण ३. गऊ ४. खेती ५. पान का बीड़ा ६. कच्चे ७. यम ८. नाम जपने की विधि ९. उस को १० जानूँ, गिनूँ

जलि थलि महीअलि[1] पूरिआ रविआ विचि वणा ।।
सो प्रभु चिति न आवई कितड़ा दुखु गणा ।।
जिनी राविआ सो प्रभू तिना भागु मणा ।।
हरि दरसन कंउ मनु लोचदा नानक पिआस मना ।।
चेति मिलाए सो प्रभू तिस कै पाइ लगा ।।२।।
वैसाखि धीरनि[2] किउ वाढीआ[3] जिना प्रेम बिछोहु[4] ।।
हरि साजनु पुरखु विसारि कै लगी माइआ धोहु ।।
पुत्र कलत्र न संगि धना हरि अविनासी ओहु ।।
पलचि पलचि[5] सगली मुई झूठै धंधै मोहु ।।
इकसु हरि के नाम बिनु अगै लईअहि खोहि ।।
दयु[6] विसारि विगुचणा[7] प्रभ बिनु अवरु न कोइ ।।
प्रीतम चरणी जो लगे तिनकी निरमल सोइ[8] ।।
नानक की प्रभ बेनती प्रभ मिलहु परापति होइ ।।
वैसाखु सुहावा तां लगै जा संतु भेटै हरि सोइ ।।३।।
हरि जेठि जुड़ंदा लोड़ीऐ जिसु अगै सभि निवंनि ।।
हरि सजण दावणि[9] लगिआ किसै न देई बंनि ।।
माणक मोती नामु प्रभ उन लगै नाही संन्हि ।।
रंग सभे नाराइणै जेते मनि भावंनि ।।
जो हरि लोड़े सो करे सोई जीअ करंनि ।।
जो प्रभि कीते आपणे सेई कहीअहि धंनि ।।
आपण लीआ जे मिलै विछुड़ि किउ रोवंनि ।।
साधू संगु परापते नानक रंग माणंनि ।।
हरि जेठु रंगीला तिसु धणी जिस कै भागु मथंनि[10] ।।४।।
आसाड़ु तपंदा तिसु लगै हरि नाहु न जिन्हा पासि ।।
जग जीवन पुरखु तिआगि कै माणस संदी आस ।।
दुयै भाइ विगुचीए[11] गलि पई सु जम की फास ।।
जेहा बीजै सो लुणै[12] मथै जो लिखिआसु ।।
रैणि विहाणी पछुताणी उठि चली गई निरास ।।
जिन कौ साधू भेटीऐ सो दरगह होइ खलासु[13] ।।

१. जल थल और धरती तथा आकाश के बीच के अंश, हर स्थान पर २. धैर्य ३. बिछुड़ी हुई ४. वियोग ५. फँस फँस कर ६. परमेश्वर को ७. भटकना ८. शोभा, चर्चा ९. आँचल १०. मस्तक के ११. भटकते हैं १२. काटता है १३. मुक्त

करि किरपा प्रभ आपणी तेरे दरसन होइ पिआस ॥
प्रभ तुधु बिनु दूजा को नही नानक की अरदासि ॥
आसाड़ु सुहंदा तिसु लगै जिसु मनि हरि चरण निवास ॥५॥
सावणि सरसी[1] कामणी चरन कमल सिउ पिआरु ॥
मनु तनु रता सच रंगि इको नामु अधारु ॥
बिखिआ रंग कूड़ाविआ दिसनि सभे छारु ॥
हरि अंमृत बूंद सुहावणी मिलि साधू पीवणहारु ॥
वणु तिणु प्रभ संगि मउलिआ[2] संम्रथ पुरख अपारु ॥
हरि मिलणै नो मनु लोचदा करमि मिलावणहारु ॥
जिनी सखीए प्रभु पाइआ हंउ तिन कै सद बलिहार ॥
नानक हरि जी मइआ[3] करि सबदि सवारणहारु ॥
सावणु तिना सुहागणी जिन राम नामु उरि हारु ॥६॥
भादुइ भरमि भुलाणीआ दूजै लगा हेतु ॥
लख सीगार बणाइआ कारजि नाही केतु[4] ॥
जितु दिनि देह बिनससी तितु वेलै कहसनि प्रेतु ॥
पकड़ि चलाइनि दूत जम किसै न देनी भेतु ॥
छडि खड़ोते खिनै माहि जिन सिउ लगा हेतु ॥
हथ मरोड़ै तनु कपे सिआहहु होआ सेतु[5] ॥
जेहा बीजै सो लुणै करमा संदड़ा खेतु ॥
नानक प्रभ सरणागती चरण बोहिथ[6] प्रभ देतु ॥
से भादुइ नरकि न पाईअहि गुरु रखणवाला हेतु ॥७॥
असुनि प्रेम उमाहड़ा[7] किउ मिलिऐ हरि जाइ[8] ॥
मनि तनि पिआस दरसन घणी कोई आणि मिलावै माइ ॥
संत सहाइ प्रेम के हउ तिन कै लागा पाइ ॥
विणु प्रभ किउ सुखु पाईऐ दूजी नाही जाइ[8] ॥
जिन्ही चाखिआ प्रेम रसु से तृपति रहे आघाइ[9] ॥
आपु तिआगि बिनती करहि लेहु प्रभू लड़ि लाइ ॥
जो हरि कंति मिलाईआ सि विछुड़ि कतहि न जाइ ॥
प्रभ विणु दूजा को नही नानक हरि सरणाइ ॥
असू सुखी वसंदीआ जिना मइआ हरि राइ ॥८॥

१. प्रसन्न हुई २ खिला, प्रफुल्लित हुआ ३. दया ४. किसी भी अर्थ ५. सफ़ेद
६. जहाज ७. उत्साह हुआ. चाव हुआ, उमड़ आया ८. स्थान ९. पेट भर कर

कतिकि करम कमावणे दोसु न काहू जोगु[१] ॥
परमेसर ते भुलिआं विआपनि सभे रोग ॥
वेमुख होए राम ते लगनि जनम विजोग ॥
खिन महि कउड़े होइ गए जितड़े माइआ भोग ॥
विचु[२] न कोई करि सकै किस थै रोवहि रोज ॥
कीता किछू न होवई लिखिआ धुरि संजोग ॥
वडभागी मेरा प्रभु मिलै तां उतरहि सभि बिओग ॥
नानक कउ प्रभ राखि लेहि मेरे साहिब बंदी मोच[३] ॥
कतिक होवै साध संगु बिनसहि[४] सभे सोच ॥९॥
मंघिरि माहि सुहंदीआ हरि पिर संगि बैठड़ीआह ॥
तिन्ह की सोभा किआ गणी जि साहिबि मेलड़ीआह ॥
तनु मनु मउलिआ राम सिउ संगि साध सहेलड़ीआह ॥
साध जना ते बाहरी[५] से रहनि इकेलड़ीआह ॥
तिन्ह दुखु न कबहू उतर से जम कै वसि पड़ीआह ॥
जिन्ही राविआ[६] प्रभु आपणा से दिसनि नित खड़ीआह ॥
रतन जवेहर लाल हरि कंठि तिन्हा जड़ीआह ॥
नानक बांछै[७] धूड़ि तिन्ह प्रभ सरणी दरि पड़ीआह ॥
मंघिरि प्रभु आराधणा बहुड़ि न जनमड़ीआह ॥१०॥
पोखि तुखारु[८] न विआपई कंठि मिलिआ हरि नाहु ॥
मनु बेधिआ[९] चरनारबिंद[१०] दरसनि लगड़ा साहु ॥
ओट गोविंद गोपाल राइ सेवा सुआमी लाहु ॥
बिखिआ पोहि न सकई मिलि साधू गुण गाहु[११] ॥
जह ते उपजी तह मिली सची प्रीति समाहु ॥
करु गहि लीनी पारब्रहमि बहुड़ि न विछुड़ीआहु ॥
बारि जाउ लख बेरीआ हरि सजणु अगम अगाहु ॥
सरम पई नाराइणै नानक दरि पईआहु ॥
पोखु सोहंदा सरब सुख जिसु बखसे वेपरवाहु ॥११॥
माघि मजनु संगि साधूआ धूड़ी करि इसनानु ॥
हरि का नामु धिआइ सुणि सभना नो करि दानु ॥

१. सीस २. मध्यस्थता ३. बन्दियों को मुक्त करने वाले ४. सब चिन्ताएं दूर हो जाती हैं ५. बिना ६. मान लिया ७. चाहता है ८. शीत, सर्दी, ठण्ड ९. बिंध गया १०. चरण रूपी कमल के साथ ११. गुण गाओ

जनम करम मलु उतरै मन ते जाइ गुमानु ॥
कामि करोधि न मोहीऐ बिनसै लोभु सुआनु[१] ॥
सचै मारगि चलदिआ उसतति करे जहानु ॥
अठसठि तीरथ सगल पुंन जीअ दइआ परवानु ॥
जिस नो देवै दइआ करि सोई पुरखु सुजानु ॥
जिना मिलिआ प्रभु आपणा नानक तिन कुरबानु ॥
माघि सुचे से कांढीअहि[२] जिन पूरा गुरु मिहरवानु ॥१२॥
फलगुणि अनंद उपारजना[३] हरि सजण प्रगटे आइ ॥
संत सहाई राम के करि किरपा दीआ मिलाइ ॥
सेज सुहावी सरब सुख हुणि दुखा नाही जाइ ॥
इछ पुनी वडभागणी वरु पाइआ हरि राइ ॥
मिलि सहीआ मंगलु गावही गीत गोविंद अलाइ[४] ॥
हरि जेहा अवरु न दिसई कोई दूजा लवै न लाइ ॥
हलतु पलतु सवारिओनु निहचल दितीअनु जाइ ॥
संसार सागर ते रखिअनु बहुड़ि न जनमै धाइ ॥
जिहवा एक अनेक गुण तरे नानक चरणी पाइ ॥
फलगुणि नित सलाहीऐ जिसनो तिलु न तमाइ[५] ॥१३॥
जिनि जिनि नामु धिआइआ तिन के काज सरे ॥
हरि गुरु पूरा आराधिआ दरगह सचि खरे ॥
सरब सुखा निधि चरण हरि भउजलु बिखमु तरे ॥
प्रेम भगति तिन पाईआ बिखिआ नाहि जरे ॥
कूड़ गए दुबिधा नसी पूरन सचि भरे ॥
पारब्रहमु प्रभु सेवदे मन अंदरि एकु धरे ॥
माह दिवस मूरत[६] भले जिस कउ नदरि करे ॥
नानकु मंगै दरस दानु किरपा करहु हरे ॥१४॥१॥

रागु मारू महला १ ॥

कुदरति करनैहार अपारा ॥ कीते का नाही किहु चारा ॥
जीअ उपाइ रिजकु दे आपे सिरि सिरि हुकमु चलाइआ ॥१॥
हुकमु चलाइ रहिआ भरपूरे ॥ किसु नेड़ै किसु आखां दूरे ॥
गुपत प्रगट हरि घटि घटि देखहु वरतै ताकु सबाइआ ॥२॥

१. कुत्ता २. कहे जाते हैं ३. उत्पन्न हुआ ४. अलाप करके ५. लोभ ६. महूर्त

जिस कउ मेले सुरति समाए ।। गुर सबदी हरि नामु धिआए ।।
आनद रूप अनूप अगोचर गुर मिलिऐ भरमु जाइआ ।।३।।
मन तन धन ते नामु पिआरा ।। अंति सखाई चलणवारा ।।
मोह पसार नही संगि बेली बिनु हरि गुर किनि सुखु पाइआ ।।४।।
जिस कउ नदरि करे गुरु पूरा ।। सबदि मिलाए गुरमति सूरा ।।
नानक गुर के चरन सरेवहु[1] जिनि भूला मारगि पाइआ ।।५।।
संत जनां हरि धनु जसु पिआरा ।। गुरमति पाइआ नामु तुमारा ।।
जाचिकु सेव करे दरि हरि कै हरि दरगह जसु गाइआ ।।६।।
सतिगुरु मिलै त महलि बुलाए ।। साची दरगह गति पति पाए ।।
साकत ठउर नाही हरि मंदर जनम मरै दुखु पाइआ ।।७।।
सेवहु सतिगुर समुंदु अथाहा ।। पावहु नामु रतनु धनु लाहा ।।
बिखिआ मलु जाइ अंमृतसरि नावहु गुर सर संतोखु पाइआ ।।८।।
सतिगुर सेवहु संक न कीजै ।।आसा माहि निरासु रहीजै ।।
संसा दूख बिनासनु सेवहु फिरि बाहुड़ि रोगु न लाइआ ।।९।।
साचे भावै तिसु वडीआए ।। कउनु सु दूजा तिसु समझाए ।।
हरि गुर मूरति एका वरतै नानक हरि गुर भाइआ ।।१०।।
वाचहि पुसतक वेद पुरानां ।। इक बहि सुनहि सुनावहि कानां ।।
अजगर[2] कपटु[3] कहहु किउ खुल्है बिनु सतिगुर ततु न पाइआ ।।११।।
करहि बिभूति लगावहि भसमै ।। अंतरि क्रोधु चंडालु सु हउमै ।।
पाखंड कीने जोगु न पाईऐ बिनु सतिगुर अलखु न पाइआ ।।१२।।
तीरथ वरत नेम करहि उदिआना[4] ।। जतु सतु संजमु कथहि गिआना ।।
राम नाम बिनु किउ सुखु पाईऐ बिनु सतिगुर भरमु न जाइआ ।।१३।।
निउली करम भुइअंगम भाठी ।। रेचक कुंभक पूरक मन हाठी ।।
पाखंड धरमु प्रीति नही हरि सउ गुरसबद महारसु पाइआ ।।१४।।
कुदरति देखि रहे मनु मानिआ ।। गुरसबदी सभु ब्रहमु पछानिआ ।।
नानक आतम रामु सबाइआ गुर सतिगुर अलखु लखाइआ ।।१५।।५।।१२।।

रागु सूही असटपदीआ म॰ ४ घरु २ ।।

कोई आणि मिलावै मेरा प्रीतमु पिआरा हउ तिसु पहि आपु वेचाई ।।१।।
दरसनु हरि देखण कै ताई ।।
कृपा करहि ता सतिगुरु मेलहि हरि हरि नामु धिआई ।।१।। रहाउ ।।

१. पूजो, सेवा करो २. बड़ा ३. कपाट ४. जंगल में

जे सुखु देहि त तुझहि अराधी दुखि भी तुझै धिआई ॥२॥
जे भुख देहि त इत ही राजा दुख विचि सूख मनाई ॥३॥
तनु मनु काटि काटि सभु अरपी विचि अगनी आपु जलाई ॥४॥
पखा फेरी पाणी ढोवा जो देवहि सो खाई ॥५॥
नानकु गरीबु ढहि पइआ दुआरै हरि मेलि लैहु वडिआई ॥६॥
अखी काढि धरी चरणातलि[1] सभ धरती फिरि मत पाई ॥७॥
जे पासि बहालहि ता तुझहि अराधी जे मारि कढहि भी धिआई ॥८॥
जे लोकु सलाहे ता तेरी उपमा जे निंदै त छोडि न जाई ॥९॥
जे तुधु वलि रहै ता कोई किहु आखउ तुधु विसरिऐ मरि जाई ॥१०॥
वारि वारि जाई गुर ऊपरि पै पैरी संत मनाई ॥११॥
नानकु विचारा भइआ दिवाना हरि तउ दरसन कै ताई ॥१२॥
झखड़ु झागी[2] मीहु वरसै भी गुरु देखण जाई ॥१३॥
समुंदु सागरु होवै बहु खारा गुरुसिखु लंघि गुर पहि जाई ॥१४॥
जिउ प्राणी जल बिनु है मरता तिउ सिखु गुर बिनु मरि जाई ॥१५॥
जिउ धरती सोभ करे जलु बरसै तिउ सिखु गुर मिलि बिगसाई[3] ॥१६॥
सेवक का होइ सेवकु वरता करि करि बिनउ बुलाई ॥१७॥
नानक की बेनंती हरि पहि गुर मिलि गुर सुखु पाई ॥१८॥
तू आपे गुरु चेला है आपे गुर विचु दे[4] तुझहि धिआई ॥१९॥
जो तुधु सेवहि सो तूहै होवहि तुधु सेवक पैज रखाई ॥२०॥
भंडार भरे भगती हरि तेरे जिसु भावै तिसु देवाई ॥२१॥
जिस तूं देहि सोई जनु पाए होर निहफल सभ चतुराई ॥२२॥
सिमरि सिमरि सिमरि गुरु अपुना सोइआ मनु जागाई ॥२३॥
इकु दानु मंगै नानकु वेचारा हरि दासनि दासु कराई ॥२४॥
जे गुरु झिड़के त मीठा लागै जे बखसे त गुर वडिआई ॥२५॥
गुरमुखि बोलहि सो थाइ पाए मनमुखि किछु थाइ न पाई ॥२६॥
पाला ककरु वरफ वरसै गुरसिखु गुर देखण जाई ॥२७॥
सभु दिनसु रैणि देखउ गुरु अपुना विचि अखी गुर पैर धराई ॥२८॥
अनेक उपाव करी गुर कारणि गुर भावै सो थाइ पाई ॥२९॥
रैणि दिनसु गुर चरण अराधी दइआ करहु मेरे साई ॥३०॥
नानक का जीउ पिंडु गुरू है गुर मिलि तृपति अघाई ॥३१॥

१. पैरों के नीचे २. बड़ी तेज हवा, तूफान ३. प्रसन्न होता है ४. गुरु के द्वारा

नानक का प्रभु पूरि रहिओ है जत[1] कत तत गोसाई ।।३२।।१।।

सलोक

१ ओ सतिगुर प्रसादि ।।

सलोक महला ९

गुन गोबिंद गाइओ नही जनमु अकारथ कीन ।।
कहु नानक हरि भजु मना जिहि बिधि जल कौ मीन ।।१।।
बिखिअन सिउ काहे रचिओ निमख न होहि उदास ।।
कहु नानक भजु हरि मना परै न जम की फास ।।२।।
तरनापो इउ ही गइओ लीओ जरा तनु जीति ।।
कहु नानक भज हरि मना अउध जातु है बीति ।।३।।
बिरध भइओ सूझै नही कालु पहूचिओ आन ।।
कहु नानक नर बावरे किउ न भजै भगवान ।।४।।
धनु दारा संपति सगल जिनि अपुनी करि मानि ।।
इन मै कछु संगी नही नानक साची जानि ।।५।।
पतित उधारन भै हरन हरि अनाथ के नाथ ।।
कहु नानक तिह जानीऐ सदा बसतु तुम साथ ।।६।।
तनु धनु जिह तो कउ दिओ तां सिउ नेहु न कीन ।।
कहु नानक नर बावरे अब किउ डोलत दीन ।।७।।
तनु धनु संपै सुख दीओ अरु जिह नीके धाम[2] ।।
कहु नानक सुनु रे मना सिमरत काहि न राम ।।८।।
सभ सुख दाता रामु है दूसर नाहिन कोइ ।।
कहु नानक सुनि रे मना तिह सिमरत गति होइ ।।९।।
जिह सिमरत गति पाईऐ तिहि भजु रे तै मीत ।।
कहु नानक सुन रे मना अउध घटत है नीत ।।१०।।
पांच तत को तनु रचिओ जानहु चतुर सुजान ।।
जिह ते उपजिओ नानका लीन ताहि मै मान ।।११।।
घटि घटि मै हरि जू बसै संतन कहिओ पुकारि ।।
कहु नानक तिह भजु मना भउ निधि उतरहि पारि ।।१२।।

१. हर जगह, तहाँ तहाँ २. अच्छा स्थान, उत्तम घर

सुखु दुखु जिह परसै नही लोभ मोह अभिमानु ॥
कहु नानक सुन रे मना सो मूरत भगवान ॥१३॥
उसतति निंदिआ नाहि जिहि कंचन लोह समानि ॥
कहु नानक सुनि रे मना मुकति ताहि तै जानि ॥१४॥
हरख सोग जा कै नही बैरी मीत समान ॥
कहु नानक सुनि रे मना मुकति ताहि तै जान ॥१५॥
भै काहू कउ देत नहि नहि भै मानत आनि ॥
कहु नानक सुनि रे मना गिआनी ताहि बखानि ॥१६॥
जिहि बिखिआ सगली तजी लीओ भेख बैराग ॥
कहु नानक सुन रे मना तिह नर माथै भाग ॥१७॥
जिहि माइआ ममता तजी सभ ते भइओ उदास ॥
कहु नानक सुन रे मना तिह घटि ब्रहम निवासु ॥१८॥
जिहि प्राणी हउमै तजी करता राम पछान ॥
कहु नानक वहु मुकति नरु इह मन साची मान ॥१९॥
भै नासन दुरमति हरन कलि मै हरि को नाम ॥
निसदिनि जो नानक भजै सफल होहि तिह काम ॥२०॥
जिहबा गुन गोबिंद भजहु करन सुनहु हरि नाम ॥
कहु नानक सुन रे मना परहि न जम कै धाम ॥२१॥
जो प्रानी ममता तजै लोभ मोह अहंकार ॥
कहु नानक आपन तरै अउरन लेत उधार ॥२२॥
जिउ सुपना अरु पेखना ऐसे जग कउ जानि ॥
इन मै कछु साचो नही नानक बिनु भगवान ॥२३॥
निसि दिनि माइआ कारने प्रानी डोलत नीत ॥
कोटन मै नानक कोऊ नाराइन जिह चीति ॥२४॥
जैसे जल ते बुदबुदा उपजै बिनसै नीत ॥
जग रचना तैसे रची कहु नानक सुन मीत ॥२५॥
प्राणी कछू न चेतई मद माइआ कै अंध ॥
कहु नानक बिनु हरि भजन परत ताहि जम फंध ॥२६॥
जउ सुख कउ चाहै सदा सरनि राम की लेह ॥
कहु नानक सुन रे मना दुरलभ मानुख देह ॥२७॥
माइआ कारनि धावही मूरख लोग अजान ॥

कहु नानक बिनु हरि भजनि बिरथा जनमु सिरान[1] ॥२८॥
जो प्रानी निसि दिनि भजै रूप राम तिह जानु ॥
हरि जन हरि अंतरु नही नानक साची मानु ॥२९॥
मनु माइआ मैं फधि रहिओ बिसरिओ गोबिंद नाम ॥
कहु नानक बिनु हरि भजन जीवन कउने काम ॥३०॥
प्रानी राम न चेतई मदि माइआ कै अंध ॥
कहु नानक हरि भजन बिनु परत ताहि जम फंध ॥३१॥
सुख मैं बहु संगी भए दुख मै संगि न कोइ ॥
कहु नानक हरि भजु मना अंति सहाई होइ ॥३२॥
जनम जनम भरमत फिरिओ मिटिओ न जम को त्रासु ॥
कहु नानक हरि भजु मना निरभै पावहि बासु ॥३३॥
जतन बहुतु मै करि रहिओ मिटिओ न मन को मानु ॥
दुरमति सिउ नानक फधिओ राखि लेहु भगवानि ॥३४॥
बाल जुआनी अरु बिरध फुनि तीनि अवसथा जानि ॥
कहु नानक हरि भजन बिनु बिरथा सभ ही मान ॥३५॥
करणो हुतो सु ना कीओ परिओ लोभ कै फंध ॥
नानक समिओ रमि[2] गइओ अब किउ रोवत अंध ॥३६॥
मनु माइआ मै रमि रहिओ निकसत नाहिन मीत ॥
नानक मूरति चित्र जिउ छाडित नाहनि भीत ॥३७॥
नर चाहत कछु अउर अउरै की अउरै भई ॥
चितवत रहिओ ठगउर नानक फासी गलि परी ॥३८॥
जतन बहुत सुख के कीए दुख को कीओ न कोइ ॥
कहु नानक सुन रे मना हरि भावै सो होइ ॥३९॥
जगतु भिखारी फिरतु है सभ को दाता राम ॥
कहु नानक मन सिमरु तिह पूरन होवहि काम ॥४०॥
झूठै मानु कहा करै जगु सुपने जिउ जान ॥
इन मै कछु तेरो नही नानक कहिओ बखान ॥४१॥
गरबु करतु है देह को बिनसै छिन मै मीति ॥
जिहि प्राणी हरि जसु कहिओ नानक तिहि जगु जीति ॥४२॥
जिह घटि सिमरनु राम को सो नरु मुकता जानु ॥
तिहि नर हरि अंतरु नही नानक साची मानु ॥४३॥

१. बीत गया　२. समय बीत गया

एक भगति भगवान जिह प्राणी कै नाहि मन ॥
जैसे सूकरु सुआन नानक मानो ताहि तन ॥४४॥
सुआमी को गृहु जिउ सदा सुआन तजत नही नित ॥
नानक इह बिधि हरि भजउ इक मन हुइ इकि चित ॥४५॥
तीरथ बरत अरु दान करि मन मै धरै गुमानु ॥
नानक निहफल जात तिहि जिउ कुंचर[1] इसनानु ॥४६॥
सिरु कंपिओ पग डगमगै नैन जोति ते हीन ॥
कहु नानक इह बिधि भई तऊ न हरि रस लीन ॥४७॥
निज करि देखिओ जगतु मै को काहू को नाहि ॥
नानक थिरु हरि भगति है तिह राखो मन माहि ॥४८॥
जग रचना सभ झूठ है जानि लेहु रे मीत ॥
कहि नानक थिरु ना रहै जिउ बालू की भीत ॥४९॥
राम गइओ रावनु गइओ जा कउ बहु परवार ॥
कहु नानक थिरु कछु नही सुपने जिउ संसारि ॥५०॥
चिंता ताकी कीजीऐ जो अनहोनी होइ ॥
इह मारगु संसार को नानक थिरु नही कोइ ॥५१॥
जो उपजिओ सो बिनसि है परो आजु के काल ॥
नानक हरि गुन गाइ ले छाडि सगल जंजाल ॥५२॥
बलु छुटकिओ बंधन परे कछू न होत उपाइ ॥
कहु नानक अब ओट हरि गजि जिउ होहु सहाइ ॥५३॥
बलु होआ बंधन छुटे सभ किछु होत उपाइ ॥
नानक सभ किछु तुमरै हाथ मै तुम ही होत सहाइ ॥५४॥
संग सखा सभ तजि गए कोऊ न निबहिओ साथ ॥
कहु नानक इह बिपत मै टेक एक रघुनाथ ॥५५॥
नामु रहिओ साधू रहिओ रहिओ गुर गोबिंद ॥
कहु नानक इह जगत में किन जपिओ गुरमंतु ॥५६॥
राम नामु उरि मै गहिओ जा कै सम नही कोइ ॥
जिह सिमरत संकट मिटै दरसु तुहारो होइ ॥५७॥१॥

१. हाथी

रागु गोंड.

गोंड महला ५ ॥

गुर की मूरति मन महि धिआनु ॥ गुर कै सबदि मंत्रु मनु मान ॥
गुर के चरन रिदै लै धारउ ॥ गुरु पारब्रहमु सदा नमसकारउ ॥१॥
मत को भरमि भुलै संसारि ॥
गुर बिनु कोइ न उतरसि पारि ॥१॥ रहाउ ॥
भूले कउ गुरि मारगि पाइआ ॥ अवर तिआगि हरि भगती लाइआ ॥
जनम मरण की त्रास[1] मिटाई ॥ गुर पूरे की बेअंत वडाई ॥२॥
गुर प्रसादि ऊरध[2] कमल बिगास ॥ अंधकार महि भइआ प्रगास ॥
जिनि कीआ सो गुर ते जानिआ ॥ गुर किरपा ते मुगध[3] मनु मानिआ ॥३॥
गुरु करता गुरु करणै जोगु ॥ गुरु परमेसरु है भी होगु ॥
कहु नानक प्रभि इहै जनाई ॥ बिनु गुर मुकति न पाईऐ भाई ॥४॥

प्रभाती महला ३ बिभास ॥

गुर परसादी वेखु तू हरि मंदरु तेरै नालि ॥
हरि मंदरु सबदे खोजीऐ हरि नामो लेहु सम्हालि ॥१॥
मन मेरे सबदि रपै[4] रंगु होइ ॥
सची भगति सचा हरि मंदरु प्रगटी साची सोइ ॥१॥रहाउ॥
हरि मंदरु एहु सरीरु है गिआनि रतनि परगटु होइ ॥
मनमुख मूलु न जाणनी माणसि हरि मंदरु न होइ ॥२॥
हरि मंदरु हरि जीउ साजिआ रखिआ हुकमि सवारि ॥
धुरि लेखु लिखिआ सु कमावणा कोइ न मेटणहारु ॥३॥
सबदु चीन्हि सुखु पाइआ सचै नाइ पिआर ॥
हरिमंदरु सबदे सोहणा कंचनु कोटु अपार ॥४॥
हरिमंदरु एहु जगतु है गुर बिनु घोरंधार ॥
दूजा भाउ करि पूजदे मनमुख अंध गवार ॥५॥
जिथै लेखा मंगीऐ तिथै देह जाति न जाइ[5] ॥
साचि रते से उबरे[6] दुखीए दूजै भाइ ॥६॥

१. डर, भय २. उलटा ३. मोह में फँसा हुआ, अज्ञानी, मूर्ख ४. शब्द के जुड़ने से ५. शरीर और जाति नहीं जाती ६. जो सच्चे नाम की कमाई में लग गये, उनका उद्धार हो गया

हरि मंदर महि नामु निधानु है ना बूझहि मुगध गवार ॥
गुरपरसादी चीन्हिआ हरि राखिआ उरिधारि ॥७॥
गुर की बाणी गुर ते जाती जि सबदि रते रंगु लाइ ॥
पवितु पावन से जन निरमल हरि कै नामि समाइ ॥८॥
हरि मंदरु हरि का हाटु है रखिआ सबदि सवारि ॥
तिसु विचि सउदा एकु नामु गुरमुखि लैनि सवारि ॥९॥
हरि मंदर महि मनु लोहटु[1] है मोहिआ दूजै भाइ ॥
पारसि भेटिऐ कंचनु भइआ कीमति कही न जाइ ॥१०॥
हरि मंदर महि हरि वसै सरब निरंतरि[2] सोइ ॥
नानक गुरमुखि वणजीऐ सचा सउदा होइ ॥११॥१॥

मारू महला ५ सोलहे ॥

गुरु गोपालु गुरु गोविंदा ॥ गुरु दइआलु सदा बखसिंदा ॥
गुरु सासत सिमृत खटु करमा गुरु पवितु असथाना हे ॥१॥
गुरु सिमरत सभि किलविख नासहि ॥
गुरु सिमरत जम संगि न फासहि ॥
गुरु सिमरंत मनु निरमलु होवै गुरु काटे अपमाना हे ॥२॥
गुर का सेवकु नरकि न जाए ॥ गुर का सेवकु पारब्रहमु धिआए ॥
गुर का सेवकु साध संगु पाए गुरु करदा नित जीअ दाना हे ॥३॥
गुरदुआरै हरि कीरतनु सुणीऐ ॥ सतिगुरु भेटि हरि जसु मुखि भणीऐ[3] ॥
कलि कलेस मिटाए सतिगुरु हरि दरगह देवै मानां हे ॥४॥
अगमु अगोचरु गुरू दिखाइआ ॥ भूला मारगि सतिगुरि पाइआ ॥
गुर सेवक कउ विघनु न भगती हरि पूर दृढ़ाइआ गिआनां हे ॥५॥
गुरि दृसटाइआ सभनी ठांई ॥ जलि थलि पूरि रहिआ गोसाई[4] ॥
ऊच ऊन[5] सभ एक समानां मनि लागा सहजि धिआना हे ॥६॥
गुरि मिलिऐ सभ तृसन बुझाई ॥ गुरि मिलिऐ नह जोहै[6] माई ॥
सतु संतोखु दीआ गुरि पूरै नामु अंमृतु पी पानां हे ॥७॥
गुर की बाणी सभ माहि समाणी ॥ आपि सुणी तै आपि वखाणी ॥
जिनि जिनि जपी तेई सभि निसतरे तिन पाइआ निहचल[7] थानां हे ॥८॥

१. लोहा, मनूर २. पूर्ण रूप से अन्दर ३. कहिये ४. स्वामी ५. ऊँच-नीच ६. माया उसकी ओर नहीं देखती अर्थात् माया में वह नहीं फँसता ७. नष्ट न होने वाली जगह अर्थात् सचखण्ड

सतिगुर की महिमा सतिगुरु जाणै ।। जो किछु करे सु आपण भाणै ।।
साधू धूरि जाचहि[1] जन तेरे नानक सद कुरबानां हे ।।९।।१।।४।।

सिरी रागु महला ५ ।।

गुरु परमेसरु पूजीऐ मनि तनि लाइ पिआरु ।।
सतिगुरु दाता जीअ का सभसै देइ अधारु ।।
सतिगुर बचन कमावणे सचा एहु वीचारु ।।
बिनु साधू संगति रतिआ माइआ मोहु सभु छारु ।।१।।
मेरे साजन हरि हरि नामु समालि ।।
साधू संगति मनि वसै पूरन होवै घाल[2] ।।१।।रहाउ।।
गुरु समरथु अपारु गुरु वडभागी दरसनु होइ ।।
गुरु अगोचरु निरमला गुर जेवडु अवरु न कोइ ।।
गुरु करता गुरु करणहारु गुरमुखि सची सोइ ।।
गुरु ते बाहरि किछु नही गुर कीता लोड़े सु होइ ।।२।।
गुरु तीरथु गुरु पारजातु[3] गुरु मनसा पूरणहारु ।।
गुरु दाता हरि नामु देइ उधरै सभु संसारु ।।
गुरु समरथु गुरु निरंकारु गुरु ऊचा अगम अपारु ।।
गुर की महिमा अगम है किआ कथे कथनहारु ।।३।।
जितड़े फल मनि बाछीअहि तितड़े सतिगुर पासि ।।
पूरबि लिखे पावणे साचु नामु दे रासि ।।
सतिगुर सरणी आइआं बाहुड़ि नही बिनासु ।।
हरि नानक कदे न विसरउ एहु जीउ पिंडु तेरा सासु ।।४।।२९।।९९।।

गोंड महला ५ ।।

गुरू गुरू गुरु करि मन मोर ।। गुरू बिना मै नाही होर ।।
गुर की टेक रहहु दिनु राति ।। जाकी कोइ न मेटै दाति[4] ।।१।।
गुरु परमेसरु एको जाणु ।। जो तिसु भावै सो परवाणु ।।१।।रहाउ।।
गुर चरणी जाका मनु लागै ।। दूखु दरदु भ्रमु ताका भागै ।।
गुर की सेवा पाए मानु ।। गुर ऊपरि सदा कुरबानु ।।२।।
गुर का दरसनु देखि निहाल ।। गुर के सेवक की पूरन घाल ।।
गुर के सेवक कउ दुखु न बिआपै ।। गुर का सेवकु दहदिसि जापै ।।३।।

१. माँगते हैं २. परिश्रम ३. कल्प वृक्ष ४. नाम की बख्शिश, नाम की दात

गुर की महिमा कथनु न जाइ ॥ पारब्रहमु गुरु रहिआ समाइ ॥
कहु नानक जाके पूरे भाग ॥ गुर चरणी ताका मनु लाग ॥४॥६॥८॥

गोंड महला ५ ॥

गुरु मेरी पूजा गुरु गोबिंदु ॥ गुरु मेरा पारब्रहमु गुरु भगवंतु ॥
गुरु मेरा देउ[1] अलख[2] अभेउ[3] ॥ सरब पूज चरन गुरु सेउ ॥१॥
गुर बिनु अवरु नाही मै थाउ ॥
अनदिनु जपउ गुरू गुर नाउ ॥१॥रहाउ॥
गुरु मेरा गिआनु गुरु रिदै धिआनु ॥ गुरु गोपालु पुरखु भगवानु ॥
गुर की सरणि रहउ कर जोरि ॥ गुरू बिना मै नाही होरु ॥२॥
गुरु बोहिथु तारे भव पारि ॥ गुर सेवा जम ते छुटकारि ॥
अंधकार महि गुर मंत्रु उजारा ॥ गुर कै संगि सगल निसतारा ॥३॥
गुरु पूरा पाईऐ वडभागी ॥ गुर की सेवा दूखु न लागी ॥
गुर का सबदु न मेटै कोइ ॥ गुरु नानकु नानकु हरि सोइ ॥४॥७॥९॥

सलोक म: १॥

घर महि घरु देखाइ देइ सो सतिगुरु पुरखु सुजाणु ॥
पंच सबद धुनिकार धुनि तह बाजै सबदु नीसाणु ॥
दीप लोअ[4] पाताल तह खंड मंडल हैरानु ॥
तार घोर बाजित्र[5] तह साचि तखति सुलतानु ॥
सुखमन कै घरि रागु सुनि सुंनि मंडलि लिव लाइ ॥
अकथ कथा बीचारीऐ मनसा मनहि समाइ ॥
उलटि कमलु अंमृति भरिआ इहु मनु कतहु न जाइ ॥
अजपा जापु न वीसरै आदि जुगादि समाइ ॥
सभि सखीआ पंचे मिले गुरमुखि निज घरि वासु ॥
सबदु खोजि इहु घरु लहै नानकु ता का दासु ॥१॥

मारू महला १॥

घरि रहु रे मन मुगध इआने ॥ राम जपहु अंतरगति धिआनै ॥
लालच छोडि रचहु अपरंपरि इउ पावहु मुकति दुआरा हे ॥१॥

---

१. देवता २. अदृश्य, जो न देखा जा सके ३. जो अकाल पुरुष से भिन्न नहीं है, अभेद ४. लोक ५. बजते हैं

जिसु बिसरिऐ जमु जोहणि[1] लागै ।। सभि सुख जाहि दुखा फुनि आगै ।।
राम नामु जपि गुरमुखि जीअड़े एहु परम ततु वीचारा हे ।।२।।
हरि हरि नामु जपहु रसु मीठा ।। गुरमुखि हरि रसु अंतरि डीठा ।।
अहिनिसि राम रहहु रंगि राते एहु जपु तपु संजमु सारा हे ।।३।।
राम नामु गुरबचनी बोलहु ।। संत सभा महि इहु रसु टोलहु ।।
गुरमति खोजि लहहु घरु अपना बहुड़ि न गरभ मझारा हे ।।४।।
सचु तीरथि नावहु हरि गुण गावहु ।। ततु वीचारहु हरि लिव लावहु ।।
अंत कालि जमु जोहि न साकै हरि बोलहु रामु पिआरा हे ।।५।।
सतिगुरु पुरखु दाता वडदाणा ।। जिसु अंतरि साचु सु सबदि समाणा ।।
जिस कउ सतिगुरु मेलि मिलाए तिसु चूका जम भै भारा हे ।।६।।
पंच ततु मिलि काइआ कीनी ।। तिस महि राम रतनु लै चीनी ।।
आतम रामु रामु है आतम हरि पाईऐ सबदि वीचारा हे ।।७।।
सत संतोखि रहहु जन भाई ।। खिमा गहहु सतिगुर सरणाई ।।
आतमु चीनि परातमु चीनहु गुर संगति इहु निसतारा हे ।।८।।
साकत कूड़ कपट महि टेका ।। अहिनिसि निंदा करहि अनेका ।।
बिनु सिमरन आवहि फुनि जावहि ग्रभ जोनी नरक मझारा हें ।।९।।
साकत जम की काणि[2] न चूकै ।। जम का डंडु न कबहू मूकै ।।
बाकी धरमराइ की लीजै सिरि अफरिओ[3] भारु अफारा[4] हे ।।१०।।
बिनु गुर साकतु कहहु को तरिआ ।। हउमै करता भवजलि परिआ ।।
बिनु गुर पारु न पावै कोई हरि जपीऐ पारि उतारा हे ।।११।।
गुर की दाति न मेटै कोई ।। जिसु बखसे तिसु तारे सोई ।।
जनम मरण दुखु नेड़ि न आवै मनि सो प्रभु अपर अपारा हे ।।१२।।
गुर ते भूले आवहु जावहु ।। जनमि मरहु फुनि पाप कमावहु ।।
साकत मूड़ अचेत न चेतहि दुखु लागै ता रामु पुकारा हे ।।१३।।
सुखु दुखु पुरब जनम के कीए ।। सो जाणै जिनि दातै[5] दीए ।।
किस कउ दोसु देहि तू प्राणी सहु अपणा कीआ करारा[6] हे ।।१४ ।।
हउमै ममता करदा आइआ ।। आसा मनसा बंधि चलाइआ ।।
मेरी मेरी करत किआ ले चाले बिखु लादे छार बिकारा हे ।।१५।।
हरि की भगति करहु जन भाई ।। अकथु कथहु मनु मनहि समाई ।।
उठि चलता ठाकि रखहु घरि अपुनै दुखु काटे काटणहारा हे ।।१६।।

१. देखना. खोजना २. हकूमत, दबाव ३. असह्य भार ४. अहंकार में फूल जाना
५ दाता ने ६. जो दुष्कर्म तूने किये हैं

हरि गुर पूरे की ओट पराती ।। गुरमुखि हरि लिव गुरमुखि जाती ।।
नानक राम नामि मति ऊतम हरि बखसे पारि उतारा हे ।।१७।।४।।१०।।

आसा महला ३ ।।

घरै अंदरि सभु वथु है बाहरि किछु नाही ।।
गुर परसादी पाईऐ अंतरि कपट खुलाही ।।१।।
सतिगुर ते हरि पाईऐ भाई ।।
अंतरि नामु निधानु है पूरै सतिगुरि दीआ दिखाई ।।१।।रहाउ।।
हरि का गाहकु होवै सो लए पाए रतनु वीचारा ।।
अंदरु खोलै दिब दिसटि देखै मुकति भंडारा ।।२।।
अंदरि महल अनेक हहि जीउ करे वसेरा[1] ।।
मन चिंदिआ फलु पाइसी फिरि होइ न फेरा ।।३।।
पारखीआ वथु समालि लई गुर सोझी होई ।।
नामु पदारथु अमुलु सा गुरमुखि पावै कोई ।।४।।
बाहरु भाले सु किआ लहै वथु घरै अंदरि भाई ।।
भरमे भूला सभु जगु फिरै मनमुखि पति गवाई ।।५।।
घरु दरु छोडे आपणा पर घरि झूठा जाई ।।
चोरै वांगू पकड़ीऐ बिनु नावै चोटा खाई ।।६।।
जिन्ही घरु जाता आपणा से सुखीए भाई ।।
अंतरि ब्रहमु पछाणिआ गुर की वडिआई ।।७।।
आपे दानु करे किसु आखीऐ आपे देइ बुझाई ।।
नानक नामु धिआइ तूं दरि सचै सोभा पाई ।।८।।६।।२८।।

मारू महला ३ ।।

जग जीवनु साचा एको दाता ।। गुर सेवा ते सबदि पछाना ।।
एको अमरु[2] एका पतिसाही जुगु जुगु सिरिकार[3] बणाई हे ।।१।।
सो जनु निरमलु जिनि आपु पछाता ।। आपे आइ मिलिआ सुखदाता ।।
रसना सबदि रती गुण गावै दरि साचे पति पाई हे ।।२।।
गुरमुखि नामि मिलै वडिआई ।। मनमुखि निंदकि पति गवाई ।।
नामि रते परम हंस बैरागी निज घरि ताड़ी लाई हे ।।३।।

१. ठिकाना, निवास २. हुक्म ३. सरकार अथवा हकूमत

सबदि मरै सोई जनु पूरा ॥ सतिगुरु आखि सुणाए सूरा ॥
काइआ अंदरि अंमृतसरु साचा मनु पीवै भाइ सुभाई[1] हे ॥४॥
पड़ि पंडितु अवरा समझाए ॥ घर जलते की खबरि न पाए ॥
बिनु सतिगुर सेवे नामु न पाईऐ पड़ि थाके सांति न आई हे ॥५॥
इकि भसम लगाइ फिरहि भेख धारी ॥ बिनु सबदै हउमै किनि मारी ॥
अनदिनु जलत रहहि दिनु राती भरमि भेखि भरमाई हे ॥६॥
इकि गृह कुटंब महि सदा उदासी ॥ सबदि मुए हरि नामि निवासी ॥
अनुदिनु सदा रहहि रंगि राते भै भाइ भगति चितु लाई हे ॥७॥
मनमुखु निंदा करि करि विगुता[2] ॥ अंतरि लोभु भउकै जिसु[3] कुता ॥
जमकालु तिसु कदे न छोडै अंति गइआ पछुताई हे ॥८॥
सचै सबदि सची पति होई ॥ बिनु नावै मुकति न पावै कोई ॥
बिनु सतिगुर को नाउ न पाए प्रभि ऐसी बणत बणाई हे ॥९॥
इकि सिध साधिक बहुतु वीचारी ॥
इकि अहिनिसि नामि रते निरंकारी[4] ॥
जिसनो आपि मिलाए सो बूझै भगति भाइ भउ जाई हे ॥१०॥
इसनानु दानु करहि नही बूझहि ॥ इकि मनूआ मारि मनै सिउ लूझहि[5] ॥
साचै सबदि रते इक रंगी साचै सबदि मिलाई हे ॥११॥
आपे सिरजे दे वडिआई ॥ आपे भाणै देइ मिलाई ॥
आपे नदरि करे मनि वसिआ मेरै प्रभि इउ फुरमाई हे ॥१२॥
सतिगुरु सेवहि से जन साचे ॥ मनमुख सेवि न जाणनि काचे ॥
आपे करता करि करि वेखै जिउ भावै तिउ लाई हे ॥१३॥
जुगि जुगि साचा एको दाता ॥ पूरै भागि गुर सबदु पछाता ॥
सबदि मिले से विछुड़े नाही नदरी सहजि मिलाई हे ॥१४॥
हउमै माइआ मैलु कमाइआ ॥ मरि मरि जंमहि दूजा भाइआ ॥
बिनु सतिगुर सेवे मुकति न होई मनि देखहु लिव लाई हे ॥१५॥
जो तिसु भावै सोई करसी ॥ आपहु होआ ना किछु होसी ॥
नानक नामु मिलै वडिआई दरि साचै पति पाई हे ॥१६॥३॥

मारू महला १॥

जह देखा तह दीन दइआला ॥ आइ न जाई प्रभु किरपाला ॥

१. स्वाभाविक, भाव द्वारा २. खराब हुआ, नष्ट हुआ ३. जैसे, जिस प्रकार
४. निराकार (निरंकार) के उपासक, ईश्वर के प्यारे ५. लड़ते हैं

जीआ अंदरि जुगति[1] समाई रहिओ निरालमु[2] राइआ[3] ॥१॥
जगु तिस की छाइआ जिसु बापु न माइआ ॥
ना तिसु भैण न भराउ कमाइआ ॥
ना तिसु ओपति[4] खपति[5] कुल जाती ओहु अजरावरु[6] मनि भाइआ ॥२॥
तू अकाल पुरखु नाही सिरि काला[7] ॥ तू पुरखु अलेख अगंम निराला[8] ॥
सत संतोखि सबदि अति सीतलु सहज भाइ लिव लाइआ ॥३॥
त्रै वरताइ[9] चउथै घरि वासा ॥ काल बिकाल[10] कीए इक ग्रासा[11] ॥
निरमल जोति सरब जगजीबनु गुरि अनहद सबदि दिखाइआ ॥४॥
ऊतम जन संत भले हरि पिआरे ॥ हरि रस माते पारि उतारे ॥
नानक रेण संत जन संगति हरि गुर परसादी पाइआ ॥५॥
तू अंतरजामी जीअ सभि तेरे ॥ तू दाता हम सेवक तेरे ॥
अंमृत नामु कृपा करि दीजै गुरि गिआन रतनु दीपाइआ[12] ॥६॥
पंच ततु मिलि इहु तनु कीआ ॥ आतम रामु पाए सुखु थीआ ॥
करम करतूति[13] अंमृत फलु लागा हरि नाम रतनु मनि पाइआ ॥७॥
ना तिसु भूख पिआस मनु मानिआ ॥ सरब निरंजनु घटि घटि जानिआ ॥
अंमृत रसि राता केवल बैरागी गुरमति भाइ सुभाइआ ॥८॥
अधिआतम[14] करम करे दिनु राती ॥ निरमल जोति निरंतरि जाती ॥
सबदु रसालु रसन[15] रसि रसना बेणु रसालु वजाइआ ॥९॥
बेणु रसाल वजावै सोई ॥ जा की त्रिभवण सोझी होई ॥
नानक बूझहु इह बिधि गुरमति हरि राम नामि लिव लाइआ ॥१०॥
ऐसे जन विरले संसारे ॥ गुर सबदु वीचारहि रहहि निरारे[16] ॥
आपि तरहि संगति कुल तारहि तिन सफल जनमु जगि आइआ ॥११॥
घरु दरु मंदरु जाणै सोई ॥ जिसु पूरे गुर ते सोझी होई ॥
काइआ गड़ महल महली प्रभु साचा सचु साचा तखतु रचाइआ ॥१२॥
चतुर[17] दस हाट दीवे दुइ साखी ॥ सेवक पंच[18] नाही बिखु चाखी ॥
अंतरि वसतु अनूप निरमोलक गुरि मिलिऐ हरि धनु पाइआ ॥१३॥

---

१. माया २. निर्लिप्त ३. राजा ४. उत्पति ५. प्रलय ६. एक रस रहने वाला, जो न बूढ़ा हो न मरे, अजर, अमर ७. सिर पर काल नहीं है ८. सबसे बड़ा स्वामी, अनामी ९. तीन लोक उत्पन्न किए १०. महा-काल ११. ग्रास १२. प्रकाश हुआ १३. करनी १४. आत्मा-सम्बन्धी १५. जिसने रसीले शब्द के रस में मग्न होकर रस लिया है १६. अलग, माया से रहित १७. चौदह लोक १८. पाँचों के सेवक, अर्थात् पाँच शब्दों के मार्गी ने माया रूपी विष नहीं खाया

तखति बहै तखतै की लाइक ।। पंच समाए गुरमति पाइक ।।
आदि जुगादी है भी होसी सहसा भरमु चुकाइआ ।।१४।।
तखति सलामु होवै दिनु राती ।। इहु साचु वडाई गुरमति लिव जाती ।।
नानक रामु जपहु तरु तारी हरि अंति सखाई पाइआ ।।१५।।१।।१८।।

धनासरी महला ५ ।।

जिनि तुम भेजे तिनहि बुलाए सुख सहज सेती घरि आउ ।।
अनद मंगल गुन गाउ सहज धुनि निहचल राजु कमाउ ।।१।।
तुम घरि आवहु मेरे मीत ।।
तुमरे दोखी हरि आपि निवारे अपदा[1] भई बितीत[2] ।।रहाउ।।
प्रगट कीने प्रभ करने हारे नासन भाजन थाके ।।
घरि मंगल वाजहि नित वाजे अपुनै खसमि निवाजे ।।२।।
असथिर रहहु डोलहु मत कबहू गुर कै बचनि अधारि ।।
जै जै कारु सगल भूमंडल मुख ऊजल दरबार ।।३।।
जिन के जीअ तिनै ही फेरे आपे भइआ सहाई ।।
अचरजु कीआ करनै हारै नानक सचु वडिआई ।।४।।४।।२८।।

रागु गउड़ी बैरागणि महला ४ ।।

जिसु मिलिऐ मनि होइ अनंदु सो सतिगुरु कहीऐ ।।
मन की दुबिधा बिनसि जाइ हरि परम पदु लहीऐ ।।१।।
मेरा सतिगुरु पिआरा कितु विधि मिलै ।
हउ खिनु खिनु करी नमसकारु मेरा गुरु पूरा किउ मिलै ।।१।।रहाउ।।
करि किरपा हरि मेलिआ मेरा सतिगुरु पूरा ।।
इछ पुंनी जन केरीआ ले सतिगुर धूरा ।।२।।
हरि भगति दृड़ावै हरि भगति सुणै तिसु सतिगुर मिलीऐ ।।
तोटा मूलि न आवई हरि लाभु निति दृड़ीऐ ।।३।।
जिस कउ रिदै विगासु है भाउ दूजा नाही ।।
नानक तिसु गुर मिलि उधरै हरि गुण गावाही ।।४।।८।।१४।।५२।।

रागु सूही महला ५ असटपदीआ घरु १० काफी ।।

जे भुली जे चुकी साईं भी तहिंजी[3] काढीआ[4] ।।

१. विपत्ति, मुसीबत　　२. बीत गई　　३. तेरी　　४. कहलाती हूँ

जिन्हा नेहु दूजाणे[1] लगा झूरि मरहु से वाढीआ[2] ॥१॥
हउ न छोडउ कंत पासरा ॥
सदा रंगीला लालु पिआरा एहु महिंजा[3] आसरा ॥१॥रहाउ॥
सजणु तू है सैणु[4] तू मै तुझ उपरि बहु माणीआ ॥
जा तू अंदरि ता सुखे तूं निमाणी माणीआ ॥२॥
जे तू तुठा कृपा निधान ना दूजा वेखालि ॥
एहा पाई मू दातड़ी[5] नित हिरदै रखा समालि ॥३॥
पाव जुलाई[6] पंध तउ नैणी दरसु दिखालि ॥
स्रवणी[7] सुणी कहाणीआ जे गुरु थीवै किरपालि ॥४॥
किती लख करोड़ि पिरीए रोम[8] न पुजनि तेरिआ ॥
तू साही हू साहु हउ कहि न सका गुण तेरिआ ॥५॥
सहीआ तऊ असंख मंञहु[9] हभि वधाणीआ[10] ॥
हिक भोरी[11] नदरि निहालि देहि दरसु रंगु माणीआ ॥६॥
जै डिठे मनु धीरीऐ किलविख वंञन्हि दूरे[12] ॥
सो किउ विसरै माउ मै जो रहिआ भरपूरे ॥७॥
होइ निमाणी ढहि पई मिलिआ सहजि सुभाइ ॥
पूरबि लिखिआ पाइआ नानक संत सहाइ ॥८॥१॥४॥

माझ महला ३ ॥

तेरीआ खाणी[13] तेरीआ बाणी[14] ॥ बिनु नावै सभ भरमि भुलाणी ॥
गुर सेवा ते हरि नामु पाइआ बिनु सतिगुर कोइ न पावणिआ ॥१॥
हउ वारी जीउ वारी हरि सेती चितु लावणिआ ॥
हरि सचा गुर भगती पाईऐ सहजे मंनि वसावणिआ ॥१॥रहाउ॥
सतिगुरु सेवे ता सभ किछु पाए ॥
जेही मनसा करि लागै तेहा फलु पाए ॥
सतिगुरु दाता सभना वथू[15] का पूरै भागि मिलावणिआ ॥२॥

१. दूसरी ओर २. वियोगिनें, बिछुड़ी हुई ३. मेरा ४. साथी ५. दात, बख़िशश ६. चलूँ ७. कानों से ८. शरीर के रोम ९. मुझ से १०. बढ़कर, उत्तम ११. थोड़ी सी १२. दूर हो जाएं १३. चारों खानी—अण्डज, जेरज, स्वेदज, उद्भिज (पक्षी, पशु, जूं आदि, वनस्पति) १४. चारों बाणी—परा (नाभि से जो हिलोर योगी-जन उठाते हैं), पश्यन्ति (हृदय में कहा हुआ शब्द), मध्यमा (कण्ठ में कही हुई बात), बैखरी (मुख से उच्चारण किया हुआ शब्द) १५. वस्तुएँ

इहु मनु मैला इकु न धिआए ॥ अंतरि मैलु लागी बहु दूजै भाए ॥
तटि तीरथि दिसंतरि भवै अहंकारी होरु वधेरै हउमै मलु लावणिआ ॥३॥
सतिगुरु सेवे ता मलु जाए ॥ जीवतु मरै हरि सिउ चितु लाए ॥
हरि निरमलु सचु मैलु न लागै सचि लागै मैलु गवावणिआ ॥४॥
बाझु गुरू है अंध गुबारा ॥ अगिआनी अंधा अंधु अंधारा ॥
बिसटा के कीड़े बिसटा कमावहि फिरि बिसटा माहि पचावणिआ ॥५॥
मुकते सेवे मुकता होवै ॥ हउमै ममता सबदे खोवै ॥
अनदिनु हरि जीउ सचा सेवी पूरै भागि गुरु पावणिआ ॥६॥
आपे बखसे मेलि मिलाए ॥ पूरे गुर ते नामु निधि पाए ॥
सचै नामि सदा मनु सचा सचु सेवे दुखु गवावणिआ ॥७॥
सदा हजूरि दूरि न जाणहु ॥ गुर सबदी हरि अंतरि पछाणहु ॥
नानक नामि मिलै वडिआई पूरे गुर ते पावणिआ ॥८॥११॥१२॥

रामकली महला ५ असटपदी ॥

दरसनु भेटत पाप सभि नासहि हरि सिउ देइ मिलाई ॥१॥
मेरा गुरु परमेसरु सुखदाई ॥
पारब्रहम का नामु दृड़ाए अंते होइ सखाई ॥१॥रहाउ॥
सगल दूख का डेरा भंना संत धूरि मुखि लाई ॥२॥
पतित पुनीत कीए खिन भीतरि अगिआनु अन्धेरु वंञाई ॥३॥
करण कारण समरथु सुआमी नानक तिसु सरणाई ॥४॥
बंधन तोड़ि चरन कमल दृड़ाए एक सबदि लिव लाई ॥५॥
अंध कूप बिखिआ ते काढिओ साच सबदि बणि आई ॥६॥
जनम मरण का सहसा चूका बाहुड़ि कतहु न धाई ॥७॥
नाम रसाइणि इहु मनु राता अंमृतु पी तृपताई ॥८॥
संत संगि मिलि कीरतनु गाइआ निहचल वसिआ जाई ॥९॥
पूरै गुरि पूरी मति दीनी हरि बिनु आन[1] न भाई ॥१०॥
नामु निधानु पाइआ वडभागी नानक नरकि न जाई ॥११॥
घाल सिआणप उकति[2] न मेरी पूरै गुरू कमाई ॥१२॥
जप तप संजम सुचि है सोई आपे करे कराई ॥१३॥
पुत्र कलत्र[3] महा बिखिआ महि गुरि साचै लाइ तराई ॥१४॥

१. और, दूसरा २. बोलने की चतुराई ३. स्त्री

अपणै जीअ तै आपि सम्हाले आपि लीए लड़ि लाई ॥१५॥
साच धरम का बेड़ा बांधिआ भवजलु[1] पारि पवाई ॥१६॥
बेसुमार बेअंत सुआमी नानक बलि बलि ज़ाई ॥१७॥
अकाल[2] मूरति अजूनी[3] सं[4] भउ[5] कलि अंधकार दीपाई[6] ॥१८॥
अंतरजामी जीअन का दाता देखत तृपति अघाई[7] ॥१९॥
एकांकरु निरंजनु निरभउ सभ जलि थलि रहिआ समाई ॥२०॥
भगति दानु भगता कउ दीना हरि नानक जाचै[8] माई ॥२१॥१॥६॥

सिरी रागु.

सिरी रागु महला ४ ॥

नामु मिलै मनु तृपतीऐ बिनु नामै धृगु जीवासु[9] ॥
कोई गुरमुखि सजणु जे मिलै मै दसे प्रभु गुणतासु ॥
हउ तिसु विटहु चउखंनीऐ[10] मै नाम करे परगासु ॥१॥
मेरे प्रीतमा हउ जीवा नामु धिआइ ॥
बिनु नावै जीवणु ना थीऐ मेरे सतिगुर नामु दृड़ाइ ॥१॥रहाउ॥
नामु अमोलकु रतनु है पूरे सतिगुर पासि ॥
सतिगुर सेवै लगिआ कढि रतनु देवै परगासि ॥
धंनु वडभागी वडभागीआ जो आइ मिले गुर पासि ॥२॥
जिना सतिगुरु पुरखु न भेटिओ से भागहीण वसि काल ॥
ओइ फिरि फिरि जोनि भवाईअहि विचि विसटा करि विकराल[11] ॥
ओना पासि दुआसि[12] न भिटीऐ[13] जिन अंतरि क्रोधु चंडाल ॥३॥
सतिगुरु पुरखु अंमृतसरु वडभागी नावहि आइ ॥
उन जनम जनम की मैलु उतरै निरमल नामु दृड़ाइ ॥
जन नानक उतम पदु पाइआ सतिगुर की लिव लाइ ॥४॥२॥६६॥

रागु सूही.

रागु सूही महला ३ घरु १ असटपदीआ ॥

नामै ही ते सभु किछु होआ बिनु सतिगुर नामु न जापै ॥

१. संसार समुद्र २. काल से परे ३. जो जनम-मरण में न आवे ४. अपने आप से ५. प्रकाश ६. प्रकाश करने वाला ७. तृप्त हो जाता है ८. मांगता है ९. जीवन १०. बलिहार तथा कुरबान होता हूँ ११. भयानक १२. पास न जाओ १३. छूकर भ्रष्ट न हों

गुर का सबदु महा रसु मीठा बिनु चाखे सादु न जापै ।।
कउडी बदलै जनमु गवाइआ चीन्हसि नाही आपै ।।
गुरमुखि होवै ता एको जाणै हउमै दुखु न संतापै ।।१।।
बलिहारी गुर आपणे विटहु जिनि साचे सिउ लिव लाई ।।
सबदु चीन्हि आतमु परगासिआ सहजे रहिआ समाई ।।१।।रहाउ।।
गुरमुखि गावै गुरमुखि बूझै गुरमुखि सबदु बीचारे ।।
जीउ पिंडु सभु गुर ते उपजै गुरमुखि कारज सवारे ।।
मनमुखि अंधा अंधु कमावै बिखु खटे संसारे ।।
माइआ मोहि सदा दुखु पाए बिनु गुर अति पिआरे ।।२।।
सोई सेवकु जे सतिगुर सेवे चालै सतिगुर भाए ।।
साचा सबदु सिफति है साची साचा मंनि वसाए ।।
सची बाणी गुरमुखि आखै हउमै विचहु जाए ।।
आपे दाता करमु है साचा साचा सबदु सुणाए ।।३।।
गुरमुखि घाले[1] गुरमुखि खटे गुरमुखि नामु जपाए ।।
सदा अलिपतु साचै रंगि राता गुर कै सहजि सुभाए ।।
मनमुख सद ही कूड़ो बोलै बिखु बीजै बिखु खाए ।।
जमकालि बाधा तृसना दाधा[2] बिनु गुर कवणु छडाए ।।४।।
सचा तीरथु जितु सतसरि नावणु गुरमुखि आपि बुझाए ।।
अठसठि तीरथ गुर सबदि दिखाए तितु नातै मलु जाए ।।
सचा सबदु साचा है निरमलु ना मलु लगै न लाए ।।
सची सिफति सची सालाह पूरे गुर ते पाए ।।५।।
तनु मनु सभु किछु हरि तिसु केरा दुरमति कहणु न जाए ।।
हुकमु होवै ता निरमलु होवै हउमै विचहु जाए ।।
गुर की साखी सहजे चाखी तृसना अगनि बुझाए ।।
गुर कै सबदि राता सहजे माता सहजे रहिआ समाए ।।६।।
हरि का नामु सति करि जाणै गुर कै भाइ पिआरे ।।
सची वडिआई गुर ते पाई सचै नाइ पिआरे ।।
एको सचा सभ महि वरतै विरला को वीचारे ।।
आपे मेलि लए ता बखसे सची भगति सवारे ।।७।।
सभो सचु सचु सचु वरतै गुरमुखि कोई जाणै ।।
जंमण मरणा हुकमो वरतै गुरमुखि आपु पछाणै ।।

१. मेहनत करता है, परिश्रम करता है   २. जला हुआ

नामु धिआए ता सतिगुर भाए जो इछै सो फलु पाए ॥
नानक तिसा दा सभु किछु होवै जि विचहु आपु गवाए ॥८॥१॥

मारू महला ३ ॥

निहचलु एकु सदा सचु सोई ॥ पूरे गुर ते सोझी होई ॥
हरि रसि भीने सदा धिआइनि गुरमति सीलु[1] संनाहा[2] हे ॥१॥
अंदरि रंगु सदा सचिआरा ॥ गुर कै सबदि हरि नामि पिआरा ॥
नउनिधि नामु वसिआ घट अंतरि छोडिआ माइआ का लाहा हे ॥२॥
रईअति राजे दुरमति दोई ॥ बिनु सतिगुर सेवे एकु न होई ॥
एकु धिआइनि सदा सुखु पाइनि निहचलु राजु तिनाहा हे ॥३॥
आवणु जाणा रखै न कोई ॥ जंमणु मरणु तिसै ते होई ॥
गुरमुखि साचा सदा धिआवहु गति मुकति तिसै ते पाहा हे ॥४॥
सचु संजमु सतिगुरू दुआरै ॥ हउमै क्रोधु सबदि निवारै ॥
सतिगुरु सेवि सदा सुखु पाईऐ सीलु संतोखु सभु ताहा हे ॥५॥
हउमै मोहु उपजै संसारा ॥ सभु जगु बिनसै नामु विसारा ॥
बिनु सतिगुर सेवे नामु न पाईऐ नामु सचा जगि लाहा हे ॥६॥
सचा अमरु सबदि सुहाइआ ॥ पंच सबद मिलि वाजा वाइआ ॥
सदा कारज सचि नामि सुहेला बिनु सबदै कारजु केहा हे ॥७॥
खिन महि हसै खिन महि रोवै ॥ दूजी दुरमति कारजु न होवै ॥
संजोगु विजोगु करतै लिखि पाए किरतु न चलै चलाहा हे ॥८॥
जीवन मुकति गुर सबदु कमाए ॥ हरि सिउ सद ही रहै समाए ॥
गुर किरपा ते मिलै वडिआई हउमै रोगु न ताहा हे ॥९॥
रस कस खाए पिंडु वधाए[3] ॥ भेख करै गुर सबदु न कमाए ॥
अंतरि रोगु महा दुखु भारी बिसटा[4] माहि समाहा हे ॥१०॥
बेद पड़हि पड़ि बादु वखाणहि ॥
घट महि ब्रहमु तिसु सबदि न पछाणहि ॥
गुरमुखि होवै सु ततु बिलोवै[5] रसना हरि रसु ताहा हे ॥११॥
घरि वथु[6] छोड़हि बाहरि धावहि ॥ मनमुख अंधे सादु न पावहि ॥
अन रस राती रसना फीकी बोले हरि रसु मूलि न ताहा हे ॥१२॥

१. उत्तम आचरण, शील   २. लोहे की जाली की पोशाक, कवच   ३. नाना प्रकार के स्वादिष्ट भोजन खा खा कर शरीर बढ़ाता है ४. मल, गन्दगी   ५. मथता है
६. वस्तु, चीज

मनमुख देही भरमु भतारो[1] ॥ दुरमति मरै नित होइ खुआरो ॥
कामि क्रोधि मनु दूजै लाइआ सुपनै सुखु न ताहा हे ॥१३॥
कंचन देही सबदु भतारो ॥ अनदिनु भोग भोगे हरि सिउ पिआरो ॥
महला अंदरि गैर महलु पाए[2] भाणा बुझि समाहा हे ॥१४॥
आपे देवै देवणहारा ॥ तिसु आगै नही किसै का चारा ॥
आपे बखसे सबदि मिलाइ तिसदा सबदु अथाहा हे ॥१५॥
जीउ पिंडु सभु है तिसु केरा ॥ सचा साहिबु ठाकुरु मेरा ॥
नानक गुरबाणी हरि पाइआ हरि जपु जापि समाहा हे ॥१६॥५॥१४॥

गउड़ी गुआरेरी महला ५ ॥

नैनहु नीद परदृसटि[3] विकार ॥ स्रवण सोए सुणि निंद वीचार ॥
रसना सोई लोभि मीठै सादि ॥ मनु सोइआ माइआ बिसमादि ॥१॥
इसु गृह महि कोई जागतु रहै ॥
साबतु वसतु ओहु अपनी लहै ॥१॥रहाउ॥
सगल सहेली अपनै रस माती ॥ गृह अपुने की खबरि न जाती ॥
मुसनहार पंच बटवारे[4] ॥ सूने नगरि परे ठगहारे ॥२॥
उन ते राखै बापु न माई ॥ उन ते राखै मीतु न भाई ॥
दरबि सिआणप ना ओइ रहते ॥ साध संगि ओइ दुसट वसि होते ॥३॥
करि किरपा मोहि सारिंग पाणि ॥ संतन धूरि सरब निधान ॥
साबतु पूंजी सतिगुर संगि ॥ नानकु जागै पारब्रहम कै रंगि ॥४॥
सो जागै जिसु प्रभु किरपालु ॥ इह पूंजी साबतु धनु मालु ॥१॥रहाउ॥

सोरठि महला ५ घरु २ असटपदीआ ॥

पाठु पड़िओ अरु बेदु बीचारिओ निवलि[5] भुअंगम साधे ॥
पंच जना सिउ संगु न छुटकिओ अधिक अहंबुधि बाधे ॥१॥
पिआरे इन बिधि मिलणु न जाई मैं कीए करम अनेका ॥
हारि परिओ सुआमी कै दुआरै दीजै बुधि बिबेका ॥रहाउ॥
मोनि भइओ कर पाती[6] रहिओ नगन फिरिओ बन माही ॥
तट तीरथ सभ धरती भ्रमिओ दुबिधा छुटकै नाही ॥२॥

---

१. भर्ता, पति २. शरीर के अन्दर और स्थान अर्थात् निज घर अथवा सचखण्ड को प्राप्त कर लेता है ३. पर स्त्री, पर धन आदि की ओर पाप भरी दृष्टि ४. पाँच डाकू (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार) ५. न्योली कर्म ६. जो हाथ की अंजलि में ही अन्न जल लेकर ग्रहण करते हैं

मन कामना तीरथ जाइ बसिओ सिरि करवत[1] धराए ॥
मन की मैलु न उतरै इह बिधि जे लख जतन कराए ॥३॥
कनिक[2] कामिनी[3] हैवर[4] गैवर[5] बहु बिधि दानु दातारा ॥
अंन बसत्र भूमि बहु अरपे नह मिलीऐ हरि दुआरा ॥४॥
पूजा अरचा[6] बंदन डंडउत खटु[7] करमा रतु रहता ॥
हउ हउ करत बंधन महि परिआ नह मिलीऐ इह जुगता ॥५॥
जोग सिध आसण चउरासीह ए भी करि करि रहिआ ॥
वडी आरजा फिरि फिरि जनमै हरि सिउ संगु न गहिआ ॥६॥
राज लीला राजन की रचना करिआ हुकमु अफारा ॥
सेज सोहनी चंदनु चोआ[8] नरक घोर का दुआरा ॥७॥
हरि कीरति साध संगति है सिरि करमन कै करमा ॥
कहु नानक तिसु भइओ परापति जिसु पुरब लिखे का लहना ॥८॥
तोरो सेवकु इह रंगि माता ॥
भइओ क्रिपालु दीन दुख भंजनु हरि हरि कीरतनि इहु मनु राता ॥ रहाउ ॥

मारू महला १॥

बिखु बोहिथा[9] लादिआ दीआ समुंद मंझारि ॥
कंधी दिसि न आवई ना उरवारु न पारु ॥
वंञी हाथि न खेवटू जलु सागरु असरालु[10] ॥१॥
बाबा जगु फाथा महा जालि ॥
गुर परसादी उबरे सचा नामु समालि ॥१॥रहाउ॥
सतिगुरू है बोहिथा सबदि लंघावणहारु ॥
तिथै पवणु न पावको ना जलु ना आकारु ॥
तिथै सचा सचि नाइ भवजल तारणहारु ॥२॥
गुरमुखि लंघे से पारि पए सचे सिउ लिव लाइ ॥
आवागउणु निवारिआ जोती जोति मिलाइ ॥
गुरमती सहजु ऊपजै सचे रहै समाइ ॥३॥
सपु पिड़ाई[11] पाईऐ बिखु अंतरि मनि रोसु[12] ॥

१. काशी में एक आरा जिस के नीचे मनुष्य मुक्ति प्राप्त करने के लिये कट मरते थे
२. स्वर्ण ३. स्त्री ४. घोड़ा ५. हाथी ६. अर्चना ७. षट कर्म (विद्या पढ़ना, पढ़ाना, दान देना, दान लेना, यज्ञ करना, यज्ञ कराना) ८. इत्र आदि सुगन्धित वस्तुएँ ९. जहाज
१०. भायनक ११. पिटारी १२. रोष, क्रोध

पूरबि लिखिआ पाईऐ किस नो दीजै दोसु ॥
गुरमुखि गारड़ु जे सुणे मंने नाउ संतोसु ॥४॥
मागरमछु फहाईऐ कुंडी जालु वताइ[1] ॥
दुरमति फाथा फाहीऐ फिरि फिरि पछोताइ ॥
जंमण मरणु न सुझई किरतु न मेटिआ जाइ ॥५॥
हउमै बिखु पाइ जगतु उपाइआ सबदु वसै बिखु जाइ ॥
जरा जोहि[2] न सकई सचि रहै लिव लाइ ॥
जीवन मुकतु सो आखीऐ जिसु विचहु हउमै जाइ ॥६॥
धंधै धावत जगु बाधिआ ना बूझै वीचारु ॥
जंमण मरणु विसारिआ मनमुख मुगधु गवारु ॥
गुरि राखे से उबरे सचा सबदु वीचारि ॥७॥
सूहटु[3] पिंजरि प्रेम कै बोलै बोलणहारु ॥
सचु चुगै अंमृतु पीऐ उडै त एका वार ॥
गुरि मिलिऐ खसमु पछाणीऐ कहु नानक मोख दुआरु ॥८॥२॥

मारू महला ५॥

बिरखै[4] हेठि सभि जंत इकठे ॥ इकि तते इकि बोलनि मिठे ॥
असतु[5] उदोतु[6] भइआ उठि[7] चले जिउ जिउ अउध विहाणीआ[8] ॥१॥
पाप करेदड़[9] सरपर मुठे ॥ अजराईलि फड़े फड़ि कुठे[10] ॥
दोजकि पाए सिरजणहारै लेखा मंगै बाणीआ ॥२॥
संगि न कोई भईआ बेबा[11] ॥ मालु जोबनु धनु छोडि वंञेसा[12] ॥
करण करीम न जातो करता तिल पीड़े जिउ घाणीआ ॥३॥
खुसि खुसि लैदा वसतु पराई ॥ वेखै सुणे तेरै नालि खुदाई ॥
दुनीआ लबि[13] पइआ खात[14] अंदरि अगली गल न जाणीआ ॥४॥
जमि जमि मरै मरै फिरि जंमै ॥ बहुतु सजाइ पइआ देसि लंमै[15] ॥
जिनि कीता तिसै न जाणी अंधा ता दुखु सहै पराणीआ ॥५॥
खालक थावहु भुला मुठा[16] ॥ दुनीआ खेलु बुरा रुठ तुठा[17] ॥
सिदकु सबूरी[18] संतु न मिलिओ वतै[19] आपण भाणीआ ॥६॥

१. फैला कर २. देख नहीं सकती ३. तोता ४. वृक्ष ५. सूर्यास्त ६. प्रभात ७. रात (आयु) व्यतीत करके चले गये ८. व्यतीत हुई ९. करते १०. मारता है ११. माता, बड़ी बहन अथवा भावज आदि १२. चले गए १३. लोभ के १४. गढ़ा १५. लम्बा मार्ग (चौरासी के फेर में) १६. ठगा गया १७. रूठा हुआ तथा प्रसन्न हुआ १८. संतोष १९. भटकता है

मउला खेल करे सभि आपे ।। इकि कढे इकि लहरि विआपे[1] ।।
जिउ नचाए तिउ तिउ नचनि सिरि सिरि किरत विहाणीआ ।।७।।
मिहर करे ता खसमु धिआई ।। संता संगति नरकि न पाई ।।
अंमृत नामु दानु नानक कउ
गुण गीता नित वखाणीआ ।।८।।२।।८।।१२।।२०।।

बसंतु हिंडोल महला ४ ।।

मनु खिनु खिनु भरमि भरमि बहु धावै तिलु घरि नही वासा पाईऐ ।।
गुरि अंकसु सबदु दारू सिरि धारिओ घरि मंदरि आणि वसाईऐ ।।१।।
गोबिंद जीउ सत संगति मेलि हरि धिआईऐ ।।
हउमै रोगु गइआ सुखु पाइआ हरि सहजि समाधि लगाईऐ ।।१।।रहाउ।।
घरि रतन लाल बहु माणक लादे मनु भ्रमिआ लहि न सकाईऐ ।।
जिउ ओडा[2] कूपु गुहज खिन[3] काढै तिउ सतिगुरि वसतु लहाईऐ ।।२।।
जिन्ह ऐसा सतिगुरु साधु न पाइआ ते धृगु धृगु नर जीवाईऐ ।।
जनमु पदारथु पुंनि फलु पाइआ कउडी बदलै जाईऐ ।।३।।
मधुसूदन हरि धारि प्रभ किरपा करि किरपा गुरू मिलाईऐ ।।
जन नानक निरबाण[4] पदु पाइआ मिलि साधू हरि गुण गाईऐ ।।४।।४।।६।।

रागु सिरी रागु महला १ घरु १ ।।

मोती त मंदर ऊसरहि रतनी त होहि जड़ाउ ।।
कसतुरि कुंगू[5] अगरि चंदनि लीपि आवै चाउ ।।
मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ ।।१।।
हरि बिनु जीउ जलि बलि जाउ ।।
मै आपणा गुरु पूछि देखिआ अवरु नाही थाउ ।।१।।रहाउ।।
धरती त हीरे लाल जड़ती पलघि लाल जड़ाउ ।।
मोहणी मुखि मणी सोहै करे रंगि पसाउ[6] ।।
मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ ।।२।।
सिधु होवा सिधि लाई रिधि आखा आउ ।।
गुपतु परगटु होइ बैसा[7] लोकु राखै भाउ ।।

१. कर्म गति सब पर आती है २. वे लोग जो ज़मीन में दबे हुए पुराने कुएँ का पता लगा लेते हैं ३. खोद कर निकालता है ४. जिस पद पर पहुँचने से आशा तृष्णा नहीं रहती, दसवां द्वार ५. केसर, कुंकुम ६. हाव भाव, कटाक्ष ७. बैठूं, बैठ जाऊँ

मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ ॥३॥
सुलतानु होवा मेलि लसकर तखति राखा पाउ ॥
हुकमु हासलु करी बैठा नानका सभ वाउ[१] ॥
मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ ॥४॥१॥

कलिआन म: ४॥

राम गुरु पारसु परसु करीजै ॥
हम निरगुणी मनूर[२] अति फीके मिलि सतिगुर पारसु कीजै ॥१॥रहाउ॥
सुरग मुकति बैकुंठ सभि बांछहि[३] निति आसा आस करीजै ॥
हरि दरसन के जन मुकति न मांगहि मिलि दरसन तृपति मनु धीजै[४] ॥१॥
माइआ मोहु सबलु है भारी मोहु कालख दाग लगीजै ॥
मेरे ठाकुर के जन अलिपत है मुकते जिउ मुरगाई पंकु न भीजै ॥२॥
चंदन वासु भुइअंगम[५] वेड़ी[६] किव मिलीऐ चंदनु लीजै ॥
काढि खड़गु गुर गिआनु करारा बिखु छेदि छेदि रसु पीजै ॥३॥
आनि आनि समधा बहु कीनी पलु बैसंतर भसम करीजै ॥
महा उग्र[७] पाप साकत नर कीने मिलि साधू लूकी[८] दीजै ॥४॥
साधू साध साध जन नीके जिन्ह अंतरि नामु धरीजै ॥
परसनि परसु भए साधू जन जनु हरि भगवानु दिखीजै ॥५॥
साकत सूतु बहु गुरझी[९] भरिआ किउ करि तानु तनीजै ॥
तंतु सूतु किछु निकसै नाही साकत संगु न कीजै ॥६॥
सतिगुर साध संगति है नीकी मिलि संगति रामु रवीजै ॥
अंतरि रतन जवेहर माणक गुर किरपा ते लीजै ॥७॥
मेरा ठाकुरु वडा वडा है सुआमी हम किउ करि मिलह मिलीजै ॥
नानक मेलि मिलाए गुरु पूरा जन कउ पूरनु दीजै ॥८॥२॥

सिरी रागु महला १ ॥

रामनामि मनु बेधिआ[१०] अवरु कि करी वीचारु ॥
सबद सुरति सुखु ऊपजै प्रभ रातउ सुख सारु ॥
जिउ भावै तिउ राखु तूं मै हरिनामु अधारु ॥१॥
मन रे साची खसम रजाइ ॥

---

१. व्यर्थ २. पिघले हुए लोहे की मैल ३. इच्छा करते हैं ४. धैर्य करता है ५. साँप ६. घिरी हुई ७. अति भारी ८. आग लगाये ९. उलझनें १०. बिंध गया

जिनि तनु मनु साजि सीगारिआ तिसु सेती लिव लाइ ॥१॥रहाउ॥
तनु बैसंतरि होमीऐ इक रती तोलि कटाइ ॥
तनु मनु समधा[1] जे करी अनदिनु अगनि जलाइ ॥
हरिनामै तुलि न पुजई जे लख कोटी करम कमाइ ॥२॥
अरध सरीरु कटाईऐ सिरि करवतु धराइ ॥
तनु हैमंचलि गालीऐ भी मन ते रोगु न जाइ ॥
हरिनामै तुलि न पुजई सभ डिठी ठोकि वजाइ ॥३॥
कंचन के कोट दतु[2] करी बहु हैवर[3] गैवर[4] दानु ॥
भूमि दानु गऊआ घणी भी अंतरि गरबु गुमानु ॥
रामनामि मनु बेधिआ गुरि दीआ सचु दानु ॥४॥
मन हठ बुधी केतीआ केते बेद बीचार ॥
केते बंधन जीअ के गुरमुखि मोख दुआरु ॥
सचहु ओरै सभु को उपरि सचु आचारु ॥५॥
सभु को ऊचा आखीऐ नीचु न दीसै कोइ ॥
इकनै भांडे साजिऐ इकु चानणु तिहु लोइ[5] ॥
करमि मिलै सचु पाईऐ धुरि बखस न मेटै कोइ ॥६॥
साधु मिलै साधू जनै संतोखु वसै गुर भाइ ॥
अकथ कथा वीचारीऐ जे सतिगुर माहि समाइ ॥
पी अंमृतु संतोखिआ दरगहि पैधा[6] जाइ ॥
घटि घटि वाजै किंगुरी अनदिनु सबदि सुभाइ ॥
विरले कउ सोझी पई गुरमुखि मनु समझाइ ॥
नानक नामु न वीसरै छूटै सबदु कमाइ ॥८॥१४॥

रागु कलिआन. कलिआन म: ४ असटपदीआ ॥

रामा रम[7] रामो सुनि मनु भीजै ॥
हरि हरि नामु अंमृतु रसु मीठा गुरमति सहजे पीजै ॥१॥रहाउ॥
कासट[8] महि जिउ है बैसंतरु[9] मथि[10] संजमि[11] काढि कढीजै ॥
राम नामु है जोति सबाई[12] ततु गुरमति काढि लईजै ॥१॥
नउ दरवाजे नवे दर फीके रसु अंमृतु दसवे चुईजै ॥
कृपा कृपा किरपा करि पिआरे गुरसबदी हरि रसु पीजै ॥२॥

१. समिधा, हवन या यज्ञ में जलाने की लकड़ी २. दान ३. घोड़े ४. हाथी
५. तीन लोक ६. आदर से ७. जप कर ८. लकड़ी ९. अग्नि
१०. रगड़ कर ११. विधि पूर्वक १२. सब में

काइआ नगरु नगरु है नीको[1] विचि सउदा हरि रसु कीजै ॥
रतन लाल अमोल अमोलक सतिगुर सेवा लीजै ॥३॥
सतिगुरु अगमु अगमु है ठाकुरु भरिसागर[2] भगति करीजै ॥
कृपा कृपा करि दीन हम सारिंग[3] इक बूंद नामु मुखि दीजै ॥४॥
लालनु लालु लालु है रंगनु मनु रंगन कउ गुर दीजै ॥
राम राम राम रंगि राते रस रसिक[4] गटक[5] नित पीजै ॥५॥
बसुधा[6] सपत[7] दीप है सागर कढि कंचनु काढि धरीजै ॥
मेरे ठाकुर के जन इनहु न बाछहिं[8] हरि मागहि हरि रसु दीजै ॥६॥
साकत नर प्रानी सद भूखे नित भूखन भूख करीजै ॥
धावतु धाइ धावहि प्रीति माइआ लख कोसन कउ बिथि[9] दीजै ॥७॥
हरि हरि हरि हरि हरिजन ऊतम किआ उपमा तिन्ह दीजै ॥
राम नाम तुलि[10] अउरु न उपमा जन नानक कृपा करीजै ॥८॥१॥

कलिआन महला ४॥

रामा हम दासन दास करीजै ॥
जब लगि सासु होइ मन अंतरि साधू धूरि पिवीजै ॥१॥रहाउ॥
संकरु नारदु सेख नाग मुनि धूरि साधू की लोचीजै[11] ॥
भवन भवन पवितु होहि सभि जह साधू चरन धरीजै ॥१॥
तजि लाज अहंकारु सभु तजीऐ मिलि साधू संगि रहीजै ॥
धरमराइ की कानि चुकावै बिखु डुबदा काढि कढीजै ॥२॥
भरमि सूके बहु उभि[12] सुक कहीअहि मिलि साधू संगि हरीजै ॥
ताते बिलमु[13] पलु ढिल न कीजै जाइ साधू चरनन लगीजै ॥३॥
राम नाम कीरतन रतन वथु हरि साधू पासि रखीजै ॥
जो बचन गुर सति सति करि मानै तिसु आगै काढि धरीजै ॥४॥
संतहु सुनहु सुनहु जन भाई गुरि काढी[14] बाह कुकीजै ॥
जे आतम कउ सुखु सुखु नित लोड़हु तां सतिगुर सरनि पवीजै ॥५॥
जे वडभागु होइ अति नीका तां गुरमति नामु दृड़ीजै ॥
सभु माइआ मोहु बिखमु जगु तरीऐ सहजे हरि रसु पीजै ॥६॥

---

१. सुन्दर २. समुन्द्र भर कर अर्थात् बहुत सा ३. पपीहा ४. रस लेने वाला ५. गट गट कर पीना ६. धरती, पृथ्वी ७ सात ८. मांगते या चाहते हैं ९. फासला, अन्तर १०. बराबर, समान ११. चाहते हैं १२. खड़े खड़े सूख जाना १३. देर १४. भुजा उठा कर जोर से कहता है

माइआ माइआ के जो अधिकाई[1] विचि माइआ पचै पचीजै ॥
अगिआनु अंधेरु महा पंथु बिखड़ा अहंकारि भारि लदि लीजै ॥७॥
नानक राम रम रमु रम रम रामै ते गति कीजै ॥
सतिगुरु मिलै ता नामु दृड़ाए राम नामै रलै मिलीजै ॥८॥६॥छका १

मारू सोलहे महला ४ ॥

सचा आपि सवारण हारा ॥ अवर न सूझसि[2] बीजी[3] कारा[4] ॥
गुरमुखि सचु वसै घट अंतरि सहजे सचि समाइ हे ॥१॥
सभना सचु वसै मन माही ॥ गुर परसादी सहजि समाही ॥
गुरु गुरु करत सदा सुखु पाइआ गुर चरणी चितु लाई हे ॥२॥
सतिगुरु है गिआनु सतिगुरु है पूजा ॥ सतिगुरु सेवी अवरु न दूजा ॥
सतिगुर ते नामु रतन धनु पाइआ सतिगुर की सेवा भाई हे ॥३॥
बिनु सतिगुर जो दूजै लागे ॥ आवहि जाहि भ्रमि मरहि अभागे ॥
नानक तिनकी फिरि गति होवै जि गुरमुखि रहहि सरणाई हे ॥४॥
गुरमुखि प्रीति सदा है साची ॥ सतिगुर ते मागउ नामु अजाची[5] ॥
होहु दइआलु कृपा करि हरि जीउ रखि लेवहु गुर सरणाई हे ॥५॥
अंमृत रसु सतिगुरू चुआइआ ॥ दसवै दुआरि प्रगटु होइ आइआ ॥
तह अनहद सबद वजहि धुनि बाणी सहजे सहजि समाई हे ॥६॥
जिन कउ करतै धुरि लिखि पाई ॥ अनदिनु गुरु गुरु करत विहाई ॥
बिनु सतिगुर को सीझै[6] नाही गुर चरणी चितु लाई हे ॥७॥
जिसु भावै तिसु आपे देइ ॥ गुरमुखि नामु पदारथु[7] लेइ ॥
आपे कृपा करे नामु देवै नानक नामि समाई हे ॥८॥
गिआन रतनु मनि परगटु भइआ ॥ नामु पदारथु सहजे लइआ ॥
एह वडिआई गुर ते पाई सतिगुर कउ सद बलि जाई हे ॥९॥
प्रगटिआ सूरु[8] निसि मिटिआ अंधिआरा ॥
अगिआनु मिटिआ गुर रतनि अपारा ॥
सतिगुर गिआनु रतनु अति भारी करमि मिलै सुखु पाई हे ॥१०॥
गुरमुखि नामु प्रगटी है सोइ ॥ चहु जुगि निरमलु हछा लोइ ॥
नामे नामि रते सुखु पाइआ नामि रहिआ लिव लाई हे ॥११॥

---

१. माया से बहुत प्यार करने वाला २. सूझती है ३. दूसरी ४. कार्य, काम
५. जिस का अनुमान नहीं हो सकता ६. किसी का कार्य सिद्ध नहीं होता ७. मूल वस्तु ८. सूर्य

गुरमुखि नामु परापति होवै ॥ सहजे जागै सहजे सोवै ॥
गुरमुखि नामि समाइ समावै नानक नामु धिआई हे ॥१२॥
भगता मुखि अंमृत है बाणी ॥ गुरमुखि हरिनामु आखि वखाणी ॥
हरि हरि करत सदा मनु बिगसै हरि चरणी मनु लाई हे ॥१३॥
हम मूरख अगिआन गिआनु किछु नाही ॥
सतिगुर ते समझ पड़ी मन माही ॥
होहु दइआलु कृपा करि हरि जीउ सतिगुर की सेवा लाई हे ॥१४॥
जिनि सतिगुरु जाता तिनि एकु पछाता ॥ सरबे रवि रहिआ सुख दाता ॥
आतमु चीनि[1] परम[2] पदु पाइआ सेवा सुरति समाई हे ॥१५॥
जिन कउ आदि मिली वडिआई ॥ सतिगुरु मनि वसिआ लिव लाई ॥
आपि मिलिआ जगजीवनु दाता नानक अंकि[3] समाई हे ॥१६॥१॥

मारू महला ३॥

सतिगुर सेवनि से वडभागी ॥ अनदिनु साचि नामि लिव लागी ॥
सदा सुखदाता रविआ घट अंतरि सबदि सचै ओमाहा[4] हे ॥१॥
नदरि करे ता गुरू मिलाए ॥ हरि का नामु मंनि वसाए ॥
हरि मनि वसिआ सदा सुखदाता सबदे मनि ओमाहा हे ॥२॥
कृपा करे ता मेलि मिलाए ॥ हउमै ममता सबदि जलाए ॥
सदा मुकतु रहै इक रंगी नाही किसे नालि काहा[5] हे ॥३॥
बिनु सतिगुर सेवे घोर अंधारा ॥ बिनु सबदै कोइ न पावै पारा ॥
जो सबदि राते महा बैरागी सो सचु सबदे लाहा हे ॥४॥
दुखु सुखु करतै धुरि लिखि पाइआ ॥ दूजा भाउ आपि वरताइआ ॥
गुरमुखि होवै सु अलिपतो[6] वरतै मनमुख का किआ वेसाहा[7] हे ॥५॥
से मनमुख जो सबदु न पछाणहि ॥ गुर के भै की सार न जाणहि ॥
भै बिनु किउ निरभउ सचु पाईऐ जमु काढि लएगा साहा हे ॥६॥
अफरिओ[8] जमु मारिआ न जाई ॥ गुर कै सबदे नेड़ि न आई ॥
सबदु सुणे ता दूरहु भागै मतु मारे हरि जीउ वेपरवाहा हे ॥७॥
हरि जीउ की है सभ सिरकारा ॥ एहु जमु किआ करे विचारा ॥
हुकमी बंदा हुकमु कमावै हुकमे कढदा साहा हे ॥८॥

१. पहचान कर २. सबसे ऊँचा पद ३. सुरति रूपी स्त्री शब्द रूपी पति की गोद में समा गई ४. उमंग, चाव, उत्साह ५. झगड़ा, लड़ाई ६. निर्दोष, निर्लिप्त ७. विश्वास, भरोसा ८. जो पकड़ा न जा सके, बलवान, जबरदस्त

गुरमुखि साचै कीआ अकारा ॥ गुरमुखि पसरिआ सभु पासारा ॥
गुरमुखि होवै सो सचु बूझै सबदि सचै सुखु ताहा हे ॥९॥
गुरमुखि जाता करमि विधाता[1] ॥ जुग चारे गुर सबदि पछाता ॥
गुरमुखि मरै न जनमै गुरमुखि गुरमुखि सबदि समाहा हे ॥१०॥
गुरमुखि नामि सबदि सालाहे ॥ अगम अगोचर वेपरवाहे ॥
एक नामि जुग चारि उधारे सबदे नाम विसाहा[2] हे ॥११॥
गुरमुखि सांति सदा सुखु पाए ॥ गुरमुखि हिरदै नामु वसाए ॥
गुरमुखि होवै सो नामु बूझै काटे दुरमति फाहा हे ॥१२॥
गुरमुखि उपजै साचि समावै ॥ ना मरि जंमै न जूनी पावै ॥
गुरमुखि सदा रहहि रंगि राते अनदिनु लैदे लाहा हे ॥१३॥
गुरमुखि भगत सोहहि दरबारे ॥ सची बाणी सबदि सवारे ॥
अनदिनु गुण गावै दिनु राती सहज सेती घरि जाहा हे ॥१४॥
सतिगुरु पूरा सबदु सुणाए ॥ अनदिनु भगति करहु लिव लाए ॥
हरि गुण गावहि सद ही निरमल निरमल गुण पातिसाहा हे ॥१५॥
गुण का दाता सचा सोई ॥ गुरमुखि विरला बूझै कोई ॥
नानक जनु नामु सलाहे बिगसै[3] सो नामु बेपरवाहा हे ॥१६॥२॥११॥

मारू महला ५ ॥

सूरति देखि न भूलु गवारा ॥ मिथन[4] मोहारा[5] झूठु पसारा ॥
जग महि कोई रहणु न पाए निहचलु एकु नाराइणा ॥१॥
गुर पूरे की पउ सरणाई ॥ मोहु सोगु सभु भरमु मिटाई ॥
एको मंत्रु दृढ़ाए अउखधु[6] सचु नामु रिद गाइणा ॥२॥
जिसु नामै कउ तरसहि बहु देवा ॥ सगल भगत जाकी करदे सेवा ॥
अनाथा नाथु दीन दुख भंजनु[7] सो गुर पूरे ते पाइणा ॥३॥
होरु दुआरा कोइ न सूझै ॥ त्रिभवण[8] धावै ता किछू न बूझै ॥
सतिगुरु साहु भंडारु नाम जिसु इहु रतनु तिसै ते पाइणा ॥४॥
जाकी धूरि करे पुनीता ॥ सुरि नर देव न पावहि मीता ॥
सति पुरखु सतिगुरु परमेसरु जिसु भेटत पारि पराइणा ॥५॥
पारजातु[9] लोड़हि मन पिआरे ॥ कामधेनु सोही दरबारे ॥
तृपति संतोखु सेवा गुर पूरे नामु कमाइ रसाइणा[10] ॥६॥

१. सृष्टि का कर्ता और प्रबन्ध करने वाला २. भरोसा ३. खिलता है, हर्षित होता है ४. मिथ्या, असत्य, झूठ ५. ढेर ६. औषधि ७. दूर करने वाला ८ तीन लोक ९. कल्प वृक्ष १०. रसों का घर, ताँबे को स्वर्ण बना देने वाली वस्तु

गुर कै सबदि मरहि पंच धातू[१] ।। भै पारब्रहम होवहि निरमला तू ।।
पारसु जब भेटै गुरु पूरा ता पारसु परसि दिखाइणा ।।७।।
कई वैकुंठ नाही लवै[२] लागे ।। मुकति बपुड़ी[३] भी गिआनी तिआगे ।।
एकंकारु सतिगुर ते पाईऐ हउ बलि बलि गुर दरसाइणा ।।८।।
गुर की सेव न जाणै कोई ।। गुरु पारब्रहमु अगोचरु सोई ।।
जिसनो लाइ लए सो सेवकु जिसु वडभाग मथाइणा ।।९।।
गुर की महिमा बेद न जाणहि ।। तुछ[४] मात सुणि सुणि वखाणहि ।।
पारब्रहम अपरंपर सतिगुर जिसु सिमरत मनु सीतलाइणा[५] ।।१०।।
जा की सोइ सुणी मनु जीवै ।। रिदै वसै ता ठंढा थीवै ।।
गुरमुखहु अलाए[६] ता सोभा पाए तिसु जम कै पंथि[७] न पाइणा ।।११।।
संतन की सरणाई पड़िआ ।। जीउ प्राण धनु आगै धरिआ ।।
सेवा सुरति न जाणा काई तुम करहु दइआ किरमाइणा[८] ।।१२।।
निरगुण कउ संगि लेहु रलाए ।। करि किरपा मोहि टहलै लाए ।।
पखा फेरउ पीसउ संत आगै चरण धोइ सुखु पाइणा ।।१३।।
बहुत दुआरे भ्रमि भ्रमि आइआ ।। तुमरी कृपा ते तुम सरणाइआ ।।
सदा सदा संतह संगि राखहु एहु नाम दानु देवाइणा ।।१४।।
भए कृपाल गुसाई मेरे ।। दरसनु पाइआ सतिगुर पूरे ।।
सूख सहज सदा आनंदा नानक दास दसाइणा ।।१५।।२।।७।।

सिरी रागु महला ५ ।।

संत जनहु मिलि भाईहो सचा नामु समालि ।।
तोसा बंधहु जीअ का ऐथै ओथै नालि ।।
गुर पूरे ते पाईऐ अपणी नदरि निहालि ।।
करमि परापति तिसु होवै जिसनो होइ दइआलु ।।१।।
मेरे मन गुर जेवडु अवरु न कोइ ।।
दूजा थाउ न को सुझै गुर मेले सचु सोइ ।।१।।रहाउ।।
सगल पदारथ तिसु मिले जिनि गुरु डिठा जाइ ।।
गुर चरणी जिन मनु लगा से वडभागी माइ ।।
गुरु दाता समरथु गुरु गुरु सभ महि रहिआ समाइ ।।
गुरु परमेसरु पारब्रहमु गुरु डुबदा लए तराइ ।।२।।

१. पाँच विषय २. बराबरी नहीं करते, मुकाबले में तुच्छ हैं ३. बेचारी ४. तुच्छ मात्र, बहुत थोड़ा ५. शीतल हो जाता है ६. बोले ७. राह, रास्ता, मार्ग ८. कीट, कीड़ा

कितु मुखि गुरु सालाहीऐ करण कारण समरथु ।।
से मथे निहचल रहे जिन गुरि धारिआ हथु ।।
गुरि अंमृत नामु पीआलिआ जनम मरन का पथु ।।
गुरु परमेसरु सेविआ भै भंजनु दुख लथु ।।३।।
सतिगुरु गहिर गभीरु है सुख सागरु अघखंडु ।।
जिनि गुरु सेविआ आपणा जमदूत न लागै डंडु ।।
गुर नालि तुलि[1] न लगई खोजि डिठा ब्रहमंडु ।।
नामु निधानु सतिगुरि दीआ सुखु नानक मन महि मंडु[2] ।।४।।२०।।९०।।

रागु गउड़ी महला १ ।।

हठु करि मरै न लेखै पावै ।। वेस करै बहु भसम लगावै ।।
नामु बिसारि बहुरि पछुतावै ।।१।।
तूं मनि हरि जीउ तूं मनि सूख ।।
नामु बिसारि सहहि जम दूख ।।१।।रहाउ।।
चोआ चंदन अगर कपूरि ।। माइआ मगनु परम पदु दूरि ।।
नामि बिसारिऐ सभु कूड़ो कूरि ।।२।।
नेजे वाजे तखति सलामु ।। अधकी तृसना विआपै कामु ।।
बिनु हरि जाचे भगति न नामु ।।३।।
वादि अहंकारि नाही प्रभ मेला ।। मनु दे पावहि नामु सुहेला ।।
दूजै भाइ अगिआनु दुहेला ।।४।।
बिनु दम के सउदा नही हाट ।। बिनु बोहिथ सागर नही वाट ।।
बिनु गुर सेवे घाटे घाटि ।।५।।
तिस कउ वाहु वाहु जि वाट दिखावै ।। तिस कउ वाहु वाहु जि सबदु सुणावै ।
तिस कउ वाहु वाहु जि मेलि मिलावै ।।६।।
वाहु वाहु तिस कउ जिस का इहु जीउ ।। गुर सबदी मथि अंमृतु पीउ ।।
नाम वडाई तुधु भाणै दीउ ।।७।।
नाम बिना किउ जीवा माइ ।। अनदिनु जपतु रहउ तेरी सरणाइ ।।
नानक नामि रते पति पाइ ।।८।।१२।।

रागु तिलंग तिलंग महला ४

हरि कीआ कथा कहाणीआ गुरि मीति सुणाईआ ।।

१. समान २. सजाया

बलिहारी गुर आपणे गुर कउ बलि जाईआ ।।१।।
आइ मिलु गुरसिख आइ मिलु तू मेरे गुरू के पिआरे ।।रहाउ।।
हरि के गुण हरि भावदे से गुरू ते पाए ।।
जिन गुर का भाणा मंनिआ तिन घुमि घुमि जाए ।।२।।
जिन सतिगुर पिआरा देखिआ तिन कउ हउ वारी ।।
जिन गुर की कीती चाकरी तिन सद बलिहारी ।।३।।
हरि हरि तेरा नामु है दुख मेटणहारा ।।
गुर सेवा ते पाईऐ गुरमुखि निसतारा ।।४।।
जो हरिनामु धिआइदे ते जन परवाना ।।
तिन विटहु नानकु वारिआ सदा सदा कुरबाना ।।५।।
सा हरि तेरी उसतति है जो हरि प्रभ भावै ।।
जो गुरमुखि पिआरा सेवदे तिन हरि फलु पावै ।।६।।
जिना हरि सेती पिरहड़ी[1] तिना जीअ प्रभ नाले ।।
ओइ जपि जपि पिआरा जीवदे हरि नामु समाले ।।७।।
जिन गुरमुखि पिआरा सेविआ तिन कउ घुमि जाइआ ।।
ओइ आपि छुटे परवार सिउ सभु जगतु छडाइआ ।।८।।
गुरि पिआरै हरि सेविआ गुर धंनु गुरु धंनो ।।
गुरि हरि मारगु दसिआ गुर पुंनु वड पुंनो ।।९।।
जो गुरसिख गुर सेवदे से पुंन पराणी ।।
जनु नानकु तिन कउ वारिआ सदा सदा कुरबाणी ।।१०।।
गुरमुखि सखी सहेलीआ से आपि हरि भाईआ ।।
हरि दरगह पैनाईआ हरि आपि गलि लाईआ ।।११।।
जो गुरमुखि नामु धिआइदे तिन दरसनु दीजै ।।
हम तिन के चरण पखालदे[2] धूड़ि घोलि घोलि पीजै ।।१२।।
पान सुपारी खातीआ मुखि बीड़ीआ लाईआ ।।
हरि हरि कदे न चेतिओ जमि पकड़ि चलाईआ ।।१३।।
जिन हरि नामा हरि चेतिआ हिरदै उरिधारे ।।
तिन जमु नेड़ि न आवई गुरसिख गुर पिआरे ।।१४।।
हरि का नामु निधानु है कोई गुरमुखि जाणै ।।
नानक जिन सतिगुरु भेटिआ रंगि रलिआ माणै ।।१५।।

१. प्रीति २. धोते हैं

सतिगुर दाता आखीऐ तुसि करे पसाओ ॥
हउ गुर विटहु सद वारिआ जिनि दितड़ा नाओ ॥१६॥
सो धंनु गुरू साबासि है हरि देइ सनेहा ॥
हउ वेखि वेखि गुरू विगसिआ गुर सतिगुर देहा[1] ॥१७॥
गुर रसना अंमृतु बोलदी हरि नामि सुहावी ॥
जिन सुणि सिखा गुरु मंनिआ तिना भुख सभ जावी ॥१८॥
हरि का मारगु आखीऐ कहु कितु बिधि जाईऐ ॥
हरि हरि तेरा नामु है हरि खरचु लै जाईऐ ॥१९॥
जिन गुरमुखि हरि आराधिआ से साह वड दाणे ॥
हउ सतिगुर कउ सद वारिआ गुर बचनि समाणे ॥२०॥
तू ठाकुरु तू साहिबो तू है मेरा मीरा[2] ॥
तुधु भावै तेरी बंदगी तू गुणी गहीरा ॥२१॥
आपे हरि इक रंगु है आपे बहु रंगी ॥
जो तिसु भावै नानका साई गल चंगी ॥२२॥२॥

रामकली महला ३॥

हरि की पूजा दुलंभ है संतहु कहणा कछू न जाई ॥१॥
संतहु गुरमुखि पूरा पाई नामो पूज कराई ॥१॥रहाउ॥
हरि बिनु सभु किछु मैला संतहु किआ हउ पूज चड़ाई ॥२॥
हरि साचे भावै सा पूजा होवै भाणा मनि वसाई ॥३॥
पूजा करै सभु लोकु संतहु मनमुखि थाइ न पाई ॥४॥
सबदि मरै मनु निरमलु संतहु एह पूजा थाइ पाई ॥५॥
पवित[3] पावन से जन साचे एक सबदि लिव लाई ॥६॥
बिनु नावै होर पूज न होवी भरमि भुली लोकाई ॥७॥
गुरमुखि आपु पछाणै संतहु राम नामि लिव लाई ॥८॥
आपे निरमलु पूज कराए गुर सबदी थाइ पाई ॥९॥
पूजा करहि परु बिधि नही जाणहि दूजै भाइ मलु लाई ॥१०॥
गुरमुखि होवै सु पूजा जाणै भाणा[4] मनि वसाई ॥११॥
भाणे ते सभि सुख पावै संतहु अंते नामु सखाई ॥१२॥
अपणा आपु न पछाणहि संतहु कूड़ि करहि वडिआई ॥१३॥
पाखंडि कीनै जमु नही छोडै लै जासी पति गवाई ॥१४॥

१. देहधारी प्रत्यक्ष गुरू का दर्शन कर के मेरा मन अति प्रसन्न हुआ २. बादशाहों का बादशाह ३. पवित्र ४. हुक्म

जिन अंतरि सबदु आपु पछाणहि गति मिति तिन ही पाई ॥१५॥
एहु मनूआ सुंन समाधि लगावै[1] जोती जोति मिलाई ॥१६॥
सुणि सुणि गुरमुखि नामु वखाणहि सत संगति मेलाई ॥१७॥
गुरमुखि गावै आपु गवावै दरि साचै सोभा पाई ॥१८॥
साची बाणी सचु वखाणै[2] सचि नामि लिव लाई ॥१९॥
भै भंजनु अति पाप निखंजनु[3] मेरा प्रभु अंति सखाई ॥२०॥
सभु किछु आपे आपि वरतै नानक नामि वडिआई ॥२१॥३॥

रागु मारू.

मारू सोलहे महला ३ ॥

हुकमी सहजे[4] सृसटि उपाई ॥ करि करि वेखै अपणी वडिआई ॥
आपे करे कराए आपे हुकमे रहिआ समाई हे ॥१॥
माइआ मोहु जगतु गुबारा ॥ गुरमुखि बूझै को वीचारा ॥
आपे नदरि करे सो पाए आपे मेलि मिलाई हे ॥२॥
आपे मेले दे वडिआई ॥ गुर परसादी कीमति पाई ॥
मनमुखि बहुतु फिरै बिललादी दूजै भाइ खुआई[5] हे ॥३॥
हउमै माइआ विचे पाई ॥ मनमुख भूले पति गवाई ॥
गुरमुखि होवै सो नाइ राचै साचै रहिआ समाई हे ॥४॥
गुर ते गिआनु नामु रतनु पाइआ ॥
मनसा[6] मारि मन माहि समाइआ ॥
आपे खेल करे सभि करता आपे देइ बुझाई हे ॥५॥
सतिगुरु सेवे आपु गवाए ॥ मिलि प्रीतम सबदि सुखु पाए ॥
अंतरि पिआरु भगती राता सहजि[7] मते बणि आई हे ॥६॥
दूख निवारणु गुर ते जाता ॥ आपि मिलिआ जग जीवनु दाता ॥
जिस नो लाए सोई बूझै भउ भरमु सरीरहु जाई हे ॥७॥
आपे गुरमुखि आपे देवै ॥ सचै सबदि सतिगुरु सेवै ॥
जरा[8] जमु तिसु जोहि[9] न साकै साचै सिउ बणि आई हे ॥८॥
तृसना अगनि जलै संसारा ॥ जलि जलि खपै बहुतु विकारा ॥
मनमुखु ठउर[10] न पाए कबहू सतिगुर बूझ बुझाई हे ॥९॥

१. पारब्रह्म में लीन हो २. कहे ३. नाश करने वाला ४. स्वाभाविक ही ५. भुलाई ६. वासना, मन की लालसाएँ ७. बिना यत्न के ८. वृद्धावस्था ९. ढूँढ, खोज १०. ठौर, ठिकाना

सतिगुरु सेवनि से वडभागी ॥ साचै नामि सदा लिव लागी ॥
अंतरि नामु रविआ[1] निहकेवलु[2] तृसना सबदि बुझाई हे ॥१०॥
सचा सबदु सची है बाणी ॥ गुरमुखि विरलै किनै पछाणी ॥
सचै सबदि रते बैरागी आवणु जाणु रहाई[3] हे ॥११॥
सबदु बुझै सो मैलु चुकाए[4] ॥ निरमल नामु वसै मनि आए ॥
सतिगुरु अपणा सदही सेवहि हउमै विचहु जाई हे ॥१२॥
गुर ते बूझै ता दरु[5] सूझै ॥ नाम विहूणा[6] कथि कथि लूझै[7] ॥
सतिगुर सेवे की वडिआई तृसना भूख गवाई हे ॥१३॥
आपे आपि मिलै ता बूझै ॥ गिआन विहूणा किछू न सूझै ॥
गुर की दाति सदा मन अंतरि बाणी सबदि वजाई हे ॥१४॥
जो धुरि लिखिआ सु करम कमाइआ ॥ कोइ न मेटै धुरि फुरमाइआ ॥
सत संगति महि तिन ही वासा जिन कउ धुरि लिखि पाई हे ॥१५॥
अपणी नदरि करे सो पाए ॥ सचै सबदि ताड़ी चितु लाए ॥
नानक दासु कहै बेनंती भीखिआ नामु दरि पाई हे ॥१६॥१॥

रागु भैरउ महला ५ ॥

बिनु बाजे कैसो निरतकारी[8] ॥ बिनु कंठै कैसे गावनहारी ॥
जील[9] बिना कैसे बजै रबाब ॥ नाम बिना बिरथे सभि काज ॥१॥
नाम बिना कहहु को तरिआ ॥
बिनु सतिगुर कैसे पारि परिआ ॥१॥रहाउ॥
बिनु जिहवा कहा को बकता ॥ बिनु स्रवना कहा को सुनता ॥
बिनु नेत्रा कहा को पेखै ॥ नाम बिना नरु कही न लेखै ॥२॥
बिनु बिदिआ कहा कोई पंडित ॥ बिनु अमरै[10] कैसे राज मंडित ॥
बिनु बूझे कहा मनु ठहराना ॥ नाम बिना सभु जगु बउराना ॥३॥
बिनु बैराग कहा बैरागी ॥ बिनु हउ तिआगि कहा कोऊ तिआगी ॥
बिनु बसि[11] पंच कहा मन चूरे ॥ नाम बिना सद सद ही झूरे ॥४॥
बिनु गुर दीखिआ कैसे गिआनु ॥ बिनु पेखे कहु कैसो धिआनु ॥
बिनु भै कथनी सरब बिकार ॥ कहु नानक दर का बीचार ॥५॥६॥१९॥

---

१. बसा हुआ २. शुद्ध ३. समाप्त हो गया, मिट गया है ४. दूर करता है, ५. दरवाजा. द्वार ६. बिना ७. झगड़ता है. वाद-विवाद में पड़ता है ८. नाच ९. तन्तु १०. हुकम ११. पाँचों अर्थात् काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार को वश में किये बिना

कबीर साहिब के शब्द

(१)

अजर अमर इक नाम है सुमिरन जो आवै ॥टेक॥
बिन मुखड़ा से जप करो, नहिं जीभ डुलावो ।
उलटि सुरति ऊपर करो, नैनन दरसावो ॥१॥
जाहु हंस पच्छिम दिसा, खिरकी खुलवावो ।
तिरबेनी के घाट पर, हंसा नहवावो ॥२॥
पानी पवन की गम नहीं, वाहि लोक मंझारा ।
ताही बिच इक रूप है, वोहि ध्यान लगावो ॥३॥
जिमीं असमान उहाँ नहीं, वो अजर कहावै ।
कहै कबीर सोइ साधु जन, वा लोक मँझावै ॥४॥

(२)

अवधू बेगम देस हमारा ॥टेक॥
राजा रंक फकीर बादसा, सब से कहौं पुकारा ।
जो तुम चाहत अहौ परम पद, बसिहो देस हमारा ।
जो तुम आये झीने होइ के, तजो मनी को भारा ॥१॥
ऐसी रहनि रहो रे गोरख, सहज उतरि जाव पारा ।
सत्तनाम की हैं महताबें, साहेब के दरबारा ॥२॥
बचना चाहो कठिन काल से, गहो सब्द टकसारा ।
कहैं कबीर सुनो हो गोरख सत्तनाम है सारा ॥३॥

(३)

अवधू सो जोगी गुरु मेरा, या पद का करै निबेरा ॥टेक॥

तरवर एक मूल बिन ठाढ़ा, बिन फूले फल लागे ।
साखा पत्र नहीं कछु वा के, अष्ट कमल दल गाजे ॥१॥
चढ़ तरवर दो पंछी बैठे, एक गुरू इक चेला ।
चेला रहा सो चुन चुन खाया, गुरू निरन्तर खेला ॥२॥
बिन करताल पखावज बाजै, बिन रसना गुन गावै ।
गावनहार के रूप न रेखा, सतगुरु मिलै बतावै ॥३॥
गगन मंडल में उर्ध मुख कुइया, जहाँ अमी को वासा ।
सगुरा होय सो भर भर पीवै, निगुरा जाय पियासा ॥४॥
सुन्न सिखर पर गइया बियानी, धरती छीर जमाया ।
माखन रहा सो संतन खाया, छाछ जगत भरमाया ॥५॥
पंछी को खोज मीन को मारग, कहैं कबीर दोउ भारी ।
अपरंपार पार पुरषोत्तम, मूरत की बलिहारी ॥६॥

(४)

कर नैनों दीदार महल में प्यारा है ॥टेक॥
काम क्रोध मद लोभ बिसारो, सील संतोष छिमा सत धारो ।
मद्द माँस मिथ्या तजि डारो,
हो ज्ञान घोड़े असवार भरम से न्यारा है ॥१॥
धोती नेती बस्ती पाओ, आसन पदम जुगत से लाओ ।
कुम्भक कर रेचक करवाओ,
पहिले मूल सुधार कारज हो सारा है ॥२॥
मूल कंवल दल चतुर बखानो, कलिंग जाप लाल रंग मानो ।
देव गनेस तहं रोपा थानो, रिध सिध चंवर ढुलारा है ॥३॥
स्वाद चक्र षटदल बिस्तारो, ब्रह्म सावित्री रूप निहारो ।
उलटि नागिनी का सिर मारो, तहाँ सब्द ओंकारा है ॥४॥
नाभी अष्ट कंवल दल साजा, सेत सिंघासन बिस्नु बिराजा ।
हिरिंग जाप तासु मुख गाजा, लछमी सिव आधारा है ॥५॥
द्वादस कँवल हृदय के माहीं, जंग गौर सिव ध्यान लगाई ।
सोहं सब्द तहां धुन छाई, गन करैं जैजैकारा है ॥६॥
षोडस दल कंवल कंठ के माहीं, तेहि मध बसे अबिद्या बाई ।
हरि हर ब्रह्मा चंवर ढुराई, जहं शरिंग नाम उचारा है ॥७॥
ता पर कंज कंवल है भाई, बग भौंरा दुइ रूप लखाई ।
निज मन करत तहां ठकुराई, सो नैनन पिछवारा है ॥८॥

कंवलन भेद किया निर्वारा, यह सब रचना पिंड मंझारा ।
सतसंग कर सतगुरु सिर धारा, वह सत नाम उचारा है ॥९॥
आंख कान मुख बंद कराओ, अनहद झिंगा सब्द सुनाओ
दोनों तिल इक तार मिलाओ, तब देखो गुलजारा है ॥१०॥
चंद सूर एकै घर लाओ, सुषमन सेती ध्यान लगाओ ।
तिरबेनी के संध समाओ, भोर उतर चल पारा है ॥११॥
घंटा संख सुनो धुन दोई, सहस कंवल दल जगमग होई ।
ता मध करता निरखो सोई, बंकनाल धस पारा है ॥१२॥
डाकिनी साकिनी बहु किलकारें, जम किंकर धर्म दूत हकारें ।
सत्तनाम सुन भागें सारे, जब सतगुरु नाम उचारा है ॥१३॥
गगन मंडल बिच उर्धमुख कुइआ, गुरुमुख साधू भर भर पीया ।
निगुरे प्यास मरे बिन कीया, जा के हिये अंधियारा है ॥१४॥
त्रिकुटी महल में बिद्या सारा, घनहर गरजें बजे नगारा ।
लाल बरन सूरज उजियारा,
चतुर कंवल मंझार सब्द ओंकारा है ॥१५॥
साध सोई जिन यह गढ़ लीन्हा, नौ दरवाजे परगट चीन्हा ।
दसवाँ खोल जाय जिन दीन्हा, जहाँ कुफुल[1] रहा मारा है ॥१६॥
आगे सेत सुन्न है भाई, मानसरोवर पैठि अन्हाई ।
हंसन मिलि हंसा होइ जाई, मिलै जो अमी अहारा है ॥१७॥
किंगरी सारंग बजै सितारा, अच्छर ब्रह्म सुन्न दरबारा ।
द्वादस भानु हंस उजियारा,
खट दल कंवल मंझार सब्द ररंकारा है ॥१८॥
महा सुन्न सिंध बिषमी घाटी, बिन सतगुरु पावै नहिं बाटी ।
ब्याघर सिंघ सरप बहु काटी, तहं सहज अचिंत पसारा है ॥१९॥
अष्ट दल कंवल पारब्रह्म भाई, दाहिने द्वादस अचिंत रहाई ।
बायें दस दल सहज समाई, यों कंवलन निरवारा है ॥२०॥
पाँच ब्रह्म पाँचों अंड बीनो, पांच ब्रह्म निःअच्छर चीन्हो ।
चार मुकाम गुप्त तहं कीन्हो,
जा मध बंदीवान पुरुष दरबारा है ॥२१॥
दो पर्बत के संध निहारो, भंवर गुफा तें संत पुकारो ।
हंसा करते केल अपारो, तहां गुरन दरबारा है ॥२२॥

१. ताला

सहज अठासी दीप रचाये, हीरे पन्ने महल जड़ाये ।
मुरली बजत अखंड सदाये, तहं सोहं झनकारा है ॥२३॥
सोहं हद्द तजी जब भाई, सत्त लोक की हद पुनि आई ।
उठत सुगंध महा अधिकाई, जा को वार न पारा है ॥२४॥
षोड़स भानु हंस को रूपा, बीना सत धुन बजै अनूपा ।
हंसा करत चंवर सिर भूपा, सत्त पुरुष दर्बारा है ॥२५॥
कोटिन भानु उदय जो होई, एते ही पुनि चन्द्र लखोई ।
पुरुष रोम सम एक न होई, ऐसा पुरुष दीदारा है ॥२६॥
आगे अलख लोक है भाई, अलख पुरुष की तहं ठकुराई ।
अरबन सूर रोम सम नाहीं, ऐसा अलख निहारा है ॥२७॥
ता पर अगम महल इक साजा, अगम पुरुष ताही को राजा ।
खरबन सूर रोम इक लाजा, ऐसा अगम अपारा है ॥२८॥
ता पर अकह लोक है भाई, पुरुष अनामी तहाँ रहाई ।
जो पहुंचा जानेगा वाही, कहन सुनन तें न्यारा है ॥२९॥
काया भेद किया निर्बारा, यह सब रचना पिंड मंझारा ।
माया अवगति जाल पसारा, सो कारीगर भारा है ॥३०॥
आदि माया कीन्ही चतुराई, झूठी बाजी पिंड दिखाई ।
अवगति रचन रची अंड माहीं, ता का प्रतिबिंब डारा है ॥३१॥
सब्द बिहंगम चाल हमारी, कहैं कबीर सतगुरु दइ तारी ।
खुले कपाट सब्द झनकारी, पिंड अंड के पार सो देस हमारा है ॥३२॥

(५)

करो जतन सखी सांईं मिलन की ॥टेक॥
गुड़िया गुड़वा सूप सुपलिया, तजि दे बुधि लरिकैयां खेलन की ॥१॥
देवता पित्तर भुइयाँ भवानी, यह मारग चौरासी चलन की ॥२॥
ऊंचा महल अजब रंग बंगला, सांईं की सेज वहां लगी फूलन की ॥३॥
तन मन धन सब अर्पन कर वहं, सुरत सम्हार परु पइयाँ सजन की ॥४॥
कहैं कबीर निर्भय होय हंसा, कुँजी बताद्यो ताला खुलन की ॥५॥

(६)

करो रे मन वा दिन की तदबीर ॥टेक॥
जब जमराजा आनि पड़ेंगे, नेक धरत नहिं धीर ॥१॥
मुंगरिन मारि के प्रान निकासत, नैनन भरि आयो नीर ॥२॥

भौसागर इक अगम पंथ है, नदिया बहुत गंभीर ॥३॥
नाव न बेड़ा लोग घनेरा, खेवट है बेपीर ॥४॥
घर तिरिया अरधंगी बैठी मातु पिता सुत बीर ॥५॥
माल मुलुक की कौन चलावै, संग न जात सरीर ॥६॥
लै कै बोरत नरक कुंड में, ब्याकुल होत सरीर ॥७॥
कहत कबीर नर अब से चेतो, माफ होय तकसीर[1] ॥८॥

(७)

करम गति टारे नाहिं टरी ॥टेक॥
मुनि बसिष्ट से पंडित ज्ञानी, सोध के लगन धरी।
सीता हरन मरन दसरथ को, वन में बिपति परी ॥१॥
कहं वह फंद कहां वह पारधि, कहं वह मिरग चरी।
सीता को हरि ले गयो रावन, सोने की लंक जरी ॥२॥
नीच हाथ हरिचंद बिकाने, बलि पाताल धरी।
कोटि गाय नित पुन्न करत नृप, गिरगिट जोनि परी ॥३॥
पांडव जिन के आपु सारथी, तिन पर बिपति परी।
दुरजोधन को गर्ब घटायो, जदु कुल नास करी ॥४॥
राहु केतु औ भानु चन्द्रमा, बिधि संजोग परी।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, होनी होके रही ॥५॥

(८)

क्या मांगौं कछु थिर न रहाई, देखत नैन चल्यो जग जाई ॥१॥
इक लख पूत सवालख नाती, जा रावन घर दिया न बाती ॥२॥
लंका सा कोट समुद्र सी खाई, जा रावन की खबर न पाई ॥३॥
सोने कै महल रूपे कै छाजा, छोड़ि चले नगरी के राजा ॥४॥
कोइ करै महल कोई करै टाटी, उड़ि जाय हंस पड़ी रहै माटी ॥५॥
आवत संग न जात संगाती, कहा भये दल बांधे हाथी ॥६॥
कहैं कबीर अंत की बारी, हाथ झारि ज्यों चला जुवारी ॥७॥

(९)

गुरु से लगन कठिन है भाई।
लगन लगे बिन काज न सरिहै, जीव प्रलय होय जाई ॥टेक॥

१. अपराध

जैसे पपिहा प्यासा बुंद का, पिया पिया रटि लाई।
प्यासे प्रान तलफ[1] दिन राती, और नीर ना भाई ॥१॥
जैसे मिरगा सब्द सनेही, सब्द सुनन को जाई।
सब्द सुने औ प्रान दान दे, तनिको नाहिं डेराई ॥२॥
जैसे सती चढ़ी सत ऊपर, पिय की राह मन भाई।
पावक देख डरे वह नाहीं, हँसत बैठ सरा माई ॥३॥
दो दल सन्मुख आन जुड़े हैं, सूरा लेत लड़ाई।
टूक टूक होइ गिरे धरनि पर, खेत छोड़ि नहिं जाई ॥४॥
छोड़ो तन अपने की आसा, निर्भय ह्वै गुन गाई।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, नहिं तो जन्म नसाई ॥५॥

[१०]

तन धर सुखिया कोइ न देखा, जो देखा सो दुखिया हो।
उदय अस्त की बात कहत हैं, सब का किया बिबेका हो ॥१॥
घाटे बाढ़े सब जग दुखिया, क्या गिरही बैरागी हो।
सुकदेव अचारज दुख के डर से, गर्भ से माया त्यागी हो ॥२॥
जोगी दुखिया जंगम दुखिया, तपसी को दुख दूना हो।
आसा तृस्ना सबको व्यापै, कोई महल न सूना हो ॥३॥
सांच कहौं तो कोई न मानै, झूठ कहा नहिं जाई हो।
ब्रह्मा बिस्नु महेसुर दुखिया, जिन यह राह चलाई हो ॥४॥
अवधू दुखिया भूपति दुखिया, रंक दुखी बिपरीती हो।
कहैं कबीर सकल जग दुखिया, संत सुखी मन जीती हो ॥५॥

[११]

बिरह और प्रेम

चौपाई

दरसन दीजे नाम सनेही। तुम बिन दुख पावे मेरी देही ॥टेक॥

छंद

दुखित तुम बिन रटत निसि दिन, प्रगट दरसन दीजिये।
बिनती सुन प्रिय स्वामियां बलि जाऊं बिलंब न कीजिये ॥१॥

१. तड़पते हैं

चौपाई

अन्न न भावे नींद न आवे । बार बार मोंहि बिरह सतावे ।।२।।

छंद

बिबिधि बिधि हम भई ब्याकुल, बिन देखे जिव न रहे ।
तपत तन जिव उठत झाला, कठिन दुख अब को सहै ।।३।।

चौपाई

नैनन चलत सजल जल धारा । निसि दिन पंथ निहारौं तुम्हारा ।।४।।

छंद

गुन अवगुन अपराध छिमाकर, औगुन कछु न बिचारिये ।
पतित पावन राख परमति, अपना पन न बिसारिये ।।५।।

चौपाई

गृह आँगन मोंहि कछु न सोहाई । बज्र भई और फिरयो न जाई ।।६।।

छंद

नैन भरि भरि रहे निरखत, निमिख नेह न तोड़ाइये ।
बाँह दीजे बंदी-छोड़ा, अब के बन्द छोड़ाइये ।।७।।

चौपाई

मीन मरै जैसे बिन नीरा । ऐसे तुम बिन दुखित सरीरा ।।८।।

छंद

दास कबीर यह करत बिनती, महा पुरुष अब मानिये ।
दया कीजे दरस दीजे, अपना कर मोंहि जानिये ।।९।।

[१२]

प्रीत लगी तुम नाम की, पल बिसरै नाहीं ।
नजर करो अब मिहर की, मोंहि मिलो गुसाईं ।।१।।
बिरह सतावै मोंहि को, जिव तड़पै मेरा ।
तुम देखन की चाव है, प्रभु मिलो सवेरा ।।२।।

नैना तरसै दरस को, पल पलक न लागै ।
दर्दवंद दीदार का, निसि बासर जागै ॥३॥
जो अब के प्रीतम मिलैं, करूँ निमिष[1] न न्यारा ।
अब कबीर गुरु पाइया, मिला प्रान पियारा ॥४॥

[१३]

पी ले प्याला हो मतवाला, प्याला नाम अमी रस का रे ॥टेक॥
बालपना सब खेलि गंवाया, तरुन भया नारी बस का रे ॥१॥
बिरध भया कफ बाय ने घेरा। खाट पड़ा न जाय खिसका रे ॥२॥
नाभि कँवल बिच है कस्तूरी, जैसे मिरग फिरै बन का रे ॥३॥
बिन सतगुरु इतना दुख पाया, बैद मिला नहिं इस तन का रे ॥४॥
मातु पिता बंधू सुत तिरिया, संग नहीं कोइ जाय सका रे ॥५॥
जब लग जीवै गुरु गुन गा ले, धन जोबन है दिन दस का रे ॥६॥
चौरासी जो उबरा चाहै, छोड़ कामिनी का चसका रे ॥७॥
कहैं कबीर सुनो भाई साधो, नख सिख पूर रहा विष का रे ॥८॥

[१४]

भक्ती का मारग झीना रे ॥टेक॥
नहिं अचाह नहिं चाहना, चरनन लौलीना रे ॥१॥
साध के सतसंग में रहे निस दिन मन भीना रे ॥२॥
सब्द में सुर्त ऐसे बसे जैसे जल मीना रे ॥३॥
मान मनी को यों तजे जस तेली पीना रे ॥४॥
दया छिमा संतोष गहि रहे अति आधीना रे ॥५॥
परमारथ में देत सिर कछु विलंब न कीना रे ॥६॥
कहैं कबीर मत भक्ति का परगट कह दीना रे ॥७॥

[१५]

मानत नहिं मन मोरा साधो, मानत नहिं मन मोरा रे ॥टेक॥
बार बार मैं कहि समुझावौं, जग में जीवन थोरा रे ॥१॥
या काया कौ गर्ब न कीजै, क्या सांवर क्या गोरा रे ॥२॥
बिना भक्ति तन काम न आवै, कोटि सुगंधि चभोरा रे ॥३॥

१. पल भर, क्षण भर

या माया जनि देखि रे भूलौ, क्या हाथी क्या घोड़ा रे ।।४।।
जोरि जोरि धन बहुत बिगूचे, लाखन कोटि करोरा रे ।।५।।
दुबिधा दुरमति औ चतुराई, जनम गयौ नर बौरा रे ।।६।।
अजहूँ आनि मिलौ सत संगति, सतगुरु मान निहोरा रे ।।७।।
लेत उठाइ परत भुइं गिरि गिरि, ज्यों बालक बिन कोराँ[1] रे ।।८।।
कहैं कबीर चरन चित राखो, ज्यों सूई बिच डोरा रे ।।९।।

[१६]

महरम होय सो जानै साधो, ऐसा देस हमारा ।।टेक।।
बेद कतेब पार नहिं पावत, कहन सुनन से न्यारा ।
जाति बरन कुल किरिया नाहीं, संध्या नेम अचारा ।।१।।
बिन जल बूंद परत जहं भारी, नहिं मीठा नहिं खारा ।
सुन्न महल में नौबत बाजै, किंगरी बीन सितारा ।।२।।
बिन बादर जहं बिजुरी चमकै, बिन सूरज उजियारा ।
बिना सीप जहं मोती उपजै, बिन सुर सब्द उचारा ।।३।।
जोति लजाय ब्रह्म जहं दरसै, आगे अगम अपारा ।
कहैं कबीर वहं रहनि हमारी, बूझे गुरुमुख प्यारा ।।४।।

[१७]

मन फूला फूला फिरै जगत में कैसा नाता रे ।।टेक।।
माता कहे यह पुत्र हमारा, बहिन कहे बिर मेरा ।
भाई कहै यह भुजा हमारी, नारि कहै नर मेरा ।।१।।
पेट पकरि के माता रोवै, बांहि पकरि के भाई ।
लपटि झपटि के तिरिया रोवै, हंस अकेला जाई ।।२।।
जब लग जीवै माता रोवै, बहिन रोवै दस मासा ।
तेरह दिन तक तिरिया रोवै, फेर करै घर बासा ।।३।।
चार गजी चरगजी मंगाया, चढ़ा काठ की घोड़ी ।
चारों कोने आंग लगाया, फूंक दियो जस होरी ।।४।।
हाड़ जरै जस लाकड़ी को, केस जरै जस घासा ।
सोना ऐसी काया जरि गई, कोई न आयो पासा ।।५।।
घर की तिरिया ढूंढन लागी, ढूंढि फिरी चहुं देसा ।
कहैं कबीर सुनो भाई साधो, छाड़ो जग की आसा ।।६।।

१. गोद

[१८]

मन लागो मेरो यार फकीरी में ।।टेक।।
जो सुख पावो नाम भजन में, सो सुख नाँहि अमीरी में ।।१।।
भला बुरा सब को सुन लीजै, कर गुजरान गरीबी में ।।२।।
प्रेम नगर में रहिन हमारी, भलि बनि आई सबूरी में ।।३।।
हाथ में कुँडी बगल में सोटा, चारो दिसा जगीरी में ।।४।।
आखिर यह तन खाक मिलैगा, कहा फिरत मगरूरी में ।।५।।
कहै कबीर सुनो भाई साधो, साहेब मिलै सबूरी में ।।६।।

[१९]

वा दिन की कछु सुध कर मन मां ।।टेक।।
जा दिन लैचलु लैचलु होई, ता दिन संग चलै नहिं कोई ।
तात मात सुत नारी रोई, माटी के संग दिये समोई ।
सो माटी काटेगी तन मां ।।१।।
उलफत नेहा[1] कुलफत[2] नारी, किस की बीबी किसकी बांदी ।
किसका सोना किसकी चाँदी, जा दिन जम ले चलिहै बांधी ।
डेरा जाय परै वहि बन मां ।।२।।
टांडा तुम ने लादा भारी, बनिज किया पूरा ब्यौपारी ।
जूवा खेला पूंजी हारी, अब चलने की भई तयारी ।
हित चित मत तुम लाओ धन मां ।।३।।
जो कोइ गुरु से नेह लगाई, बहुत भांति सोई सुख पाई ।
माटी में काया मिलि जाई, कहैं कबीर आगे गोहराई ।
सांच नाम साहेब को संग मां ।।४।।

[२०]

साधो सब्द साधना कीजै
जेंहि सब्द तें प्रगट भये सब, सोई सब्द गहि लीजै ।।टेक।।
सब्दहि गुरू सब्द सुनि सिष भे, सब्द सो बिरला बूझै ।
सोई सिष्य सोइ गुरू महातम, जेंहि अंतर गति सूझै ।।१।।
सब्दै बेद पुरान कहत हैं, सब्दै सब ठहरावै ।
सब्दै सर मुनि संत कहत हैं, सब्द भेद नहिं पावै ।।२।।

१. प्रेम २. दुःख, व्यथा

सब्दै सुनि सुनि भेष धरत हैं, सब्द कहै अनुरागी ।
षट दरसन सब सब्द कहत हैं, सब्द कहै बैरागी ॥३॥
सब्दै माया जग उतपानी, सब्दै केरि पसारा ।
कहैं कबीर जहं सब्द होत है, तवन भेद है न्यारा ॥४॥

[२१]

सांईं बिन दरद करेजे होय ॥टेक॥
दिन नहिं चैन रात नहिं निंदिया, कासे कहूं दुख रोय ॥१॥
आधी रतियां पिछले पहरवा, सांईं बिन तरस तरस रही सोय ॥२॥
पांचो मारि पचीसो बस करि, इन में चहै कोइ होय ॥३॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो, सतगुरु मिले सुख होय ॥४॥

[२२]

सतगुरु हैं रंगरेज, चुनर मोरी रंगि डारी ॥टेक॥
स्याही रंग छुड़ाइ के रे, दियो मजीठा रंग ।
धोये से छूटै नहीं रे, दिन दिन होत सुरंग ॥१॥
भाव के कुंड, नेह के जल में, प्रेम रंग दइ बोर ।
ऽसकी चास लगाई के रे, खूब रंगी झकझोर ॥२॥
सतगुरु ने चुनरी रंगी रे, सतगुरु चतुर सुजान ।
सब कुछ उन पर वार दूं रे, तन मन धन औ प्रान ॥३॥
कहै कबीर रंगरेज गुरु रे, मुझ पर हुए दयाल ।
सीतल चुनरी ओढ़ि के रे, भइ हौं मगन निहाल ॥४॥

[२३]

सुनता नहीं धुन की खबर अनहद का बाजा बाजता ।
रसमंद मंदिर बाजता बाहर सुने तो क्या हुआ ॥१॥
गांजा अफ़ीम और पोसता भांग और सराबें पीवता ।
इक प्रेम रस चाखा नहीं अमली हुआ तो क्या हुआ ॥२॥
कासी गया और द्वारिका तीरथ सकल भरमत फिरै ।
गाँठी न खोली कपट की तीरथ गया तो क्या हुआ ॥३॥
पोथी किताबें बाँचता औरों को नित समुझावता ।
त्रिकुटी महल खोजै नहीं बक बक मरा तो क्या हुआ ॥४॥

काजी किताबैं खोजता करता नसीहत और को।
महरम नहीं उस हाल से काज़ी हुआ तो क्या हुआ ॥५॥
सतरंज चौपड़ गंजिफा इक नर्द है बदरंग की।
बाजी न लाई प्रेम की खेला जुआ तो क्या हुआ ॥६॥
जोगी दिगम्बर सेवड़ा कपड़ा रंगे रंग लाल से।
वाकिफ़ नहीं उस रंग से कपड़ा रंगे से क्या हुआ ॥७॥
मंदिर झरोखे रावटी गुल चमन में रहते सदा।
कहते कबीरा हैं सही घट घट में साहेब रम रहा ॥८॥

[२४]

हमन हैं इश्क मस्ताना, हमन को होशियारी क्या।
रहें आजाद या जग से, हमन दुनिया से यारी क्या ॥१॥
जो बिछुड़े हैं पियारे से, भटकते दर बदर फिरते।
हमारा यार है हम में, हमन को इंतिज़ारी क्या ॥२॥
खलक सब नाम अपने को, बहुत कर सिर पटकता है।
हमन गुर नाम सांचा है, हमन दुनिया से यारी क्या ॥३॥
न पल बिछुड़ें पिया हम से, न हम बिछुड़ें पियारे से।
उन्हीं से नेह लागी है, हमन को बेक़रारी क्या ॥४॥
कबीरा इश्क़ का माता, दुई को दूर कर दिल से।
जो चलना राह नाजुक है, हमन सिर बोझ भारी क्या ॥५॥

काम का अंग

कामी का गुरु कामिनी, लोभी का गुरु दाम।
कबीर का गुरु संत है, संतन का गुरु नाम ॥१॥
सहकामी दीपक दसा, सोखै तेल निवास।
कबीर हीरा संत जन, सहजै सदा प्रकास ॥२॥
कामी कुत्ता तीस दिन, अंतर होय उदास।
कामी नर कुत्ता सदा, छः ऋतु बारह मास ॥३॥
कामी क्रोधी लालची, इन से भक्ति न होय।
भक्ति करै कोइ सूरमा, जाति बरन कुल खोय ॥४॥
भक्ति बिगारी कामियाँ, इन्द्री केरे स्वाद।
हीरा खोया हाथ से, जन्म गंवाया बाद ॥५॥

कामी लज्जा न करै, मन माहीं अहलाद ।
नींद न मांगै साथरा[1], भूख न मांगै स्वाद ।।६।।
कामी कबहुं न गुरु भजै, मिटै न संसय सूल ।
और गुनन सब बखिसहो, कामी डार न मूल ।।७।।
काम क्रोध सूतक सदा, सूतक लोभ समाय ।
सील सरोवर न्हाइये, तब यह सूतक जाय ।।८।।
जहाँ काम तहं नाम नहिं, जहाँ नाम नहिं काम ।
दोनों कबहूँ न मिलैं, रवि रजनी इक ठाम ।।९।।
नारी पुरुष सबही सुनो, यह सतगुरु की साखि ।
विष फल फले अनेक हैं, मत कोइ देखो चाखि ।।१०।।
जिन खाया सोई मुआ, गन गँधर्ब बड़ भूप ।
सतगुरु कहैं कबीर से, जग में जुगति अनूप ।।११।।
कामी तो निर्भय भया, करै न काहू संक ।
इंद्री केरे बस परा, भुगतै नरक निसंक ।।१२।।
कबीर कामी पुरुष का, संसय कबहु न जाय ।
साहिब से अलगा रहै, वा के हिरदे लाय[2] ।।१३।।
कामी अमी न भावई, विष को लेवै सोधि ।
कुबुद्धि न भाजै जीव की, भावै ज्यों परमोधि ।।१४।।
कहता हूं कहि जात हूं, समझै नहीं गंवार ।
बैरागी गिरही कहा, कामी वार न पार ।।१५।।
कामी कर्म की केंचली, पहिरि हुआ नर नाग ।
सिर फोरे सूझे नहीं, कोइ पूरबला भाग ।।१६।।
काम कहर असवार है, सब को मारै धाय ।
कोइक हरिजन ऊबरा, जा के नाम सहाय ।।१७।।
केता बहता बहि गया, केता बहि बहि जाय ।
ऐसा भेद बिचारि कै, तू मति गोता खाय ।।१८।।
काम क्रोध मद लोभ की, जब लगि घट में खान ।
कहा मूरख कहा पंडिता, दोनों एक समान ।।१९।।
काम काम सब कोइ कहै, काम न चीन्है कोय ।
जेती मन की कलपना, काम कहावै सोय ।।२०।।

१. बिछौना २. आग

कनक और कामिनी का अंग

चलो चलो सब कोइ कहै, पहुंचै बिरला कोय ।
एक कनक अरु कामिनी, दुरगम घाटी दोय ॥१॥
नारी की झाँई परत, अंधा होत भुजंग ।
कबीर तिन की कौन गति, (जो) नित नारी के संग ॥२॥
कामिनी काली नागिनी, तीनों लोक मँझारि ।
नाम सनेही ऊबरैं, बिखई खाये झारि ॥३॥
कामिनी सुन्दर सर्पिनी, जो छेड़ै तेहि खाय ।
जो गुरु चरनन राचिया, तिन के निकट न जाय ॥४॥
इक नारी इक नागनी, अपना जाया खाय ।
कबहू सरपट नीकसै, उपजै नाग बलाय ॥५॥
नैनों काजर पाइकै, गाढ़े बांधे केस ।
हाथों मिहंदी लाइकै, बाघनि खाया देस ॥६॥
पर नारी के राचने, सीधा नरकै जाय ।
तिन को जम छाडै नहीं, कोटिन करै उपाय ॥७॥
पर नारी पैनी छुरी, मत कोइ लावो अंग ।
रावन के दस सिर गये, पर नारी के संग ॥८॥
पर नारी पैनी छुरी, बिरला बाचै कोय ।
ना वहि पेट संचारिये, (जो) सरब सोन की होय ॥९॥
पर नारी का राचना, ज्यों लहसुन की घ्रान[1] ।
कोने बैठि के खाइये, परगट होय निदान ॥१०॥
पर नारी के राचने, औगुन है गुन नाहिं ।
खार समुन्द्र माछरी, केती बहि बहि जाहिं ॥११॥
पर नारी पर सुन्दरी, जैसे सूली साल ।
नित कलेस भुगतै सही, तहू न छोड़ै खाल ॥१२॥
दीपक सुन्दर देखि कै, जरि जरि मरै पतंग ।
बढ़ी लहर जो बिखय की, जरत न मोड़ै अंग ॥१३॥
नारि पराई आपनी, भोगै नरकै जाय ।
आग आग सब एक सी, हाथ दिये जरि जाय ॥१४॥
जहर पराया आपना, खाये से मरि जाय ।
अपनी रच्छा न करै, कह कबीर समझाय ॥१५॥

१. दुर्गंध

कूप पराया आपना, गिरै बूड़ि जो जाय ।
ऐसा भेद बिचारि कै, तू मत गोता खाय ॥१६॥
छुरी पराई आपनी, मारे दर्द जो होय ।
बहु बिधी कहूं पुकार कै, कर छूवो मत कोय ॥१७॥
नारी निरखि न देखिये, निरखि न कीजै दौर ।
देखे ही ते बिख चढ़ै, मन आवै कछु और ॥१८॥
जो कबहूं कै देखिये, बीर बहिन के भाय ।
आठ पहर अलगा रहे, ताको काल न खाय ॥१९॥
सर्ब सोने की सुन्दरी, आवै बास सुबास ।
जो जननी होय आपनी, तऊ न बैठे पास ॥२०॥
नारि नसावै तीन गुन, जो नर पासे होय ।
भगति मुक्ति निज ध्यान में, पैठि न सकै कोय ॥२१॥
गाय रोय हंस खेलि के, हरत सबन के प्रान ।
कह कबीर या घात को, समझैं संत सुजान ॥२२॥
नारी नदी अथाह जल, बूड़ि मुवा संसार ।
ऐसा साधू ना मिला, जा संग उतरूं पार ॥२३॥
गाय भैंस घोड़ी गधी, नारि नाम है तास ।
जा मंदिर में यह बसैं, तहां न कीजै बास ॥२४॥
नारि रचंते पुरुख हैं, पुरुख रचंति नारि ।
पुरुख पुरुख तें राचते, ते बिरले संसार ॥२५॥
नारि कहौं कि नाहरी, नख सिख से यह खाय ।
जल बूड़ा तो ऊबरै, भग बूड़ा बहि जाय ॥२६॥
भग भोगे भग ऊपजै, भग तैं बचै न कोय ।
कह कबीर भग ते बचै, भगत कहावै सोय ॥२७॥
सेवक अपना करि लई, आंज्ञा मेटै नाहिं ।
भग मंतर दै गुरु भई, सिख हो सबै कमाहिं ॥२८॥
कबीर नारि की प्रीति से, केते गये गड़ंत ।
केते औरौं जाहिंगे, नरक हसंत हसंत ॥२९॥
फाटे कानों बाघिनी, तीन लोक को खाय ।
जीवत खाय कलेजरा, मुए नरक लै जाय ॥३०॥
नारी नाहीं नाहरी, करै नैन की चोट ।
कोइ कोइ साधू ऊबरे, लै सतगुरु की ओट ॥३१॥

नारी नाही जम अहै, तू मत राचै जाय।
मंजारी[1] ज्यों बोलि कै, काढि करेजा खाय ।।३२।।
नारी नदिया सारिखी, बहै अपरबल पूर।
साहिब से न्यारा रहै, अंत परै मुख धूर ।।३३।।
एक कनक अरु कामिनी, ये लंबी तरवारि।
चाले थे गुरु मिलन को, बीचहिं लीना मारि ।।३४।।
एक कनक अरु कामिनी, दोऊ अगिन की झाल।
देखतही तें परज्वलै, परसि करै पैमाल ।।३५।।
एक कनक अरु कामिनी, बिख फल लिया उपाय।
देखत ही तें बिख चढ़ै, चाखत ही मरि जाय ।।३६।।
एक कनक अरु कामिनि, तजिये भजिये दूर।
गुरु विच पारै अंतरा, जम देसी मुख धूर ।।३७।।
रज बीरज की कोठरी, ता पर साज्यो रूप।
एक नाम बिन बूड़सी, कनक कामिनी कूप ।।३८।।
जहां जराई सुन्दरी, तू जनि जाय कबीर।
उड़ि के भस्म जो लागसी, सूना होय सरीर ।।३९।।
नारी तौ हम भी करी, जानि नाहिं बिचार।
जब जाना तब परिहरी, नारी बड़ी बिकार ।।४०।।
छोटी मोटी कामिनी, सबही बिख की बेल।
बैरी मारै दांव दै, यह मारै हंसि खेल ।।४१।।
नागिन के तो दोय फन, नारी के फन बीस।
जा का डसा न फिरि जिये, मरिहै बिसवा बीस ।।४२।।
नारी नदिया सारिखी, और जो प्रगटे काल।
सब कालन तें बाचिहै, नारी जम का जाल ।।४३।।
दीपक झोला पवन का, नर का झोला नारि।
साधू झोला सबद का, बोलै नाहि बिचारि ।।४४।।
नारि पुरुख की इसतरी, पुरुख नारी का पूत।
याही ज्ञान बिचारि कै, छाड़ि चला अबधूत ।।४५।।
अबिनासी बिच धार तिन, कुल कंचन अरु नार।
जो कोइ इन तें बचि चलै, सोई उतरै पार ।।४६।।

१. बिल्ली

नारि से नजरि न जोरिये, अंसहिं खिस ह्वै जाय ।
जा के चित नारी बसै, चारि अंस लै जाय ॥४७॥

॥ सोरठा ॥

नारी सेती नेह, बुध बिबेक सबकी हरै ।
कहा गंवावै देह, कारज कोई न सरै ॥४८॥

गुरु देव का अंग

गुरु को कीजै दंडवत, कोटि कोटि परनाम ।
कीट न जानै भृङ्ग को, वह कर ले आप समान ॥१॥
जगत जनायो जेहि सकल, सो गुरु प्रगटे आय ।
जिन गुरु आंखि न देखिया, सो गुरु दिया लखाय ॥२॥
सतगुरु सम को है सगा, साधू सम को दात ।
हरि समान को हितू है हरिजन सम को जात ॥३॥
सतगुरु की महिमा अनंत, अनंत किया उपकार ।
लोचन अनंत उघारिया, अनंत दिखावनहार ॥४॥
जेहि खोजत ब्रह्मा थके, सुर नर मुनि अरु देव ।
कहै कबीर सुन साधवा, कर सतगुरु की सेव ॥५॥
कबीर गुरु गुरुआ मिला, रल गया आटे लोन ।
जाति पांति कुल मिटि गया, नाम धरैगा कौन ॥६॥
ज्ञान प्रकासी गुरु मिला, सो जन बिसरि न जाय ।
जब साहिब किरपा करी, तब गुरु मिलिया आय ॥७॥
गुरु साहिब करि जानिये, रहिये सबद समाय ।
मिलै तो दंडवत बंदगी, पल पल ध्यान लगाय ॥८॥
गुरु को सिर पर राखिये, चलिये आज्ञा माहिं ।
कहै कबीर ता दास को, तीन लोक डर नाहिं ॥९॥
गुरु गोबिंद दोऊ खड़े, का के लागौं पाँय ।
बलिहारी गुरु आपने, जिन गोबिंद दियो बताय ॥१०॥
लाख कोस जो गुरु बसैं, दीजै सुरत पठाय ।
सबद तुरी असवार ह्वै, पल पल आवै जाय ॥११॥
जो गुरु बसैं बनारसी सिष्य समुन्दर तीर ।
एक पलक बिसरै नहीं, जो गुन होय सरीर ॥१२॥

सब धरती कागद करूं, लेखनि सब बनराय।
सात समुन्द की मसि करूं, गुरु गुन लिखा न जाय ॥१३॥
बलिहारी गुरु आपनै, घड़ि घड़ि सौ सौ बार।
मानुष से देवता किया, करत न लागी बार ॥१४॥
बूड़ा था पर ऊबरा, गुरु की लहरि चमक्क।
बेड़ा देखा झाँझरा, ऊतरि भया फरक्क ॥१५॥
पहिले दाता सिष भया, जिन तन मन अरपा सीस।
पाछे दाता गुरु भये, जिन नाम दिया बकसीस ॥१६॥
सतनाम के पटतरे, देवे को कछु नाहिं।
क्या लै गुरु संतोषिये, हवस रही मन माहिं ॥१७॥
मन दीया तिन सब दिया, मन की लार सरीर।
अब देवे को कछु नहीं, यों कहे दास कबीर ॥१८॥
तन मन दिया तो भल किया, सिर का जासी भार।
कबहूं कहै कि मैं दिया, घनी सहैगा मार ॥१९॥
तन मन ता को दीजिये, जा के विषया नाहिं।
आपा सबही डारि कै, राखै साहिब माहिं ॥२०॥
तन मन दिया तो क्या हुआ, निज मन दिया न जाय।
कहै कबीर ता दास से, कैसे मन पतियाय ॥२१॥
तन मन दीया आपना, निज मन ता के संग।
कहै कबीर निरभय भया, सुन सतगुरु परसंग ॥२२॥
निज मन तो नीचा किया, चरन कंवल की ठौर।
कहै कबीर गुरुदेव बिन, नजर न आवै और ॥२३॥
गुरु सिकलीगर कीजिये, मनहिं मस्कला देइ।
मन का मैल छुड़ाइ के, चित दरपन करि लेइ ॥२४॥
सिष खांडा गुरु मस्कला, चढ़ै नाम खरसान।
सबद सहै सनमुख रहै, तो निपजै शिश सुजान ॥२५॥
गुरु धोबी सिष कापड़ा, साबुन सिरजनहार।
सुरति सिला पर धोइये, निकसै जोति अपार ॥२६॥
गुरु कुम्हार सिष कुंभ है, गढ़ गढ़ काढ़ै खोट।
अंतर हाथ सहार दै, बाहर बाहै चोट ॥२७॥
सतगुरु महल बनाइया, प्रेम गिलावा दीन्ह।
साहिब दरसन कारने, सबद झरोखा कीन्ह ॥२८॥

गुरु साहिब तो एक हैं, दूजा सब आकार ।
आपा मेटै गुरु भजे, तब पावै करतार ॥२९॥
ज्ञान समागम प्रेम सुख, दया भक्ति बिस्वास ।
गुरु सेवा तें पाइये, सतगुरु चरन निवास ॥३०॥
गुरु मानुष करि जानते, ते नर कहिये अंध ।
महादुखी संसार में, आगे जम के बंध ॥३१॥
गुरु मानुष करि जानते, चरनामृत को पानि ।
ते नर नरकै जाइँगे, जन्म जन्म ह्वै स्वान ॥३२॥
कबीर ते नर अंध हैं, गुरु को कहते और ।
हरि रूठे गुरु ठौर है, गुरु रूठे नहिं ठौर ॥३३॥
गुरु हैं बड़ गोबिंद तें, मन में देखु बिचार ।
हरि सुमिरै सो वार है, गुरु सुमिरै सो पार ॥३४॥
गुरु सीढ़ी तें ऊतरै, सबद बिहूना होय ।
ता को काल घसीटि है, राखि सकै नहिं कोय ॥३५॥
अहं अगिन निसि दिन जरै, गुरु से चाहै मान ।
ता को जम न्योता दियो, होउ हमार मिहमान ॥३६॥
गुरु से भेद जो लीजिए, सीस दीजिये दान ।
बहुतक भोंदू बहि गये, राखि जीव अभिमान ॥३७॥
गुरु समान दाता नहीं, जाचक सिष्य समान ।
तीन लोक की सम्पदा, सो गुरु दीन्हा दान ॥३८॥
जम गरजे बल बाघ के, कहै कबीर पुकार ।
गुरु किरपा ना होत जो, तौ जम खाता फार ॥३९॥
गुरु पारस गुरु परस है, चंदन बास सुबास ।
सतगुरु पारस जीव को, दीन्हा मुक्ति निवास ॥४०॥
अबरन बरन अमूर्त जो, कहो ताहि किन पेख ।
गुरु दया तें पावई, सुरत निरत करि देख ॥४१॥
पंडित पढ़ि गुनि पचि मुए, गुरु बिन मिलै न ज्ञान ।
ज्ञान बिना नहिं मुक्ति है, सत सबद परमान ॥४२॥
मूल ध्यान गुरु रूप है, मूल पूजा गुरु पांव ।
मूल नाम गुरु बचन है, मूल सत्य सत भाव ॥४३॥
कहै कबीर ताज भरम का, नन्हा ह्वै के पाव ।
तजि अहं गुरु चरन गहु, जम से बाचै जाव ॥४४॥

तीन लोक नौ खंड में, गुरु तें बड़ा न कोइ ।
करता करै न करि सकै, गुरु करै सो होइ ॥४५॥
कबिरा हरि के रूठते, गुरु के सरने जाइ।
कहै कबीर गुरु रूठते, हरि नहिं होत सहाइ ॥४६॥
गुरु की आज्ञा आवई, गुरु की आज्ञा जाय ।
कहै कबीर सो संत है, आवा गमन नसाय ॥४७॥
थापन पाई थिर भया, सतगुरु दीन्ही धीर ।
कबीर हीरा बनजिया, मानसरोवर तीर ॥४८॥
कबीर हीरा बनजिया, हिरदे प्रगटी खान ।
सत पुरुष किरपा करी, सतगुरु मिले सुजान ॥४९॥
निसचै निधि मिलाय तत, सतगुरु साहस धीर ।
निपजी में साझी घना, बांटनहार कबीर ॥५०॥
कबीर बादल प्रेम को, हम पर बरस्यो आय ।
अंतर भींजी आत्मा, हरो भयो बनराय ॥५१॥
सतगुरु के सदके किया, दिल अपने को साच ।
कलजुग हम से लरि परा, मुहकम मेरा बांच ॥५२॥
साचे गुरु की पच्छ में, मन को दे ठहराय।
चंचल तें निहचल भया, नहिं आवै नहिं जाय ॥५३॥
भली भई जो गुरु मिले, नातर होती हान ।
दीपक जोति पतंग ज्यों, परता आय निदान ॥५४॥
भली भई जो गुरु मिले, जा तें पाया ज्ञान ।
घटही माँहि चबूतरा, घटहि माँहि दिवान ॥५५॥
गुरु मिला तब जानिये, मिटै मोह तन ताप ।
हरख सोक व्यापै नहीं, तब गुरु आपै आप ॥५६॥
गुरु तुम्हारा कहाँ है, चेला कहाँ रहाय ।
क्यों करिके मिलना भया, क्यों बिछुड़े आवे जाय ॥५७॥
गुरु हमारा गगन में, चेला है चित माँहि ।
सुरत सबद मेला भया, बिछुड़त कबहूं नाहिं ॥५८॥
बस्तु कहीं ढूंढै कहीं, केहि बिधि आवै हाथ ।
कहै कबीर तब पाइये, जब भेदी लीजे साथ ॥५९॥
भेदी लीन्हा साथ कर, दीन्ही बस्तु लखाय ।
कोटि जनम का पंथ था, पल में पहुंचा जाय ॥६०॥

जल परमानै माछरी, कुल परभावै बुद्धि ।
जा को जैसा गुरु मिलै, ता को तैसी सुद्धि ।।६१।।
यह तन विष की बेलरी, गुरु अमृत की खान ।
सीस दिये जो गुरु मिलें, तो भी सस्ता जान ।।६२।।
चेतन चौकी बैठ करि, सतगुरु दीन्ही धीर ।
निर्भय ह्वै निसंक भज, केवल नाम कबीर ।।६३।।
बहे बहाये जात थे, लोक बेद के साथ ।
पैंडे में सतगुरु मिले, दीपक दीन्हा हाथ ।।६४।।
दीपक दीन्हा तेल भरि, बाती दई अघट्ट ।
पूरा किया बिसाहना, बहुरि न आवै हट्ट ।।६५।।
चौपड़ माड़ी चौहटे, सारी किया सरीर ।
सतगुरु दाँव बताइया, खेलै दास कबीर ।।६६।।
ऐसा कोई न मिला, सत्तनाम का मीत ।
तन मन सौंपे मिरग ज्यों, सुनै बधिक का गीत ।।६७।।
ऐसे तो सतगुरु मिलें, जिनसे रहिये लाग ।
सब ही जग सीतल भया, जब मिटी आपनी आग ।।६८।।
सतगुरु हमसे रीझि कै, एक कहा परसंग ।
बरसा बादल प्रेम का, भीजि गया सब अंग ।।६९।।
सतगुरु के उपदेस का, सुनियो एक बिचार ।
जो सतगुरु मिलता नहीं, जाता जम के द्वार ।।७०।।
जम द्वारे पर दूत सब, करते खींचा तान ।
तिन तें कबहुं न छूटता, फिरता चारों खानि ।।७१।।
चार खानि में भरमता, कबहुं न लहता पार ।
सो तो फेरा मिटि गया, सतगुरु के उपकार ।।७२।।
जरा मीच ब्यापै नहीं, मुवा न सुनिये कोय ।
चलु कबीर वा देस में, जहं बैदा सतगुरु होय ।।७३।।
काल के माथे पाँव दे, सतगुरु के उपदेस ।
साहिब अंक पसारिया, लै चला अपने देश ।।७४।।
सतगुरु साचा सूरमा, सबद जो बाहा एक ।
लागत ही भय मिटि गया, पड़ा कलेजे छेक ।।७५।।
सतगुरु साचा सूरमा, नख सिख मारा पूर ।
बाहर घाव न दीसई, भीतर चकनाचूर ।।७६।।

सतगुरु सबद कमान करि, बाहन लागा तीर।
एक जो बाहा प्रेम से, भीतर बिंधा सरीर ॥७७॥
सतगुरु बाहा बान भरि, धर कर सूधी मूठ।
अंग उधारे लागिया, गया धुवाँ सा फूट ॥७८॥
सतगुरु मेरा सूरमा, बेधा सकल सरीर।
बान धुवाँ सा फूटिआ, क्यों जीवे दास कबीर ॥७९॥
सतगुरु मारा बान भरि, निरखि निरखि निज ठौर।
नाम अकेला रहि गया, चित न आवै और ॥८०॥
कर कमान कर साधि के, खैंचि जो मारा माँहि।
भीतर बिधै सो मरि रहै, जिवै पै जीवै नाहिं ॥८१॥
जबही मारा खैंचि के, तब मैं मूआ जानि।
लगी चोट जो सबद की, गई कलेजे छानि ॥८२॥
सतगुरु मारा बान भरि, डोला नाहिं सरीर।
कहु चुम्बक क्या करि सकै, सुख लागे वोहि तीर ॥८३॥
सतगुरु मारा तान कर, सबद सुरंगी बान।
मेरा मारा फिर जिये, तो हाथ न गहूं कमान ॥८४॥
ज्ञान कमान औ लव गुना, तन तरकस मन तीर।
भलका वहै तत सार का, मारा हृदफ कबीर ॥८५॥
कड़ी कमान कबीर की, धरी रहै चौगान।
केते जोधा पचि गये, खींचै संत सुजान ॥८६॥
लागी गांसी सुख भया, मरै न जीवै कोय।
कहै कबीर सो अमर भे, जीवत मिरतक होय ॥८७॥
हंसे न बोलै उनमुनी, चंचल मेला मार।
कबीर अंतर बेधिया, सतगुरु का हथियार ॥८८॥
गूंगा हूआ बावरा, बहिरा हूआ कान।
पांयन से पंगुला भया, सतगुरु मारा बान ॥८९॥
सतगुरु मारा बान भरि, टूटि गया सब जेब।
कहुँ आपा कहुँ आपदा, तसबी कहुँ कितेब ॥९०॥
सतगुरु मारा प्रेम से, रही कटारी टूट।
वैसी अनी न सालही, जैसी सालै मूठ ॥९१॥
सतगुरु मारा बान भरि, निरखि निरखि निज ठौर।
अलख नाम में रमि रहा, चित न आवै और ॥९२॥

मान बड़ाई ऊरमी, ये जग का व्यवहार ।
दास गरीबी बंदगी, सतगुरु का उपकार ॥९३॥
दिल ही में दीदार है, बाद बहै संसार ।
सतगुरु सबद मस्कला, मोहिं दिखावनहार ॥९४॥
दीसे है सो बिनसिहै, नाम धरे सो जाय ।
कबीर सोई तत्त गहु, जो सतगुरु दियो बताय ॥९५॥
कुदरत पाई खबर से, सतगुरु दियो बताय ।
भंवरा बिलम्यो कमल से, अब कैसे उड़ि जाय ॥९६॥
सत्त नाम छोड़ूँ नहीं, सतगुरु सीख दिया ।
अबिनासी को परसि के, आतम अमर भया ॥९७॥
सतगुरु तो ऐसा मिला, ताते लोह लुहार ।
कसनी दे कंचन किया, ताय लिया तत्त सार ॥९८॥
सतगुरु मिलि निरभय भया, रही न दूजी आस ।
जाय समाना सबद में, सत्तनाम बिस्वास ॥९९॥
कबीर गुरु ने अगम कही, भेद दिया अर्थाय ।
सुरत कँवल के अंतरे, निराधार पद पाय ॥१००॥
कुमति कींच चेला भरा, गुरु ज्ञान जल होय ।
जनम जनम का मोरचा, पल में डारै धोय ॥१०१॥
घर में घर दिखलाय दे, सो गुरु संत सुजान ।
पंच सबद धुनकार ध्रुन, बाजै गगन निसान ॥१०२॥
जाय मिल्यो परिवार में, सुख सागर के तीर ।
बरन पलटि हंसा किया, सतगुरु सत्त कबीर ॥१०३॥
साचे गुरु के पच्छ में, मन को दे ठहराय ।
चंचल तें निहचल भया, नहिं आवै नहिं जाय ॥१०४॥
गुरु सिकलीगर कीजियै, ज्ञान मस्कला देई ।
मन का मैल छुड़ाइ कै, चित दरपन करि लेई ॥१०५॥
गुरु बतावै साध को, साध कहै गुरु पूज ।
अरस परस के खेल में, भई अगम की सूझ ॥१०६॥
चित चोखा मन निर्मला, बुधि ऊतम मति धीर ।
सो धोखा बिच क्यों रहै, जेहि सतगुरु मिले कबीर ॥१०७॥
चित चोखा मन निर्मला, दयावंत गम्भीर ।
सोई उहवाँ बिचरई, जेहि सतगुरु मिले कबीर ॥१०८॥

सतगुर सत कबीर है, संकट पड़ा हजीर ।
हाथ जोरि बिनती करूं, भवसागर के तीर ।।१०९।।
कोटिन चंदा ऊगवें, सूरज कोटि हजार।
सतगुरु मिलिआ बाहरे, दीसत घोर अंधार ।।११०।।
सतगुरु मोंहि निवाजिया, दीन्हा अम्मर बोल ।
सीतल छाया सुगम फल, हंसा करै कलोल ।।१११।।
ज्ञान समागम प्रेम सुख, दया भक्ति बिस्वास ।
सतगुरु मिलि एकै भया, रही न दूजी आस ।।११२।।
सतगुरु पारस के सिला, देखो सोच विचार ।
आई परोसिन लै चली, दीयो दिया संवार ।।११३।।
जीव अधम औ कुटिल है, कबहूँ नहिं पति पाय ।
ता को औगन मेटि कै, सतगुरु होत सहाय ।।११४।।
पहिले बुरा कमाई कै, बाँधी विष की पोट ।
कोटि कर्म पल में कटैं, जब आया गुरु की ओट ।।११५।।
सतगुरु बड़े सराफ़ हैं, परखे खरा अरु खोट ।
भवसागर तें निकारि कै, राखैं अपनी ओट ।।११६।।
भवसागर जल विष भरा, मन नहिं बाँधै धीर ।
सबल सनेही गुरु मिला, उतरा पार कबीर ।।११७।।
सतगुरु सबद जहाज हैं, कोइ कोइ पावै भेद ।
समुंद बुंद एकै भया, किसका करूँ निषेध ।।११८।।
सतगुरु बड़े जहाज हैं, जो कोइ बैठै आय ।
पार उतारैं और को, अपनो पारस लाय ।।११९।।
बिन सतगुरु बाचै नहीं, फिरि बूड़ै भव माहिं ।
भवसागर के त्रास में, सतगुरु पकरैं बाँहि ।।१२०।।
सतगुरु मिला तो क्या भया, जो मन पाड़ी भोल ।
पास बस्त्र ढाँकै नहीं, क्या करै बपुरी चौल ।।१२१।।
जग मूआ विषधर धरे, कहै कबीर बिचार ।
जो सतगुरु को पाइया, सो जन उतरे पार ।।१२२।।

[सोरठा]

बिन सतगुरु उपदेस, सुर नर मुनि नहिं निस्तरे ।
ब्रह्मा बिष्नु महेस, और सकल जिव को गिनै ।।१२३।।

[साखी]

केतिक पढ़ि गुनि पचि मुवा, जोग जज्ञ तप लाय ।
बिन सतगुरु पावै नहीं, कोटिन करै उपाय ॥१२४॥

[सोरठा]

करहु छोड़ि कुल लाज, जो सतगुरु उपदेस है ।
होय तबै जिव काज, नि:चय कै परतीत करु ॥१२५॥

[साखी]

अच्छर आदि जगत में, जा कर सब बिस्तार ।
सतगुरु दया से पाइये, सत्तनाम निज सार ॥१२६॥

[सोरठा]

सतगुरु खोजो संत, जीव काज जो चाहहू ।
मेटौ भव को अंक, आवागमन निवारहू ॥१२७॥
बिनवै दोउ कर जोर, सतगुरु बंदी-छोर है ।
पावै नाम की डोर, जरा मरन भवजल मिटै ॥१२८॥
सत्तनाम निज सोय, जो सतगुरु दया करैं ।
और झूठ सब होय, काहे को भरमत फिरै ॥१२९॥

[साखी]

सतगुरु सरन न आवहीं, फिरि फिरि होय अकाज ।
जीव खोय सब जाहिंगे, काल तिहूं पुर राज ॥१३०॥

[सोरठा]

जो सत्त नाम समाय, सतगुरु की परतीत कर ।
जम कै अमल मिटाय, हंस जाय सतलोक कहँ ॥१३१॥
ताता दरसी जो होय, सो सत्त पार बिचारई ।
पावै तत्त बिलोय, सतगुरु कै चेला सोई ॥१३२॥
जग भवसागर माहिं, कहु कैसे बूड़त तरै ।
गहु सतगुरु की बाहिं, जो जल थल रच्छा करै ॥१३३॥
निज मत सतगुरु पास, जाहि पाय सब सुधि मिलै ।
जग तें रहै उदास, ता कहँ क्यों नहिं खोजिये ॥१३४॥

[साखी]

यह सतगुरु उपदेस है, जो मानै परतीत ।
करम भरम सब त्यागि कै, चलै सो भवजल जीति ॥१३५॥
सतगुरु तो सत भाव है, जो अस भेद बताय ।
धन्य सिष्य धन भाग तेहि, जो ऐसी सुधि पाय ॥१३६॥
जन कबीर बंदन करै, केहि बिधि कीजै सेव ।
वार पार की गम नहीं, नमो नमो गुरु देव ॥१३७॥

प्रेम का अंग

यह तो घर है प्रेम का, खाला का घर नाहिं ।
सीस उतारै भुइँ धरै, तब पैठै घर माहिं ॥१॥
सीस उतारै भुइँ धरै, ता पर राखै पाँव ।
दास कबीरा यों कहै, ऐसा होय तो आव ॥२॥
प्रेम न बाड़ी ऊपजै, प्रेम न हाट बिकाय ।
राजा परजा जेहि रुचै, सीस देइ लै जाय ॥३॥
प्रेम पियाला जो पियै, सीस दच्छिना देय ।
लोभी सीस न दे सकै, नाम प्रेम का लेय ॥४॥
प्रेम पियाला भरि पिया, राचि रहा गुर ज्ञान ।
दिया नगारा सबद का, लाल खड़े मैदान ॥५॥
छिनहिं चढ़ै छिन ऊतरै, सो तो प्रेम न होय ।
अघट प्रेम पिंजर बसे, प्रेम कहावै सोय ॥६॥
आया प्रेम कहाँ गया, देखा था सब कोय ।
छिन रोवै छिन में हँसै, सो तो प्रेम न होय ॥७॥
प्रेम प्रेम सब कोइ कहै, प्रेम न चीन्है कोय ।
आठ पहर भीना रहै, प्रेम कहावै सोय ॥८॥
प्रेम पियारे लाल सों, मन दे कीजै भाव ।
सतगुरु के परसाद से, भला बना है दाव ॥९॥
जब मैं था तब गुरु नहीं, अब गुरु है हम नाहिं ।
प्रेम गली अति साँकरी, ता में दो न समाहिं ॥१०॥
जा घट प्रेम न संचरै, सो घट जानु मसान ।
जैसे खाल लोहार की, साँस लेत बिन प्रान ॥११॥

आया बगूला प्रेम का, तिनका उड़ा अकास ।
तिनका तिनका से मिला, तिनका तिनके पास ॥१२॥
प्रेम बिकंता मैं सुना, माथा साटे हाट ।
बूझत बिलँब न कीजिये, ततछिन दीजै काट ॥१३॥
प्रेम बिना धीरज नहीं, बिरह बिना बैराग ।
सतगुरु बिन जावै नहीं, मन मनसा का दाग ॥१४॥
प्रेम तो ऐसा कीजिये, जैसे चंद चकोर ।
चोंच टूटि भुइँ माँ गिरै, चितवै वाही ओर ॥१५॥
अधिक सनेही माछरी, दूजा अल्प सनेह ।
जबहीं जल तें बीछुरै, तबही त्यागै देह ॥१६॥
सौ जोजन साजन बसै, मानो हृदय मंझार ।
कपट सनेही आँगने, जानु समुंदर पार ॥१७॥
यह तत वह तत एक है, एक प्रान दुइ गात ।
अपने जिय से जानिये, मेरे जिय की बात ॥१८॥
हम तुम्हरो सुमिरन करैं, तुम मोहिं चितवौ नाहिं ।
सुमिरन मन की प्रीति है, सो मन तुमहीं माहिं ॥१९॥
मेरा मन तो तुज्झ से, तेरा मन कहुँ और ।
कह कबीर कैसे बनै, एक चित्त दुइ ठौर ॥२०॥
ज्यों मेरा मन तुज्झ से, यों तेरा जो होय ।
अहरन ताता लोह ज्यों, संधि लखै ना कोय ॥२१॥
प्रीति जो लागी धुलि गई, पैठि गई मन माहिं ।
रोम रोम पिउ पिउ करै, मुख की सरधा नाहिं ॥२२॥
जो जागत सो स्वप्न में, ज्यों घट भीतर स्वास ।
जो जन जा को भावता, सो जन ता के पास ॥२३॥
सोना सज्जन साधु जन, टूटै जुटै सौ बार ।
दुर्जन कुम्भ कुम्हार का, एकै धका दरार ॥२४॥
प्रीति ताहि से कीजिये, जो आप समाना होय ।
कबहुंक जो अवगुन परै, गुनहीं लहै समोय ॥२५॥
प्रेम बनिज नहिं करि सकै, चढ़ै न नाम की गैल ।
मानुष केरी खालरी, ओढ़ि फिरै ज्यों बैल ॥२६॥
जहाँ प्रेम तहाँ नेम नहिं, तहाँ न बुधि व्यौहार ।
प्रेम मगन जब मन भया, तब कौन गिनै तिथि बार ॥२७॥

प्रेम पाँवरी पहिरि कै, धीरज काजर देइ।
सील सिंदूर भराइ कै, यों पिय का सुख लेइ ॥२८॥
प्रेम छिपाया ना छिपे, जा घट परगट होय।
जो पै मुख बोलै नहीं, तो नैन देत हैं रोय ॥२९॥
प्रेम भाव इक चाहिये, भेष अनेक बनाय।
भावे गृह में बास कर, भावे बन में जाय ॥३०॥
जोगी जंगम सेवड़ा, सन्यासी दुरवेस।
बिना प्रेम पहुँचै नहीं, दुरलभ सतगुरु देस ॥३१॥
पीया चाहै प्रेम रस, राखा चाहै मान।
एक म्यान मे दो खड़्ग, देखा सुना न कान ॥३२॥
प्रेमी ढूंढत मैं फिरौं, प्रेमी मिलै न कोय॥
प्रेमी से प्रेमी मिलै, गुरु भक्ति दृढ़ होय ॥३३॥
कबीर प्याला प्रेम का, अंतर लिया लगाय।
रोम रोम में रमि रहा, और अमल क्या खाय ॥३४॥
कबीर हम गुरु रस पिया, बाकी रही न छाक।
पाका कलस कुम्हार का, बहुरि न चढ़सी चाक ॥३५॥
नाम रसायन अधिक रस, पीवत अधिक रसाल।
कबीर पावन दुलभ है, माँगै सीस कलाल ॥३६॥
कबीर भाठी प्रेम की, बहुतक बैठे आय।
सिर सौंपै सो पीवसी, नातर पिया न जाय ॥३७॥
यह रस महँगा पिवै सो, छाड़ि जीव की बान।
माथा साटे जो मिलै, तो भी सस्ता जान ॥३८॥
पिया रस पिया सो जानिये, उतरै नहीं खुमार।
नाम अमल माता रहै, पियै अमी रस सार ॥३९॥
सबै रसायन मैं किया, प्रेम समान न कोय।
रत्ती इक तन संचरै, सब तन कंचन होय ॥४०॥
सागर उमड़ा प्रेम का, खेवटिया कोइ एक।
सब प्रेमी मिलि बूड़ते, जो यह नहिं होता टेक ॥४१॥
यही प्रेम निरवाहिये, रहनि किनारे बैठि।
सागर तें न्यारा रहा, गया लहरि में पैठि ॥४२॥
अमृत केरी मोटरी, राखी सतगुरु छोरि।
आप सरीखा जो मिलै, ताहि पिलावै घोरि ॥४३॥

अमृत पीवै ते जना, सतगुरु लागा कान ।
बस्तु अगोचर मिलि गई, मन नहिं आवै आन ॥४४॥
साधू सीप समुद्र के, सतगुरु स्वाँती बुंद ।
तृषा गई इक बुँद से, क्या ले करौ समुँद ॥४५॥
मिलना जग में कठिन है, मिलि बिछड़ो जनि कोय ।
बिछुड़ा सज्जन तेहि मिलै, जिन माथे मनि होय ॥४६॥
जोइ मिलै सो प्रीति में, और मिलै सब कोय ।
मन से मनसा ना मिलै, तो देह मिले का होय ॥४७॥
जो दिल दिलही में रहै, सो दिल कहूँ न जाय ।
जो दिल दिल से बाहिरा, सो दिल कहाँ समाय ॥४८॥
जैसी प्रीति कुटुम्ब से, तैसिहु गुरु से होय ।
कहै कबीर वा दास का, पला न पकड़ै कोय ॥४९॥
नैनों की करि कोठरी, पुतली पलँग बिछाय ।
पलकों की चिक डारि कै, पिय को लिया रिझाय ॥५०॥
जब लगि मरने से डरै, तब लगि प्रेमी नाहिं ।
बड़ी दूर है प्रेम घर, समुझि लेहु मन माहिं ॥५१॥
पिय का मारग सुगम है, तेरा चलन अनेड़ ।
नाच न जानै बापुरी, कहै आँगना टेढ़ ॥५२॥
पिय का मारग कठिन है, खाँड़ा हो जैसा ।
नाचन निकसी बापुरी, फिर घूंघट कैसा ॥५३॥
यह तो घर है प्रेम का, मारग अगम अगाध ।
सीस काटि पग तल धरै, तब निकट प्रेम का स्वाद ॥५४॥
प्रेम भक्ति का गेह है, ऊँचा बहुत इकंत ।
सीस काटि पग तल धरै, तब पहुँचे घर संत ॥५५॥
सीस काटि पासंग किया, जीव सेर भर लीन्ह ।
जो भावै सो आइ ले, प्रेम आगे हम कीन्ह ॥५६॥
प्रेम प्रीति में रचि रहै, मोच्छ मुक्ति फल पाय ।
सबद माहिं तब मिलि रहै, नहिं आवै नहिं जाय ॥५७॥
जो तू प्यासा प्रेम का, सीस काटि करि गोय ।
जब तू ऐसा करैगा, तब कछु होय तो होय ॥५८॥
हरि से तू जनि हेत कर, कर हरिजन से हेत ।
माल मुलुक हरि देत है, हरिजन हरि ही देत ॥५९॥

प्रीती बहुत संसार में, नाना बिधि की सोय।
उत्तम प्रीति सो जानिये, सतगुरु से जो होय ॥६०॥
गुनवंता औ द्रब्य की, प्रीति करै सब कोय।
कबीर प्रीति सो जानिये, इन तें न्यारी होय ॥६१॥
कबीर ता से प्रीति करु, जो निरबाहै ओर।
बनै तो बिबिधि न राचिये, देखन लागै खोर ॥६२॥
कहा भयो तन बीछुरे, दूरि बसे जै बास।
नैनाही अंतर परा, प्रान तुम्हारे पास ॥६३॥
जो है जा का भावता, जब तब मिलिहै आय।
तन मन ता को सौंपिये, जो कबहूँ छाड़ि न जाय ॥६४॥
जल में बसै कमोदिनी, चंदा बसै अकास।
जो है जा का भावता, सो ताही के पास ॥६५॥
तन दिखलावै आपना, कछू न राखै गोय।
जैसी प्रीति कमोदिनी, ऐसी प्रीति जो होय ॥६६॥
सही हेत है तासु का, जा के सतगुरु टेक।
टेक निबाहै देंह भरि, रहै सबद मिलि एक ॥६७॥
पासा पकड़ा प्रेम का, सारी किया सरीर।
सतगुरु दाव बताइया, खेलै दास कबीर ॥६८॥
खेल जो मंडा खिलाड़ि से, आनंद बढ़ा अघाय।
अब पासा काहू परौ, प्रेम बंधा जग जाय ॥६९॥
प्रीतम को पतियाँ लिखूं, जो कहुं होय बिदेस।
तन में मन में नैन में, ता को कहा संदेस ॥७०॥

शील का अंग

सील छिमा जब ऊपजै, अलख दृष्टि तब होय।
बिना सील पहुंचै नहीं, लाख कथै जो कोय ॥१॥
सीलवंत सब तें बड़ा, सर्ब रतन की खानि।
तीन लोक की संपदा, रही सील में आनि ॥२॥
ज्ञानी ध्यानी संजमी, दाता सूर अनेक।
जपिया तपिया बहुत हैं, सीलवंत कोइ एक ॥३॥
सुख का सागर सील है, कोइ न पावै थाह।
सबद बिना साधू नहीं, द्रव्य बिना नहिं साह ॥४॥

विषय पियारे प्रीति से, तब लगि गुरुमुख नाहिं ।
जब अंतर सतगुरु बसैं, बिषया से रुचि नाहिं ॥५॥
सील गहै कोइ सावधान, चेतन पहरे जागि ।
बासन बासन के खिसे, चोर न सकई लागि ॥६॥
आव कहै सो औलिया, बैठु कहै सो पीर ।
जा घर आव न बैठु है, सो काफिर बेपीर ॥७॥
घायल ऊपर घाव लै, टोटे त्यागी सोय ।
भर जोबन में सीलवंत, बिरला होय तो होय ॥८॥

सुमिरन का अंग

सुमिरन से सुख होत है, सुमिरन से दुख जाय ।
कह कबीर सुमिरन किये, साईं माहिं समाय ॥१॥
राजा राना राव रंक, बड़ा जो सुमिरै नाम ।
कह कबीर बड़िओंबड़ा, जो सुमिरै निःकाम ॥२॥
नर नारी सब नरक है, जब लगि देह सकाम ।
कह कबीर सोइ पीव को, जो सुमिरै निःकाम ॥३॥
दुख में सुमिरन सब करै, सुख में करे न कोय ।
जो सुख में सुमिरन करै, तो दुख काहे होय ॥४॥
सुख में सुमिरन ना किया, दुख में कीया याद ।
कह कबीर ता दास की, कौन सुनै फरियाद ॥५॥
सुमिरन की सुधि यों करौ, जैसे कामी काम ।
एक पलक बिसरै नहिं, निस दिन आठो जाम ॥६॥
सुमिरन की सुधि यों करौ, ज्यों गागर पनिहार ।
हालै डोलै सुरति में, कहै कबीर बिचार ॥७॥
सुमिरन की सुधि यों करौ, ज्यों सुरभि सुत माहिं ।
कह कबीर चारा चरत, बिसरत कबहूं नाहिं ॥८॥
सुमिरन की सुधि यों करौ, जैसे दाम कंगाल ।
कह कबीर बिसरै नहीं, पल पल लेहि सम्हाल ॥९॥
सुमिरन से मन लाइये, जैसे नाद कुरंग ।
कह कबीर बिसरै नहीं, प्रान तजै तेहि संग ॥१०॥
सुमिरन से मन लाइये, जैसे दीप पतंग ।
प्रान तजै छिन एक में, जरत न मोड़ै अंग ॥११॥

सुमिरन से मन लाइये, जैसे कीट भिरंग।
कबीर बिसरै आप को, होय जाय तेहि रंग ॥१२॥
सुमिरन से मन लाइये, जैसे पानी मीन।
प्रान तजै पल बीछुरे, सत कबीर कहि दीन ॥१३॥
सुमिरन सुरति लगाइ के, मुख तैं कछू न बोल।
बाहर के पट देइ के, अंतर के पट खोल ॥१४॥
माला फेरत मन खुसी, ता तें कछू न होय।
मन माला के फेरते, घट उजियारो होय ॥१५॥
माला फेरत जुग भया, फिरा न मनका फेर।
कर का मनका डारि दे, मन का मनका फेर ॥१६॥
अजपा सुमिरन घट बिखै दीन्हा सिरजनहार।
ताही से मन लगि रहा, कहै कबीर बिचार ॥१७॥
कबीर माला काठ की, बहुत जतन का फेर।
माला स्वासों स्वास की, जा में गाँठ न मेर ॥१९॥
कबीर माला मनहिं की, और संसारी भेख।
माला फेरे हरि मिलैं, तो गले रहट के देख ॥१८॥
माला मो से लड़ि पड़ी, का फेरत हौ मोय।
मन कै माला फेरि ले, गुरु से मेला होय ॥२०॥
किरिया करै अंगुरी गनै, मन धावै चहुं ओर।
जेहि फेरे साइँ मिलै, सो भया काठ कठोर ॥२१॥
माला फेरे कहा भयो, हृदय गाँठि नहिं खोय।
गुरु चरनन चित राचिये, तो अमरापुर जोय ॥२२॥
बाहर क्या दिखलाइये, अंतर जपिये नाम।
कहा महोला खलक से, पड़ा धनी से काम ॥२३॥
सहजे ही धुन होत है, हर दम घट के माहिं।
सुरत सबद मेला भया, मुख की हाजत नाहिं ॥२४॥
माला तो कर में फिरै, जीभ फिरै मुख माहिं।
मनुवां तो दहु दिसि फिरै, यह तो सुमिरन नाहिं ॥२५॥
तन थिर मन थिर बचन थिर, सुरत निरत थिर होय।
कह कबीर इस पलक को, कलप न पावै कोय ॥२६॥

जाप मरै अजपा मरै, अनहद भी मरि जाय ।
सुरत समानी सबद में, ताहि काल नहिं खाय ॥२७॥
जा की पूँजी स्वास है, छिन आवै छिन जाय ।
ता को ऐसा चाहिये, रहै नाम लौ लाय ॥२८॥
कहता हूँ कहि जात हूँ, कहौं बजाये ढोल ।
स्वासा खाली जात है, तीन लोक का मोल ॥२९॥
ऐसे महंगे मोल का, एक स्वास जो जाय ।
चौदह लोक न पटतरे, काहे धूर मिलाय ॥३०॥
कबीर छुधा है कूकरी, करत भजन में भंग ।
या को टुकड़ा डारि करि, सुमिरन करो निसंक ॥३१॥
चिंता तो सतनाम की, और न चितवै दास ।
जो कछु चितवै नाम बिनु, सोई काल की फांस ॥३२॥
सत्तनाम को सुमिरते, उधरे पतित अनेक ।
कह कबीर नहिं छाड़िये, सत्तनाम की टेक ॥३३॥
नाम जपत कन्या भली, साकट भला न पूत ।
छेरी के गल गलथना, जा में दूध न मूत ॥३४॥
नाम जपत दरिद्री भला, टूटी घर की छानि ।
कंचन मंदिर जारि दे, जहं गुरु भक्ति न जान ॥३५॥
पांच सखी पिउ पिउ करैं, छठा जो सुमिरै मन ।
आई सुरत कबीर की, पाया नाम रतन ॥३६॥
तूं तूं करता तूं भया, मुझ में रही न हूँ ।
वारी तेरे नाम पर, जित देखूं तित तूं ॥३७॥
सुमिरन मारग सहज का, सतगुरु दिया बताय ।
स्वास उस्वास जो सुमिरता, इक दिन मिलसी आय ॥३८॥
माला स्वासो स्वास की, फेरै कोइ निज दास ।
चौरासी भरमैं नहीं, कटै करम की फाँस ॥३९॥
ज्ञान कथै बकि बकि मरै, कोई करै उपाय ।
सतगुरु हमसे यों कह्यो, सुमिरन करो समाय ॥४०॥
कबीर सुमिरन सार है, और सकल जंजाल ।
आदि अंत मधि सोधिया, दूजा देखा ख्याल ॥४१॥

निज सुख सुमिरन नाम है, दूजा दुःख अपार।
मनसा बाचा कर्मना, कबीर सुमिरन सार ॥४२॥

थोड़ा सुमिरन बहुत सुख, जो करि जाने कोय।
सूत न लगै बिनावनी, सहजै अति सुख होय ॥४३॥

साईं यों मत जानिये, प्रीति घटै मम चित्त।
मरूँ तो तुम सुमिरत मरूँ, जीवत सुमिरूँ नित्त ॥४४॥

जप तप संजम साधना, सब सुमिरन के माँहि।
कबीर जानै भगत जन, सुमिरन सम कछु नाँहि ॥४५॥

सहकामी सुमिरन करै, पावै उत्तम धाम।
निहकामी सुमिरन करै, पावै अबिचल नाम ॥४६॥

हम तुम्हरो सुमिरन करें, तुम मोहिं चितवत नाँहि।
सुमिरन मन की प्रीति है, सो मन तुमहीं माँहि ॥४७॥

कबिरा हरि हरि सुमिरि ले, प्रान जाँहिगे छूटि।
घर के प्यारे आदमी, चलते लेंगे लूटि ॥४८॥

कबीर निर्भय नाम जपु, जब लगि दीवा बाति।
तेल घटे बाती बुझै, तब सोवो दिन राति ॥४९॥

जैसा माया मन रमै, तैसे नाम रमाय।
तारा मंडल छाड़ि कै, जहाँ नाम तहँ जाय ॥५०॥

कबीर चित चंचल भया, चहुं दिसि लागी लाय।
गुरु सुमिरन हाथे घड़ा, लीजै बेगि बुझाय ॥५१॥

कबीर मुख सोई भला, जा मुख निकसै नाम।
जा मुख नाम न नीकसै, सो मुख कौने काम ॥५२॥

सत्त नाम को सुमिरना, हंस करि भावै खीज।
उलटा सुलटा नीपजै, खेत पड़ा ज्यों बीज ॥५३॥

स्वास सुफल सो जानिये, जो सुमिरन में जाय।
और स्वास योंही गये, करि करि बहुत उपाय ॥५४॥

कहा भरोसा देह का, बिनसि जाय छिन माँहि।
स्वास स्वास सुमिरन करौ, और जतन कछु नाँहि ॥५५॥

जिवना थोरा ही भला, जो सत सुमिरन होय।
लाख बरस का जीवना, लेखे धरै न कोय ॥५६॥

बिना साच सुमिरन नहीं, बिन भेदी भगति न सोय ।
पारस में परदा रहा, कस लोहा कंचन होय ।।५७।।
कंचन केवल गुरु भजन, दूजा काँच कथीर ।
झूठा जाल जंजाल तजि, पकड़ो साच कबीर ।।५८।।
हृदय सुमिरनी नाम की, मेरा मन मसगूल ।
छबि लागे निरखत रहौ, मिटि गया संसय मूल ।।५९।।
सुमिरन का हल जोतिये, बीजा नाम जमाय ।
खंड ब्रह्मंड सूखा पड़ै, तहूँ न निस्फल जाय ।।६०।।
देखा देखी सब कहै, भोर भये हरि नाम ।
अर्ध रात कोइ जन कहै, खानाजाद गुलाम ।।६१।।
नाम रटत इस्थिर भया, ज्ञान कथत भया लीन ।
सुरत सबद एकै भया, जलही ह्वैगा मीन ।।६२।।
कबीर धारा अगम की, सतगुरु दई लखाय ।
उलटि ताहि सुमिरन करो, स्वामी संग मिलाय ।।६३।।

चरणदास जी के शब्द

सील का अंग

अब मैं गाऊं सील कूं, ये हो संत सुजान ।
नर नारी सब ही सुनो, दे दे चित बुधि कान ॥१॥

रूप गुनी कुलवंत जो, और होवैं धनवंत ।
सील बिना सोभा नहीं, भिष्टे नरक पड़ंत ॥२॥

सील बिना जो तप करे, करे सील बिन दान ।
जोग जुगति करे सील बिन, सो कहीए अगिआन ॥३॥

सील बड़ो ही योग है, जो कर जाने कोइ ।
सील विहीनों चरनदास, कबहूं मुकत न होइ ॥४॥

सब सुभ लकछन तो विषे, सील न आइया एक ।
जप तप निहफल जाहिंगे, चरन ही दास बिवेक ॥५॥

पूजा संजम नेम जो, यग करे चित लाइ ।
चरनदास कहे सील बिन, सब ही अकारथ जाइ ॥६॥

सोई सती सोई सूरमा, सोई दाता अधिकाइ ।
सील लीए नित ही रहे, तो निहफल नहीं जाइ ॥७॥

सील अंग ऊंचो अधक, उनतीसों के बीच ।
जा घट सील न आइआ, सो घट कहीए नीच ॥८॥

सील न उपजे खेत में, सील न हाट बिकाइ ।
जो हो पूरा टेक का, लेवै अंग उपजाइ ॥९॥

सील बिना नरकै परे, सील बिना जम डंड ।
सील बिना भरमत फिरे, सात दीप नौं खंड ॥१०॥

सील बिना भटकत फिरे, चौरासि के माँहि ।
पहले होवै परेत ही, या मैं संसे नाँहि ॥११॥

सभ तज सेवो सील कूँ, राम नाम लौ लाइ ।
जीवत सोभा जगत मैं, मूए मुकत होइ जाइ ॥१२॥

जाको सील सुभाउ है, ताकी दूर बलाए ।
ताकी कीरत जगत मैं, सुनहो कान लगाए ॥१३॥

सील रहे ते सब रहें, ज़ेते हैं शुभ अंग ।
जिउं राजा के रहे ते, रहे फ़ौज को संग ॥१४॥

सत गया तो किआ रहा, सील गया सब झाड़ ।
भगती खेत कैसे बचै, टूट गई जब बाड़ ॥१५॥

जुआनी सील न राखिआ, बिगड़ गई सब देह ।
अब पछतावा किआ करे, मुख पर उड़िआ खेह ॥१६॥

सील गये सोभा घटै, या दुनिया के माँहि ।
कूकर जिउं झिड़किओ फिरे, कहीं भी आदर नाँहि ॥१७॥

सील गहे गुरू सूं फिरै, हरि सूं बेमुख होहि ।
चरनदास कह लों कहे, सरबस डारे खोहि ॥१८॥

धृग जीवन संसार मैं, जाको सील नसाइ ।
जग मैं फिट फिट होत है, मूइ ताचना पाइ ॥१९॥

सील कसैलो आंवला, और बड़ों के बोल ।
पाछे देवैं सुआद वे, चरनदास कहे खोल ॥२०॥

सील निरोगा नीम सा, औगुन डारे खोइ ।
पहिले कड़वा दुख लगे, पाछे गुन सुख होइ ॥२१॥

लाख यही उपदेश है, एक सील कूं राख ।
जनम सुधारो हरि मिलो, चरनदास की साख ॥२२॥

सीलवंत के चरन का, जो चरनोदक लै ।
रोग दोश मिट जाइँ सब, रहे न जम का भै ॥२३॥

आठ अंग सूँ सील ही, जा घट माँहि होइ ।
चरनदास यूँ कहत हैं, दुरलभ दरसन सोइ ॥२४॥

सीलवंत दरसन बड़ो, देखत पातक जाइ ।
बचन सुने मन शुद्ध हो, खोटी दृष्टि सराइ ॥२५॥
सील सरोवर नहाइ कर, करो राम की सेव ।
या सम तीरथ और न, कहिआ गुरू सुकदेव ॥२६॥

दोहे

सतगुरु के ढिंग जायके, सनमुख खावे चोट ।
चकमक लग पथरी झड़े, सकल जलावे खोट ॥१॥
मैं मिरगा गुरु पारधी, शबद लगायो बान ।
चरनदास घायल गिरे, तन मन बींधे प्रान ॥२॥
सतगुरु शबदी तीर है, तन मन कीयो छेद ।
बे दरदी समझै नहीं, बिरही पावै भेद ॥३॥
सतगुरु शबदी बान है, अंग अंग डाला तोड़ ।
प्रेम खेत घायल गिरे, टांका लगै न जोड ॥४॥
प्रेम बराबर जोग नहिं, प्रेम बराबर ज्ञान ।
प्रेम भगति बिन साधवा, सब ही थोथा ध्यान ॥५॥
गद गद बानी कंठ में, आँसू टपकै नैन ।
वह तो बिरहिन पीव की, तड़फत है दिन रैन ॥६॥
हाय हाय पति कब मिलैं, छाती फाटी जाय ।
ऐसा दिन कब होयगा, दरसन करूं अघाय ॥७॥
बिन दरसन कल न पड़े, मनुवां धरत न धीर ।
चरनदास गुरु चरन बिन, कौन मिटावे पीर ॥८॥
आह जो निकसे दुख भरी, गहिरे लेत उसांस ।
मुख पीरो सूखे अधर, आँखें खरी उदास ॥९॥
अगिन बरे हियरा जरे, भये कलेजे छेद ।
बिरहिन तो बौरी भई, क्या कोइ जाने भेद ॥१०॥
पिया चहो कै मत चहौ, मैं तो पिय की दास ।
पिया रंग राती रहूं, जग से रहत उदास ॥११॥
ज्यों सेमर का सूवना, ज्यों लोभी का धरम ।
अंन बिना भुस कूटना, नाम बिना यों करम ॥१२॥

हाथी घोड़े धन घना, चंद्र मुखी बहु नार।
नाम बिना जमलोक में, पावत दुख अपार ॥१३॥
आज्ञाकारी पीव की, रहे पिया के संग।
तन मन से सेवा करे, और न दूजा रंग ॥१४॥
पति की ओर निहारिये, औरन से क्या काम।
सभी देवता छोड़कर, जपिये गुरु का नाम ॥१५॥
मोह महा दुख रूप है, ताको मार निकार।
प्रीत जगत की छोड़ दे, तब होवे निरबार ॥१६॥
इंद्रिन के बस मन रहे, मन के बस रहे बुद्ध।
कहो ध्यान कैसे लगे, ऐसा जहां बिरुध ॥१७॥

तुलसी साहिब के शब्द

[१]

ग़ज़ल

अरे ऐ तक़ी तकते रहो, मुर्शिद ने दस्त पंजा दिया ।
बेहोश हो मत छोड़ियो, गर चाहे तू जलवा पिया ॥१॥
होगा फ़ज़ल[1] दर्गाह तक, ख़ौफ़ो ख़तर की जा नहीं ।
सीधे चले जाना वहां, मुर्शिद ने यह फ़तवा[2] दिया ॥२॥
मनसूर, सरमद, बूअली, और शम्स, मौलाना हुए ।
पहुंचे सभी इस राह से, जिस ने कि दिल पुख़्ता[3] किया ॥३॥
यह राहे मंज़िल इश्क है, पर पहुंचना मुश्किल नहीं ।
मुश्किल-कुशा[4] है रूबरू[5], जिस ने तुझे पंजा दिया ॥४॥
तुलसी कहे सुन ऐ तक़ी, यह राज़े-बातिन[6] है जुदा ।
रखना हिफ़ाज़त से इसे, तुझ को निशां ऊँचा दिया ॥५॥

[२]

मंगल

अमर बूटी मोरे यार प्यारे पिया ने दई ।
काटी जम की जाल काल डर ना रही ॥१॥
मैं पिया मोर अनूप रूप पिया में गई ।
दरसै एकै नूर सूर स्रुति से भई ॥२॥
जुग जुग अमर अहवात साथ पिय के सखी ।
जावँ न आवों हाथ साथ पिय के पकी ॥३॥

---

१. कृपा २. आदेश, हुक्म ३. दृढ़, पक्का ४. कठिनाई को दूर करने वाला ५. प्रत्यक्ष ६. आन्तरिक-भेद

नौतम निरखि निहारि, सार दसवें बही।
आगै अजब अजूब खूब खुलि कै कही ॥४॥
पिया मोरे दीन-दयाल चाल चीन्हा सही।
सुख सागर सुख चौज, मौज मुख से दई ॥५॥
अंड खंड ब्रह्मंड, कोई करता नहीं।
हमरा सकल पसार, सार हम से भई ॥६॥
धरती, गगन, अकास, नास सब होइँगे।
अगिनि पवन जल नास, हमीं हम रहैंगे ॥७॥
ब्रह्मा बेद नसाय, बिस्नु शिव ना बचै।
बचै नहीं वैराट, कहनि कहौ को पचै ॥८॥
कोई न पावै अंत, संत हमको लखै।
तुलसी बिधि बेअंत अंत कहि को सकै ॥९॥

[३]

कुंडलियाँ

(१)

गगन मंडल के बीच में झिलिमिलि झलकत नूर ॥
झिलिमिलि झलकत नूर सूर कोइ बिरला पावै।
करै तत्त की खोज नहीं चौरासी आवै ॥
सतगुर मिलैं दयाल भेद सब उन से पावै।
करै संत की टहल महल की खबर लखावै ॥
तुलसी मुरदा जब बनै तब पावै गुरु पूर।
गगन मंडल के बीच में झिलिमिलि झलकत नूर ॥

(२)

जग जग कहते जुग भये जगा न एको बार ॥
जगा न एको बार सार कहो कैसे पावै।
सोवत जुग जुग भये संत बिन कौन जगावै ॥
पड़े भरम के माहिं बंद से कौन छुड़ावै।
जो कोइ कहै बिबेक ताहि की नेक न भावै ॥
तुलसी पंडित भेष से सब भूला संसार।
जग जग कहते जुग भये जगा न एको बार ॥

[४]

कहकरा

छछ्छा छिन छिन सुरति सँवार लार दृग के रहौ ।
तन मन दर्पन माँज साज स्तुति से गहौ ॥
लगन लगै लख पार सार तब पाइया ।
अरे हाँ रे तुलसी संत चरन की धूर नूर दर्साइया ॥१॥
जज्जा जिन जिन सुरति सँवारि काल डर ना रही ।
चढ़ी गगन पर धाय पाय पति पै गई ॥
लिया अगमपुर धाम जाइ पिउ भेंटिया ।
अरे हाँ रे तुलसी जनम जनम भ्रम भाव दाव दुख मेटिया ॥२॥
झझ्झा झलकत नूर जहूर हरष हिये में भई ।
निरखा रवि उजियार द्वार पच्छिम गई ॥
सूरत चीन्हा भेद भरम तजि भागिया ।
अरे हाँ रे तुलसी सब्द सुरति भया मेल खेल खुल त्यागिया ॥३॥
टट्टा टोइ लिया सतसंग रंग गुरु ने दिया ।
जुगन जुगन तजि भूल आदि घर को लिया ॥
सिव ब्रह्मा और बेद बिस्नु नहिं आ सकै ।
अरे हाँ रे तुलसी निरंकाल सोई काल जोति नहिं जा सकै ॥४॥
ठट्ठा ठौर ठिकाना ठाँव गाँव पिया को कही ।
निरंकार के पार तहाँ तुलसी रही ॥
सत्तनाम सुख धाम अमरपुर लोक है ।
अरे हाँ रे तुलसी चौथा पद जद जाय संत सोई कहै ॥५॥
डड्डा डगर संत का पंथ अंत कहो को लखै ।
जग पंडित और भेष भूल भव में पकै ॥
तीरथ नेम अचार भार सिर पर लिया ।
अरे हाँ रे तुलसी कर्म धर्म अभिमान जानि करि ये किया ॥६॥
ढढ्ढा ढिग ही पूरन बस्त कस्द कोइ ना करै ।
गुरु संत बिन भेद पार कैसे परै ॥
पढ़ि पढ़ि बेद पुरान ज्ञान करि करि मुए ।
अरे हाँ रे तुलसी कथा सुने सोइ जोनि पौन भूतै भये ॥७॥

णणा नीच ऊंच नहिं देख पेख सब एक पसारा ।
नहिं बाम्हन नहिं सूद्र नहीं छत्री कोउ न्यारा ।।
नहीं बैस की जाति सकल घट एक पसारा ।
अरे हाँ रे तुलसी जो करि जानै दोइ खोइ जिन जनम बिगारा ।।८।।

तत्ता तुरत तत्त को खोज रोज रच दरस दिखावै ।
अगम निगम का भेद घाट घट में जब पावै ।।
बिना तत्त नहिं मूल भूल चौरासी आवै ।
अरे हाँ रे तुलसी तत मत सूरत साँच सब्द में जाय मिलावै ।।९।।

थथ्था थिर होइ सुरत लगाव थोब थिर मन को राखौ ।
इंद्री चलै न जाय पाय गुन को नहिं भाखौ ।।
प्रकृति पचीसौं बास महल से काढ़ निकारौ ।
अरे हां रे तुलसी जब लग है कुछ हाथ संत की टहल बिचारौ ।।१०।।

दद्दा देखो दृष्टि पसारि सार कुछ जग में नाहीं ।
दिना चार का रंग संग नहिं जावै भाई ।।
धन संपत परिवार काम एको नहिं आवै ।
अरे हाँ रे तुलसी दीपक संग पतंग प्रान छिन में चलि जावै ।।११।।

धध्धा ध्यान धरो घट माँहि सुरति को काढ़ि निकारी ।
उलटि चलो असमान हिये बिच होत उजारी ।।
ता उजियारे बैठि लखो ब्रह्मंड पसारा ।
अरे हाँ रे तुलसी जो अंडे बिच जीव निरखि भिनि भिनि बिध सारा ।।१२।।

पप्पा पड़े जगत के माँहि भक्ति सुपने नहिं भावै ।
बाह्मन पंडित भेष सबै पुनि दान करावै ।।
जिन कीन्हा तन साज ताहि से नेह न लावै ।
अरे हाँ रे तुलसी जब जम पकरैं बाँह पूत को कौन छुडावै ।।१३।।

फफ्फा फूले फूले फिरें देखि धन धाम बड़ाई ।
तन फुलेल और तेल चाम को चुपरैं भाई ।।
दिना चारि का खेल मिलै फिर ख़ाक में ।
अरे हाँ रे तुलसी पकरि फिरिस्ते करैं सलाई आँखि में ।।१४।।

बब्बा बड़ा जगत जंजाल जाल जम फाँसी डारी ।
ज्यों धीमर जल माँहि पकर करि मछली मारी ।।

निकरि जाय जब प्रान काल चोटी धर खींचा ।
अरे हाँ रे तुलसी परिहौं जम मुख माँहि डाढ़ चक्की ज्यों पीसा ॥१५॥

भम्भा भगी सुरति घट माँहि जाय जो देखा भाई ।
सुखमनि सेज सँवारि सुन्नि में सुरति लगाई ॥
मुकर माँहि दीदार दरस कीन्हा सोइ जानै ।
अरे हाँ रे तुलसी ज्यों स्वाँती की बूंद सीप बिरहिन पहचानैं ॥१६॥

मम्मा मुसकिल होइ आसान जानि कोइ ना करै ।
करै तत्त को खोज काज घट में सरै ॥
बाहर है सब झूठ लूटि जम लेइँगे ।
अरे हाँ रे तुलसी तन छूटै बेहाल बहुत दुख देइँगे ॥१७॥

यय्या या को चीन्ह बिचार कहो यह कौन है ।
बोले सब घट माँहि परख कित पौन है ॥
धरती अगिनि अकास नीर कोउ कौन था ।
अरे हाँ रे तुलसी रचा नहीं बैराट बोलता कहँ हता ॥१८॥

ररा राति दिवस कर खोज रोज रस ज्ञान सुनावै ।
घट घट उठै अवाज़ तासु कोउ भेद न पावै ॥
पिंड माँहि ब्रह्मंड सकल बिधि रहा समाई ।
अरे हाँ रे तुलसी खोलि हिये की आँख संत दीन्हा दरसाई ॥१९॥

लल्ला लोभ लोग पचि मरे कहो को खोज लगावै ।
इंद्री रस सुख स्वाद भोग नीके करि भावै ॥
राम राम की टेक भेष सब जगत पुकारा ।
अरे हां रे तुलसी जीवत मिलै न मुक्ति मुए को कहै लबारा ॥२०॥

वव्वा वा को खोज गंवार सार जिन किया पसारा ।
रोम रोम ब्रह्मंड कोटि छबि रवि उजियारा ॥
अजर अमर वह लोक सोक सब दूर बहावै ।
अरे हाँ रे तुलसी राम कृस्न अवतार दसों नहिं जाने पावै ॥२१॥

सस्सा सोच करो मन माहिं पिंड कहो कौन संवारा ।
आदि अन्त का खेल किया किन बिधि बिधि सारा ॥
निरंकार नहिं हता नहीं तब जोति रहाई ।
अरे हाँ रे तुलसी ब्रह्मा बिस्नु न बेद नहीं अवतारी भाई ॥२२॥

हहा हक्क हजूरी संत पंथ कोई रहे न भाई ।
सत साहिब सिरदार और कोइ दूजा नाहीं ॥
कागद स्याही कलम रहे नहिं लिखनेहारा ।
अरे हाँ रे तुलसी आदि अंत नहिं हता नाहिं सत असत पसारा ॥२३॥
अआ अष्ट कंवल दल फूल मूल मारग तब पावै ।
सहस कंवल दल छाँड़ि कंवल दल दुई पर आवै ॥
लखै चार दल कंवल ताहि पर सुरति चढ़ावै ।
अरे हाँ रे तुलसी तिरबैनी के पार सार सतलोक दिखावै ॥२४॥
ईया इतना भेद अभेद गुरन से मिलै ठिकाना ।
कहैं अगम की राह सुरति से फोड़ि निसाना ॥
गई सिंध के पार यार लख पुरुष पुराना ।
अरे हाँ रे तुलसी ज्यों सलिता जलधार सिंध धस जाय समाना ॥२५॥
ऊवा उलटि चलै दरबार पार घर अपना पावै ।
बुंद सिंध का मेल खेल खुद आप कहावै ॥
भूली बस्त मिलाप आप अपना दरसावै ।
अरे हाँ रे तुलसी जिन चीन्हा यह भेद सोई सत संत कहावै ॥२६॥
अरल ककहरा अंक बंक बत्तीस बखाना ।
संत पंथ अज अमर आदि घर अपना जाना ॥
जो कोई करै बिबेक एक सब घट पहिचानै ।
अरे हाँ रे तुलसी सतगुर मिलै दयाल काल गत भिन भिन छानै ॥२७॥

[५]

जिनके हिरदे गुरु संत नहीं, उन नर औतार लिया न लिया ॥टेक॥
सूरत बिमल बिकल नहिं जाके, बहु बक ज्ञान किया न किया ॥१॥
करम काल बस उद्र निहारा, जग बिच मूढ़ जिया न जिया ॥२॥
अगम राह रस रीत न जानी, बहु सतसंग किया न किया ॥३॥
नाम अमल घट घोंट न पीन्हा, अमल अनेक पिया न पिया ॥४॥
मोटे मात जात जिंदगी में, सिर धर पैर छुवा न छुवा ॥५॥
तुलसी दास साध नहिं चीन्हा, तन मन धन दिया न दिया ॥६॥

[६]

ग़ज़ल

दिल का हुजरा[1] साफ़ कर जानां[2] के आने के लिये ।
ध्यान ग़ैरों का उठा उसके बिठाने के लिये ॥१॥
चशमे दिल[3] से देख यहाँ जो जो तमाशे हो रहे ।
दिलसितां[4] क्या क्या हैं तेरे दिल सताने के लिये ॥२॥
एक दिल लाखों तमन्ना[5] उस पै और ज़्यादा हविस[5] ।
फिर ठिकाना है कहाँ उसके टिकाने के लिये ॥३॥
नक़ली मन्दिर मसजिदों में जाय सद अफ़सोस है ।
क़ुदरती मसजिद का साकिन[6] दुख उठाने के लिये ॥४॥
क़ुदरती काबे की तू महराब[7] में सुन ग़ौर से ।
आ रही धुर से सदा तेरे बुलाने के लिये ॥५॥
क्यों भटकता फिर रहा तू ऐ तलाशे यार में ।
रासता शाहरग[8] में है दिलबर पै जाने के लिये ॥६॥
मुरशिदे कामिल से मिल सिदक़[9] और सबूरी[10] से तक़ी ।
जो तुझे देगा फ़हम[11] शाहरग के पाने के लिये ॥७॥
गोशे बातन हो कुशादा[12] जो करे कुछ दिन अमल ।
ला इलाह अल्लाहू अकबर पै जाने के लिये ॥८॥
यह सदा तुलसी की है आमिल अमल कर ध्यान दे ।
कुन[13] क़ुराँ[14] में है लिखा अल्लाहु अकबर के लिये ॥९॥

[७]

ग़ज़ल

सुन ऐ तक़ी न जाइयो जिनहार[15] देखना ।
अपने में आप जलवाए दिलदार देखना ॥१॥

१. छोटा कमरा २. प्रियतम ३. दिल की आंख ४. दिल को लुभाने वाली चीजें ५. कामनाएं, तृष्णाएं ६. रहने वाला ७. द्वार के ऊपर का अर्द्ध-मंडलाकर हिस्सा ८. सुषुम्ना ९. सचाई, निष्ठा १०. संतोष ११. भेद, युक्ति १२. आंतरिक कान खुल जायें १३. शब्द या नाम १४. कुरान शरीफ़ १५. कदापि, हरगिज़ ।

पुतली में तिल है तिल में भरा राज़[1] कुल का कुल ।
इसी परदाए सियाह[2] के ज़रा पार देखना ।।२।।
चौदह तबक़[3] का हाल अयां[4] हो तुझे ज़रूर ।
ग़ाफ़िल न हो ख़याल से हुशियार देखना ।।३।।
सुन ला-मकां पे पहुँच के तेरी पुकार है ।
है आ रही सदा से सदा यार देखना ।।४।।
मिलना तो यार का नहीं मुशकिल मगर तक़ी ।
दुशवार[5] तो यह है कि है दुशवार देखना ।।५।।
तुलसी बिना करम[6] किसी मुर्शिद[7] रसीदा के ।
राहे-निजात[8] दूर है उस पार देखना ।।६।।

[८]

सतगुरु महिमा

॥ चौपाई ॥

परथम बन्दौं सतगुरु स्वामी । तुलसी चरन सरनि रति मानी ।। १।।
पुनि बन्दौं संतन सरनाई । जिन पुनि सुरत निरत दरसाई ।। २।।
चरन सरन संतन बलिहारी । सूरति दीन्ही लखन सिहारी ।। ३।।
सरन सूर सूरति समझाई । सतगुरु मूर मरम लख पाई ।। ४।।
मैं मतिहीन दीन दिल दीन्हा । संत सरन सतगुरु को चीन्हा ।। ५।।
सतगुरु अगम सिंध सुखदाई । जिन सत राह रीति दरसाई ।। ६।।
पुनि-पुनि चरन कँवल सिर नाऊँ । दीन होइ संतन गति गाऊँ ।। ७।।
दीन जानि दीन्ही मोहिं आँखी । मैं पुनि चरन सरन गहि भाखी ।। ८।।
मैं तौ चरन भाव चित चेरा । मोहिं अति अधम जानि कै हेरा ।। ९।।
मैं तौ प्रति प्रति दास तुम्हारा । संत बिना कोई पावै न पारा ।।१०।।
संत दयाल कृपा सुखदाई । तुम्हरी सरन अधम तरि जाई ।।११।।
आदि न अंत बिन कोई । तुलसी तुच्छ सरन में सोई ।।१२।।
जो कछु करहिं करहिं सोइ संता । संत बिना नहिं पावै पंथा ।।१३।।
मोरे इष्ट संत स्तुति सारा । सतगुरु संत परम पद पारा ।।१४।।
सतगुरु सत्तपुरुष अबिनासी । राह दीन लखि काटी फाँसी ।।१५।।
कँवलकंज सतगुर पद बासी । सूरति कीन दीन निज दासी ।।१६।।

१. भेद २. काला पर्दा अर्थात् तीसरा तिल ३. लोक ४. प्रकट ५. कठिन, मुश्किल
६. कृपा ७. पहुँचा हुआ गुरु ८. मुक्ति का मार्ग

सूरत निरत आदि अपनाई । सतगुरु चरन सरन लौ लाई ॥१७॥
बार बार सतगुरु बलिहारी । तुलसी अधम अघ नाहिं बिचारी ॥१८॥
बन्दौं सब चर अचर समाना । जानौ तुलसी दास निदाना ॥१९॥
मैं किंकर पर दया बिचारा । अनहित प्रिये करौ हित सारा ॥२०॥
सब के चरन बन्दि सिर नाई । प्रिये लार लै प्रीति जनाई ॥२१॥
तुम प्रति भूल बंद अस गाई । बार बार चरनन सिर नाई ॥२२॥
पुनि बन्दौं सतगुरु सत भावा । जिनसे बस्तु अगोचर पावा ॥२३॥
सतगुरु अगम अरूप अकाया । जिनकी गति मति संतन पाया ॥२४॥
सतगुरु की कस करहुँ बखानी । सूरति दीन्ही अगम निसानी ॥२५॥
लख लख अलख सुरति अलगानी । संतकृपा सतगुरु सहदानी ॥२६॥
सूरति सैल पेल रस राती । सतगुरु कंज पदम मद माती ॥२७॥
तुलसी तुच्छ कुच्छ नहिं जानै । सतगुरु चरन सरन रत मानै ॥२८॥
सूरति सतगुरु दीन्ह जनाई । नित नित चढ़ै गगन पर धाई ॥२९॥
सैल करै ब्रह्मंड निहारा । देखै आदि अंत पद सारा ॥३०॥
निरखा आदि अंत मधि माहीं । सोइ सोइ तुलसी भाखि सुनाई ॥३१॥
पिंड माहिं ब्रह्मंड समाना । तुलसी देखा अगम ठिकाना ॥३२॥
पिंड ब्रह्मंड में आदि अगाधा । पेली सुरति अलख लख साधा ॥३३॥
पिंड ब्रह्मंड अगम लख पाया । तुलसी निरखि अगाध सुनाया ॥३४॥
पिंड माहिं ब्रह्मंड दिखाना । ता की तुलसी करी बखाना ॥३५॥

॥ सोरठा ॥

पिंड माहिं ब्रह्मंड, देखा निज घट जोइ कै ।
गुरु पद पदम प्रकास, सत प्रयाग असनान करि ॥

॥ दोहा ॥

बूझै कोइ कोइ संत, आदि अंत जा ने लखी ।
परचै परम प्रकासु जिन अकास अम्बर चखी ॥

कुंडलियाँ

(३)

सतगुरु दीन दयाल बिन जुग जुग मारे जायँ ॥
जुग जुग मारे जायें खायँ फिर जम की लाती ।
ऐसे मूरख लोग चलैं वाही के साथी ॥
सुन सुन कथा पुरान जान कर जनम बिगारा ।

सिम्रित सास्तर बेद काल ने किया पसारा ॥
तुलसी सतसंग संत बिन फिर फिर खेही खायँ ।
सतगुरु दीनदयाल बिन जुग जुग मारे जायँ ॥

(४)

सब्द सब्द सब कहत हैं सब्द सुन्न के पार ॥
सब्द सुन्न के पार सार सोई सब्द कहावै ।
पच्छिम द्वार के पार, पार के पार समावै ॥
दो दल कँवल मँझार, मद्ध के मधि में आवै ।
संतन दिया लखाय सार, सोइ सब्द कहावै ॥
तुलसी सत सतलोक से कहूँ कुछ भेद निनार ।
सब्द सब्द सब कहत हैं सब्द सुन्न के पार ॥

तुलसी दास जी के शब्द

ब्रह्म और राम से नाम की विशेषता

दोहा

राम नाम मनिदीप धरु, जीह देहरीं द्वार ॥
तुलसी भीतर बाहिरहुँ, जो चाहसि उजिआर ॥२७॥

चौपाई

नाम जीहँ जपि जागहिं जोगी । बिरति बिरंचि प्रपंच बियोगी ॥१॥
ब्रह्म सुखहिं अनुभवहिं अनूपा । अकथ अनामय नाम न रूपा ॥२॥
जाना चहहिं गूढ़ गति जेऊ । नाम जीहँ जपि जानहिं तेऊ ॥३॥
साधक नाम जपहिं लय लाएँ । होहिं सिद्ध अणिमादिक पाएँ ॥४॥
जपहिं नामू जन आरत भारी । मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी ॥५॥
राम भगत जग चारि प्रकारा । सुकृति चारिउ अनघ उदारा ॥६॥
चहूँ चतुर कहुँ नाम अधारा । ग्यानी प्रभुहिं विसेषि पिआरा ॥७॥
चहुँ जुग चहुँ श्रुति नाम प्रभाऊ । कलि विसेषि नहिं आन उपाऊ ॥८॥

दोहा

सकल कामनाहीन जे, रामभगति रस लीन ॥
नाम सुप्रेम पियूष ह्रद, तिन्हहुँ किये मनमीन ॥२८॥

चौपाई

अगुन सगुन दुई ब्रह्म सरूपा । अकथ अगाध अनादि अनूपा ॥१॥

मोरें मत बड़ नामु दुहू तें । किए जेंहि जुग निज बस निज बूतें ॥२॥
प्रौढ़ि सुजन जन जानंहि जन की । कहउँ प्रतीति प्रीति रुचि मन की ॥३॥
एकु दारुगत देखिअ एकू । पावक सम जुग ब्रह्म बिवेकू ॥४॥
उभय अगम जुग सुगम नाम तें । कहेउँ नामु बड़ ब्रह्म राम तें ॥५॥
व्यापकु एक ब्रह्म अबिनासी । सत चेतन घन आनंद रासी ॥६॥
अस प्रभु हृदय अछत अबिकारी । सकल जीव जग दीन दुखारी ॥७॥
नाम निरूपन नाम जतन ते । सोउ प्रगटत जिमि मोल रतन तें ॥८॥

दोहा

निरगुन तें एहि भांति बड़, नाम प्रभाउ अपार ॥
कहउं नाम बड़ राम तें, निज बिचार अनुसार ॥२९॥

चौपाई

राम भगत हित नर तनु धारी । सहि संकट किए साधु सुखारी ॥१॥
नामु सप्रेम जपत अनयासा । भगत होंहि मुद मंगल बासा ॥२॥
राम एक तापस तिय तारी । नाम कोटि खल कुमति सुधारी ॥३॥
रिषि हित राम सुकेतु सुता की । सहित सेन सुत कीन्हि बिबाकी ॥४॥
सहित दोष दुख दास दुरासा । दलइ नाम जिमि रबि निशि नासा ॥५॥
भंजेउ राम आपु भव चापू । भव भय भंजन नाम प्रतापू ॥६॥
दंडक बनु प्रभु कीन्ह सुहावन । जनमन अमित नाम किए पावन ॥७॥
निसिचर निकर दले रघुनंदन । नामु सकल कलि कलुष निकंदन ॥८॥

दोहा

सबरी गीध सुसेवकनि, सुगति दीन्हि रघुनाथ ॥
नाम उधारे अमित खल, बेद बिदित गुणगाथ ॥३०॥

चौपाई

राम सुकंठ बिभीषण दोऊ । राखे सरण जान सबु कोऊ ॥१॥
नाम अनेक गरीब नेवाजे । लोक बेद बर बिरिद बिराजे ॥२॥
राम भालु कपि कटकु बटोरा । सेतु हेतु श्रमु कीन्ह न थोरा ॥३॥
नामु लेत भवसिंधु सुखाहीं । करहु बिचार सुजन मनमाहीं ॥४॥

राम सकुल रन रावन मारा । सीय सहित निजपुर पगु धारा ।।५।।
राजा रामु अवध रजधानी । गावत गुन सुर मुनि बर बानी ।।६।।
सेवक सुमिरत नाम सप्रीती । बिनु श्रम प्रबल मोह दलु जीती ।।७।।
फिरत सनेहँ मगन सुख अपनें । नाम प्रसाद सोच नहिं सपनें ।।८।।

दोहा

ब्रह्म राम तें नामु बड़, बर दायक बर दानि ।।
रामचरित सत कोटि महँ, लिय महेश जियँ जानि ।।३१।।

चौपाई

नाम प्रसाद संभु अबिनासी । साजु अमंगल मंगल रासी ।।१।।
सुक सनकादि सिद्ध मुनि जोगी । नाम प्रसाद ब्रह्मसुख भोगी ।।२।।
नारद जानेउ नाम प्रतापू । जग प्रिय हरि हरिहर प्रिय आपू ।।३।।
नामु जपत प्रभु कीन्ह प्रसादू । भगत सिरोमनि भे प्रहलादू ।।४।।
ध्रुव सगलानि जपउ हरिनाऊँ । पायउ अचल अनूपम ठाऊँ ।।५।।
सुमिरि पवनसुत पावन नामू । अपने बस करि राखेउ रामू ।।६।।
अपतु अजामिलु गजु गणिकाऊ । भए मुकत हरिनाम प्रभाऊ ।।७।।
कहहुँ कहाँ लगि नाम बड़ाई । रामु न सकहिं नाम गुन गाई ।।८।।

दोहा

नाम रामु को कलपतरु, कलि कल्यान निवासु ।।
जो सुमिरत भयो भांग तें, तुलसी तुलसीदासु ।।३२।।

ज्ञान मार्ग और भक्ति मार्ग में अन्तर

चौपाई

सुनहु तात यह अकथ कहानी । समुझत बनै न जाइ बखानी ।।१।।
ईस्वर अंस जीव अविनासी । चेतन अमल सहज सुखरासी ।।२।।
सो मायाबस भयउ गोसाईं । बंध्यो कीर मिरकट की नाईं ।।३।।
जड़ चेतनहि ग्रंथि परि गई । जदपि मृषा छूटत कठिनई ।।४।।
तबतें जीव भयउ संसारी । छूट न ग्रंथि न होई सुखारी ।।५।।

स्रुति पुरान बहु कहेउ उपाई । छूट न अधिक अधिक अरुझाई ।।६।।
जीव हृदय तम मोह बिसेखी । ग्रंथि छूट किमि परै न देखी ।।७।।
अस संजोग ईस जब करई । तबहुँ कदाचित सो निरुअरई ।।८।।
सात्विक श्रद्धा धेनु सुहाई । जौं हरि कृपा हृदयँ बस आई ।।९।।
जप-तप ब्रत जम नियम अपारा । जे श्रुति कह सुभ धर्म अचारा ।।१०।।
तेई तृन हरित चरै जब गाई । भाव बच्छ सिसु पाइ पेन्हाई ।।११।।
नोइ निबृत्ति पात्र बिस्वासा । निर्मल मन अहीर निज दासा ।।१२।।
परम धर्ममय पय दुहि भाई । अवटै अनल अकाम बनाई ।।१३।।
तोष मरुत तब छमा जुड़ावै । धृतिसम जावनु देइ जमावै ।।१४।।
मुदिता मथै बिचार मथानी । दम अधार रजु सत्य सुबानी ।।१५।।
तब मथि काढ़ि लेइ नवनीता । बिमल बिराग सुभग सुपुनीता ।।१६।।

दोहा

जोग अगिनि करि प्रगट तब, कर्म सुभासुभ लाइ ।।
बुद्धि सिरावै ग्यान घृत, ममता मल जरि जाई ।।१८२।।
तब विग्यान रूपिनी, बुद्धि बिसद घृत पाइ ।।
चित्त दिया भरि धरै, दढ़ समता दिअटि बनाइ ।।१८३।।
तीनि अवस्था तीनि गुन, तेहि कपास तें काढ़ि ।।
तूल तुरीय सँवारि पुनि, बाती करै सुगाढ़ि ।।१८४।।

सोरठा

एहि बिधि लेसै दीप, तेज रासि बिग्यानमय ।।
जातहिं जासु समीप, जरहिं मदादिक सलभ सब ।।१७।।

चौपाई

सोहमस्मि इति बृत्ति अखंडा । दीप सिखा सोइ परम प्रचंडा ।।१।।
आतम अनुभव सुख सुप्रकासा । तब भव मूल भेद भ्रम नासा ।।२।।
प्रबल अबिद्या कर परिवारा । मोह आदि तम मिटइ अपारा ।।३।।
तब सोइ बुद्धि पाइ उजिआरा । उरगृह बैठि ग्रंथि निरुआरा ।।४।।
छोरन ग्रंथि पाव जौं सोई । तब यह जीव कृतारथ होई ।।५।।
छोरत ग्रंथि जानि खगराया । बिघ्न अनेक करहि तब माया ।।६।।

रिद्धि सिद्धि प्रेरैं बहु भाई । बुद्धिहि लोभ दिखावहिं आई ॥७॥
कल बल छल करि जाहिं समीपा । अंचल बात बुझावहिं दीपा ॥८॥
होइ बुद्धि जौं परम सयानी । तिन्ह तन चितव न अनहित जानी ॥९॥
जौं तेहि विघ्न बुद्धि नहिं बाधी । तौ बहोरि सुर करहिं उपाधी ॥१०॥
इंद्री द्वार झरोखा नाना । तहँ तहँ सुर बैठे करि थाना ॥११॥
आवत देखहिं बिषय-बयारी । ते हठि देहिं कपाट उघारी ॥१२॥
जब सो प्रभंजन उर गृह जाई । तबहिं दीप बिग्यान बुझाई ॥१३॥
ग्रंथि न छूटि मिटा सो प्रकासा । बुद्धि बिकल भइ विषय बतासा ॥१४॥
इन्द्रिन्ह सुरन्ह न ग्यान सुहाई । बिषय भोग पर प्रीति सदाई ॥१५॥
बिषय समीर बुद्धि कृत भोरी । तेहि बिधि दीप को बार बहोरी ॥१६॥

दोहा

तब फिरि जीव बिबिधि बिधि, पावै संसृति क्लेस ॥
हरि माया अति दुस्तर, तरि न जाई बिहगेस ॥१८५॥
कहत कठिन समुझत कठिन, साधन कठिन बिबेक ॥
होइ धुनाच्छर न्याय जौं, पुनि प्रत्यूह अनेक ॥१८६॥

चौपाई

ग्यान पंथ कृपान कै धारा । परत खगेस होइ नहिं बारा ॥१॥
जा निर्बिघ्न पँथ निर्बहई । सो कैवल्य परम पद लहई ॥२॥
अति दुर्लभ कैवल्य परमपद । संत पुरान निगम आगम बद ॥३॥
राम भजन सोइ मुकत गुसाईं । अनइच्छित आवइ बरिआईं ॥४॥
जिमि थल बिनु जल रहि न सकाई । कोटि भांति कोउ करै उपाई ॥५॥
तथा मोच्छ सुख सुनु खगराई । रहि न सकै हरिभगति बिहाई ॥६॥
अस बिचारि हरिभगत सयाने । मुक्ति निरादरि भगति लुभाने ॥७॥
भगति करत बिन जतन प्रयासा । संसृति मूल अबिद्या नासा ॥८॥
भोजन करिअ तृपिति हित लागी । जिमि सो असन पचबै जठरागी ॥९॥
अस हरिभगति सुगम सुखदाई । को अस मूढ़ न जाहि सुहाई ॥१०॥

दोहा

सेवक सेव्य भाव बिनु, भव न तरिअ उरगारि ॥
भजहु राम पद पंकज, अस सिद्धांत बिचारि ॥१८७॥

जो चेतन कहँ जड़ करइ, जड़हि करइ चैतन्य ॥
अस समर्थ रघुनायकहि, भर्जाहं जीव ते धन्य ॥१८८॥

चौपाई

कहेऊँ ग्यान सिद्धांत बुझाई। सुनहु भगति मनि कै प्रभुताई ॥१॥
रामभगति चिंतामनि सुंदर। बसइ गरुड़ जाकै उर अंतर ॥२॥
परम प्रकास रूप दिन राती। नहि कछु चहिअ दिआ घृत बाती ॥३॥
मोह दरिद्र निकट नहिं आवा। लोभ बात नहि ताहि बुझावा ॥४॥
प्रबल अबिद्या तम मिटि जाई। हारहिं सकल सलभ समुदाई ॥५॥
खल कामादि निकट नहिं जाहीं। बसइ भगति जाके उर माहीं ॥६॥
गरल सुधासम अरि हित होई। तेहि मनिबिनु सुख पाव न कोई ॥७॥
ब्यापहिं मानस रोग न भारी। जिन्ह के बस सब जीव दुखारी ॥८॥
रामभगति मनि उर बस जाकें। दुख लवलेस न सपनेहुँ ताकें ॥९॥
चतुर सिरोमनि तेइ जग माहीं। जे मनि लागि सु जतन कराहीं ॥१०॥
सो मनि जदपि प्रगट जग अहई। रामकृपा बिनु नहिं कोउ लहई ॥११॥
सुगम उपाय पाइबे केरे। नर हतभाग्य देत भट भेरे ॥१२॥
पावन पर्बत बेद पुराना। राम कथा रुचिराकर नाना ॥१३॥
मर्मी सज्जन सुमति कुदारी। ग्यान बिराग नयन उरगारी ॥१४॥
भावसहित खोजइ जो प्रानी। पाव भगति मनि सब सुखखानी ॥१५॥
मोरे मन प्रभु अस बिस्वासा। राम ते अधिक राम कर दासा ॥१६॥
राम सिंधु घन सज्जन धीरा। चंदन तरु हरिसंत समीरा ॥१७॥
सबकर फल हरिभगति सुहाई। सो बिनु संत न काहूँ पाई ॥१८॥
अस बिचारि जोइ करु सतसंगा। रामभगति तेहि सुलभ बिहंगा ॥१९॥

दोहा

ब्रह्म पयोनिधि मंदर, ग्यान संत सुर आहिं।
कथा सुधा मथि काढ़हिं, भगति मधुरता जाहिं ॥१८९॥
बिरति चर्म असि ग्यान मद, लोभ मोह रिपु मारि ॥
जय पाइआ सो हरिभगति, देखु खगेस बिचारि ॥१९०॥

प्रेम और भक्ति

(चातक का दृष्टान्त)

एक भरोसा एक बल, एक आस बिस्वास।
स्वाति सलिल[१] गुरु चरन हैं, चात्रिक तुलसीदास॥
ऊँची जाति पपीहरा, पियत न नीचो नीर।
कै याँचै[२] घनश्याम[३] सों, कै दुख सहै सरीर॥
गंगा जमुना सरसुती, सात सिन्धु[४] भरपूर।
तुलसी चातक के मते[५], बिन स्वाती सब धूर॥
जौ घन[६] बरसै समय सिर[७], जौ भरि जनम उदास[८]।
तुलसी या चित चातकहिं, तऊ तिहारी आस[९]॥
चातक तुलसी के मते, स्वातिहुँ पिऐ न पानि।
प्रेम तृषा बाढ़ति भली, घटे घटैगी आनि[१०]॥
रटत रटत रसना लटी[११], तृखा[१२] सूखि गे[१३] अंग।
तुलसी चातक प्रेम को, नित नूतन रुचि रंग[१४]॥
चढ़त न चातक चित कबहुँ, प्रिय पयोद[१५] के दोष।
तुलसी प्रेम पयोधि की[१६], ताते[१७] नाप न जोख[१८]॥
उपलि बरषि[१९] गरजत तरजि[२०], डारत कुलिस कठोर[२१]।
चितव कि चातक मेघ तजि, कबहुं दूसरी ओर[२२]॥
मान राखिबो माँगिबो, पिय सों नित नव नेहु।
तुलसी तीनिउ तब फबैं, जौ चातक मति लेहु[२३]॥

---

१. जल, पानी। २. मांगता है। ३. काले बादलों से। ४. समुद्र। ५. चातक की दृष्टि में।
६. बादल। ७. वक्त पर, अपने ठीक समय पर। ८. या चातक के पूरे जीवन में भी उदास रहे
अर्थात् न बरसे। ९. तुलसीदास जी कहते हैं कि हे प्रभु, मेरे चातक रूपी चित्त को फिर भी तेरी
ही आस रहेगी। १०. तुलसीदास जी कहते हैं कि हे चातक! मेरी सलाह है कि तू स्वाति में बरसा
हुआ पानी भी न पीना, क्योंकि (प्रभु के) प्रेम की प्यास तो हमेशा बढ़ती ही रहनी चाहिये: अगर
घट गई तो प्रेम की आन ही घट जायेगी। ११. थक कर लड़खड़ा गई। ११. प्यास से। १३. सूख
गये। १४. इतने पर भी चातक के प्रेम का रंग और रूप हर रोज़ निखरता ही रहता है।
१५. बादल। १६. प्रेम के अथाह समुद्र की। १७. इसलिये! १८. माप-तोल नहीं हो सकता, थाह
नहीं पाई जा सकती। १९. ओले बरसाता है। २०. कड़क कर गरजता है। २१. कठोरता के साथ
बिजलियां गिराता है। २२. परन्तु क्या चातक बादल को छोड़ कर कभी दूसरी ओर देखता है।
२३. मान रखना, मांगना और फिर भी प्रियतम के लिये बराबर प्रेम बनाये रखना—ये तीनों बातें
चातक जैसे प्रेमी को ही शोभा देती हैं। चातक इतना मान रखता है कि सिवाय बादल के किसी
और से कुछ नहीं मांगता, मांगनेवाला भी ऐसा है कि मांगते हुए कभी थकता नहीं: और न मिलने
पर भी उसी तरह प्रेम बनाये रखता है।

तुलसी चातक माँगनो, एक एक घन दानि ।
देत जो भूभाजन भरत, लेत जोर घूँटक पानि१ ॥
जीव चराचर जहँ लगें, है सब को हित मेह ।
तुलसी चातक मन बस्यो, घन सो सहज सनेह२ ॥
बास बेष बोलनि चलनि, मानस मंजु मराल ।
तुलसी चातक प्रेम की, कीरति बिसद बिसाल३ ॥

सतगुरु की चरन धूलि की महिमा

सोरठा

बन्दौं गुरुपदकंज, कृपासिंधु नररूप हरि ॥
महामोह तम पुंज, जासु बचन रवि कर निकर ॥१॥

चौपाई

बंदउँ गुरु पद पदुम परागा । सुरुचि सुबास सरस अनुरागा ॥१॥
अमिय मूरिमय चूरन चारू । समन सकल भव रुज परिवारू ॥२॥
सुकृत संभु तन बिमल बिभूती । मंजुल मंगल मोद प्रसूती ॥३॥
जन मन मंजु मुकुर मलहरनी । किये तिलक गुनगन बसकरनी ॥४॥
श्रीगुरपद नख मनिगन जोती । सुमिरत दिब्य दृष्टि हिय होती ॥५॥
दलन मोह तम सो सप्रकासु । बड़े भाग उर आवहिं जासू ॥६॥
उघरहिं बिमल बिलोचक हीके । मिटहिं दोष दुख भव रजनी के ॥७॥
सूझहिं रामचरित मनि मानिक । गुपुत प्रगट जहँ जो जेहिं खानिक ॥८॥

दोहा

जथा सुअंजन आंजि दृग, साधक सिद्ध सुजान ॥
कौतुक देखहि सैल बन, भूतल भूरि निधान ॥१॥

---

१. तुलसीदास जी कहते हैं कि चातक ही एक निराला मांगनेवाला है और बादल भी एक ही (अद्वितीय) दानी है । बादल इतना देता है कि धरती के सब बरतन (तालाब, कुँए वगैरह) भर जाते हैं, पर चातक तो प्रेम के अमृत की केवल एक बूंद ही लेता है । २. सभी प्राणियों के लिये बादल हितकारी (लाभ देने वाला) है: परन्तु चातक का ख़याल लाभ या हानि की ओर नहीं है, उसके मन में तो बादल के लिये सिर्फ़ निश्छल और पवित्र प्रेम ही बसा हुआ है । ३. हंस का निवास-स्थान मानसरोवर है, वेष (रंग-रूप) और आवाज़ मनोहर है, चाल-ढाल (मोती चुगना तथा दूध और पानी को अलग-अलग करना) निराली है । इन सभी गुणों में वह चातक से कहीं बढ़ कर है, परन्तु चातक के प्रेम की महानता के सामने ये गुण कुछ भी नहीं हैं, अर्थात् प्रभु का प्रेम अन्य सभी गुणों और ख़ूबियों से बढ़ कर है, ईश्वर-प्रेम ही सबसे महान है ।

दयाबाई जी का शब्द

जग तजि हरि भजि दया गहि, कूर कपट सब छाड़ि ।
हरि सनमुख गुर ज्ञान गहि, मनहीं सूँ रन मांड़ि[१] ।।१।।
सूरा वही सराहिये, बिन सिर लड़त कवंद[२] ।
लोक लाज कुल कान कूँ, तोड़ि होत निरबंद ।।२।।
सुनत सबद नीसान[३], मन में उठत उमंग ।
ज्ञान गुरज[४] हथियार गहि, करत जुध अरि[५] संग ।।३।।
जो पग धरत सो द्रिड़ धरत, पग पाछे नहिं देत ।
अहंकार कूँ मार करि, राम रूप जस लेत ।।४।।
आप मरन भय दूर करि, मारत रिपु[५] को जाय ।
महा मोह दल दलन करि, रहै सरूप समाय ।।५।।
सूरा सनमुख समर[६] में, घायल होत निसंक ।
यों साधू संसार में, जग के सहै कलंक ।।६।।
कायर कंपै देख करि, साधू को संग्राम ।
सीस उतार भुइँ धरै, जब पावै निज ठाम ।।७।।

१. लड़ाई ठानो २. एक राक्षस का नाम जिसका सर गदा की चोट लगने से धड़ के भीतर घुस गया था लेकिन फिर भी वह बराबर लड़ता था।
३. डंका ४. गदा ५. दुश्मन ६. लड़ाई

दरिया साहिब का शब्द

दरिया दरबारा खुल गया अजर केवाड़ा ।।टेक।।
चमकी बीज चली ज्यों धारा, ज्यों बिजुली बिच तारा ।।
खुल गये चंद बंद बदरी का, घोर मिटा अंधियारा ।।
लौ लगी जाय लगन के लारा, चाँदनी चौक निहारा ।।
सूरत सैल करे नभ ऊपर, बंकनाल पट फारा ।।
चढ़ गई चाँप चली ज्यों धारा, ज्यों मकरी मकतारा ।।
मैं मिली जाय पाय पिय प्यारा, ज्यों सलिता जलधारा ।।
देखा रूप अरूप अलेखा, लेखा वार न पारा ।।
दरिया दिल दरवेश भये तब, उतरे भवजल पारा ।।

दादू साहिब के शब्द

[१]

जानै अंतरजामी अचरज अकथ अनामी ।।टेक।।
नौ लख कँवल जुगल दल अंदर, द्वादस साहिब स्वामी ।
सूरत कड़क कँवल दल नभ पर, झटक झटक थिर थामी ।।
सूरत शब्द शब्द में सूरत, अगम अगोचर धामी ।
कासे कहों पिया सुख सारा, ज्यों तिरिया मुसकानी ।।
नहिं यह जोग ज्ञान तुरिया तत, यह गति अकह कहानी ।
चंद न सूर पवन नहिं पानी, क्योंकर करूँ बखानी ।।
सुन्न न गगन धरनि नहिं तारा, अल्लाह रब्ब नहिं रामी ।
कहा कहूँ कहिवे की नाहीं, जानत संत सुजानी ।।
बेद न भेद भेष नहिं जानत, कोऊ देत न हामी ।
दादू दृग दीदार हिये के, सूरत करत सलामी ।।
मैं पिय प्यारी प्यारे पिया अपने, मिल रहे एक ठिकानी ।
सूरत सार सिंध लख पाई, यह गति बिरले जानी ।।

[२]

दादू जानै न कोई संतन की गति गोई ।।टेक।।
अवगति अन्त अन्त अन्तर पट, अगम अगाध अगोई ।
सुन्नी सुन्न सुन्न के पारा, अगुन सगुन नहिं दोई ।।

अंड न पिंड खंड ब्रह्मण्डा, सूरत सिंध समोई ।
निराकार आकार न जोती, पूरन ब्रह्म न होई ।।
उनको पार सार सोइ पइहै, मन तन गति पति खोई ।
दादू दीन लीन चरनन चित, मैं उनकी सरनाई ।।

[३]

दादू देखा दीदा सब कोई कहत शुनीदा ।।टेक।।
हवा हिरस अंदर बस कीदा, तब यह दिल भया सीधा ।
अनहद नाद गगन गढ़ गरजा, तब रस खाया अमीदा ।।
सुखमन सुन्न सुरत महलन में, आया अजर अक़ीदा ।
अष्ट कँवल दल दृग में दर्शन, पाया ख़ुद ख़ुदीदा ।।
जैसे दूध दूध दधि माखन, बिन मथे भेद न घीदा ।
ऐसे तत्त मत्त सत साधन, तब टुक नशा पिया पीदा ।।
नहिं वह जोग ज्ञान मुद्रा तत्त, यह गत और पदीदा ।
जो कोइ चीन्ह लीन्ह यह मारग, कारज हो गया जीदा ।।
मुरशिद सत्त गगन गुरु लखिया, तन मन कीन उसीदा ।
आशिक़ यार अधर लख पाया, होगया दीदम दीदा ।।

[४]

दादू कहत पुकारी कोई माने नाहिं हमारी ।।टेक।।
पंडित काज़ी बेद कितेबे पढ़ पढ़ मुए लबारी ।।१।।
वे तीरथ, वे हज को जाते बूड़े भवजल धारी ।।२।।
ईसाई सब धोखा खाया पढ़ अंजील बिचारी ।।३।।
हिंदू तुरक ईसाई तीनों, कर्म धर्म पच हारी ।।४।।
नूर ज़हूर ख़ुदा हम पाया उतरे भौजल पारी ।।५।।

दोहे

साईं सत संतोख दे, भाव भगत बिश्वास ।
सिदक सबूरी साँच दे, माँगै दादू दास ।।१।।
जीवत माटी ह्वै रहो, साईं सनमुख होय ।
दादू पहले मरि रहो, पीछे मरे सब कोय ।।२।।

दादू दावा दूर कर, निरदावे दिन काट ।
केते सौदा करि गये, पंसारी के हाट ॥३॥
दादू दावा आदि का, निरदावा कैसा ।
दिल की दुरमति दूर कर, सौदा कर ऐसा ॥४॥
नहीं तहां से सब हुआ, फिर नाहीं हो जाय ।
दादू नाहीं हो रहो, साहब से लौ लाय ॥५॥
उपजै बिनसै गुन धरै, यह माया का रूप ।
दादू देखत थिर नहीं, छिन छाया छिन धूप ॥६॥
बिपति भली गुरु संग में, काया कसौटी दुख ॥
नाम बिना किस काम के, दादू संपति सुख ॥७॥
क्या मुख ले हँस बोलिये, दादू दीजै रोय ।
जनम अमोलक आपना, चला अकारथ खोय ॥८॥

धर्मदास जी का शब्द

भगति दान गुरु दीजिए देवन के देवा हो ।
जनम पाए न बीसरों करिहों पद सेवा हो ।।
तीरथ बरत मैं न करूँ न देवल पूजा हो ।
मनसा बाचा करमना मेरे और न दूजा हो ।।
आठ सिद्ध नौ निद्ध हैं बैकुण्ठ का बासा हो ।
सो मैं न कुछ माँगहूँ मेरे समरथ दाता हो ।।
सुख सम्पत्ति परिवार धन सुन्दर बर नारी हो ।
सुपने इच्छा न उठे गुरु आन तुम्हारी हो ।।
धर्मदास की बेनती समरथ सुन लीजै हो ।
आवागमन निवार के अपना कर लीजै हो ।।

नाभा जी का शब्द

नाभा नभ खेला, कँवल केल सर सैला ।।टेक।।
दरपन नैन सैन मन मांजा, लाजा अलख अकेला ।
पल पर दल दल ऊपर दामिनि, जोत में होत उजेला ।।
अंडा पार सार लख सूरत, सुन्नी सुन्न सुहेला ।
चढ़ गई धाय जाय गढ़ ऊपर, सबद सुरत भया मेला ।।
यह सब खेल अलेख अमेला, सिंध नीर नद मेला ।
जल जलधार सार पद जैसे, नहीं गुरु नहिं चेला ।।
नाभा नैन ऐन अन्दर के, खुल गये निरख निहाला ।
संत उच्छिष्ट वार मन झेला, दुर्लभ दीन दुहेला ।।

नामदेव जी के शब्द

रागु गोंड बाणी नामदेउ जी की घरु १॥

१ ओ सतिगुर प्रसादि ॥

असुमेध जगने[1] ॥ तुला पुरख दाने[2] ॥ प्राग इसनाने[3] ॥१॥
तउ न पुजहि हरि कीरति नामा ॥
अपुने रामहि भजु रे मन आलसीआ ॥१॥रहाउ॥
गइआ पिंडु भरता[4] ॥ बनारसि असि बसता[5] ॥
मुख बेद चतुर पड़ता ॥२॥
सगल धरम अछिता[6] ॥ गुर गिआन इंद्री दृड़ता[7] ॥
खटु करम[8] सहित रहता ॥३॥
सिवा सकति संबादं[9] ॥ मन छोडि छोडि सगल भेदं[10] ॥
सिमरि सिमरि गोबिंदं ॥ भजु नामा[11] तरसि[12] भव सिंधं ॥४॥१॥

रागु सोरठि घरु ३ ॥

अणमड़िआ मंदलु बाजै[13] ॥ बिनु सावण घनहरु गाजै[14] ॥
बादल बिनु बरखा होई ॥ जउ ततु बिचारै कोई[15] ॥१॥

---

१. अश्वमेध यज्ञ २. अपने वजन के बराबर स्वर्ण का दान ३. प्रयाग तीर्थ का स्नान ४. गया जाकर पित्रों को पिंड दान करता है ५. काशी में असी घाट पर निवास करता है ६. सब कर्म अच्छी तरह करता है ७. इन्द्रियों को वश में रखता है ८. षटकर्म करता है ९. शिव शक्ति के संवाद अथवा चर्चा में लगा रहता है . १०. ऐ मन ! तू सब कर्म-काण्ड को त्याग दे ११. नाम १२. तरेगा १३. अनमड़िया, (ऐसा मृदंग जिस पर चमड़ा मढ़ा हुआ न हो) बजता है १४. सावन महीने के बिना ही बादल गर्जता है १५. बादलों के बिना वर्षा होती है—इसका अनुभव केवल ऊँची अवस्था में पहुँच कर वास्तविकता को पहचानने से होता है

मोकउ मिलिओ रामु सनेही ॥ जिह मिलिऐ देह सुदेही[1] ॥१॥रहाउ॥
मिलि पारस कंचनु होइआ ॥ मुख मनसा रतनु परोइआ[2] ॥
निज भाउ भइआ भ्रमु भागा ॥ गुर पूछे मनु पतीआगा[3] ॥२॥
जल भीतरि कुंभ समानिआ ॥ सभ रामु एकु करि जानिआ[4] ॥
गुर चेले है मनु मानिआ[5] ॥ जन नामै ततु पछानिआ ॥३॥३॥

प्रभाती बाणी नामदेव जी की ॥

आदि जुगादि जुगादि जुगो जुगु ताका अंतु न जानिआ ॥
सरब निरंतरि[6] रामु रहिआ रवि[7] ऐसा रूपु बखानिआ[8] ॥१॥
गोबिदु गाजै सबदु बाजै[9] ॥ आनद रूपी मेरो रामईआ ॥१॥रहाउ॥
बावन[10] बीखू बानै बीखे बासु ते सुख लागिला ॥
सरबे आदि परमलादि कासट चंदनु भैइला[11] ॥२॥
तुम्हचे[12] पारसु हमचे[13] लोहा संगे कंचनु भैइला[14] ॥
तू दइआलु रतनु लालु नामा साचि समाइला[15] ॥३॥२॥

आसा बाणी स्री नामदेव जी की ॥

एक अनेक बिआपक पूरक जत देखउ तत सोई ॥
माइआ चित्र बचित्र बिमोहित बिरला बूझै कोई ॥१॥
सभु गोबिंदु है सभु गोबिंदु है गोबिंद बिनु नही कोई ॥
सूतु एकु मणि सत सहंस जैसे ओति पोति प्रभु सोई[16] ॥१॥ रहाउ॥
जल तरंग अरु फेन बुदबुदा जल ते भिंन न होई ॥
इहु परपंचु पारब्रहम की लीला बिचरत आन न होई[17] ॥२॥

---

१. देह में आना सार्थक हो जाता है अर्थात् जन्म सफल हो जाता है २. मुँह और मन में नाम रूपी रतन पिरो लिया. भाव हर समय नाम-भक्ति में लीन हो गया ३. मन मान गया ४. समुद्र में घड़ा समा गया (जीव की आत्मा परमात्मा में समा गई); अब हर स्थान और हर एक जीव के अन्दर वही (परमात्मा) समाया हुआ प्रतीत होने लगा ५. शिष्य का गुरु पर निश्चय हो गया ६. सबके अन्दर ७. रम रहा है ८. कहा गया है ९. अन्तर में शब्द धुनकारें दे रहा है १०. चंदन ११. बावन चंदन के वृक्ष से समस्त वृक्ष और ठूँठ तक चंदन बन गये हैं १२. तुम्हारा १३. हमारा १४. हो गया १५. समा गया १६. जैसे एक धागे में हजारों-सैकड़ों मनके पिरोये हुए हों. इसी प्रकार सृष्टि के ताने-बाने में प्रभु व्यापक है १७. जिस प्रकार पानी की लहरें, झाग और बुलबुले पानी से भिन्न चीजें नहीं हैं. इसी प्रकार यह पाँच तत्व की सृष्टि परमेश्वर से भिन्न नहीं है

मिथिआ भरमु अरु सुपन मनोरथ सति[1] पदारथु जानिआ[2] ॥
सुकृत मनसा गुर उपदेसी जागत ही मनु मानिआ ॥३॥
कहत नामदेउ हरि की रचना देखहु रिदै बीचारी ॥
घट घट अंतरि सरब निरंतरि केवल एक मुरारी ॥४॥१॥

बिलावलु बाणी भगत नामदेव जी की

१ ओ सतिगुर प्रसादि ॥

सफल जनमु मो कउ गुर कीना ॥
दुख बिसारि सुख अंतरि लीना ॥१॥
गिआन अंजनु[3] मो कउ गुरि दीना ॥
रामनाम बिनु जीवनु मन हीना[4] ॥१॥रहाउ॥
नामदेइ सिमरनु करि जानां ॥
जगजीवन सिउ जीउ समानां[5] ॥२॥१॥

बसंतु वाणी नामदेव जी की ॥

१ ओ सतिगुर प्रसादि ॥

साहिबु संकटवै[6] सेवकु भजै[7] ॥ चिरंकाल न जीवै देऊ कुल लजै[8] ॥१॥
तेरी भगति न छोडउ भावै लोगु हसै ॥
चरन कमल मेरे हीअरे बसै ॥१॥रहाउ॥
जैसे अपने धनहि प्रानी मरनु मांडै ॥
तैसे संत जनां राम नामु न छाडैं[9] ॥२॥
गंगा गइआ गोदावरी संसार के कामा ॥
नाराइणु सुप्रसंन होइ त सेवक नामा[10] ॥३॥१॥
लोभ लहरि अति नीझर[11] बाजै ॥ काइआ डूबै केसवा ॥१॥
संसारु समुंदे तारि गोबिंदे ॥ तारि लै बाप बीठला[12] ॥१॥रहाउ॥
अनिल बेड़ा हउ खेवि न साकउ ॥ तेरा पारि न पाइआ बीठुला ॥२॥

१. सच्च २. समझता है ३. सुरमा ४. राम नाम या शब्द के बिना जीवन निरर्थक है ५. सुमिरन के आधार पर नामदेव जी परमात्मा में लीन हो गये हैं ६. संकट देवे ७. सेवक तेरी भक्ति छोड़ जाये ८. लज्जित करता है ९. जिस प्रकार कई व्यक्ति अपने धन के लिये अपनी जान तक देने पर तुल जाते हैं पर धन नही छोड़ते, इसी प्रकार संत-जन भी नाम को नहीं छोड़ते १०. गंगा, यमुना, गोदावरी आदि तीर्थों को जाना यह दुनिया के काम हैं; पर हे नामदेव ! भक्ति वही है जिस पर प्रभु अपने नाम की दात करे ११. झरना, निर्झर १२. पिता

होहु दइआलु सतिगुरु मेलि तू ।। मो कउ पारि उतारे केसवा ।।३।।
नामा कहै हउ तरि[1] भी न जानउ ।।
मो कउ बाह देहि बाह देहि बीठुला ।।४।।२।।

रागु भैरउ नामदेव जीउ घरु २ ।।

घर की नारि तिआगै अंधा ।। पर नारी सिउ घालै धंधा ।।
जैसे सिंबलु[2] देखि सूआ[3] बिगसाना[4] ।। अंत की बार मूआ लपटाना ।।१।।
पापी का घरु अगने माहि ।। जलत रहै मिटवै कब नाहि ।।१।।रहाउ।।
हरि की भगति न देखै जाइ ।। मारगु छोडि अमारगि पाइ ।।
मूलहु भूला आवै जाइ ।। अंमृतु डारि लादि बिखु खाइ ।।२।।
जिउ बेस्वा के परै अखारा ।। कापरु पहिरि करहि सीगारा ।।
पूरे ताल निहाले सास ।। वा के गले जम का है फास ।।३।।
जा के मसतकि लिखिओ करमा ।। सो भजि परि है गुर की सरना ।।
कहत नाम देउ इहु बीचारु ।। इन बिधि संतहु उतरहु पारि ।।४।।२।।८।।

भैरउ नामदेव जीउ घरु २ ।।

जउ गुर देउ त मिलै मुरारि ।। जउ गुर देउ त उतरै पारि ।।
जउ गुर देउ त बैकुंठ तरै ।। जउ गुर देउ त जीवत मरै ।।१।।
सति सति सति सति सति गुर देव ।।
झूठु झूठु झूठु झूठु आन सभ सेव ।।१।। रहाउ ।।
जउ गुर देउ त नामु दृड़ावै ।। जउ गुर देउ न दहदिस धावै ।।
जउ गुर देउ पंच ते दूरि ।। जउ गुर देउ न मरिबो झूरि ।।२।।
जउ गुर देउ त अंमृत बानी ।। जउ गुर देउ त अकथ कहानी ।।
जउ गुर देउ त अंमृत देह ।। जउ गुर देउ नामु जपि लेहि ।।३।।
जउ गुर देउ भवन त्रै सूझै ।। जउ गुर देउ ऊच पद बूझै ।।
जउ गुर देउ त सीसु अकासि ।। जउ गुर देउ सदा साबासि ।।४।।
जउ गुर देउ सदा बैरागी ।। जउ गुर देउ पर निंदा तिआगी ।।
जउ गुर देउ बुरा भला एक ।। जउ गुर देउ लिलाटहि लेख ।।५।।

---

१. तैरना २. शालमली अथवा सेमल का वृक्ष ३. तोता ४. प्रसन्न होता है ५. कहते हैं कि सेमल के सुन्दर फूल को देख कर तोता उसे खाने के लिये जाता है, किन्तु फूल के रेशे चोंच में उलझ जाते हैं और वह मर जाता है

जउ गुर देउ कंधु[१] नही हिरै[२] ॥ जउ गुर देउ देहुरा फिरै ॥
जउ गुर देउ त छापरि छाई ॥ जउ गुर देउ सिहज[३] निकसाई[४] ॥६॥
जउ गुर देउ त अठसठि न्हाइआ ॥ जउ गुर देउ तनि चक्र लगाइआ ॥
जउ गुर देउ त दुआदस[५] सेवा ॥ जउ गुर देउ सभै बिखु मेवा ॥७॥
जउ गुर देउ त संसा टूटै ॥ जउ गुर देउ त जम ते छूटै ॥
जउ गुर देउ भउजल तरै ॥ जउ गुर देउ त जनमि न मरै ॥८॥
जउ गुर देउ अठदस[६] बिउहार ॥ जउ गुर देउ अठारह[७] भार ॥
बिनु गुर देउ अवर नही जाई ॥ नाम देउ गुर की सरणाई ॥९॥१॥२॥११॥

धनासरी बाणी भगत नामदेव जी की ॥

मारवाड़ि[८] जैसे नीरु[९] बालहा[१०] बेलि बालहा करहला[११] ॥
जिउ कुरंक[१२] निसि[१३] नादु बालहा तिउ मेरै मनि रामईआ ॥१॥
तेरा नामु रूड़ो[१४] रूपु रूड़ो अति रंग रूड़ो मेरो रामईआ ॥१॥रहाउ॥
जिउ धरणी[१५] कउ इंद्रु[१६] बालहा कुसम बासु जैसे भवरला ॥
जिउ कोकिल कउ अंबु बालहा तिउ मेरै मनि रामईआ ॥२॥
चकवी कउ जैसे सूरु बालहा मान सरोवर हंसुला ॥
जिउ तरुणी[१७] कउ कंतु बालहा तिउ मेरै मनि रामईआ ॥३॥
बारिक कउ जैसे खीरु बालहा चातृक मुख जैसे जल धरा ॥
मछुली कउ जैसे नीरु बालहा तिउ मेरै मनि रामईआ ॥४॥
साधिक सिध सगल मुनि चाहहि बिरले काहू डीठुला[१८] ॥
सगल भवण तेरो नामु बालहा तिउ नामे मनि बीठुला ॥५॥३॥

१. देह, शरीर २. चोरी नहीं होती, काम क्रोध आदि शरीर को नहीं लूटते ३. बादशाह की दी हुई सेज जो नाम देव जी ने नदी में फेंक दी थी, परन्तु बादशाह के माँगने पर सूखी निकल आई थी ४. निकल आई ५. बारह दल का कमल, सहस्र-दल-कमल ६. अठारह सिद्धियाँ ७. सारी बनस्पति ८. राजपूताने के एक प्रदेश का नाम ९. पानी १०. प्यारा होता है ११. ऊँटों को १२. मृग को १३. सदा, हमेशा १४. सुन्दर १५. धरती १६. वर्षा १७. युवा स्त्री, युवती १८. दिखाई दिया

पलटू साहिब के शब्द

[१]

आठ पहर निरखत रहै जैसे चन्द चकोर ।।
जैसे चन्द चकोर पलक से टारत नाहीं ।
चुगै बिरह से आग रहै मन चन्दै माहीं ।।
फिरै जेही दिस चन्द तेही दिसि को मुख फेरै ।
चन्दा जाय छिपाय आग के भीतर हेरै ।।
मधुकर तजै न पदम जान से जाइ बँधावै ।
दीपक में ज्यों पतंग प्रेम से प्रान गँवावै ।।
पलटू ऐसी प्रीत कर परधन चाहै चोर ।
आठ पहर निरखत रहै जैसे चन्द चकोर ।।

[२]

आदि अंत हम हीं रहे सब में मेरो बास ।।
सब में मेरो बास और न दूजा कोई ।
ब्रह्मा बिस्नु महेस रूप सब हमरै होई ।।
हमहीं उतपति करैं, करैं हम हीं संहारा ।।
घट घट में हम रहैं, रहैं हम सब से न्यारा ।।
पारब्रह्म भगवान अंस हमरै कहवाये ।
हमहीं सोहं सब्द जोति ह्वै सुन्न में आये ।।
पलटू देह के धरे से वे साहिब हम दास ।
आदि अन्त हम हीं रहे सब में मेरो बास ।।

[३]

उलटा कूवा गगन में तिस में जरै चिराग ।।
तिस में जरै चिराग बिना रोगन बिन बाती ।
छह रितु बारह मास रहत जरतै दिन राती ।।
सतगुरु मिला जो होय ताहि की नजर में आवै ।
बिन सतगुरु कोउ होय नहीं वा को दरसावै ।।
निकसै एक अवाज चिराग की जोतिहिं माहीं ।
ज्ञान समाधी सुनै और कोउ सुनता नाहीं ।।
पलटू जो कोई सुनै ता के पूरे भाग ।
उलटा कूवा गगन में तिस में जरै चिराग ।।

[४]

कोटिन जुग परलय गई हम हीं करनेहार ।।
हमहीं करनेहार हमहिं करता के करता ।
जेकर करता नाम आदि में हम हीं रहता ।।
मरिहैं ब्रह्मा विस्नु मृत्य ना होय हमारी ।
मरिहैं सिय के लाल मरैगी सिव की नारी ।।
धरती अगिन अकास मूवा है पवन और पानी ।
आदि जोति मरि गई रही देवतन की नानी ।।
पलटू हम मरते नहीं ज्ञानी लेहु बिचार ।
कोटिन जुग परलय गई हम हीं करनेहार ।।

[५]

कमठ दृष्टि जो लावई सो ध्यानी परमान ।।
सो ध्यानी परमान सुरति से अंडा सेवै ।
आप रहै जल माँहि सूखे में अंडा देवै ।।
जस पनिहारी कलस भरे मारग में आवै ।
कर छोड़े मुख बचन चित्त कलसा में लावै ।।
फनि मनि धरै उतारि आपु चरने को जावै ।
वह गाफिल ना परै सुरति मनि माँहि रहावै ।।

पलटू सब कारज करै सुरति रहै अलगान।
कमठ दृष्टि जो लावई सो ध्यानी परमान ॥

[६]

गरमै गरमै हेलुवा गंफा लीजै मारि ॥
गंफा लीजै मारि मनुष तन जात सिराना।
भजि लीजै भगवान काल सिर पर नियराना ॥
मीठा है हरि नाम जियन का नाहिं भरोसा।
खाय लेहु भरि पेट आगे से जात परोसा ॥
लीजै लाहा लूटि दिना दुइ संतन पासा।
अज हूँ चेत गँवार जात है खाली स्वासा ॥
पलटू अटक न कीजिये कूच है साँझ सकारि।
गरमै गरमै हेलुवा गंफा लीजै मारि ॥

[७]

तुझे पराई क्या परी अपनी ओर निबेर ॥
अपनी ओर निबेर छोड़ि गुड़ विष को खावै।
कूवाँ में तू परै और को राह बतावै ॥
औरन को उँजियार मसालची जाइ अँधेरे।
त्यों ज्ञानी की बात मया से रहते घेरे ॥
बेचत फिरै कपूर आप तो खारी खावै।
घर में लागी आग दौरि के घूर बुतावै ॥
पलटू यह साची कहै अपने मन का फेर।
तुझे पराई क्या परी अपनी ओर निबेर ॥

[८]

तन मन लज्जा खोइ कै भक्ति करौ निर्धार ॥
भक्ति करौ निर्धार लोक की लाज न मानौ।
देव पितर मुख खाक डारि इक गुरु को जानौ ॥
तजि दो कुल की रीति खोलि घूंघट को नाचो।
बेद पुरान मत काच काछनी काछौ साचौ ॥

सुभ आसुभ दोउ काटु पाँव की अपने बेरी।
निसि दिन रहौ अनन्द कोऊ का करिहै तेरी ।।
पलटू सतगुरु चरन पर डारि देहु सिर भार।
तन मन लज्जा खोइ कै भक्ति करौ निर्धार ।।

[९]

तू क्यों गफलत में फिरै सिर पर बैठा काल ।।
सिर पर बैठा काल दिनो दिन वादा पूजै।
आज काल में कूच मुरख नहिं तोकँह सूझै ।।
कौड़ी कौड़ी जोरि ब्याज दे करते बट्टा।
सुखी रहै परिवार मुक्ति में होवत ठट्ठा ।।
तू जानै मैं ठग्यो आप को तुही ठगावै।
नाम सजीवन मूर छोरि के माहुर खावै ।।
पलटू सेखी ना रही चेत करो अब लाल।
तू क्यों गफलत में फिरै सिर पर बैठा काल ।।

[१०]

दूसर पलटू इक रहा भक्ति दई तेहि जान ।।
भक्ति दई तेहि जान नाम पर पकरयो मोकहँ।
गिरा परा धन पाय छिपायों मैं ले ओकहँ ।।
लिखा रहा कुछ आन कर्म में दीन्हा आनै।
जानौं महीं अकेल कोऊ दूसर नहिं जानै ।।
पाछे भा फिर चेत देय पर नाहीं लीन्हा।
आखिर बड़े की चूक जोई निकसा सोइ कीन्हा ।।
पलटू मैं पापी बड़ा भूल गया भगवान।
दूसर पलटू इक रहा भक्ति दई तेहि जान ।।

[११]

देत लेत हैं आपुहीं पलटू पलटू सोर ।।
पलटू पलटू सोर राम की ऐसी इच्छा।
कौड़ी घर में नाहिं आपु मैं माँगों भिच्छा ।।

राई परबत करैं करैं परबत को राई।
अदना के सिर छत्र पैंज की करैं बड़ाई॥
लीला अगम अपार सकल घट अंतरजामी।
खाँहिं खिलावहिं राम देहिं हम को बदनामी॥
हम सों भया न होयगा साहिब करता मोर।
देत लेत हैं आपुहीं पलटू पलटू सोर॥

[१२]

धुन आनै जो गगन की सो मेरा गुरुदेव॥
सो मेरा गुरुदेव सेवा मैं करिहौं वा की।
सब्द में है गलतान अवस्था ऐसी जा की॥
निस दिन दसा अरूढ़ लगै ना भूख पियासा।
ज्ञान भूमि के बीच चलत है उलटी स्वासा॥
तुरिया सेती अतीत सोधि फिर सहज समाधी।
भजन तेल की धार साधना निर्मल साधी॥
पलटू तन मन वारिये मिलै जो ऐसा कोउ।
धुन आनै जो गगन की सो मेरा गुरुदेव॥

[१३]

नाम के रे परताप से भये आन कै आन॥
भये आन कै आन बड़े के पाँव पड़ूँगा।
का बपुरा तिल तेल फूल संग बिकता महँगा॥
संत हैं बड़े दयाल आप सम मो को कीन्हा।
जैसे भृंगी कीट सिच्छा कुछ ऐसी दीन्हा॥
राई किहा सुमेर अजया गजराज चढ़ाई।
तुलसी होइगा रेंड़ सरन की पैंज बड़ाई॥
पलटू जातिन नीच मैं सब औगुन की खान।
नाम के रे परताप से भये आन कै आन॥

[१४]

नाम नाम सब कहत है नाम न पाया कोय॥
नाम न पाया कोय नाम की गति है न्यारी।
वही सकस को मिलै जिन्हों ने आसा मारी॥

हौं को करै खमोस होस ना तन को राखै ।
गगन गुफा के बीच पियाला प्रेम का चाखै ॥
बिसरै भूख पियास जाय मन रंग में लागै ।
पाँच पचीस रहे वार संग में सोऊ भागै ॥
आपुइ रहै अकेल बोलै बहु मीठी बानी ।
सुनतै अब वह बनै कहा मैं कहौं बखानी ॥
पलटू गुरु परताप तें रहै जगत में सोय ।
नाम नाम सब कहत है नाम न पाया कोय ॥

[१५]

निन्दक जीवै जुगन जुग काम हमारा होय ॥
काम हमारा होय बिना कौड़ी को चाकर ।
कमर बाँधि के फिरै करै तिहुँ लोक उजागर ॥
उसे हमारी सोच पलक भर नाहिं बिसारी ।
लगी रहै दिन रात प्रेम से देता गारी ॥
संत कहैं दृढ़ करै जगत का भरम छुड़ावै ।
निन्दक गुरू हमार नाम से वही मिलावै ॥
सुनि के निन्दक मरि गया पलटू दिया है रोय ।
निन्दक जीवै जुगन जुग काम हमारा होय ॥

[१६]

पतितपावन बाना धरयो तुमहिं परी है लाज ॥
तुमहिं परी है लाज बात यह हमने बूझी ।
जब तुम बाना धरयो नाहिं तब तुम कहँ सूझी ॥
अब तो तारे बनै नहीं तो बाना उतारौ ।
फिर काहे को बड़ा बाच जो कहिकै हारौ ॥
आगहिं तुम गये चूक दोष नहिं दीजै मेरो ।
तुम यह जानत नाहिं पतित होइहैं बहुतेरो ॥
पलटू मैं तो पतित हौं किये असुभ सब काज ।
पतितपावन बाना धरयो तुमहिं परी है लाज ॥

[१७]

पर स्वारथ के कारने संत लिया औतार ॥
संत लिया औतार जगत को राह चलावैं ।
भक्ति करैं उपदेस ज्ञान दे नाम सुनावैं ॥
प्रीत बढ़ावैं जक्त में धरनी पर डोलैं ।
कितनौ कहै कठोर बचन वे अमृत बोलैं ॥
उनको क्या है चाह सहत हैं दुःख घनेरा ।
जिव तारन के हेतु मुलुक फिरते बहुतेरा ॥
पलटू सतगुरु पाय के दास भया निरवार ।
पर स्वारथ के कारने संत लिया औतार ॥

[१८]

बड़ा होय तेहि पूजिये संतन किया बिचार ॥
संतन किया बिचार ज्ञान का दीपक लीन्हा ।
देवता तेंतिस कोट नजर में सब को चीन्हा ॥
सब का खंडन किया खोजि के तीनि निकारा ।
तीनों में दुइ सही मुक्ति का एकै द्वारा ॥
हरि को लिया निकारि बहुर तिन मंत्र बिचारा ।
हरि हैं गुन के बीच संत हैं गुन से न्यारा ॥
पलटू प्रथमै संत जन दूजे हैं करतार ।
बड़ा होय तेहि पूजिये संतन किया बिचार ॥

[१९]

बंसी बाजी गगन में मगन भया मन मोर ॥
मगन भया मन मोर महल अठवें पर बैठा ।
जहँ उठै सोहंगम सब्द सब्द के भीतर पैठा ॥
नाना उठैं तरंग रंग कुछ कहा न जाई ।
चाँद सुरज छिपि गये सुषमना सेज बिछाई ॥
छूटि गया तन येह नेह उनहीं से लागी ।
दसवाँ द्वारा फोड़ि जोति बाहर ह्वै जागी ॥

पलटू धारा तेल की मेलत ह्वै गया भोर ।
बंसी बाजी गगन में मगन भया मन मोर ।।

[२०]

यह तो घर है प्रेम का खाला का घर नाहिं ।।
खाला का घर नाहिं सीस जब धरै उतारी ।
हाथ पाँव कटि जाय करै ना संत करारी ।।
ज्यों ज्यों लागै घाव तेहूँ तेहुँ कदम चलावै ।
सूरा रन पर जाय बहुरि ना जियता आवै ।।
पलटू ऐसे घर मँहैं बड़े मरद जे जाहिं ।
यह तो घर है प्रेम का खाला का घर नाहिं ।।

[२१]

राम समीपी संत हैं वे जो करैं सो होय ।।
वे जो करैं सो होय हुकुम में उनके साहिब ।
संत कहैं सोइ करैं राम ना करते बायब[1] ।।
राम के घर के बीच काम सब संतै करते ।
देवता तेंतीस कोट संत से सब ही डरते ।।
राई पर्बंत करैं करैं परबत को राई ।
राम के घर के बीच फिरत है संत दुहाई ।।
पलटू घर में राम के और न करता कोय ।
राम समीपी संत हैं वे जो करैं सो होय ।।

[२२]

लगन महूरत झूठ सब और बिगाड़ै काम ।।
और बिगाड़ै काम साइत जनि सोधै कोई ।
एक भरोसा नाहिं कुसल कहवाँ से होई ।।
जेकरे हाथै कुसल ताहि को दिया बिसारी ।
आपन इक चतुराई बीच में करै अनारी ।।
तिनका टूटै नाहिं बिना सतगुरु की दाया ।
अजहूँ चेत गँवार जगत है झूठी काया ।।

१. ख़िलाफ़, विरुद्ध

पलटू सुभ दिन सुभ घड़ी याद पड़ै जब नाम ।
लगन महूरत झूठ सब और बिगाड़ैं काम ॥

[२३]

सतगुरु सब को देत हैं लेता नाहीं कोय ॥
लेता नाहीं कोय सीस को धरै उतारी ।
वही सकस को मिलै मरै की करै तयारी ॥
कड़ू बहुत सतनाम देखत के डेरै सरीरा ।
रोटी खावनहार खायगा क्योंकर हीरा ॥
अंधा होवै नीक बैद का पथ जो खावै ।
मलयागिर की बास बाँस में नहीं समावै ॥
पलटू पारस क्या करै जो लोहा खोटा होय ।
सतगुरु सब को देत हैं लेता नाहीं कोय ॥

[२४]

सतगुरु सिकलीगर मिलैं तब छूटै पुराना दाग ॥
छुटै पुराना दाग गड़ा मन मुरचा माहीं ।
सतगुरु पूरे बिना दाग यह छूटै नाहीं ॥
झाँवाँ लेवै जोग तेग को मलै बनाई ।
जौहर देय निकार सुरत को रंद चलाई ॥
सब्द मस्कला करै ज्ञान का कुरँड लगावै ।
जोग जुगत से मलै दाग तब मन का जावै ॥
पलटू सैफ को साफ करि बाढ़ धरै बैराग ।
सतगुरु सिकलीगर मिलैं तब छुटै पुराना दाग ॥

[२५]

संत सनेही नाम है नाम सनेही संत ॥
नाम सनेही संत नाम को वही मिलावैं ।
वे हैं वाकिफ़कार मिलन की राह बतावैं ॥
जप तप तीरथ बरत करै बहुतेरा कोई ।
बिना वसीला संत नाम से भेंट न होई ॥
कोटिन करै उपाय भटक सगरौ से आवै ।
संत दुवारै जाय नाम को घर तब पावै ॥

पलटू यह है प्रान पर आदि सेती औ अंत ।
संत सनेही नाम है नाम सनेही संत ॥

[२६]

संत न चाहैं मुक्ति को नहीं पदारथ चार ॥
नहीं पदारथ चार मुक्ति संतन की चेरी ।
ऋद्धि सिद्धि पर थुकैं स्वर्ग की आस न हेरी ॥
तीरथ करहिं न बर्त नहीं कछु मन में इच्छा ।
पुन्य तेज परताप संत को लगै अनिच्छा ॥
ना चाहैं बैकुंठ न आवागवन निवारा ।
सात स्वर्ग अपवर्ग तुच्छ सम ताहि बिचारा ॥
पलटू चाहै हरि भगति ऐसा मता हमार ।
संत न चाहैं मुक्ति को नहीं पदारथ चार ॥

[२७]

सीतल चन्दन चन्द्रमा तैसे सीतल संत ॥
तैसे सीतल संत जगत की ताप बुझावैं ।
जो कोइ आवैं जरत मधुर मुख बचन सुनावैं ॥
धीरज सील सुभाव छिमा ना जात बखानी ।
कोमल अति मृदु बैन बज्र को करते पानी ॥
रहन चलन मुसकान ज्ञान को सुगंध लगावैं ।
तीन ताप मिट जाय संत के दर्सन पावैं ॥
पलटू ज्वाला उदर की रहै न मिटै तुरंत ।
सीतल चन्दन चन्द्रमा तैसे सीतल संत ॥

[२८]

सीस उतारै हाथ से सहज आसिकी नाहिं ॥
सहज आसिकी नाहिं खाँड खाने को नाहीं ।
झूठ आसिकी करै मुलुक में जूती खाही ॥
जीते जी मरि जाय करै ना तन की आसा ।
आसिक को दिन रात रहै सूली पर बासा ॥

मान बड़ाई खोय नींद भर नाहीं सोना।
तिल भर रक्त न माँस नहीं आसिक को रोना ॥
पलटू बड़े बेकूफ वे आसिक होने जाहिं।
सीस उतारै हाथ से सहज आसिकी नाँहि ॥

[२९]

साहिब साहिब क्या करै साहिब तेरे पास ॥
साहिब तेरे पास याद करु होवै हाज़िर।
अंदर धसि कै देखु मिलैगा साहिब नादिर ॥
मान मनी हो फना नूर तब नजर में आवै।
बुरका डारै टारि खुदा बाखुद[1] दिखरावै ॥
रूह करै मेराज[2] कुफर का खोलि कुलाबा[3]।
तीसौ रोजा रहे अंदर में सात रिकाबा[4] ॥
लामकान में रब्ब को पावै पलटूदास।
साहिब साहिब क्या करै साहिब तेरे पास ॥

[३०]

साहिब के दरबार में केवल भक्ति पियार ॥
केवल भक्ति पियार साहिब भक्ती में राज़ी।
तजा सकल पकवान लिया दासी सुत भाजी ॥
जप तप नेम अचार करै बहुतेरा कोई।
खाये सेवरी के बेर मुए सब ऋषि मुनि रोई ॥
किया युधिष्ठिर यज्ञ बटोरा सकल समाजा।
मरदा सब का मान सुपच बिनु घंट न बाजा ॥
पलटू ऊँची जाति कौं जनि कोउ करै हंकार।
साहिब के दरबार में केवल भक्ति पियार ॥

१. अपने आप, स्वयं २. चढ़ाई ३. ज़ंजीर ४. पद, स्थान।

पीपा जी का शब्द

धनासरी बाणी भगतां की ।। पीपा ।।

कायउ[1] देवा[2] काइअउ देवल[3] काइअउ जंगम जाती[4] ।।
काइअउ धूप दीप नईबेदा काइअउ पूजउ पाती ।।१।।
काइआ बहु खंड खोजते नवनिधि पाई[5] ।।
ना कछु आइबो ना कछु जाइबो राम की दुहाई ।।१।।रहाउ।।
जो ब्रह्मंडे सोई पिंडे जो खोजै सो पावै[6] ।।
पीपा प्रणवै परम ततु है सतिगुरु होइ लखावै ।।२।।१।।

---

१. काया अथवा शरीर ही २. परमात्मा ३. मंदिर ४. साधुओं की श्रेणी ५. देशों को खोजते-खोजते अंत में शरीर में ही सब खजाने प्राप्त हुए ६. जो कुछ ब्रह्माण्ड में है वही सब कुछ शरीर में भी है: जो खोजता है वही पा लेता है

बुल्ले शाह की काफिआं

[१]

इशक असां नाल केही कीती, लोक मरेंदे ताहने ।
दिल दी वेदन कोई न जाणे, अन्दर देस वेगाने ।
जिस नूं चाट अमर दी होवे, सोई अमर पछाणे ।
एस इशक दी औखी घाटी, जो चढ़िआ सो जाणे । इशक असां नाल...

आतश इशक फराक तेरे ने[1], पल विच साड़ विखाईआं ।
एस इशक दे साड़े कोलों, जग विच दिआं दुहाईआं ।
जिस तन लगे सो तन जाणे, दूजा कोई न जाणे । इशक असां नाल...

इशक कसाई ने ज़िबा कीती, हरगिज़ खबर न काई ।
इशक चवाती लाई छाती, फेर ना झाती पाई ।
मापिआँ कोलों छुप छुप रोवां, कर कर लख बहाने । इशक असां नाल...

फ़ज़ल तेरा दरकार असां नूँ, हर वेले हर हीले ।
पाक रसूल मुहम्मद साहिब, मेरे खास वसीले ।
बुल्ला शौह जे मिले पिआरा, लख लख करां शुकराने । इशक असां नाल...

[२]

इशक दी नवीओं नवीं बहार........

फूक मुसल्ला[2] भँन सुट लोटा, नाँ फड़ तसबी[3] कासा[4] सोटा ।
आशक कहिंदे दे दे होका, तरक हलालों खाह मुरदार । इशक दी...

१. तेरे वियोग की अग्नि में २. नमाज़ पढ़ने की छोटी चटाई या दरी ३. माला ४ प्याला

जाँ मैं सबक इशक दा पढ़िआ, मसजिद कोलों जीऊड़ा डरिआ ।
डेरे जा ठाकुर दे वड़िआ, जिथे वजदे नाद हज़ार । इशक दी...
जा मैं रमज़ इशक दी पाई, मैना तोता[1] मार गवाई ।
अन्दर बाहर होई सफाई, जितवल वेखाँ यारो यार । इशक दी...
हीर राँझे दे हो गए मेले, भुली हीर ढूंडेंदी बेले ।
राँझा यार बुक्कल विच खेले, मैनूं सुद्धि बुद्धि रही ना सार । इशक दी...
वेद कुरान पढ़ पढ़ थक्के, सजदे करदिआं घिस गये मत्थे ।
ना रब्ब तीरथ ना रब्ब मक्के, जिस पाइआ तिस नूर अनवार । इशक दी...
इशक भुलाइआ सजदा तेरा, हुण किउं ऐवें पावें झेड़ा ।
बुल्ला हुन्दा चुप बथेरा, इशक करेंदा मारो मार । इशक दी...

[३]

उठ जाग घुराड़े मार नाहीं, इह सौण तेरे दरकार नाहीं ।
इक रोज़ जहान थीं जाणा है, जा कबर अन्धेरी पाणा है ।
तेरा गोशत कीड़िआं खाणा है, कर चिन्ता मरग विसार नाहीं । उठ जाग...
हुण जाग कुड़े किउं सुत्ती हैं, इस ग़फ़लत नींदर लुटी हैं ।
तूं तां खली विगुती हैं, इह तां सौण तेरे दरकार नाहीं । उठ जाग...
हुण वेला है कर कुझ भलिआई, इह अन्त समां तेरा ऐवें जाई ।
मुड़ फिर न जणसी तैनूं माई, मुड़ एहो जिहा खरा वार नाहीं । उठ...
एथे ही कर लै कम्म तूं सारा, तां होवेगा पार उतारा ।
फिर ना चलेगा कुझ भी चारा, कोई ओथे वणज वपार नाहीं । उठ...
तेरा साहा हुण नेड़े आइआ है, तैं तकले तंद न पाइआ है ।
की आपणा आप वंजाइआ है, ऐ ग़ाफ़ल तैनूं सार नाहीं । उठ...
तैं सुतिआं उमर वंजाई है, तेरी साइत नेड़े आई है ।
नहीं चरखे तंद वलाई है, किआ कहिसें दाज तिआर नाहीं । उठ...
दाज बिनाँ तूं जावें चल्ली, धरसन तेरा नाम वलल्ली ।
सस ननाणां कहिसण झल्ली, इह भोरा तैनूँ सार नाहीं । उठ...
इह जो तेरी फुफी मासी, तेरे नाल ना कोई जासी ।
इह सब कज़ीआ तैनूं पासी, अजे भी तूं बेदार नाहीं । उठ जाग...

१. मन-माया

तूं जिस दिन जोबन मत्ती सैं, तूं नाल सईआँ दे रत्ती सैं।
हो ग़ाफ़ल दुनिआं वत्ती सैं, हुण रहिण तेरे दरकार नाहीं। उठ...
तूँ हुण जोबन माइल माती, नित नित नहीं इह बाग़ हयाती।
इक दिन वगसी बादे-मवाती[1], तूं दाइम विच गुलज़ार नाहीं। उठ...
तूं एस जहानों जावेंगा, फिर कदम ना एथे पावेंगा।
इह जोबन रूप लुटावेंगा, तूं रहिणा विच संसार नाहीं। उठ...
मिट्ठा बोल तूं जग ते भोरा, फिर ना होसीगा इह ज़ोरा।
इक दिन भज्जसी भांडा कोरा, एथे रहिण दा एतबार नाहीं। उठ...
कुझ करले तोशा[2] जावन दा, मुड़ ओथों कम्म ना आवण दा।
की करसें नाल लै जावण दा, कोई तेरा भार बरदार नाहीं। उठ...
छोड़ तकब्बर[3] पकड़ हलीमी[4], छोड़ दावा ते लोड़ यतीमी।
चित कर तूं ओ वतन कदीमी[5], कोई इह तेरा घरबार नाहीं। उठ...
तूं मुढों दी कुचज्जी हैं, तूं खा खा दाणे रज्जी हैं।
हर पूजा दी तूं कज्जी हैं, तैं कोलों कौण तिआर नाहीं। उठ...
अज कल तेरा मुकलावा है, अण-डिठिआं नाल मिलावा है।
किउँ सुत्तीं हैं की दावा है, इह भलके गरम बाज़ार नाहीं। उठ...
इह भैणाँ भाई अम्मां बावा, टोरनगे तेरा मुकलावा।
फिर तूँ जासें हो बे-दावा, कोई ओथों आवण हार नाहीं। उठ...
हार हमेलां चूड़े बीड़े, छोड़ जावें तैं खावण कीड़े।
डाढी तैनूं कबर नपीड़े, फिर कोई ओथे यार नाहीं। उठ...
मंज़ल तेरी दूर दुराडी, तूं पैणा विच जंगल वादी।
औखा पहुँचण पैर पिआदे, दिसदी तूँ असवार नाहीं। उठ...
इक अकल्ली तनहा[6] चलसें, जंगल बर बर दे विच रलसें।
लै लै तोशा एथों घलसें, फिर ओथे लैण उधार नाहीं। उठ...
ऐ गाफ़ल कुझ करलै तोशा, वत्त न मिलसेगा कुछ खोशा।
जद होसेगा पोशा पोशा, नित इह खरा बार नाहीं। उठ...
उह खाली ऐवें सुंज हवेली, तूं विच रहसें इक अकेली।
ओथे होसी होर ना बेली, भीड़ बूहा फेर उतार नाहीं। उठ...

१. मौत की आंधी २. सामान ३. अहंकार ४. नम्रता ५. पुरातन, असली ६. अकेले

जिहड़े सन देसां दे राजे, नाल जिन्हाँ दे वजदे बाजे ।
उह भी चले गए बिन दाजे, कोई दुनिआं दा इतबार नाहीं । उठ...
कित्थे है सुलतान सिकन्दर, मौत ना छडदी पीर पैगम्बर ।
सभे छड छड गए अडम्बर, कोई एथे पाएदार नाहीं । उठ...
कित्थे यूसफ़ माह कुनिआनी[1], जुलैखा मुड़के लई जवानी ।
उह वी मौत कीते ने फानी, फिर उह हार शंगार नाहीं । उठ...
कित्थे तख़्त सुलेमां वाला, विच हवा उड़दा सी बाला ।
उह भी कादर आप संभाला, ज़ीसत[2] दा एतबार नाहीं । उठ...
कित्थे मीर मुलक सुलतानाँ, सभे छड छड गए टिकाना ।
कोई मार ना बैठा ठाणा, लशकर जिन्हां शुमार नाहीं । उठ...
गुल गुलां चम्बेली लाला, सोसन सिम्बल सरू ते ज़ाला[3] ।
बादे खज़ाँ[4] कीता बुरहाला, नरगस नित खुमार नाहीं । उठ...
डेरा करसें उनहीं जाईं, जित्थे शेर पलंग बलाईं ।
इह खाली रहसन महल सराईं, फिर तूं विरसा वार नाहीं । उठ...
असीं आजज़ विच कोट अमल दे, ओसे आंदे विच कलम दे ।
बिन कलमें थी नाहीं कम्म दे, बाझों कलमें यार नाहीं । उठ...
बुल्ला शौह बिन कोई नाहीं, एथे ओथे दोहीं सराईं ।
संभल संभल कदम टिकाईं, फिर आवण दूजी वार नाहीं । उठ...

[४]

कैसी तोबा है इह तोबा ना कर यार ।
मूंहों तोबा दिलों ना करदा, इस तोबा थीं तरक न फड़दा ।
किस गफ़लत ने पायो परदा, फिर बखशे किउँ गफ़्फ़ार[5] । कैसी...
सावें दे के लए सवाए, डिओड़ीआँ उत्ते बाज़ी लाई ।
इह मुसलमानी किथों पाई, जिस दा इह करदार[6] । कैसी...
जिथे ना जाणा तूं ओथे जावें, हक बेगाना मुक्कर खावें ।
कूड़ किताबां सिर ते चावें, इह तेरा इतबार । कैसी...
ज़ालम जुलमों नाहीं डरदे, आपणे कीए ते आपे मरदे ।
नाहीं ख़ौफ खुदा दा करदे, एथे ओथे रहिण खवार । कैसी...

१. पूर्णिमा के चाँद जैसा सुन्दर २. जिन्दगी ३. फूलों के नाम ४. पतझड़ ऋतु की बायु ५. बख्शनहार ६. करतूत

सौ दिन जीवें इक दिन मरसैं, उस दिन खौफ खुदा दा करसैं ।
इस तोबा थीं तोबा करसैं, इह तोबा किस दरकार । कैसी...
बुल्ला शौह दी सुणो हकाइत, हादी[1] फड़िआ होग हदाइत ।
सब गुनाह थीं होग इनाइत, फिर बाकी किआ गुफतार । कैसी...

[५]

गल इक नुकते विच मुकदी ए......

फड़ नुकता छोड़ हिसाबां नूं, कर दूर कुफ़र दिआं बाबां नूं ।
लाह दोज़ख गोर अजाबां नूं, कर साफ दिले दिआं खाबां नूं ।
गल एसे घर विच ढुकदी ए, गल इक नुकते विच मुकदी ए ।
ऐवें मत्था ज़िमीं घसाईदा, लम्मां पा महिराब[2] वखाईदा ।
पढ़ कलमा लोक हसाई दा, दिल अन्दर समझा ना लिआईदा ।
कदे बात सची वी लुकदी ए, गल इक नुकते विच मुकदी ए ।
कई हाजी बण बण आए जी, गल नीले जामे पाए जी ।
हज्ज वेच टके लै खाए जी, भला इह गल कीनूँ भाए जी ।
कोई बात सची वी लुकदी ए, गल इक नुकते विच मुकदी ए ।
इक जंगल बहिरीं जांदे नी, इक दाणा रोज़ लै खांदे नी ।
बे समझ वजूद थकांदे नी, घर आवण हो के मांदे नी ।
ऐवें चिलिआं विच जिन्द सुकदी ए, गल इक नुकते विच मुकदी ए ।
फड़ मुरशद अबद[3] खुदाई हो, विच मसती बेपरवाही हो ।
बे ख़ाहश बे नवाई हो, विच दिल दे खूब सफाई हो ।
बुल्ला बात सची कदों रुकदी ए, गल इक नुकते बिच मुकदी ए ।

[६]

बनसी अचरज काहन बजाई ॥

बनसी वालिआ चाका रांझा, तेरा सुर सभ नाल है सांझा ।
तेरीआं मौजां साडा मांझा, साडी सुरतीं आप मिलाई ॥
बनसी वालिआ काहन कहावें, सबदा नेक अनूप सुणावें ।
अखीआं दे विच नज़र ना आवें, कैसी बिखड़ी खेल रचाई ॥

१. हदाइत करने वाला, मुर्शिद, सतगुरु २. नमाज़ियों के माथे का निशान
३. इबादत, बन्दगी

बनसी सब कोई सुणे सुनावे, अरथ इसदा कोई विरला पावे ।
जो कोई अनहद दी सुर पावे, सो इस बंसी दा सौदाई ॥
सुणीआं बंसी दीआं घनघोरां, कूकां तन मन वाँगूं मोरां ।
डिठीआं उसदीआँ तोड़ाँ जोड़ाँ, इक सुर दी सभ कला उठाई ॥
इस बंसी दे पंज सत तारे, आपो आपणी सुर भरदे सारे ।
इक सुर सभ दे विच दम मारे, साडी उस ने होश भुलाई ॥
इस बंसी दा लम्मां लेखा, जिस ने ढूंडिआ तिस ने देखा ।
साडी इस बंसी दी रेखा, इस वजूदों सिफ़त उठाई ॥
बुल्ला पुज पए तकरार, बूहे आण खलोते यार ।
रखीं कलमें नाल ब्योपार, तेरी हज़रत भरे गवाही ॥
बंसी अचरज काहन बजाई ॥

[७]

भावें जाण न जाण वे, वेहड़े आ वड़ मेरे ।
मैं तेरे कुरबान वे, वेहड़े आ वड़ मेरे ।
तेरे जेहा मैंनूं होर न कोई, ढूँडां जंगल बेला रोही ।
ढूँडां तां सारा जहान वे, वेहड़े आ वड़ मेरे ।
लोकां दे भाणे चाक महीं दा, रांझा लोकां विच कहींदा ।
साडा तां दीन ईमान वे, वेहड़े आ वड़ मेरे ।
मापे छोड़ लगी लड़ तेरे, शाह इनाइत साईं मेरे ।
लाईआं दी लज पाल वे, वेहड़े आ वड़ मेरे ।
मैं तेरे कुरबान वे, वेहड़े आ वड़ मेरे ।

[८]

मूँह आई बात ना रहिंदी ए............
सच कहां तां भांबड़ मचदा ए, झूठ आखां तां कुझ न बचदा ए ।
दिल दोहा गलां तों जचदा ए, जच जच[1] के जीभा कहिंदी ए ॥
मूँह आई बात ना रहिंदी ए...........
जिस पाइआ भेद कलन्दर दा, राह खोजिआ अपने अन्दर दा ।
ओह वासी है सुख मंदर दा, जिथे कोई ना चढ़दी लहिंदी ए ॥
मूँह आई बात ना रहिंदी ए...........

१. संभल संभल के

ऐ शाह अकल तूँ आइआ कर, सानूं अदब अदाब सखाया कर।
मैं झूठी नूं समझाइआ कर, जो मूरख माँह नूं कहिंदी ए॥
मूँह आई बात ना रहिंदी ए............

इह तिलकण बाज़ी वेहड़ा ए, पैर थम थम टुरो अंधेरा ए।
वेखो अन्दर वड़के केहड़ा ए, किओं खफ़तन[1] बाहर ढूँढेंदी ए॥
मूँह आई बात ना रहिंदी ए............

जदों ज़ाहर होए नूर होरीं, जल गए पहाड़ कोह-तूर होरीं।
तदों सूली चढ़े मनसूर होरीं, ओथे शेखी पेश ना पेंदी ए॥
मूँह आई बात ना रहिंदी ए............

किते नाज़ अदा वखाईदा, किते हो रसूल मिलाईदा।
किते आशक बण बण आईदा, किते जान जुदाई सहिंदी ए॥
मूँह आई बात ना रहिंदी ए............

किउँ मिट्टी लाल बनाणा हैं, तूं ताँ आपे दुरे-यगाना[2] हैं।
इक नुकते नाल बेगाना हैं, अजे मुरशद पीर ढूँढेंदी ए॥
मूँह आई बात ना रहिंदी ए............

जे ज़ाहर करां असरार[3] ताईं, सभ भुल जावन तकरार ताईं।
फिर मारन बुल्ले यार ताईं, ओथे मखफी[4] गल सुहेंदी ए॥
मूँह आई बात ना रहिंदी ए............

इक लाज़म बात अदब दी ए, सानूं बात मलूमी सब द्री ए।
हर हर विच कुदरत रब दी ए, किते ज़ाहर हो जणेंदी ए॥
मूँह आई बात ना रहिंदी ए............

वाहवा कुदरत बेपरवाही ए, देवे कैदी दे सिर शाही ए।
ऐसा बेटा जाए माई ए, सब कलमा उसदा कहिंदी ए॥
मूँह आई बात ना रहिंदी ए............

असां पढ़िआ इलम तहकीकी ए, ओथे इका हरफ हकीकी ए।
होर झगड़ा सभ बधीकी ए, ऐवें रौला पा पा बहिंदी ए॥
मूँह आई बात ना रहिंदी ए............

१. पागल २. बे-मिसाल मोती ३. भेद ४. छुपी हुई

इस आजज़ दा की हीला ए, रंग ज़रद ते मुखड़ा पीला ए।
जिथे आपे आप वसीला ए, ओथे की अदालत कहिंदी ए ॥
मूँह आई बात ना रहिंदी ए...........

तैं आपे पुलसरात[1] बणाई, तैं अगे किस ढाल भवाई।
सभ कलमा तईयब पार लंघाई, ओथे कौण दोज़ख़ विच रहिंदी ए ॥
मूँह आई बात ना रहिंदी ए...........

बुल्ला शौह असाँ थीं वख नहीं, बिन शौह थीं दूजा कख नहीं।
पर वेखण वाली अख नहीं, ताईएं जान जुदाईआं सहिंदी ए ॥
मूँह आई बात ना रहिंदी ए...........

[९]

मैं उडीकां कर रही, कदे आ कर फेरा।
मैं जो तैनूं आखिआ, कोई घल्ल सनेहड़ा ॥
चशमां सेज विछाइयां, दिल कीता ए वेहड़ा।
तूं लटकेंदा आ वड़ीं, शाह इनाइत मेरा ॥
मैं उडीकां कर रही...........

ओह अजेहा कौण है, गल्ल जा आखे जेहड़ा।
मैं विच किया तकसीर[2] है, मैं बरदा तेरा ॥
तें बाझों मेरा कौण है, दिल ढा ना मेरा।
मैं उडीकां कर रही...........

दसत कंगन बाहीं चूड़ीआं, गल नौ रंग चोला।
माही मैनूं कर गिआ, कोई रावल रोला ॥
जल बल आहीं मारिआं, दिल पत्थर तेरा।
मैं उडीकां कर रही...........

किआ तेरी मांग सिन्धूर भरी, सोहे रतड़ा चोला।
वांग सस्सी मैं कूकदी, कर ढोला ढोला ॥
अनगिणवें सूल हुण पै गए, सूलां दा घेरा।
मैं उडीकां कर रही...........

१. नरक के ऊपर एक पुल है २. कसूर

मैं जाता दुख है मैनूं, दुख घर घर सईआं।
सिर सिर भांबड़ भड़किआ, सब पिटदीआं गईआं ॥
जद आपणे सिर पर आ बणी, चुक गिआ सब झेड़ा।
मैं उडीकाँ कर रही.........

जिहड़ीआं सौहरे मत्तीआं, सोई पेके होवण।
शौह जिन्हाँ ते माइल[1], चढ़ सेजे सोवण ॥
जिस घर कंत ना बोलिया, सोई खाली डेरा।
मैं उडीकाँ कर रही...........

ढूंढ शहिर सब भालिआ, कासद घल्लाँ किहड़ा।
चढ़ीआँ डोली प्रेम दी, दिल धड़के मेरा ॥
ऐ मुहंमद कादरी, हत्थ पकड़ीं मेरा।
मैं उडीकाँ कर रही...........

पहिली पौड़ी प्रेम दी, पुलसराते डेरा।
हाजी मक्के दा हज्ज करन, मैं मुख वेखां तेरा ॥
आ इनाइत कादरी दिल खिचिओ मेरा।
मैं उडीकाँ कर रही...........

ओह अजिही मैं नहीं, विच परदा तेरा।
खूंडी घत प्रेम दी, दिल खिचिओ मेरा ॥
देख अहवाल अबलीस[2] दा, हाऊं गोते मेरा।
मैं उडीकाँ कर रही...........

पहिली रात है साल दी, दिल खौफ़ है मेरा।
डूँघी गोर खटेंदिआँ, होइआ लहदों तेड़ा ॥
पहिला बंद खोल्हेंदिआं, मूंह काबे मेरा।
मैं उडीकाँ कर रही.........

मिली है बांग रसूल दी, फुल खिड़िआ है मेरा।
सद्दा होइआ हाज़री, मैं हां हाज़र तेरा ॥
हर पल तेरी हाज़री, इहो सजदा मेरा।
मैं उडीकाँ कर रही.........

बुल्ला शौह दे वासते, सीने भड़कण भाहीं।
औखा पैंडा प्रेम दा, सोई घटदा नाहीं ॥

१. बुरा २. शैतान, काल

राह विच वाहगी चित्तरी, •सिर धाड़ीं पैंड़ा ।
मैं उडीकाँ कर रही...........

[१०]

मैं किउं कर जावां काबे नूँ, दिल लोचे तख़्त हज़ारे नूँ ।
लोकी सजदा काबे नूँ करदे, साडा यार पिआरे नूँ ।
मैं किउं कर जावां काबे नूँ...........
औगुण वेख न भुल मीआँ राँझा, याद करीं उस कारे नूँ ।
मैं किउं कर जावां काबे नूँ...........
मैं अनतारू तरन ना जाणाँ, सरम पई तुध तारे नूँ ।
मैं किउं कर जावाँ काबे नूँ...........
तेरा सानी कोई नाहीं, ढूंढ रही जग सारे नूं ।
मैं किउं कर जावाँ काबे नूँ...........
हाजी लोक मक्के नूँ जाँदे, मैं जाणाँ तख़्त हज़ारे नूँ ।
मैं किउं कर जावाँ काबे नूँ...........
बुल्ला शौह दी प्रीत अनोखी, तारे सु औगुण हारे नूँ ।
मैं किउं कर जावाँ काबे नूँ...........

दोहे

बुल्ला कसर नाम कसूर, ओथे मुखों न सक्कण बोल ।
ओथे सचे गरदन मारीए, झूठे करन कलोल ॥१॥
बुल्ला कसूर बे दसतूर, ओथे जाणा बणिआ ज़रूर ।
ना कोइ पुंन न दान है, ना कोइ लाग दसतूर ॥२॥
बुल्ला धरमसाले धड़वाई रहिंदे, ठाकुर दवारे ठग ।
मसीतां विच कुसती रहिंदे, आशक रहिण अलग ॥३॥
बुल्ला वारे जाईए उन्हाँ तों, जिहड़े गलीं देण परचा ।
सूई सलाई दान करन, आहरन लैण छुपा ॥४॥
बुल्ला वारे जाईए तिन्हां तों, जिहड़े मारन गप सड़प ।
कौडी लभी देण चा, बुगचा घाऊँ घप ॥५॥
ना खुदा मसीते लभदा, ना खुदा खाना काबे ।
ना खुदा कुरान कताबां, ना खुदा नमाज़े ॥६॥

ना खुदा मैं तीरथ डिठा, ऐवें पैंडे झाके ।
बुल्ला शौह जद मुरशद मिल गिआ, टूटे सभ तगादे ॥७॥
बुल्ला परसों काबे वी गिओं, बुत पूजा कीती कल ।
असीं जा बैठे घर आपणे, ओथे करन न मिलीआ गल ॥८॥
बुल्ला गैन ग़रूरत साड़ सुट, हउमैं खूहे पा ।
तन मन दी सुरत गवा दे, घर आप मिलेगा आ ॥९॥
कनक कौडी कामनी, तीनों की तलवार ।
आइआ सैं जिस बात को, भूल गई वोह यार ॥१०॥
बुल्ला हिजरत रोज़ असला दे, मेरा नित है खास आराम ।
नित नित मराँ ते नित नित जीवां, मेरा नित नित कूच मुकाम ॥११॥
बुल्ला इशक सजण दे आए, सानूं कीता सु डूम ।
उह प्रभ असाडा सखी है, मैं सेवा कनों शूम ॥१२॥
बुल्ला आशक होइओं रब दा, मुलामत होई लाख ।
लोकी काफ़र काफ़र आखदे, तू आहो आहो आख ॥१३॥
बुल्ला पैंडे पड़े प्रेम के, पैंडा कीआ आवागौण ।
अंधे को अंधा मिला, राह बतावे कौण ॥१४॥
बुल्ला मन मंजूला मुंज दा, किते गोशे बहि के कुट ।
एह खज़ाना तैनूं अरश दा, तूं संभल संभल के लुट ॥१५॥
बुल्ला चोरी मुसलमान दी, हिंदू तों कुरबान ।
दोहाँ तो पाणी वार पी, जो करे भगवान ॥१६॥
बुल्ला मुलाँ ते मसालची, दोहाँ दा इको चित्त ।
लोकाँ करदे चानणा, आप अंधेरे वित्त ॥१७॥
बुल्ला पी शराब ते खा कबाब, हेठ बाल हड्डाँ दी अग्ग ।
चोरी कर ते भन घर रबदा, तूँ ठग्ग नूं ठग ॥१८॥
होर सब नें गल्लड़ीआँ, इक अल्ला अल्ला दी गल्ल ।
कुझ रौला पाया आलमाँ, कुझ कागजाँ पाइआ झल्ल ॥१९॥
बुल्ला मैं मिट्टी घुमिआर दी, गल आख न सकदी एक ।
चितर मेरा किउं घड़िआ, मत जाए अलेक सलेक ॥२०॥
बुल्ला चल सुनिआर दे, जिथे गहिणा घड़ीए लाख ।
सूरत आपो आपणी, तूं इको रूपा आख ॥२१॥

फिरी रुत शगूफाँ वाली, चिड़ीआँ चोग चुगण नूँ आईआँ ।
इकना नूं जुरिआँ लै खाधा, इकनाँ नूं फाहीआँ लाईआँ ॥२२॥
इकनां नूं आस मुड़न दी आही, इक सीख कबाब चढ़ाईआँ ।
ऐ बुल्ला की वस ओहनाँ दे, उह किसमत मार फसाईआँ ॥२३॥
बुल्ला अच्छे दिन तो पीछे गए, जब हरि से कीआ ना हेत ।
अब पछतावा किआ करे, जब चिड़ीआँ चुगिआ खेत ॥२४॥
हो हादी मेरे अंदर बोलिआ, लड़ पड़ गए गुनाहाँ ।
झाड़ीं लगा बाजरा, शैहतूत लगे फरवाहां ॥२५॥
बुल्ला कणक कौडी कामणी, तीनों की तलवार ।
आए थे नाम जपण को, और बीचे लीने मार ॥२६॥
अलफ अल्ला नाल रता दिल मेरा, मैंनूं बे दी खबर न काई ।
बे पढ़िआँ मैंनूं समझ न आवे, लज्जत अलफ दी आई ॥२७॥
ऐन ते गैन नूं समझ न जाता, गल अलफ समझाई ।
बुल्ला शाह कौल दे पूरे, जेहड़े दिल विच करन सफाई ॥२८॥
मक्के गिआँ गल मुकदी नाहीं, जिचर दिलों न आप मुकाईए ।
गंगा गिआँ पाप नहीं झड़दे, भावें सौ सौ गोते लाईऐ ॥२९॥
गैआ[1] गिआं गल्ल मुकदी नाहीं, भावें कितने पिंड भराईए ।
बुल्लाशाह गल ताहीएं मुकदी, जद मैं नूं खड़िआं लुटाईए ॥३०॥
अल्ला तूं मैं ते करज बनाया, हथों तूं मेरा करजाई ।
ओथों मेरी परवरश कीती, जिथे किसे नूं खबर न काई ॥३१॥
ओथों ताहीए आए, जाँ पहिले रोजी आई ।
बुल्लाशाह आशक है, तहकीक हकीकत पाई ॥३२॥
बुल्ले नूं लोक मत्तीं देंदे, बुल्ला तूं जा बहु विच मसीती ।
विच मसीताँ दे की कुझ हुंदा, जे दिलों नमाज़ न कीती ॥३३॥
बाहरों पाक कीते की हुंदा, जो अंदरों न गई पलीती ।
बिन मुरशिद कामल बुल्लिआ, तेरी ऐवें गई इबादत कीती ॥३४॥
भठ नमाजाँ ते चिक्कड़ रोजे, कलमे ते फिर गई सिआही ।
बुल्लाशाह शोह अंदरों मिलिया, भुल्ली फिरे लोकाई ॥३५॥

१. गया

आपणे तन दी खबर न काई, साजण दी खबर लिआवे कौण।
ना हउं खाकी ना हउं आतश, ना हउं पाणी पौण ।।३६।।

कुप्पे दे विच रोड़ खड़कदे, मूरख आखे बोले कौण।
बुल्ला सांईं घट घट रविआ, जिउँ आटे विच लूण ।।३७।।

अरबा अनासर महिल बणाइआ, विच वड़ बैठा आपे।
आपे कुड़ीआँ आपे नींगर, आपे बणना एं मापे ।।३८।।

आपे मरें ते आपे जीवें, आपे करें सिआपे।
बुल्ला देख कुदरत रब्ब दी, साहिब आपे सिआपे ।।३९।।

बुल्ला रंग महल्लीं जा चढ़िओं, लोक पुछण आए खैर।
असां एह कुझ दुनीआँ तो वटिआ, मूंह काला नीले पैर ।।४०।।

बुल्ला इट खडके दुक्कड़ वजे, तत्ता होवे चुल्हा।
आण फ़कीर ते खा खा जावण, राज़ी होवे बुल्ला ।।४१।।

बुल्ला शाह उह कौण है, और तुम तेरा यार।
उसे के हथ कुरान है, उसे के गले जुनार[1] ।।४२।।

जैसी सूरत अैन है, तैसी गैन पछाण।
इक नुकते मैं फेर है, भुल्ला फिरे जहान ।।४३।।

बुल्ला खा हराम ते पढ़ शुकराना, तोबा तरक सवाबों।
छोड़ मसीत ते पकड़ किनारा, तेरी छुटसी जान अज़ाबों ।।४४।।

वोह हरफ ना पढ़ीए, मति रहिसी जान जवाबों।
बुल्ला ओथे चलीए, जेहड़े मन्हा न करन शराबों ।।४५।।

बुल्ला जे तूं गाज़ी बणना एं, लक्क बंन्ह तलवार।
पहिलों रंगड़[2] मार के, पिछों काफ़र मार ।।४६।।

बुल्ला हरि मंदर में आए के, कहु लेखा दिओ बता।
पढ़े पंडत पाँदे दूर कीए, अहिमक लीए बुला ।।४७।।

वहदत दे दरिआ वगेंदे, मेरी वहदत कितवल धाई।
मुरशद कामल पार लंघाईआँ, बाझ तुल्हे सुरनाई ।।४८।।

बुल्ला सभ मजाज़ी पौड़ीआँ तू भाल हकीकत वेख।
जो कोई ओथे पहुँचिआ चाहे, भूल गई सलाम अलेक ।।४९।।

१. जनेऊ २. मन

बुल्ला काज़ी राज़ी रिशवते, मुलाँ राज़ी मौत ।
आशक राज़ी मौत ते, ना परतीत घटौत ।।५०।।
ठाकर दवारे ठग बसैं, फाही दार मसीत ।
हर के दवारे भेख बसैं, हमरी ये परतीत ।।५१।।
बुल्ला धरमसाला विच साला नहीं, जिथै मोहन भोग जिवाए ।
विच मसीताँ धक्के मिलदे, मुल्लाँ थोड़े पाए ।।५२।।
दौलतमंदाँ ने बूहे उत्ते, चोबदार बहाए ।
पकड़ दरावाज़ा रब्ब सच्चे दा, जिथों दुख दिल दा मिट जाए ।।५३।।
बुल्ला साडा ओथे वासा, जिथै बहुते अंन्हे ।
ना कोई साडी दरद पछाणे, ना कोई सानूं मंने ।।५४।।
बुल्ला चल बावरची खाने यार दे, नित कोहा काही हो ।
ओथे मोटे कुसन बक्करे, तूँ लिसा मिले ना ढोई हो ।।५५।।

———

भीखा जी का शब्द

भीखा भय नाहीं । सबै काल चरि जाई ।।टेक।।
आदि अंत परलय हम देखा । लेखा अलेख गुसाईं ।
ब्रह्मा बिसुन देव मुनि नारद । कोई बचन नहिं पाई ।।१।।
अरध उरध बिच भाठी लगाई । सो रस पीन अघाई ।
मान सरोवर मैल छुडावा । बेनी[1] में पैठ अनहाई ।।२।।
बनुवा साध चले त्रिकुटी को । खैंच कमान चड़ाई ।
फोड़ निसान दसो दिसि पारा । काल को मार ढहाई ।।३।।
अनंत[2] साहिब गुरु अस पाई । तिन मोहिं संघ लखाई ।
अंतर आदि अधर घर पाई । जम की जाल बहाई ।।४।।

---

१. त्रिवेणी २. अविनाशी

मीरा बाई के शब्द

[१]

अब तो निभायाँ सरेगी, बांह गहे की लाज ।।
समरथ सरण तुम्हारी साँइयाँ, सरब सुधारण काज ।।
भव सागर संसार अपरबल, जा में तुम हो जहाज ।।
निरधाराँ आधार जगत-गुरु, तुम बिन होय अकाज ।।
जुग जुग भीर[१] हरी भगतन की दीनी मोच्छ समाज ।।
मीरा सरण गही चरणन की, लाज रखो महाराज ।।

[२]

अब मैं सरण तिहारी जी, मोहि राखो कृपानिधान ।।
अजामील अपराधी तारे, तारे नीच सदान ।।
जल डूबत गजराज उबारे, गणिका चढ़ी बिमान ।।
और अधम तारे बहुतेरे, भाखत सन्त सुजान ।।
कुबजा नीच भीलनी तारी, जाणै सकल जहान ।।
कहँ लग कहूँ गिणत नहिं आवै, थकि रहै बेद पुरान ।।
मीरा दासी सरण तिहारी, सुनिये दोनों कान ।।

[३]

कोई कहियो रे प्रभु आवन की, आवन की मन भावन की ।।
आप न आवै लिख नहिं भेजै, बाण पड़ी ललचावन की ।।

---

१. कठिनाई, मुसीबत

ए दोउ नैण कह्यो नहिं मानै, नदियां बहै जैसे सावन की ॥
कहा करूं कछु नहिं बस मेरो पाँख नहीं उड़ जावन की ॥
मीरा कहै प्रभु कब रे मिलोगे चेरी भई हूं तेरे दांवन की ॥

[४]

दरस बिन दूखन लागे नैन ।
जब तें तुम बिछुरे मेरे प्रभुजी, कबहुं न पायो चैन ॥
सबद सुनत मेरी छतियां काँपैं, मीठे लागें बैन ।
एक टकटकी पंथ निहारूं, भई छमासी रैन ॥
विरह बिथा कासों कहूं सजनी, बह गई करवत ऐन ।
मीरा के प्रभु कब रे मिलोगे, दुःख मेटन सुख दैन ॥

[५]

मोहे लागी लटक गुरु चरनन की ।
चरन बिना मोहे कछु न भावे, जग माया सब सपनन की ॥
भव सागर सब सूख गयो है, फिकर नहीं मोहे तरनन की ।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर, उलट भई मेरे नैनन की ॥

[६]

मीरा मन मानी सुरत सैल असमानी ॥
जब जब सुरत लगी वा घर की, पल पल नैनन पानी ।
ज्यों हिये पीर तीर सम सालत, कसक कसक कसकानी ॥
रात दिवस मोहिं नींद न आवत, भावे अन्न न पानी ।
ऐसी पीर बिरह तन भीतर, जागत रैन बिहानी ॥
ऐसा वैद मिलै कोई भेदी, देस बिदेस पिछानी ।
तासों पीर कहूं तन केरी, फिर नहिं भरमूं खानी ॥
खोजत फिरों भेद वा घर को, कोई न करत बखानी ।
रैदास संत मिले मोहिं सतगुरु, दीनी सुरत सहदानी ॥
मैं मिली जाय पाय पिया अपने, तब मोरी पीर बुझानी ।
मीरा खाक खलक सिर डारी, मैं अपना घर जानी ॥

[७]

म्हाँरा सतगुर बेगा आज्यो जी, म्हारे सुखरी सीर बुवाज्यो जी ॥
तुम बीछड़ियां पाऊंजी, मेरा मन माहीं मुरझाऊंजी ।
मैं कोइल ज्यूं कुरलाऊं जी, कुछ बाहिर कहि न जणाऊंजी ॥
मोहि बाघण विरह सतावैजी, कोई कहिया पार न पावैजी ।
ज्यूं चकवी रौ न भावै जी, या ऊगो भाण सुहावेजी ॥
ऊ दिन कबै करोलाजी, म्हारे आँगन पांव धरोलाजी ।
अरज करे मीरा दासी जी, गुर पद रज की प्यासीजी ॥

[८]

हे री मैं तो प्रेम दिवानी, मेरो दरद न जाने कोय ॥
सूली ऊपर सेज हमारी, किस बिध सोना होय ।
गगन मंडल पर सेज पिया की, किस बिध मिलना होय ॥
घायल की गति घायल जानै, कि जिन लागी होय ।
जौहरी की गति जौहरी जानै, कि जिन जौहर होय ॥
दरद की मारी बन बन डोलूं, बैद मिल्यो नहीं कोय ।
मीराँ की प्रभु पीर मिटै, जब बैद साँवलिया होय ॥

[९]

मन हमारा बांध्यो, कँवल नैन अपने गुण ।
तीखन तीर बेध दूर गई माई ॥
लाग्यो तब जान्यो नहीं । अब न सह्यो जाई री माई ॥
तन्त मन्त ओषध करो, तो पीर न जाई ।
है कोई उपकार करे, कठिन दरद री माई ॥
निकट हो तुम दूर नहीं, बेग मिलो आई ।
मीरा गिरधर स्वामी दयाल, तन की तपन बुझाई ॥
कँवल नैन अपने गुण बाँध्यो माई ॥

रैदास जी के शब्द

गउड़ी बैरागणि

ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

सतजुगि सतु तेता जगी दुआपरि पूजा चार ॥
तीनौ जुग तीनौ दिड़े कलि केवल नाम अधार[1] ॥१॥
पारु कैसे पाइबो रे मो सउ कोऊ न कहै समझाइ ॥
जाते आवागवनु बिलाइ[2] ॥१॥ रहाउ॥
बहु बिधि धरम निरूपीऐ करता दीसै सभ लोइ ॥
कवन करम ते छूटीऐ जिह साधे सभ सिधि होइ[3] ॥२॥
करम अकरम बीचारीऐ संका सुनि बेद पुरान ॥
संसा सद हिरदै बसै कउनु हिरै अभिमानु[4] ॥३॥
बाहरु उदकि[5] पखारीऐ[6] घट भीतरि बिबिधि बिकार ॥
सुध कवन पर होइबो सुच कुंचर बिधि बिउहार[7] ॥४॥
रवि प्रगास रजनी जथा गति जानत सभ संसार ॥
पारस मानो ताबो छुए कनक होत नही बार[8] ॥५॥
परम परस गुरु भेटीऐ पूरब लिखत लिलाट ॥
उनमन मन मन ही मिले छुटकत बजर कपाट ॥६॥
भगति जुगति मति सति करी भ्रम बंधन काटि बिकार ॥
सोई बसि रसि मन मिले गुन निरगुन एक बिचार ॥७॥
अनिक जतन निग्रह कीए टारी न टरै भ्रम फास[9] ॥
प्रेम भगति नही ऊपजै ताते रविदास उदास ॥८॥१॥

---

१. सतयुग में सत प्रधान था, त्रेता में यज्ञ करना, पूजा करना आदि प्रधान थे। परन्तु कलियुग में केवल नाम भक्ति ही कारगर व सफल होती है २. जन्म-मरण से छुटकारा हो जाये ३. कई प्रकार के कर्म-काण्ड किये जाते हैं जो आम लोग करते हैं; अब सवाल पैदा होता है कि वह कौनसा कर्म है जिसको करने से मुक्ति प्राप्त होती है ४. वेद और पुराणों के सुनने से भी संसय दूर नहीं होते, मन में अहंकार रहता है ५. पानी ६. धोना, स्नान करना ७. बाहरी शौच हाथी के स्नान की भाँति है जो स्नान के बाद वापस अपने मस्तक पर धूल डाल लेता है ८. जिस प्रकार ताँबा पारस से छूने पर सोना नहीं होता ९. भ्रम की फाँसी मन के हठ कर्मों से नहीं टलती

आसा बाणी स्री रविदास जीउ की ॥

संत तुझी तनु संगति प्रान[1] ॥ सतिगुर गिआन जानै संत देवा देव[2] ॥१॥
संत ची[3] संगति संत कथा रसु ॥ संत प्रेम माझै दीजै देवा देव ॥१॥रहाउ॥
संत आचरण संत चो मारगु संत च ओल्हग ओल्हगणी[4] ॥२॥
अउर इक मागउ भगति चिंतामणि ॥
जणी लखावहु असंत पापीसणि[5] ॥३॥
रविदासु भणै जो जाणै सो जाणु[6] ॥ संत अनंतहि अंतरु नाही[7] ॥४॥२॥

बाणी रैदास जी ॥

का तूँ सोवै जाग दिवाना, झूठी जिउन[8] सत्त करि जाना ॥टेक॥
जिन जनम दिया सो रिजक उमड़ावें, घट घट भीतर रहट चलावै ।
करि बंदगी छाड़ि मैं मेरा, हृदय करीम सँभारि बसेरा ॥१॥
जो दिन आवै सो दुख में जाई, कीजै कूच रह्यो सच नाहीं ।
संगि चली है हम भी चलना, दूर गवन सिर ऊपर मरना ॥२॥
जो कछु बोया लुनिये[10] सोई, ता में फेरफार कस होई ।
छाड़िय कूर भजै हरि चरना, ताको मिटै जनम अरु मरना ॥३॥
आगे पंथ खरा है झीना, खांडे धार जैसा है पैना ।
जिस ऊपर मारग है तेरा, पंथी पंथ सँवार सबेरा ॥४॥
क्या तैं खरचा क्या तैं खाया, चल दरहाल[11] दिवान बुलाया ।
साहिब तो पै लेखा लेसी, भीड़ पड़े तूँ भरि भरि देसी ॥५॥
जनम सिराना किया पसारा, सूझि पर्यो चहुँ दिसि अँधियारा ।
कह रैदास अज्ञान दिवाना, अजहूँ न चेतहु नीफंद[12] खाना[13] ॥६॥

---

१ हे सन्त ! तेरे देह-स्वरूप की संगति ही मेरे प्राण हैं २. देवों के देव अर्थात् परमात्मा ३. की ४. मुझे संतों की रहनी, संतों की कहनी (उनका उपदेश) दो और मुझे संतों के सेवकों की सेवा प्रदान करो ५. असंत और पापी व्यक्ति मुझे कभी न दिखाओ ६. जानने वाला, ज्ञानी ७. रविदास जी कहते हैं कि जो व्यक्ति यह जानता है कि सन्त और परमात्मा में कोई भेद नहीं है, वही ज्ञानी है ८. ज़िन्दगी, जीवन ९. जीविका, रोज़ी १०. काटिये ११. तुरन्त १२ बन्धन-रहित १३. घर, धाम

धनासरी भगत रविदास जी की ॥

चित सिमरनु करउ नैन अविलोकनो स्रवन बानी सुजसु पूरि राखउ[1] ॥
मनु सु मधुकरु[2] करउ चरन हिरदे धरउ
रसन[3] अंमृत राम नाम भाखउ[4] ॥१॥
मेरी प्रीति गोबिंद सिउ जिनि[5] घटै ॥
मै तउ मोलि महगी लई जीअ सटै[6] ॥ १ ॥ रहाउ ॥
साध संगति बिना भाउ[7] नही ऊपजै भाव बिनु भगति नही होइ तेरी ॥
कहै रविदासु इक बेनती हरि सिउ पैज[8] राखहु राजा राम मेरी ॥२॥२॥

बसंतु बाणी रविदास जी की

१ ओ सतिगुर प्रसादि ॥

तुझहि सुझंता[9] कछू नाहि ॥ पहिरावा देखे ऊभि जाहि[10] ॥
गरबवती[11] का नाही ठाउ[12] ॥ तेरी गरदनि ऊपरि लवै काउ[13] ॥ १ ॥

तू कांइ गरबहि बावली ॥
जैसे भादउ खूंबराजु तू तिस ते खरी उतावली[14] ॥ १ ॥ रहाउ॥
जैसे कुरंक[15] नही पाइओ भेदु ॥ तनि[16] सुगंध ढूढै प्रदेसु[17] ॥
अपतन[18] का जो करे बीचारु ॥ तिसु नही जम कंकरु[19] करे खुआरु ॥२॥
पुत्र कलत्र का करहि अहंकारु । ठाकुरु लेखा मंगनहारु ॥
फेड़े[20] का दुखु सहै जीउ ॥ पाछे किसहि पुकारहि पीउ पीउ[21] ॥३॥
साधू की ज उ लेहि ओट ॥ तेरे मिटहि पाप सभ कोटि कोटि ॥
कहि रविदासु जो जपै नामु ॥ तिसु जाति न जनमु न जोनि कामु ॥४॥१॥

---

१. चित्त इसलिये है कि तुझ याद करू, आख इसलिये है कि तेरा दीदार करें, कान इसलिये हैं कि तेरी बाणी के उत्तम यश-गान से भरे रहें २. भ्रमर, भँवरा ३. रसना अथवा जिह्वा से ४. बोलूँ, उच्चारण करूँ ५. नहीं ६. जीव के बदले ७. प्रेम ८. इज्जत, लाज ९. सूझता १०. अपना पहरावा व ठाठ देख कर घमण्ड करने लग जाता है ११. अहंकारी १२. ठौर या ठिकाना १३. काल रूपी कौआ १४. तेरा जीवन उस खुंभ से भी कहीं क्षणभंगुर है जो पैदा होते ही शीघ्र ही सड़ने लग जाता है १५. हिरण १६. तन में १७. परदेश, बाहर १८. अपने शरीर १९. यमदूत २०. अपने किये कर्मों का २१. प्यारा-प्यारा कहता है कि मेरा कोई अब बने

रागु सोरठि बाणी भगत रविदास जी की

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

दुलभ जनमु पुंन फल पाइओ बिरथा जात अबिबेकै[1] ॥
राजे इंद्र समसरि[2] गृह आसन बिनु हरि भगति कहहु किह लेखै[3] ॥ १ ॥
न बीचारिओ राजा राम को रसु ॥
जिह रस अनरस[4] बीसरि जाही ॥ १ ॥ रहाउ ॥
जानि अजान भए हम बावर सोच असोच दिवस जाही ॥
इंद्री सबल निबल बिबेक बुधि परमारथ परवेस नही ॥२॥
कहीअत आन अचरीअत अन[5] कछु समझ न परै अपर[6] माइआ ॥
कहि रविदास उदास दास मति परहरि[7] कोपु करहु जीअ दइआ ॥३॥३॥

सुखसागरु सुरतर[8] चिंतामनि[9] कामधेनु बसि जाके ॥
चारि पदारथ[10] असट दसा[11] सिधि नवनिधि करतल[12] ताके ॥ १ ॥
हरि हरि हरि न जपहि रसना ॥
अवर सभ तिआगि बचन रचना ॥ १ रहाउ ॥
नाना खिआन[13] पुरान बेद बिधि[14] चउतीस अखर मांही[15] ॥
बिआस बिचारि कहिओ परमारथु राम नामु सरि नाही ॥
सहज समाधि उपाधि रहत फुनि बडै भागि लिव लागी ॥२॥
कहि रविदास प्रगासु रिदै धरि जनम मरन भै भागी[16] ॥३॥४॥

धनासरी भगत रविदास जी की ॥

नामु तेरो आरती मजनु[17] मुरारे ॥
हरि के नाम बिनु झूठे सगल पासारे[18] ॥१॥ रहाउ॥

---

१. विचार-हीनता या न समझी के कारण २. समान ३. किस काम के ४. अन्य सब सांसा[रिक] रस अथवा स्वाद ५. हम कहते कुछ हैं और आचरण कुछ और ही करते हैं ६. अपार ७. छोड़ क[र] त्याग कर ८. कल्प वृक्ष ९. वह मणि जिससे मन की कामनाएँ पूरी हो जाती हैं १०. धर्म. अ[र्थ] काम. मोक्ष–चार पदार्थ ११. अष्ट+दस अर्थात् अठारह १२. हथेली पर अर्थात् जिसके हाथ मे[ं] १३. प्रसंग १४. वेदों में बताई हुई विधियाँ १५. चौंतीम अक्षरों में अर्थात लिखने-पढ़ने तक सी[मित] हैं १६. रविदास जी कहते हैं कि जिस व्यक्ति की आत्मा भाग्य से प्रभु चरणों में लीन हो जाती [है] वह सहज अवस्था को प्राप्त कर लेता है. उस के अन्तर में प्रकाश हो जाता है और वह जन्म म[रण] पर विजय प्राप्त कर लेता है १७. स्नान १८. सब धन्धे झूठे हैं

नामु तेरो आसनो[1] नामु तेरो उरसा[2] नामु तेरा केसरो ले छिटकारे[3] ॥
नामु तेरा अंभुला[4] नामु तेरो चंदनो घसि जपे
नामु ले तुझहि कउ चारे ॥ १ ॥
नामु तेरो दीवा नामु तेरो बाती नामु तेरो तेलु ले माहि पसारे ॥
नाम तेरे की जोति लगाई भइओ उजिआरो भवन सगलारे ॥२॥
नामु तेरो तागा नामु फूल माला भार अठारह सगल जूठारे[5] ॥
तेरो कीआ तुझहि किआ अरपउ नामु तेरा तुही चवर ढोलारे[6] ॥३॥
दस अठा अठसठे चारे खाणी इहै वरतणि है सगल संसारे[7] ॥
कहै रविदासु नामु तेरो आरती सतिनामु है हरि भोग तुहारे ॥४॥३॥

रामकली बाणी रविदास जी की

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

पड़ीऐ गुनीऐ नामु सभु सुनीऐ अनभउ भाउ न दरसै[8] ॥
लोहा कंचनु[9] हिरन[9] होइ कैसे जउ पारसहि न परसै[10] ॥१॥
देव संसै[11] गांठि न छूटै ॥
काम क्रोध माइआ मद मतसर इन पंचहु मिलि लूटे ॥१॥रहाउ॥
हम बड कबि[12] कुलीन[13] हम पंडित हम जोगी संनिआसी ॥
गिआनी गुनी सूर[14] हम दाते इह बुधि कबहि न नासी[15] ॥२॥
कहु रविदास सभै नही समझसि भूलि परे जैसे बउरे ॥
मोहि अधारु नामु नाराइन जीवन प्रान धन मोरे ॥३॥१॥

---

१. पूजा करने का आसन २. केसर घिसने का पत्थर ३. छिड़कने की केसर ४. पानी ५. सारी वनस्पति का एक-एक पत्ता ले लें तो अठारह भार (तोल) होते हैं, एक तोल पांच मन से भारी होता है। यहां भाव यह है कि सारी वनस्पति जूठी है, प्रभु के भेंट के योग्य नहीं ६. नाम तेरा मैं तुझे भेंट करता हूँ और तेरे ऊपर तानता हूँ, चँवर हुलाता हूँ ७. सारा संसार अठारह पुरानों, अड़सठ तीर्थों और चार खानों में भटक रहा है ८. वाणी के पढ़ने-सुनने से भी परमेश्वर के ज्ञान और प्रेम स्वरूप के दर्शन नहीं होते ९. सोना १०. स्पर्श ११. भ्रम और संशय १२. कवि १३. अच्छे कुल (खानदान) वाले १४. सूरमा, बहादुर १५. यह होमैं वाली बुद्धि कि हम बड़े गुनी-ज्ञानी तथा बहादुर और ऊँचे कुल वाले हैं कभी नष्ट नहीं होती

भैरउ बाणी रविदास जीउ की घरु २ ॥

१ ओ सतिगुर प्रसादि ॥

बिनु देखे उपजै[1] नही आसा ॥ जो दीसै सो होइ बिनासा ॥
बरन[2] सहित जो जापै नामु ॥ सो जोगी केवल निहकामु[3] ॥१॥
परचै[4] रामु रवै[5] जउ कोई ॥ पारसु परसै दुबिधा न होई ॥१॥रहाउ॥
सो मुनि मन की दुबिधा खाइ ॥ बिनु दुआरे त्रैलोक समाइ ॥
मन का सुभाउ सभु कोई करै ॥ करता[6] होइ सु अनभै[7] रहै ॥२॥
फल कारन फूली बनराइ[8] ॥ फलु लागा तब फूलु बिलाइ[9] ॥
गिआनै कारन करम अभिआसु ॥ गिआनु भइआ तह करमह नासु ॥३॥
घृत कारन दधि[10] मथै[11] सइआन[12] ॥ जीवत मुकत सदा निरबान ॥
कहि रविदास परम[13] बैराग ॥ रिदै रामु की न जपसि[14] अभाग ॥४॥१॥

आसा बाणी स्री रविदास जीउ की

१ ओ सतिगुर प्रसादि ॥

मृग[15] मीन[16] भृंग[17] पतंग[18] कुंचर[19] एक दोख बिनास[20] ॥
पंच दोख असाध जा महि ता की केतक आस ॥१॥
माधो अबिदिआ हित कीन ॥ बिबेक दीप मलीन ॥१॥ रहाउ॥
त्रिगद[21] जोनि अचेत संभव पुंन पाप असोच ॥
मानुखा अवतार दुलभ तिही संगति पोच ॥२॥
जीअ जंत जहा जहा लगु करम के बसि जाइ ॥
काल फास अबध लागे कछु न चलै उपाइ ॥३॥
रविदास दास उदास तजु भ्रमु तपन तपु गुर गिआन ॥
भगतजन भै हरन परमानंद[22] करहु निदान[23] ॥४॥१॥

---

१. पैदा होती २. उच्च जाति का हाकर ३. कामना राहत ४. अभ्यास करके ५. जप अर्थात जाप करे ६. मन को बस में कर ले ७. निर्भय ८. वनस्पति ९. दूर हो जाते हैं १०. दही ११. मन्थन करती है १२. चतुर स्त्री १३. अधिक, बहुत १४. क्यों नहीं जपता १५. हिरन १६. मछली १७. भँवरा १८. पतंगा १९. हाथी २०. नष्ट हो जाते हैं २१. टेढ़ी चाल वाले जीव (सांप, मेंढक आदि) २२. मुक्ति २३. अंत में

शेख़ फ़रीद के सलोक

जितु दिहाड़ै धनवरी साहे लए लिखाइ ॥
मलकु[१] जि कंनी सुणीदा मुहु देखाले आइ ॥
जिंदु निमाणी कढीऐ हडा कू कड़काइ ॥
साहे लिखे न चलनी[२] जिंदू कूं समझाइ ॥
जिंदू वहुटी मरणु वरु लै जासी परणाइ[३] ॥
आपण हथी जोलि कै कै गलि लगै धाइ ॥
वालहु निकी पुरसलात[४] कंनी न सुणीआइ ॥
फरीदा किड़ी पवंदीई खड़ा न आपु मुहाइ[५] ॥१॥

फरीदा दर दरवेसी गाखड़ी[६] चलां दुनीआं भति[७] ॥
बंन्हि उठाई पोटली किथै वंञा घति ॥२॥

किझु न बुझै किझु न सुझै दुनीआ गुझी भाहि[८] ॥
सांई मेरै चंगा कीता नाही त हंभी दझां[९] आहि ॥३॥

फरीदा जे जांणां तिल थोड़ड़े संमलि बुकु भरी ॥
जे जाणा सहु नंढड़ा[१०] तां थोड़ा माणु करी ॥४॥

जे जाणा लड़ु छिजणा[११] पीडी पाईं गंढि ॥

---

१. यमराज २. नहीं टलते ३. मौत जिन्दगी को ब्याह कर ले जायेगी, ४. इस्लाम धर्म के अनुसार नर्क की अग्नि के ऊपर बना हुआ पुल जो बाल से भी बारीक है ५. हे फरीद, अन्त समय समीप आ गया है, अपने आपको न लुटा ६. कठिन ७. दुनिया के जैसे ८. आग ६. नहीं तो मैं भी इसमें जल जाता १०. बाल-स्वभाव वाला, बेपरवाह ११. अगर पता होता कि लड़ को खुल जाना था

तै जैवडु मै नाहि को सभु जगु डिठा हंढि[1] ॥५॥

फरीदा जे तू अकलि लतीफु[2] काले लिखु न लेखु ॥
आपनड़ै गिरीवान[3] महि सिरु नींवां करि देखु ॥६॥
फरीदा जो तै मारनि मुकीआं तिन्हा न मारे घुंमि[4] ॥
आपनड़ै घरि जाईऐ पैर तिन्हा दे चुंमि ॥७॥
फरीदा जां तउ खटण वेल तां तू रता दुनी सिउ ॥
मरग सवाई नीहि जां भरिआ तां लदिआ ॥८॥
देखु फरीदा जु थीआ दाड़ी होई भूर[5] ॥
अगहु नेड़ा आइआ पिछा रहिआ दूरि ॥९॥
देखु फरीदा जि थीआ सकर होई विसु ॥
सांई बाझहु आपणे वेदण कहीऐ किसु ॥१०॥
फरीदा अखी देखि पतीणीआं[6] सुणि सुणि रीणे[7] कंन ॥
साख पकंदी आईआ होर करेंदी वंन ॥११॥
फरीदा काली जिनी न राविआ धउली रावै कोइ[8] ॥
करि सांई सिउ पिरहड़ी रंगु नवेला होइ ॥१२॥
फरीदा कालीं धउली साहिबु सदा है जे को चिति करे ॥
आपणा लाइआ पिरमु[9] न लगई जे लोचै सभु कोइ ॥
एहु पिरमु पिआला खसम का जै भावै तै देइ ॥१३॥(म० ३)
फरीदा जिन्ह लोइण जगु मोहिआ से लोइण[10] मै डिठु ॥
कजल रेख न सहदिआ से पंखी सूइ बहिठु ॥१४॥
फरीदा कूकेदिआ चांगेदिआ[11] मती देदिआ नित ॥
जो सैतानि वंञाइआ[12] से कित फेरहि चित ॥१५॥
फरीदा थीउ पवाही दभु ॥ जे साई लोड़हि सभु ॥
इकु छिजहि बिआ लताड़ीअहि ॥ तां सांई दै दरि वाड़ीअहि ॥१६॥
फरीदा खाकु न निंदीऐ खाकु जेडु न कोइ ॥
जीवदिआ पैरा तलै मुइआ उपरि होइ ॥१७॥

---

१. फिर कर, ढूँढ कर २. कुशाग्र-बुद्धि ३ अपने दामन में देख अर्थात् अपने अवगुणों की ओर देख ४. पलटकर अर्थात् बदले में ५. सफेद, श्वेत ६. कमजोर ७. बहरे ८. अगर किसी ने जवानी में परमात्मा की भक्ति नहीं की तो अब बुढ़ापे में उसकी भक्ति तो कोई विरला ही कर सकता है ९. प्रेम १०. नेत्र ११. दुहाई देती है १२. जिसे काल ने तबाह कर दिया है

फरीदा जा लबु ता नेहु किआ लबु त कूड़ा नेहु ॥
किचरु झति लवाईऐ छपरि तुटै मेहु ॥१८॥
फरीदा जंगलु जंगलु किआ भवहि वणि कंडा मोड़ेहि ॥
वसी रबु हिआलीऐ जंगलु किआ ढूढेहि ॥१९॥
फरीदा इनी निकी जंघीऐ[1] थल डूंगर[2] भविओम्हि ॥
अजु फरीदै कूजड़ा सै कोहां थीओमि[3] ॥२०॥
फरीदा राती वडीआं धुखि धुखि उठनि पास[4] ।
धिगु तिन्हा दा जीविआ जिन्हा विडाणी[5] आस ॥२१॥
फरीदा जे मै होदा वारिआ मिता आइड़िआं ॥
हेड़ा जलै मजीठ जिउ उपरि अंगारा[6] ॥२२॥
फरीदा लोड़ै दाख बिजउरीआं[7] किकरि बीजै जटु ॥
हंढै उंन कताइदा पैधा लोड़ै पटु ॥२३॥
फरीदा गलीए चिकड़ु दूरि घरु नालि पिआरे नेहु ॥
चला त भिजै कंबली रहां त तुटै नेहु ॥२४॥
भिजउ सिजउ कंबली अलह वरसउ मेहु ॥
जाइ मिला तिन्हा सजणा तुटउ नाही नेहु ॥२५॥
फरीदा मै भोलावा पग दा मतु मैली होइ जाइ[8] ॥
गहिला[9] रूहु न जाणई सिरु भी मिटी खाइ ॥२६॥
फरीदा सकर[10] खंडु निवात गुड़ु माखिउ मांझा दुधु ॥
सभे वसतू मिठीआं रब न पुजनि तुधु ॥२७॥
फरीदा रोटी मेरी काठ की लावणु मेरी भुख ॥
जिन्हा खाधी चोपड़ी घणे सहनिगे दुख ॥२८॥
रुखी सुखी खाइ कै ठंडा पाणी पीउ ॥
फरीदा देखि पराई चोपड़ी ना तरसाए जीउ ॥२९॥
अजु न सुती कंत सिउ अंगु मुड़े मुड़ि जाइ ॥

१. लातों से २. पर्वत ३. आज पास में पड़ा हुआ लोटा उठाना भी ऐसा है मानो सौ कोस से उठा कर लाना है ४. घुटने दुखते हैं ५. पराई ६. अगर मैंने मित्रों-सत्संगियों के आने पर कुछ छिपा कर रखा हो तो मेरा मांस मजीठ के समान लाल अंगारों पर जले ७. बिजोर देश की ८. पैरों को मैले होने से बचाने की भूल में ९. बेसुध, बेपरवाह १०. मिसरी

जाइ पुछहु डोहागणी तुम किउ रैणि विहाइ ॥३०॥
साहुरै ढोई ना लहै पेईऐ[1] नाही थाउ ।
पिरु वातड़ी[2] न पुछई धन सोहागणि नाउ ॥३१॥
साहुरै पेईऐ कंत की कंतु अगंम अथाह ॥
नानक सो सोहागणी जु भावै बेपरवाह ॥३२॥ (म० १)
नाती धोती संबही[3] सुती आइ नचिंदु[4] ॥
फरीदा रही सु बेड़ी हिंङु दी गई कथूरी गंधु ॥३३॥
जोबन जांदे ना डरां जे सह प्रीति न जाइ ॥
फरीदा कितंी जोबन प्रीति बिनु सुकि गए कुमलाइ ॥३४॥
फरीदा चिंत खटोला वाणु दुखु बिरह विछावण लेफु ॥
एहु हमारा जीवणा तू साहिब सचे वेखु ॥३५॥
बिरहा बिरहा आखीऐ बिरह तू सुलतानु ॥
फरीदा जितु तन बिरहु न ऊपजै सो तनु जाणु मसानु ॥३६॥
फरीदा ए बिसु गंदला धरीआं खंडु लिवाड़ि[5] ॥
इकि राहेदे रहि गए इकि राधी गए उजाड़ि ॥३७॥
फरीदा चारि गवाइआ हंढि कै चारि गवाइआ संमि[6] ॥
लेखा रबु मंगेसीआ तू आंहो केरे कंमि ॥३८॥
फरीदा दरि दरवाजै जाइ कै किउ डिठो घड़ीआलु ॥
एहु निदोसां मारीऐ हम दोसां दा किआ हालु ॥३९॥
घड़ीए घड़ीए मारीऐ पहरी लहै सजाइ ॥
सो हेड़ा घड़ीआल जिउ डुखी रैणि विहाइ ॥४०॥
बुढा होआ सेख फरीदु कंबणि लगी देह ॥
जे सउ वर्हिआ जीवणा भी तनु होसी खेह ॥४१॥
फरीदा बारि[7] पराइऐ बैसणा सांई मुझै न देहि ॥
जे तू एवै रखसी जीउ सरीरहु लेहि ॥४२॥
कंधि कुहाड़ा सिरि घड़ा वणि कै सरु लोहारु ॥
फरीदा हउ लोड़ी सहु आपणा तू लोड़हि अंगिआर ॥४३॥
फरीदा इकन्हा आटा अगला इकन्हा नाही लोणु ॥

१. पिता के घर (इस जन्म में) २. बात, खबर ३. सजी हुई ४. निश्चिन्त, बेफ़िक्र ५. लिबेड़ कर ६. दिन के चार पहर भटक कर गवाँ दिये और रात के सो कर ७. द्वार

अवै गए सिञापसन्हि चोटां खासी कउणु ॥४४॥
पासि दमामे छतु सिरि भेरी सडो रड ॥
जाइ सुते जीराण[1] महि थीए अतीमा गड ॥४५॥
फरीदा कोठे मंडप माड़ीआ उसारेदे भी गए ॥
कूड़ा सउदा करि गए गोरी आइ पए ॥४६॥
फरीदा खिथड़ि[2] मेखा[3] अगलीआ[4] जिंदु[5] न काई मेख ॥
वारी आपो आपणी चले मसाइक सेख ॥४७॥
फरीदा दुहु दीवी बलंदिआ मलकु बहिठा आइ ॥
गड़ु लीता घटु लुटिआ दीवड़े गइआ बुझाइ[6] ॥४८॥
फरीदा वेखु कपाहै जि थीआ जि सिरि थीआ तिलाह[7] ॥
कमादै अरु कागदै कुंने कोइलिआह ॥
मंदे अमल करेदिआ एह सजाइ तिनाह ॥४९॥
फरीदा कंनि मुसला सूफु गलि दिलि काती गुड़ु वाति[8] ॥
बाहरि दिसै चानणा दिलि अंधिआरी राति ॥५०॥
फरीदा रती रतु न निकलै जे तंनु चीरै कोइ ॥
जो तन रते रब सिउ तिन तनि रतु न होइ ॥५१॥
इहु तनु सभो रतु है रतु बिनु तंनु न होइ ॥
जो सह रते आपणे तितु तनि लोभु रतु न होइ ॥
भै पइऐ तनु खीणु होइ लोभु रतु विचहु जाइ ॥
जिउ बैसंतरि धातु सुधु होइ
तिउ हरि का भउ दुरमति मैलु गवाइ ॥
नानक ते जन सोहणे जि रते हरि रंगु लाइ ॥५२॥ (म०३)
फरीदा सोई सरवरु ढूढि लहु जिथहु लभी वथु[9] ॥
छपड़ि ढूढै किआ होवै चिकड़ि डुबै हथु ॥५३॥
फरीदा नंढी कंतु न राविओ वडी थी मुईआसु ॥

१. मसान में २. गुदड़ी ३. गाँठ ४. कई ५. ज़िन्दगी ६. मलिक-उल-मौत या यमराज, जो इन्तिजार में बैठा है, आकर जलते हुए दो नेत्रों के दीपकों को बुझा कर शरीर रूपी किले में से जीवात्मा को लूट कर ले जाता है ७. हे फ़रीद ! तू देख कपास के साथ जो हुआ और तिलों के सिर पर जो बीती ८. मुंह में गुड़ है अर्थात् जीव इन्द्रियों के भोगों में आसक्त हैं ९. वस्तु, नाम रूपी पदार्थ

धन कूकेंदी गोर में तै सह ना मिलीआसु[1] ॥५४॥
फरीदा सिरु पलिआ दाड़ी पली मुछां भी पलीआं[2] ॥
रे मन गहिले बावले माणहि किआ रलीआं ॥५५॥
फरीदा कोठे धुकणु केतड़ा पिर नीदड़ी निवारि ॥
जो दिह लधे गाणवे गए विलाड़ि विलाड़ि[3] ॥५६॥
फरीदा कोठे मंडप माड़ीआ एतु न लाए चितु ॥
मिटी पई अतोलवी कोइ न होसी मितु[4] ॥५७॥
फरीदा मंडप मालु न लाइ मरग सताणी[5] चिति धरि॥
साई जाइ सम्हालि जिथै ही तउ वंञणा ॥५८॥
फरीदा जिन्ही कंमी नाहि गुण ते कंमड़े विसारि ॥
मतु सरमिंदा थीवही सांई दै दरबारि ॥५९॥
फरीदा साहिब दी करि चाकरी दिल दी लाहि भरांदि[6] ॥
दरवेसा नो लोड़ीऐ रुखां दी जीरांदि[7] ॥६०॥
फरीदा काले मैडे कपड़े काला मैडा वेसु ॥
गुनही[8] भरिआ मै फिरा लोकु कहै दरवेसु ॥६१॥
तती तोइ न पलवै जे जलि टुबी देइ ॥
फरीदा जो डोहागणि रब दी झूरेदी झूरेइ[9] ॥६२॥
जां कुआरी ता चाउ वीवाही तां मामले ॥
फरीदा एहो पछोताउ वति कुआरी न थीऐ ॥६३॥
कलर केरी छपड़ी आइ उलथे हंझ[10] ॥
चिंजू बोड़न्हि ना पीवहि उडण संदी डंझ[11] ॥६४॥
हंसु उडरि कोध्रै पइआ लोकु विडारणि[12] जाइ ॥
गहला लोकु न जाणदा हंसु न कोध्रा खाइ ॥६५॥

---

१. जिस रूह रूपी स्त्री ने युवावस्था (जीवन काल) में परमेश्वर रूपी पति को प्यार न किया, वह मौत के बाद कब्र में पड़ी पछताती है २. सफेद हो गईं ३. हे फरीद! कोठे की दौड़ कितनी लम्बी हो सकती है, अर्थात् तू परमेश्वर की ओर से नींद दूर कर, लापरवाही त्याग क्योंकि जो गिनती के दिन तुझें मिले हैं वे छलांग लगाते हुए भागे जा रहे हैं ४. जब कब्र में पड़ा होगा, तो उस समय कोई तैरा मित्र न होगा ५. बलवान मौत को तू याद रख ६. भ्रम ७. बरदाश्त, धैर्य ८. गुनाहों से ९. जिस प्रकार पानी से जमी या गली हुई खेती को चाहे कितना ही पानी देवें, वह हरी नहीं होती, इस प्रकार परमात्मा से बिछुड़ी हुई अभागिन सदैव झुरती रहती है १०. हंस ११. उद्यम १२. उड़ाने के लिये

चलि चलि गईआं पंखीआ जिनी वसाए तल ॥
फरीदा सरु[1] भरिआ भी चलसी थके कवल इकल ॥६६॥
फरीदा इट सिराणे भुइ सवणु कीड़ा लड़िओ मासि ॥
केतड़िआ जुग वापरे इकतु पइआ पासि[2] ॥६७॥
फरीदा भंनी घड़ी सवंनवी टुटी नागर लजु ॥
अजराईलु फरेसता कैं घरि नाठी अजु[3] ॥६८॥
फरीदा भंनी घड़ी सवंनवी टूटी नागर लजु ॥
जो सजण भुइ भारु थे से किउ आवहि अजु ॥६९॥
फरीदा बेनिवाजा कुतिआ एह न भली रीति ॥
कबही चलि न आइआ पंजे बखत मसीति ॥७०॥
उठु फरीदा उजू साजि सुबह निवाज गुजारि ॥
जो सिरु साईं ना निवै सो सिरु कपि उतारि ॥७१॥
जो सिरु साईं ना निवै सो सिरु कीजै कांइ ॥
कुंने हेठि जलाईऐ बालण संदै थाइ ॥७२॥
फरीदा किथै तैडे मापिआ जिन्ही तूं जणिओहि ॥
तै पासहु ओइ लदि गए[4] तूं अजै न पतीणोहि[5] ॥७३॥
फरीदा मनु मैदानु करि टोए टिबे लाहि ॥
अगै मूलि न आवसी दोजक संदी भाहि[6] ॥७४॥
फरीदा खालकु खलक महि खलक वसै रब माहि ॥
मंदा किस नो आखीऐ जां तिसु बिनु कोई नाहि ॥७५॥(म०५)
फरीदा जि दिहि नाला कपिआ जे गलु कपहि चुख ॥
पवन्हि न इतंी मामले सहां न इती दुख ॥७६॥
चबण चलण रतंन से सुणीअर बहि गए ॥
हेड़े मुती धाह से जानी चलि गए[7] ॥७७॥

---

१. सरोवर, तालाब २. एक करवट से (कब्र में) पड़े हुए बहुत समय बीत जायेगा ३. हे फ़रीद, तेरे पड़ौस में कोई सुन्दर घड़ा फूट गया है, स्वाँसों की कोई सुन्दर घड़िया टूट गई है, अज़राईल फरिश्ता (यमदूत) आज किसी के घर पाहुना है ४. तेरे पास से वे चल बसे ५. तुझे अभी भी प्रतीति न आई कि एक दिन तुझे भी चले जाना है ६. तुझे नरकों की आग में नहीं जलना पड़ेगा ७. अर्थात् बुढ़ापे के कारण दाँत, पैर, आँख और कान जवाब दे गये और अब जीव आहें भर के रोता है

फरीदा बुरे दा भला करि गुसा मनि न हढाइ ॥
देही रोगु न लगई पलै सभु किछु पाइ ॥७८॥
फरीदा पंख पराहुणी दुनी सुहावा बागु ॥
नउबति वजी सुबह सिउ चलण का करि साजु ॥७९॥
फरीदा राति कथूरी वंडीऐ सुतिआ मिलै न भाउ ॥
जिन्हा नैण नंीद्रावले तिन्हा मिलणु कुआउ[1] ॥८०॥
फरीदा मै जानिआ दुखु मुझ कू दुखु सबाइऐ जगि ॥
ऊचे चड़ि कै देखिआ तां घरि घरि एहा अगि ॥८१॥
फरीदा भूमि रंगावली मंझि विसूला[2] बाग ॥
जो जन पीरि निवाजिआ तिन्हा अंच न लाग ॥८२॥ (महला ५)
फरीदा उमर सुहावड़ी संगि सुवंनड़ी देह ॥
विरले केई पाईअनि जिन्हा पिआरे नेह ॥८३॥ (महला ५)
कंधी वहण न ढाहि तउ भी लेखा देवणा ॥
जिधरि रब रजाइ वहणु तिदाऊ गंउ करे ॥८४॥
फरीदा डुखा सेती दिहु गइआ सूलां सेती राति ॥
खड़ा पुकारे पातणी बेड़ा कपर वाति[3] ॥८५॥
लंमी लंमी नदी वहै कंधी केरै हेति[4] ॥
बेड़े नो कपरु किआ करे जे पातण रहै सुचेति ॥८६॥
फरीदा गलंी सु सजण वीह इकु ढूंढेदी न लहां ॥
धुखां जिउ मांलीह कारणि तिन्हा मापिरी ॥८७॥
फरीदा इहु तनु भउकणा[5] नित नित दुखीऐ कउणु ॥
कंनी बुजे दे रहां किती वगै पउणु[6] ॥८८॥
फरीदा रब खजूरी पकीआं माखिअ नई वहंनि ॥
जो जो वंञै डीहड़ा[6] सो उमर हथ पवंन्हि[7] ॥८९॥
फरीदा तनु सुका पिंजरु थीआ तलीआं खूंडहि काग ॥
अजै सु रबु न बाहुड़िओ देखु बंदे के भाग ॥९०॥
कागा करंग ढढोलिआ सगला खाइआ मासु ॥

१. कैसे, कहाँ से २. विष-भरा ३. नाव लहरों में फँसी हुई है ४. नाव को डुबाने के लिये ५. अर्थात शरीर में अनेक कामनाओं का शोरगुल हो रहा है ६. दिन बीतता है। ७. आयु पर हाथ मार रहा है

ए दुइ नैना मति छुहउ पिर देखन की आस ॥ ९१॥

कागा चूंडि न पिंजरा बसै त उडरि जाहि ॥
जितु पिंजरै मेरा सहु बसै मासु न तिदू खाहि ॥९२॥

फरीदा गोर निमाणी सडु करे[1] निघरिआ घरि आउ ॥
सरपर मैथै आवणा[2] मरणहु ना डरिआहु ॥९३॥

एनी लोइणी[3] देखदिआ[4] केती चलि गई ॥
फरीदा लोकां आपे आपणी मै आपणी पई ॥९४॥

आपु सावारहि मै मिलहि मै मिलिआ सुखु होइ ॥
फरीदा जे तू मेरा होइ रहहि सभु जगु तेरा होइ ॥९५॥

कंधी उतै रुखड़ा किचरकु बंनै धीरु ॥
फरीदा कचै भांडै रखीऐ किचरु ताई नीरु ॥९६॥

फरीदा महल निसखण[5] रहि गए वासा आइआ तलि[6] ॥
गोरां से निमाणीआ बहसनि रूहां मलि ॥
आखीं सेखा बंदगी चलणु अजु कि कलि ॥९७॥

फरीदा मउतै दा बंना एवै दिसै जिउ दरीआवै ढाहा[7] ॥
अगै दोजक तपिआ सुणीऐ हूल पवै काहाहा[8] ॥
इकना नो सभ सोझी आई इकि फिरदे वेपरवाहा ॥
अमल जि कीतिआ दुनी विचि से दरगह ओगाहा[9] ॥९८॥

फरीदा दरीआवै कंनै बगुला बैठा केल करे ॥
केल करेदे हंझनो अचिंते बाज पए ॥
बाज पए तिसु रब दे केलां विसरीआं ॥
जो मनि चिति न चेते सनि सो गाली रब कीआं[10] ॥९९॥

साढे त्रै मण देहुरी चलै पाणी अंनि ॥
आइओ बंदा दुनी विचि वति आसूणी बंन्हि[11] ॥
मलकुल मउत जां आवसी सभ दरवाजे भंनि ॥

१. कब्र आवाज़ देकर पुकार रही है २. आखिर मेरे पास आना है ३. आँखों से ४. देखते-देखते ५. खाली ६. धरती के नीचे अर्थात् कब्र में ७. मौत जीवन रूपी किनारे को ढाह रही है ८. आगे नरक की अग्नि है और हाहाकार मची हुई है। ९. गवाही देते हैं १०. संसार में मौज करते जीव पर अचानक मौत का बाज टूट पड़ता है, ईश्वर वह बात कर देता है जिसका जीव को ख़याल भी नहीं होता ११. संसार में सुन्दर आशाएँ बाँध कर आया है

तिन्हा पिआरिआ भाईआं अगै दिता बंन्हि ॥
वेखहु बंदा चलिआ चहु जणिआ दै कंन्हि[1] ॥
फरीदा अमल जि कीते दुनी विचि दरगह आए कंमि ॥१००॥
फरीदा हउ बलिहारी तिन्ह पंखीआ जंगलि जिन्हा वासु ॥
ककरु चुगनि थलि वसनि रब न छोडन्हि पासु ॥१०१॥
फरीदा रुति फिरी वणु कंबिआ पत झड़े झड़ि पाहि ॥
चारे कुंडा ढूंढीआं रहणु किथाऊ नाहि ॥१०२॥
फरीदा पाड़ि पटोला धजकरी[2] कंबलड़ी पहिरेउ ॥
जिन्ही वेसी सहु मिलै सेई वेस करेउ ॥१०३॥
काइ पटोला पाड़ती कंबलड़ी पहिरेइ ॥
नानक घर ही बैठिआ सहु मिलै जे नीअति रासि करेइ ॥१०४॥(म०३)
फरीदा गरबु जिन्हा वडिआईआ धनि जोबनि आगाह ॥
खाली चले धणी सिउ टिबे जिउ मीहाहु ॥१०५॥ (म०५)
फरीदा तिना मुख डरावणे जिना विसारिओनु नाउ ॥
ऐथै दुख घणेरिआ अगै ठउर न ठाउ ॥१०६॥
फरीदा पिछल राति न जागिओहि जीवदड़ो मुइओहि ॥
जे तै रबु विसारिआ त रबि न विसरिओहि ॥१०७॥
फरीदा कंतु रंगावला वडा वेमुहताजु ॥
अलह सेती रतिआ एहु सचावां[3] साजु ॥१०८॥(म०५)
फरीदा दुखु सुखु इकु करि दिल ते लाहि विकारु ॥
अलह भावै सो भला तां लभी दरबारु ॥१०९॥(म०५)
फरीदा दुनी वजाई वजदी तूं भी वजहि नालि ॥
सोई जीउ न वजदा जिसु अलहु करदा सार[4] ॥११०॥(म०५)
फरीदा दिलु रता इसु दुनी सिउ दुनी न कितै कंमि ॥
मिसल फकीरां गाखड़ी[5] सु पाईऐ पूर करंमि ॥१११॥(म०५)
पहिले पहिरै फुलड़ा फलु भी पछा राति ॥
जो जागंन्हि लहंनि से साईं कंनो दाति ॥११२॥
दाती साहिब संदीआ किआ चलै तिसु नालि ॥

१. कन्धे पर २. टुकड़े-टुकड़े करके ३. सच्चा ४. सँभाल ५. फ़कीरों की कठिन रहनी

इकि जागंदे ना लहन्हि इकन्हा सुतिआ देइ उठालि ॥११३॥
ढूढेदीए सुहाग कू तउ तनि काई कोर[1] ॥
जिन्हा नाउ सुहागणी तिन्हा झाक न होर ॥११४॥
सबर मंझ कमाण ए सबरु का नीहणो[2] ॥
सबर संदा बाणु खालकु खता न करी[3] ॥११५॥
सबर अंदरि साबरी तनु एवैं जालेन्हि[4] ॥
होनि नजीकि खुदाइ दै भेतु न किसै देनि ॥११६॥
सबरु एहु सुआउ[5] जे तूं बंदा दिड़ु[6] करहि ॥
वधि थीवहि दरीआउ टुटि न थीवहि वाहड़ा[7] ॥११७॥
फरीदा दरवेसी गाखड़ी चोपड़ी परीति ॥
इकनि किनै चालीऐ दरवेसावी रीति[8] ॥११८॥
तनु तपै तनूर जिउ बालणु हड बलंन्हि ॥
पैरी थकां सिरि जुलां जे मूं पिरी मिलंन्हि[9] ॥११९॥
तनु न तपाइ तनूर जिउ बालणु हड न बालि ॥
सिरि पैरी किआ फेड़िआ[10] अंदरि पिरी निहालि ॥१२०॥
हउ ढूढेदी सजणा सजणु मैडे नालि ॥
नानक अलखु न लखीऐ गुरमुखि देइ दिखालि ॥१२१॥ (म०४)
हंसा देखि तरंदिआ बगा आइआ चाउ ॥
डुबि मुए बग बपुड़े सिरु तलि उपरि पाउ ॥१२२॥ (म०३)
मै जाणिआ वडहंसु है तां मै कीता संगु ॥
जे जाणा बगु बपुड़ा जनमि न भेड़ी अंगु ॥१२३॥ (म०३)
किआ हंसु किआ बगुला जा कउ नदरि धरे ॥
जे तिसु भावै नानका कागहु हंसु करे ॥१२४॥ (म०१)
सरवर पंखी हेकड़ो फाहीवाल पचास ॥

१. कोई त्रुटि या कसर है २ चिल्ला ३. अगर मन में सबर का ही तीर, सबर का कमान और सबर का ही चिल्ला हो तो परमात्मा यह तीर खाली नहीं जाने देता ४. इसी प्रकार भक्ति का अभ्यास करते हैं ५. स्वार्थ, जीवन का उद्देश्य ६. दृढ़ ७. भाव यह कि सबर के द्वारा तू बढ़ कर विशाल सरिता बन जायेगा, छोटा नाला न रहेगा ८. सच्ची भक्ति कठिन है ९. अगर पैरों से चलते-चलते थक जाऊँ तो सिर के द्वारा चलूँ, यदि मेरे प्रियतम मिल जायें १०. क्या बिगाड़ा है; अर्थात् शरीर को कष्ट देने की क्या जरूरत है, प्रियतम तो अन्दर ही है

इहु तनु लहरी गडु थिआ[1] सचे तेरी आस ॥१२५॥

कवणु सु अखरु कवण गुणु कवणु सु मणीआ मंतु ॥
कवणु सु वेसो हउ करी जितु वसि आवै कंतु ॥१२६॥

निवणु सु अखरु खवणु गुणु जिहबा मणीआ मंतु ॥
ए त्रै भैणे वेस करि तां वसि आवी कंतु ॥१२७॥

मति होदी होइ इआणा ॥ ताण होदे होइ निताणा ॥
अणहोदे आपु वंडाए ॥ को ऐसा भगतु सदाए ॥१२८॥

इकु फिका ना गालाइ सभना मै सचा धणी ॥
हिआउ न कैही ठाहि माणक सभ अमोलवे ॥१२९॥

सभना मन माणिक ठाहणु मूलि मचांगवा ॥
जे तउ पिरीआ दी सिक हिआउ न ठाहे कहीदा[2] ॥१३०॥

१. फँस गया २. किसी का दिल न दुखा

सहजो बाई के शब्द

(१)

अब तुम अपनी ओर निहारो ।
हमरे अवगुन पै नहिं जाओ, तुमहीं अपनी बिरद सम्हारो ॥
जुग जुग साख तुम्हारी ऐसी, बेद पुरानन गाई ।
पतित उधारन नाम तुम्हारो, यह सुन के मन दृढ़ता आई ॥
मैं अजान तुम सब कछु जानो, घट घट अंतरजामी ।
मैं तो चरन तुम्हारे लागी, हो किरपाल दयालहि स्वामी ॥
हाथ जोरि कै अरज करत हौं, अपनाओ गहि बाहीं ।
द्वार तिहारे आय परी हौं, पौरुष गुन मो में कछु नाहीं ॥

(२)

धनवन्ते दुखिया सभी, निरधन दुख का रूप ।
साध सुखी सहजो कहे, पायो भेद अनूप ॥१॥
ना सुख विद्या के पढ़े, ना सुख बाद बिबाद ।
साध सुखी सहजो कहे, लागी सुन्न समाध ॥२॥
जैसे संसडी लोह की, छिन पानो छिन आग ।
तैसे दुख सुख जगत के, सहजो तू तज भाग ॥३॥
सहजो जग में यों रहे, ज्यों जिह्वा मुख माँहि ।
घीव घना भक्षन करे, तौ भी चिकनी नाँहि ॥४॥
चलना है रहना नहीं, चलना बिस्वाबीस ।

सहजो तनक सुहाग पर, कहा गुंधावे सीस ।।५।।
सहजो गुरु प्रताप से, ऐसी जान पड़ी ।
नहीं भरोसा स्वाँस का, आगे मौत खड़ी ।।६।।
ज्यों तिरिया पीहर बसे, सुरत रहे पिव माँहि ।
ऐसे जन जग में रहें, गुरु को भूले नाँहि ।।७।।
पहिले बुरा कमाय कर, बाँधी विष की पोट ।
कोटि करम पल में कटे, जब आये गुरु ओट ।।८।।

दोहा

हरि किरपा जो होय तो, नाहीं होय तो नाँहि ।
पै गुरु किरपा दया बिनु, सकल बुद्धि बहि जाँहि ।।

चौपाई

राम तजूं पै गुरु न बिसारूं । गुरु के सम हरि कूं न निहारूं ।।
हरि ने जन्म दियो जग माहीं । गुरु ने आवागवन छुड़ाहीं ।।
हरि ने पाँच चोर दिये साथा । गुरु ने लई छुटाय अनाथा ।।
हरि ने कुटुंब जाल में गेरी । गुरु ने काटी ममता बेरी ।।
हरि ने रोग भोग उरझायौ । गुरु जोगी कर सबै छुडायौ ।।
हरि ने कर्म भर्म भरमायौ । गुरु ने आतम रूप लखायौ ।।
हरि ने मो सूँ आप छिपायौ । गुरु दीपक दै ताहि दिखायौ ।।
फिर हरि बंध मुक्ति गति लाये । गुरु ने सबही भर्म मिटाये ।।
चरनदास पर तन मन वारूं । गुरु न तजूं हरि को तजि डारूं ।।

दोहा

सब परबत सियाही करूं, घोलूँ समुंदर जाय ।
धरती का कागद करूं, गुरु अस्तुति न समाय ।।

बैंत हजरत सुलतान बाहु

अलफ़

अलफ़ अल्ला चम्बे दी बूटी, मुरशद मन मेरे विच लाई हू ।
नफ़ी असबात दा पाणी मिले सु, हर रगे हर जाई हू ॥
अन्दर बूटी मुशक मचाइआ, जाँ फुल्लण पर आई हू ।
जीवे मुरशद कामल बाहू, जैं इह बूटी लाई हू ॥

अलफ़ अल्ला पढ़िआ पढ़ हाफ़ज़[1] होया, गिआ हजाबों[2] परदा हू ।
पढ़ पढ़ आलम फ़ाज़ल होया, भी तालब होया ज़र[3] दा हू ॥
लख हज़ार किताबां पढ़िआं, ज़ालम नफ़स न मरदा हू ।
बाझ फकीरां किसे न मारिआ बाहू, इह ज़ालम चोर अन्दर दा हू ॥

अलफ़ ईमान सलामत हर कोई मंगे, इशक सलामत कोई हू ।
मंगण ईमान शरमावन इशकों, दिल नूं ग़ैरत होई हू ॥
जिस मंज़ल नू इशक पहुंचाए, ईमाने खबर न कोई हू ।
मेरा इशक सलामत रखीं बाहू, ईमानों दिआं धरोई हू ॥

अलफ़ इह तन मेरा चशमा होवे, मैं मुरशद वेख न रज्जां हू ।
लूं लूं दे मुढ लख लख चश्मां, इक खोलां इक कज्जां हू ॥
इतनिआं डिठिआं सबर न आवे, होर किते वल भज्जां हू ।
मुरशद दा दीदार है बाहू, मैनूं लख करोड़ाँ हज्जां हू ॥

---

१. कुरान याद करने वाला   २. धर्म   ३. सोना (धन, पदार्थ)

बे

बे बे अदबां न सार अदब दी, गए अदब थीं वाँजे हू ।
जेहड़े थां मिटी दे भांडे, कदे न होंदे कांजे हू ।।
जो मुढ कदीम दे खेड़े आहे, कदे न हुन्दे रांझे हू ।
जैं दिल हज़ूर न मंगिआ बाहू, गए दोहीं जहानीं वाँजे हू ।।

पे

पे पढ़ पढ़ इलम हज़ार किताबां, आलम हूए सारे हू ।
इक हरफ़ इशक दा न पढ़ जानण, भुल्ले फिरन बिचारे हू ।।
इक निगाह जे आशक वेखे, लख हज़ाराँ तारे हू ।
लख निगाह जे आलम वेखे, किसे न कद्धी[1] चाहड़े हू ।।
इशक अकल विच मंज़ल[2] मारी सैआं कोहां दे पाड़े हू ।
इशक ना जिन्हां खरीदिआ बाहू, उह दोहीं जहानीं मारे हू ।।
पे पंजे महल पंजां विच चानण, दीवा कितवल धरीए हू ।
पंजे महर पंजे पटवारी, हासल कितवल भरीए हू ।।
पंजे अमाम ते पंजे किबले, सजदा कितवल करीए हू ।
बाहू साहिब जे सिर मंगे, हरगिज ढिल न करीए हू ।।

ते

ते तन मन मार मैं शहर बनाया, दिल विच खास महल्ला हू ।
आन अलफ़ दिल वस्सों कीती, मेरी होई खूब तसल्ला[3] हू ।।
सभ कुझ मैनूँ पिआ सुणीवे, जो बोले मासवाए[4] अल्ला हू ।
दरद मंदां इह रमज़ पछाती, बाहू बे दरदाँ सिर खल्ला हू ।।
ते तसबीह दा तूं किसबी होइओं, मारें दम वलीआं हू ।
दिल दा मनका इक न फेरें, गांज पाएं पँज वीहीआँ हू ।।
देन गिआँ गल घोटू आवे, लैन गिआँ तशबीहाँ हू ।
पत्थर चित जिन्हां दा बाहू, ओथे ज़ाइआ वसनाँ मीहाँ हू ।।
ते तूँ वी जाग न जाग फ़कीरा, अन्त तूं लोड़ जगाइआ हू ।
अखीं मीटीआं न दिल जागे, जागे जाँ मतलब पाइआ हू ।।

१. किनारे पार २. दूरी ३. तसल्ली ४. बिना

एह नुकता जद पुखता कीता, तां ज़ाहर आख सुनाइआ हू ।
बाहू मैं ताँ भुल्ली वैंदी, मुरशद राह विखाइआ हू ।।

से

से साबत सिदक ते कदम अगेरे, तांही रब्ब लभीवे हू ।
लूं लूं दे विच ज़िकर अल्ला दा, हर दम पिआ पढ़ीवे हू ।।
ज़ाहिर बातन ऐन सिआणी, हू हू पिआ सुनीवे हू ।
नाम फ़कीर तिन्हाँ दा बाहू, कबर जिन्हाँ दी जीवे हू ।।

जीम

जीम जिस अलफ़ मुतालिआ कीता, बे दा बाब न पढ़दा हू ।
छोड़ सिफ़ाती लद्धो सु ज़ाती, ओह खामी दूर चा करदा हू ।।
नफस अमारा[1] कुतड़ा जाणे, नाज़ निआज़ न धरदा हू ।
किआ परवाह तिन्हां नूँ बाहू, जिन्हां घाड़ू लद्धा घरदा हू ।।

जीम जें दिल इशक खरीद न कीता, सो दिल बख़त न बख़ती हू ।
उसताद अज़ल दे सबक पढ़ाइआ, हथ दिती सु दिल तख़ती हू ।।
बर सर आइआँ दम न मारें, जाँ सिर आवे सख़ती हू ।
पढ़ तौहीद थीवसी वासल, बाहू सबक पढ़ीवे वकती हू ।।

जीम जें दिल इशक ख़रीद न कीता, सो दिल दरद नादाने हू ।
खुसरे खुसे[2] हर कोई आखे, कोई न कहे मरदाने हू ।।
गलीआँ दे विच फिरन हर वेले, जिउं जंगल ढोर दीवाने हू ।
बाहू मरद नमरद तदाहीं खुलसन, जद आशक बन्हसन गाने हू ।।

जीम जंगल दे विच शेर मरीला, बाज़ पवे विच घर दे हू ।
इशक जेहा इशराफ़ न कोई, जेहड़ा न छड्डे विच जर दे हू ।।
आशकाँ नींदर भुख न कोई, आशक मूल न मरदे हू ।
आशक सोई जीवन्दे बाहू जो रब्ब अगे सिर धरदे हू ।।

जीम जिन्हां इशक हकीकी पाया, मूहों न कुझ अलावन हू ।
ज़िकर फ़िकर[3] विच रहण हमेशा, दम नूं कैद लगावन हू ।।
सिरी[4] रूही[4] कलबी[4] सूरी[4], मख़फ़ी[4] ख़फ़ी[4] कमावन हू ।

१. मन २. नपंसक ३. भजन-सुमिरन ४. अभ्यास की विभिन्न प्रणालियाँ

मैं कुरबान तिन्हां तो बाहू, जेहड़े अकस निगाह जगावन हू ॥

जीम जींऊदे की जानण सार मोयां दी, से जाने जो मरदा हू ।
कबराँ दे विच अन्न न पाणी, ओथे ख़र्च लोड़ींदा घर दा हू ॥
इक विछोड़ा मां पिओ भाईआं, दूजा अज़ाब कबर दा हू ।
ईमान सलामत तिस दा बाहू, जेहड़ा रब्ब अगे सिर धरदा हू ॥

जीम जिन्हाँ शौह अलफ़ थीं पाया, उह फेर कुरान न पढ़दे हू ।
ओह मारन दम महब्बत वाला, दूर होयो ने परदे हू ॥
दोज़ख़ बहिशत गुलाम तिन्हां दे, चा कीतो ने बरदे[1] हू ।
मैं कुरबान तिन्हाँ दे बाहू, ज़ेहड़े वहदत[2] दे विच वड़दे हू ॥

जीम जब लग खुदी करें खुद नफसों, तब लग रब्ब न पावें हू ।
शरत फ़न्हा नूं जानें नाहीं, ते इसम[3] फ़कीर रखावें हू ॥
मोए बाझ न सोहन्दी अलफ़ी,[4] ऐवें गल विच पावें हू ।
तदों नाम फ़कीर है सोहन्दा बाहू, जे जीवदिआँ मर जावें हू ॥

जीम जो दम ग़ाफ़ल सो दम काफ़र, सानूं मुरशद इह पढ़ाया हू ।
सुणिआ सुख़न गईआं खुल अखी, असाँ चित मौला वल लाया हू ॥
कीती जान हवाले रब्ब दे, ऐसा इशक कमाया हू ।
मरन थीं मर गए अगे बाहू, ताँ मतलब नूँ पाया हू ॥

जीम जीवदिआँ मर रहिणा होवे, ताँ वेस फकीराँ बहीए हू ।
जे कोई सुट्टे गुद्दड़ कूड़ा, बाँग अरूड़ी रहीए हू ॥
जो कोई कढे गालाँ मिहणा, उस नूं जी जी कहीए हू ।
गिला उलाहमा भण्डी ख्वारी, यार दे पारों सहीए हू ॥
कादर दे हत्थ डोर असाडी, बाहू जिउं रखे तिओं रहीए हू ॥

जीम जद दा मुरशद कासा[5] दित्ता, तद दी बे परवाही हू ।
की होया जे रातीं जागे, जे मुरशद जाग न लाई हू ॥
रातीं जागें ते करें इबादत, देह[6] निंदिआ करें पराई हू ।
कूड़ा तख़त दुनिआँ दा बाहू, ते फ़क्कर सच्ची पादशाही हू ॥

चे

चे चढ़ चन्ना तू कर रुशनाई, ते ज़िकर करेंदे तारे हू ।

१. गुलाम २. एकता ३. नाम ४. फ़कीरों का चोला ५. [illegible] ६. दिनों में

गलीआं दे विच फिरन निमाणे, लालाँ दे वणजारे हू ॥
शाला मुसाफ़र कोई न थीवे, ते कख जिन्हां ते भारे हू ।
ताड़ी मार उड़ाओ न बाहू, असीं आपे उडण हारे हू ॥

हे

हे हाफ़ज़ हिफ़ज़ कर करन तकब्बर[1], करन मुल्लाँ वडिआई हू ।
सावण माह दे बदलां वाँगू, फिरन किताबाँ चाई हू ॥
जित्थे वेखण चंगा चोखा, ओथे पढ़न कलाम सवाई हू ।
ओह दोहीं जहानी मुट्ठे बाहू, जिन्हाँ खाधी वेच कमाई हू ॥

ख़े

ख़े ख़ाम[2] की जानण सार फ़क्कर दी, जेहड़े महरम नाहीं दिल दे हू ।
आब मिट्टी थीं पैदा होए ख़ामी भाण्डे गिल[3] दे हू ॥
कदर की जानण लाल जवाहराँ, जो सौदागर बिल दे हू ।
ईमान सलामत सोई वैसन बाहू, जेहड़े भज फकीराँ मिलदे हू ॥

दाल

दाल दिल दरिआ समुन्दरों डूँघा, कौन दिलाँ दीआँ जाणे हू ।
विचे बेड़े विचे झेड़े, विचे वँझ मुहाणे हू ॥
चौदाँ तबक[4] दिले दे अन्दर, तम्बू वांगण ताणे हू ।
जो दिल दा महिरम होवे बाहू, सोईओ रब्ब पछाणे हू ॥

दाल दिल काले कनों मुंह काला चँगा, जे कोई उस नू जाणे हू ।
मूंह काला दिल अच्छा होवे, ताँ दिल यार पछाणे हू ॥
इह दिल यार दे पिछे होवे, मताँ यार भी कदे पछाणे हू ।
बाहू सै आलम छोड़ मसीताँ नठे, जद लगे ने दिल टिकाणे हू ॥

ज़ाल

ज़ाल ज़ाते[5] नाल न ज़ाती[6] रलिआ, जो कज़ाब सदीवे हू ।
नफस कुत्ते नूं बन्ह कराहां, चा कीमा कीम कचीवे[7] हू ॥

---

१. अहंकार २. कच्चे ३. मिट्टी ४. चौदह लोक ५. परमेश्वर ६. मनुष्य
७. छोटे-छोटे टुकड़े

ज़ात सिफ़ातों मेहना आवे, जदों ज़ाती शौक न पीवे हू ।
ते नाम फ़कीर तिन्हां दा बाहू, कबर जिन्हां दी जीवे[१] हू ॥

रे

रे राह फ़कर दा परे परेरे, ओड़क कोई ना दिस्से हू ।
ना ओथे इलम ना पढ़न पढ़ावन, ना ओथे मसले किस्से हू ॥
इह है दुनिआँ बुत्त प्रसती, मत्त कोई इसते विस्से[२] हू ।
मौत फकीरी जेंह सिर आवे, बाहू इलम हौवे तिस्से हू ॥

रे रातीं रत्ती खाब[३] न आवे, देहां[४] बहुत हैरानी हू ।
आरफ़[५] दी गल आरफ़ जाणे, किआ जाणे नफ़सानी[६] हू ॥
कर इबादत कुछ हासल थीवे, ऐवें ज़ाइआ गई जवानी हू ।
हक हज़ूर तिन्हाँ नूँ बाहू, जिन्हां मिलिआ पीर जैलानी[७] हू ॥

रे राह फ़क्कर दा तद लधोसी[८], जद हथ फड़िओ सी कासा हू ।
तारक[९] दुनिआं तों तदों थिउसे, जद फ़क्कर मिलयो सी खासा[१०] हू ॥
दरिआ वहदत दा नोश कीतोसु[११], अजां भी जीअ पिआसा हू ।
राह फ़कीरी रत्त हँजूँ रोवत, बाहू लोकां भाणे हासा हू ॥

रे रातीं खाब न ओन्हां हरगिज़, जेहड़े अल्ला वाले हू ।
बाग़ाँ वाले बूटे वागूं, तालब[१२] नित सँभाले हू ॥
नाल नज़ारे रहिमत वाले, खड़े हज़ूरों पाले हू ।
नाम फकीर तिन्हाँ दा बाहू, जो घर बैठिआँ यार विखाले हू ॥

जे

ज़े ज़बानी कलमा हर कोई आखे, दिल दा पढ़दा कोई हू ।
जिथे कलमा दिल दा पढ़ीए, ओथे जीभे मिले न ढोई[१३] हू ॥
दिल दा कलमा आशक पढ़दे, की जानण यार गलोई[१४] हू ।
कलमा यार पढ़ाया बाहू, मैं सदा सुहागण होई हू ॥

---

१. जो शरीर में से आत्मा को निकाल कर जीते-जी मरते हैं २. विश्वास करे ३. नींद ४. दिन में ५. प्रभु के प्यारे ६. दुनियादार ७. जिनको गुरु मिला वे परमात्मा की दरगाह में पहुँचने के अधिकारी या हकदार हो गये ८. प्राप्त होगा ९. उदास १०. पूरा ११. उस एक परमात्मा रूपी दरिआ का जल पीकर १२. इच्छुक, चाहने वाले १३. पहुँच १४. बातें करने वाले ।

सीन

सीन सै रोज़े सै नफ़ल[1] नमाज़ां, सै सज़दा[2] कर कर थक्के हू ।
सै वारी मक्के हज्ज गुज़ारन, दिल दी दौड़ न मुक्के हू ॥
चले चलीए जंगल भौना, इस गल थीं न पक्के हू ।
सब मतलब हासल होंदे बाहू, जद पीर नज़र इक तक्के हू ॥

सीन सुण फ़रियाद पीराँ दिआ पीरा, मैं आख सुणावां कीनूं हू ।
तेरे जेहा मैनूं होर न कोई, मै जेहीआँ लक्ख तैनूँ हू ॥
फोल न काग़ज़ बदीआं वाले, दर तों धक्क न मैनूं हू ।
मैं विच ऐड गुनाह न होंदे, बाहू तूँ बखशेंदों किनूं हू ॥

सीन सुण फ़रियाद पीराँ दिआ पीरा, मेरी अरज़ सुणीं कन धर के हू ।
मेरा बेड़ा अड़िआ विच कप्परां[3] दे, जित्थे मच्छ न बहिंदे डर के हू ॥
शाह ज़ैलानी महबूब सुबहानी, मेरी खबर लिओ झट करके हू ।
पीर जिन्हा दा मीरां बाहू, सोइ कदधी[4] लगदे तर के हू ॥

शीन

शीन शोर शहर ते रहमत वस्से, जित्थे बाहू जाले हू ।
बाग़बानाँ दे बूटे वागूं, तालब नित सम्हाले हू ॥
नाल नज़ारे रहमत वाले, खड़ा हज़ूरों पाले हू ।
नाम फ़कीर तिना दा बाहू, जिहड़ा घर बिच यार विखाले हू ॥

स्वाद

स्वाद सूरत नफस अम्मारा[5] दी कूकी, कुत्ता गल हूँ हाला हू ।
कोहे नोके लहू पीवे, खांदा चरब निवाला हू ॥
खब्बे पासिओं अन्दर बैठा, दिल ते नाल सम्भाला हू ।
इह बद बख़त है भुखा बाहू, अल्ला करसी टाला हू ॥

ज़्वाद

ज़्वाद ज़रूरी नफ़स कुत्ते नूँ च कीमा कीम कचीवे[6] हू ।
नाल मुहब्बत ज़िकर अल्ला दा, दम दम पिआ पढ़ीवे हू ॥
ज़िकर[7] कनों[8] हक्क हासल होन्दा, ज़ातो ज़ात दिसीवे हू ।
दोहीं जहान गुलाम तिन्हां दे, बाहू जिन्हां ज़ात लभीवे हू ॥

१. बन्दगी की रस्म २. मस्तक नमाना ३. लहरें ४. पार ५. मन ६. टुकड़े-टुकड़े करना ७. सुमिरन ८. द्वारा

तोए

तोए तालब बण के तालब होवें, ओसे नूं पिआ गांवें हू ।
सच्चा लड़ हादी[1] दा फड़के, ओहो तूं हो जांवें हू ॥
कलमे दा तूं ज़िकर कमावें, कलमे दे नाल नहावें हू ।
अल्ला तैनूं पाक करेसी बाहू, जे ज़ाती इसम[2] कमावें हू ॥

ज़ोए

ज़ोए ज़ाहर वेखां जानी ताईं, ते नाले मन्दर सीने हू ।
बिरहों मारी मैं नित फिरां, मैनूं हस्सण लोक नाबीने[3] हू ॥
मैं दिल विचों है शौह पाइआ, लोक जावन मक्के मदीने हू ।
कहै फ़कीर मीराँ दा बाहू, सभ दिलां दे विच खज़ीने[4] हू ॥

ऐन

ऐन आशक पढ़न नमाज़ प्रेम दी, जैं विच हरफ़ न कोई हू ।
जेहा केहा नीत[5] न सक्के, ओथे दरद मन्दां दिल ढोई हू ॥
अखीं नीर ते खून जिगर दा, ओथे वज़ू पाक करिओई हू ।
बाहू जीभ न हले ते होठ न फड़कन, खास नमाज़ी सोई हू ॥

ऐन इलमें बाझ कोई फ़क्कर कमावे, काफ़र मरे दिवाना हू ।
सै वरिआँ दी करे इबादत, रहे अल्ला कनों बिगाना हू ॥
ग़फ़लत[6] कनें न खुलसन[7] परदे, दिल जाहिल बुतखाना हू ।
मैं कुरबान तिन्हां दे बाहू, जिन्हा मिलिआ यार यगाना[8] हू ॥
ऐन आशक होवें ते इशक कमावें, दिल रखें वांग पहाड़ाँ हू ।
लख लख बदीआँ हज़ार उलाहमे, कर जाणें बाग़ बहाराँ हू ॥
मनसूर जेहे चुक सूली दिते, जेहड़े वाकफ़ कुल असरारां[9] हू ।
सजदिओं सिर न चाए[10] बाहू, तोड़े[11] काफर कहिन हज़ारां हू ॥

ऐन आशक इशक माही दे कोलों, कदी न थींदे वान्दे हू ।
नींद हराम तिन्हाँ ते होई, जेहड़े ज़ाती इसम कमांदे हू ॥
हिक पल मूल आराम न आवे, दिन रात फिरन कुरलाँदे हू ।
जिन्हाँ अलफ़ सही कर पढ़िआ, बाहू वाह नसीब तिन्हाँ दे हू ॥

---

१. जो हज कर चुका हो अर्थात गुरु जो कि परमात्मा को प्राप्त कर चुका है २. धुनात्मक नाम ३. अंधे ४. खजाने ५. पढ़ ६. लापरवाही ७. खुलेंगे ८. एक ही अपना परमात्मा ९. भेद १०. उठाये ११. चाहे, भले ही

ऐन आशक इशक माही दे कोलों नित फिरन हमेशा खीवे हू ।
जिन्हे जींदिआं जान माही नूं दित्ती, ओह दोहीं जहानी जीवे हू ।।
शमा चराग़ नित रोशन जागन, सै किओं बालण दीवे हू ।
अकल फ़िकर दी सोच न बाहू, ओथे फ़ैमा फ़हम कचीवे हू ।।

ऐन इशक माही दे लाईआं अगीं, उन्हां लगीआं कौन बुझावे हू ।
मैं की जानां ज़ात इशक दी केही, जेहड़ा दर दर जा झुकावे हू ।।
न खुद सोवें न सोवन देवे, हथों[1] सुतिआँ आन जगावे हू ।
मैं कुरबान तिन्हां दे बाहू जेहड़ा बिछुड़े यार मिलावे हू ।।

ऐन इशक दीआं अवल्लीआं गल्लां, जेहड़ा शरह थीं दूर हटावे हू ।
काज़ी छोड़ कज़ाईं जावन, जिन्हाँ इशक तमांचा लावे हू ।।
लोक अयाणे मत्तीं देवन, आशकां मत्त न भावे हू ।
मुड़न मुहाल[2] तिन्हां नूं बाहू, जिन्हां साहिब आप बुलावे हू ।।

ऐन इशक असां नूँ लिसिआँ जाता, हुन लत्था आन मुहाड़ी हू ।
न सवें न सोवन देवे, हो रहिआ बाल रिहाड़ी हू[3] ।।
पोह माँघ मँगे खरबूज़े, मैं कित्थों लैसाँ वाड़ी[4] हू ।
अकल फ़िकर दीआं सभ भुल गईआं बाहू, जद इशक मचाई ताड़ी हू ।।

ऐन इशक आसां नूं लिसिआँ जाता, कर कर आवे धाई हू ।
जित वल वेखां मैनूं इशक दिसीवे ख़ाली जगह न काई हू ।।
मुरशद कामल ऐसा मिलिआ, जिस दिल दी ताकी लाई हू ।
मैं कुरबान मुरशद तों बाहू, जिस दसिआ भेद इलाही हू ।।

ऐन इशक असानूं लिसिआँ जाता, बैठा मार पथल्ला हू ।
विच जिगर दे सन्नह चा लाईसु, कीतोसु कम्म अवल्ला[5] हू ।।
जाँ अन्दर वड़ के झाती पाई, डिठा यार अकल्ला हू ।
बाझों मिलिआँ मुरशद कामल बाहू, होंदी नहीं तसल्ला हू ।।

ग़ैन

ग़ैन ग़ोस कुतब ने उरे उरेरे आशक जान अगेरे हू ।
जेहड़ी मंज़ल आशक पहुँचे, ओथे ग़ौस न पाँदे फेरे हू ।।

१. बल्कि २. कठिन ३. बच्चों के समान ज़िद करता है ; अनहोनी बातें करता है
४. खेत ५. अजीब

आशक विच वसाल[1] दे रहिंदे, जिन्हां ला मकानी डेरे हू ।
दीन कुरबान तिन्हाँ तों बाहू, जिन्हां ज़ातो ज़ात बसेरे हू ॥

फ़े

फ़े फ़जरे वेले वकत सवेरे, नित्त आन करन मज़दूरी हू ।
कावां इल्लां हिकसे गलाँ, तरीजी रली चँडूरी हू ॥
मारन चुंजाँ ते करन मुशक्कत, पुट पुट कढन अँगूरी हू ।
सारी उमर पुटेंदिआं गुज़री, बाहू कदी न पईआ पूरी हू ॥

क़ाफ़

क़ाफ़ क़लब न हिलया तां की होइआ, किआ होइआ ज़िकर ज़बानी हू ।
रूही क़लबी ख़फी सिर्री, सभे राह हैरानी हू ॥
शाह रग थीं नज़दीक उह रहिंदा, यार न मिलिआ जानी हू ।
नाम फ़क़ीर तिन्हाँ दा बाहू, जेहड़े वसण लामकानी[2] हू ॥

काफ़

काफ़ कर मेहनत कुछ हासल होवे, तैंडी उमरा चार दिहाड़े हू ।
थी सौदागर करीए सौदा, जाँ जाँ हट न ताड़े हू॥
जे जाने दिल ज़ौक मनेसी, मौत मरेंदीआ धाड़े हू ।
चोराँ साधां रल पूर भरिआ बाहू, रब्ब पार सलामत चाहड़े हू ॥

काफ़ कुन्न फयकून[3] जदों फरमाइआ, असीं भी कोले हासी हू ।
हिके ज़ात सिफ़ात रब्बे दी आही, हिके जग विच ढूंढ रहिआसी हू ॥
हिके ते लामकान असाडे, हिके आन सत्तां विच फासी हू ।
पलीदां पलीदी कीती बाहू, कोई असल पलीदी नासी हू ॥

काफ़ किआ होआ बुत दूर गिआ, दिल हरगिज़ दूर न थीवे हू ।
सैआँ कोहाँ ते मेरा मुरशद वसदा, मैनूं विच हज़ूर दसीवे हू ॥
जींदे अन्दर इशक दी रत्ती, ओह बिन शराबों खीवे हू ।
नाम फ़कीर तिन्हां दा बाहू, कबर जिन्हां दी जीवे हू ॥

काफ़ कूक[4] दिला मतां रब्ब सुने, दरदमंदाँ दीआं आहीं हू ।
सीना मेरा दरदीं भरिआ, अन्दर भड़कण भाहीं हू ॥

१. मिलाप २. अनामी देश ३. ख़ुदा ने कहा हो जा हो गया ४. पुकार

तेलां बाझ न बलण मसांलां, दरदाँ बाझ न आहीं हू ।
आतश[1] नाल यरानाँ ला के बाहू, फिर ओह सड़न कि नाहीं हू ॥

काफ़ कामल मुरशद ऐसा होवे, जेहड़ा धोबी वांगू छट्टे हू ।
नाल निगाह दे पाक करेंदा, विच सज्जी[2] साबण न घत्ते हू ॥
मैलिआँ थीं कर देंदा चिट्टा, विच ज़रा मैल न रखे हू ।
सैआं कोहां ते मुरशद वसदा, ते विच निगाह दे रखे हू ॥
ऐसा मुरशद होवे बाहू, जेहड़ा लूं लूं दे विच वसे हू ॥

काफ़ कलमे[3] दीं कल[4] तदां पैसी, जादां मुरशद कलमा दसिआ हू ।
सारी उमर विच कुफ़र दे जाली, बिन मुरशद दे दसिआ हू ॥
शाह अली शेर बहादर वांगन, कलमे वढ कुफ़र नूं सुट्टिया हू ।
दिल नूं साफ़ी ताँ होवे बाहू, जाँ कलमा लूं लूं मुढ रसिआ हू ॥

काफ़ कलमे नाल मैं नहाती धोती, कलमे नाल बिआही हू ।
कलमे मेरा पढ़िआ जनाज़ा[5], कलमे गौर[6] सुहाई हू ॥
कलमे नाल बहिशती जाना, कलमा करे सफाई हू ।
मुड़न मुहाल तिन्हाँ नूं बाहू, जिन्हां साहिब आप बुलाई हू ॥

काफ़ कलमे लख करोड़ाँ तारे, वली कीते सै राहीं हू ।
कलमे नाम बुझाए दोज़ख, जित्थे अग बले अज़गाहीं हू ॥
कलमे नाल बहिशती जानां, जित्थे निहमत संज[8] सबाहीं हू ।
कलमे जेही कोई निहमत न बाहू, अन्दर दोहीं सराईं हू ॥

गाफ़

गाफ़ गन्द ज़ुलमात अन्धेर गुबारां, अगे राह ते खौफ़ खतर दे हू ।
लख आबहयात मुन्नवर चशमा, ओथे साए ने ज़ुलफ अम्बर दे हू ॥
मिसल सिकन्दर ढूँडन आशक, इक पलक आराम न करदे हू ।
खिज़र नसीब जिन्हाँ दे तालिआँ बाहू, उह जा घुट ओथे भरदे हू ॥

लाम

लाम लाइहताज[9] जिन्हाँ नूं होइआ, फ़क्कर तिन्हाँ नूं सारा हू ।
नज़र जिन्हाँ दी कीमीआँ होई, ओह किओं मारन पारा हू ॥

१. आग २. साफ करने का मसाला ३. नाम ४. समझ ५. मरने के बाद की नमाज़
६. कब्र ७. बहुत सारी ८. शाम ९. बेमुहताज, जिसको किसी वस्तु की इच्छा न हो

दोसत जिन्हाँ दा हाज़र होवे, दुशमन लैन न वारा हू ।
नाम फ़कीर तिन्हां दा बाहू, जिन्हाँ मिलिआ नबी[1] सहारा हू ।।

मीम

मीम मुरशद मक्का ते तालब हाजी, काबा इशक बनाया हू ।
विच हजूर सदा हर वेले, करीए हज्ज सवाइआ हू ।।
इक दम मैथों जुदा न होवे, दिल मिलणे ते आइआ हू ।
मुरशद ऐन हयाती[2] बाहू, मेरे लूं लूं विच समाइआ हू ।।

मीम मुरशद ओह सहेड़ीए, जेहड़ा दो जग खुशी दिखाए हू ।
अव्वल ग़म टुकड़े दा मेटे वत्त रब्ब दा राह समझाए हू ।।
इस कल्लर वाली[3] कन्धी नूं, चा चान्दी[4] ख़ास बनाए हू ।
जिस मुरशद अन्हे कुझ न कीता बाहू, ओहनूं वैंदी नदी रुड़ाए हू ।।

मीम मैं कोझी मेरा दिलबर सोहणा, मैं किउंकर उसनूं भांवाँ हू[5] ।
वेहड़े असाडे वड़दा नाहीं, पई लख वसीले पाँवाँ हू ।।
न मैं सोहणी न दौलत पल्ले, मैं कीकर यार मनांवां हू ।
इह दुख हमेशा रहसी बाहू, रोंदड़ी ही मरजाँवां हू ।।

मीम मुरशद मैनूं हज्ज मक्के दा, रहमत दा दरवाज़ा हू ।
कराँ तवाफ़[6] दवाले किबले,[7] हज्ज होवे नित ताज़ा हू ।।
कुन फ़यकून जदों सुणिआ सु, डिठा अल्ला दा दरवाज़ा हू ।
सदा हयाती वाला बाहू, ओह किथे खिज़र खुवाजा हू ।।

मीम मुरशद मेरा शहबाज़ इलाही, वँज[8] रलिआ सङ्ग हबीबाँ हू ।
तकदीर इलाही छिकीआँ[9] डोराँ, कदाँ मिलीए नाल नसीबाँ हू ।।
कोहड़िआँ दे दुख दूर करेंदा, करे शफ़ा ग़रीबां हू ।
हर मरज़ दा दारू तू हैं बाहू, किओं घतनाएँ वस तबीबाँ हू[10]।।

मीम मज़हबां वाले दरवाज़े उच्चे, राह रबाना[11] मोरी हू ।
पण्डताँ ते मलवाणिआँ कोलों, छुप छुप लँघे चोरी हू ।।
अड्डीआँ मारन करन बखेड़े, दरद मन्दा दीआं घोरी हू ।

१. पैग़म्बर. यहाँ भाव गुरु से है २. देहधारी ३. निकम्मी ४. कीमती ५. अच्छी लगूँ ६. परिक्रमा ७. प्रतिष्ठित पुरुष, सतगुरु ८. जाकर ९. खींच लीं १०. हकीम ११. ईश्वरीय

बाहू चल उथाईं वसीए, जिथे दाअवा न किसे होरी हू ॥

मीम मुरशद हादी सबक पढ़ाया, ओह बिन पढ़िओं पिआ पढ़ीवे हू ।
उँगलीआं कन्नाँ विच दितीआँ, बिन सुणिओं पिआ सुणीवे हू ॥
नैन नैनाँ वलों तुर तुर तकदे, बिन डिठिओं पिआ दिसीवे हू ।
बाहू हर खाने विच जानी वसदा, कुन सर ओह रखीवे हू ॥

नून

नून नाल कुसङ्गी सङ्ग न करीए, कुल नूं लाज न लाईए हू ।
तुम्मे[1] तरबूज़ मूल न होंदे, तोड़े[2] तोड़ मक्के लै जाईए हू ॥
कावाँ दे बच्चे हँस न थींदे, तोड़े मोती चोग चुगाईए हू ।
कौड़े खूह न मिट्ठे होंदे बाहू, तोड़ें सै मनाँ खण्ड पाईए हू ॥

नून न मैं आलम न मैं फ़ाज़ल, न मुफ़ती[3] न क़ाज़ी हू ।
न दिल मेरा दोज़ख मंगे, न शौक बहिशतीं राज़ी हू ॥
न मैं त्रीहे रोज़े रखे, न मैं पाक नमाज़ी हू ।
बाझ वसाल अल्ला दे बाहू, होर दुनीआँ कूड़ी बाज़ी हू ॥

नून न रब्ब अरश मुअल्ला[4] उत्ते, न रब्ब ख़ाने काबे हू ।
न रब्ब इलम किताबीं लभा, न रब्ब विच महिराबे[5] हू ॥
गङ्गा तीरथ थीं मूल न मिलया, मारे पैंडे बे हिसाबे हू ।
जद दा मुरशद फड़िया बाहू, छुट्टे सब अज़ाबे[6] हू ॥

नून न मैं जोगी न मैं जंगम, न मैं चिल्ला[7] कमाइआ हू ।
न मैं भज्ज मसीतीं वड़िआ, न तसबा[8] खड़काया हू ॥
जो दम ग़ाफ़ल सो दम काफ़र, सानूं मुरशद इह फ़रमाया हू ।
मुरशद सोहणी कीती बाहू, हिक पल विच चा बख़शवाया हू ॥

व

व वहदत दे दरिआ उछ्छले, जल थल जंगल रीने[9] हू ।
इशक दी ज़ात मनेंदी नाहीं, साँगा जल थल पीने हू ॥
अङ्ग बभूत मलेंदे डिठे, सै जवान लखीने हू ।
मैं कुरबान तिन्हाँ तों बाहू, जेहड़े होंदे हिम्मत हीने हू ॥

१. एक कड़ुआ फल २. चाहे ३. फ़तवा देनेवाला ४. ऊँचा स्थान ५. मसजिद
६. झगड़े, तकादे ७. चालीस दिनों का व्रत ८. माला ९. भर गये

हे

हे हू दा जामा पैहन घर आइआ, इसम कमावन ज़ाती हू ।
न ओथे कुफ़र इसलाम दी मंज़ल, न ओथे मौत हयाती हू ॥
शाह रग थीं नज़दीक लभेसी, तूं पा अंदरूने¹ झाती हू ।
ओह असां विच असीं ओन्हाँ विच, बाहू दूर होई कुरबानी² हू ॥

हे हिक जागन हिक जाग न जानण, हिक जागदिआं ही सुत्ते हू ।
हिक सुतिआँ ही जा वासल होए, हिक जागदिआं ही मुट्ठे हू ॥
की होइआ जे घुग्गू जागे, ओह लैंदा साह अपुट्ठे हू ।
मैं कुरबान तिन्हाँ तो बाहू, जिन्हां खूह प्रेम दे जुत्ते हू ॥

हे हसण देके रोवन लिओसी, तैनूं दित्ता किस दिलासा हू ।
उमर बन्दे दी ऐवें विहानी, जिओं पाणी विच पतासा हू ॥
सौड़ी असामी सुट घत्तीसु, पलट न सकें पासा हू ।
तैथों साहिब लेखा मंगसी बाहू, रत्ती घट न मासा हू ॥

हे होर दवा न दिल दी कारी, कलमा दिले दी कारी हू ।
कलमा दूर जंगार करेंदा, कलमे मैल उतारी हू ॥
कलमा मेरे लाल जवाहर, कलमा हट पसारी हू ।
एथे उथे दोहीं जहानीं बाहू, कलमा दौलत सारी हू ॥

अलफ़

अलफ़ अल्ला चम्बे दी बूटी, मेरे मन विच मुरशद लाँदा हू ।
जिस गल उत्ते सोहणा राज़ी होवे, ओहो गल सिखाँदा हू ॥
हर दम याद रखीं हर वेले, सोहणा उठदा बहन्दा हू ।
आपे समझ समझाँदा बाहू, ओह आपे आप हो जाँदा हू ॥

अलफ़ इह तन रब्ब सचे दा हुजरा³, दिल खिड़िआ बाग़ बहाराँ हू ।
विचे कूज़े विचे मुसल्ले, विचे सजदे दिआं हज़ाराँ हू ॥
विचे काबा विचे क़िबला, विचे इल्ल-लिल्लाह पुकाराँ हू ।
कामल मुरशद मिलिआ बाहू, ओह आपे लैसी साराँ हू ॥

अलफ़ इह तन रब्ब सच्चे दा हुजरा, विच पा फ़कीरा झाती हू ।
न कर मिनत ख़वाज ख़िज़र दी, तेरे अन्दर आब हयाती⁴ हू ॥
शौक दा दीवा बाल अनेहरे, मताँ लभे वसत खड़ाती⁵ हू ।
मरन थीं मर रहे अगे बाहू, जिन्हाँ हक्क दी रमज़ पछाती हू ॥

---

१. अन्दर २. दूरी ३. रहने का स्थान ४. अमृत ५. खोई हुई

सूरदास जी के शब्द

[१]

तुम मेरी राखो लाज हरी ॥टेक॥
तुम जानत सब अन्तरजामी, करनी कछू न करी ॥१॥
औगुन मो से बिसरत नाहीं, पल छिन घरी घरी।
सब प्रपंच की पोट बांध कर, अपने सीस धरी ॥२॥
दारा सुत धन मोह लिये हौं, सुधि बुधि सब बिसरी।
सूर पतित को बेग उबारो, अब मेरी नाव भरी ॥३॥

[२]

नाथ मोहिं अबकी बेर उबारो ॥टेक॥
तुम नाथन के नाथ सुवामी, दाता नाम तिहारो।
करम हीन जनम को अंधो, मो तें कौन निकारो ॥१॥
तीन लोक के तुम प्रतिपालक, मैं तो दास तिहारो।
तारी जाति कुजाति प्रभू ज़ी, मो पर किरपा धारो ॥२॥
पतितन में इक नायक कहिये, नीचन में सरदारो।
कोटि पापी इक पासंग मेरे, अजामिल कौन बिचारो ॥३॥
नाठो[1] धरम नाम सुन मेरो, नरक कियो हठ तारो।
मोकौ ठौर नहीं अब कोऊ, अपनो बिरद सम्हारो ॥४॥
छुद्र पतित तुम तारे रमापति, अब न करो जिय गारो।
सूरदास साचो तब माने, जो ह्वै मम निस्तारो ॥५॥

१. भाग गया

[३]

प्रभु जी मेरे औगुन चित न धरो ॥टेक॥
सम दरसी है नाम तिहारो, अब मोंहि पार करो ॥१॥

इक नदिआ इक नार कहावत, मैलो नीर भरो।
जब दोनों मिल एक बरन भये, सुरसरि नाम परो ॥२॥

इक लोहा पूजा में राखत, इक घर बधिक परो।
पारस गुन अवगुन नहिं चितवै, कंचन करत खरो ॥३॥

यह माया भ्रम जाल निवारो, सूरदास सगरो।
अब की बेर मोंहि पार उतारो, नहिं प्रण जात टरो ॥४॥

[४]

मुरली धुन गाजा, सूर सुरत सर साजा ॥टेक॥
निरखत कंवल नैन नभ ऊपर, सब्द अनाहद बाजा।
सुन धुन मैल मुकर मन माँजा, पाया अमी रस झाझा ॥

सूरत संध सोध सत काजा, लख लख संत समाजा ॥
घट घट कुंज पुंज जहँ छाजा, पिण्ड ब्रह्मण्ड बिराजा ॥

फोड़ अकास अललपछ भाजा, उलट के आप समाजा ॥
ऐसे सुरत निरख निहअच्छर कोटि क्रसन तहँ लाजा।

सूरदास सार लख पाया, लख लख अलख अकाया।
सतगुरु गगन गली घर पाया, सिंध में बुंद समाया ॥

[५]

मो सम कौन कुटिल खलु कामी ॥टेक॥
जिन तन दियो ताहि बिसरायो, ऐसो निमक हरामी ॥१॥

भरि भरि उदर विषय को धावों, जैसे सूकर ग्रामी।
हरि-जन छाँड़ि हरि विमुखन की, निसि दिन करत गुलामी ॥२॥

पापी कोन बड़ो है मो तें, सब पतितन में नामी।
सूर पतित को ठौर कहां है, सुनिये स्रीपति स्वामी ॥३॥

करम गति टारैउ नाहिं टरै।

कहँ वे राहु, कहाँ वे रवि शशि, आनि संजोग परै ।। टेक ।।

गुरु वशिष्ठ पंडित मुनी ज्ञानी, रुचि रुचि लगन धरे।

तात मरन, सिया हरन, राम बन बिपति में बिपति परे ।।१।।

पंडों के प्रभु बड़े सारथी, सोऊ बन निकरे।

दुरबासा से स्राप दिवायौ, जदु कुल नास करे ।।२।।

रावन अस तैंतिस कोटि सब, एक छत राज करे।

मिरतक बाँधि कूप में डारे, भावी सोच मरे ।।३।।

हरीचन्द ऐसे भये राजा, डोम घर पानि भरे।

भारत में भरुही के अंडा, घंटा टूटि परे ।।४।।

तीनि लोक करमन के बस में, जो जो जनम धरे।

दस औतार भावी के बस में, सूर सुरति उबरे ।।५।।

स्वामी जी महाराज के शब्द

उपदेश सतगुरु भक्ति का

बचन १८ : शब्द ६

आज सखी काज करो कुछ अपना । गुरु दर्श तको छोड़ो जग सुपना ॥१॥
नहिं पछितइहो सिर धुन रोइहो । जम की नगरिया अनेक दुख सहिहो ॥
मानो बचन सुनो धर कान । सुरत लगाय सुनो धुन तान ॥३॥
नहिं मर मर जन्मो चारों खान । मान मान अब मेरी कही मान ॥४॥
गुरु के चरन का कर तू ध्यान । शान[1] गुमान छोड़ अभिमान ॥५॥
गुरु बिन तेरा को न सहाई । नाम बिना को[2] पार लगाई ॥६॥
आज काज कर गुरु संग भाज । सूना पड़ा तेरा तख्त और ताज ॥७॥
शब्द पिछान सुरत निज साज[3] । छोड़ जगत और कुल की लाज ॥८॥
मन और सुरत गुरू संग माँज । नहिं फिर खुलि है तेरा पाज[4] ॥९॥
कूड़ फटक ले गुरु का छाज[5] । भोग बिलास छोड़ यह खाज[6] ॥१०॥
राधास्वामी कही बनाई । जो नहिं मानो भुग्तो भाई ॥११॥

आरती परम पुरुष राधास्वामी

बचन ६ : शब्द ४

आज साज कर आरत लाई । प्रेम नगर बिच फिरी है दुहाई ॥१॥
विरह व्यथा के लुट गये डेरे । मिल गये राधास्वामी बिछड़े मेरे ॥२॥
हिरदा थाल सुरत की बाती । शब्द जोत मैं नित्त जगाती ॥३॥
आरत फेरूँ सन्मुख ठाढ़ी । प्रीत उमँग मेरी छिन छिन बाढ़ी ॥४॥
तन नगरी बिच बजत ढँढोरा । भागे चोर ज़ोर भया थोड़ा ॥५॥
सील छिमा आय थाना गाड़ा । काम क्रोध पर पड़ गया धाड़ा[7] ॥६॥

---

१. शेखी, आकड़ । २. कौन । ३. सँवार । ४. कलई । ५. छज्ज । ६. खुजली का रोग । ७. डाका ।

स्वामी मेहर करी अब भारी। मैं भी उन चरनन बलिहारी ॥७॥
अब तो सरन पड़ी राधास्वामी। राखो सँग सदा अन्तर जामी ॥८॥
मेरे और न कोई दूजा। मेरे निस दिन तुम्हरी पूजा ॥९॥
तुम बिन और न कोई जानूं। छिन छिन मन में तुमको मानूं ॥१०॥
मैं मछली तुम नीर अपारा। केल करूँ मैं तुम्हारी लारा ॥११॥
मैं पपिहा तुम स्वाँति के बादल। सुख पाये दुख गये हैं रसातल[1] ॥१२॥
तुम चंदा मैं कमोदन हीनी। तुम्हारी लगन में निसदिन भीनी[2] ॥१३॥
मैं धरनी तुम गगन बिराजे। कैसे मिलूं मैं तुम सँग आजे ॥१४॥
सुरत निरत से चढ़ कर धाऊँ। कभी न छोड़ूं अस लिपटाऊँ ॥१५॥
मैं गुरबर्ती राधास्वामी के चरन की। लाज रखो मेरीकाल से अबकी ॥१६॥
तुम्हरे बल से भइ हूं निचिंती। अब मन में नहिं संका धरती ॥१७॥
सूर किया स्वामी खेत जिताया। मार लिया मैंने मन और माया ॥१८॥
ख़ाक मिला सब कपट खज़ाना। भाग गया दल मोह पुराना ॥१९॥
गढ़ त्रिकुटी अब चढ़ कर लीन्हा। सुन्न शिखर पर डंका दीन्हा ॥२०॥
सिध महासुन्न बीच में आया। सतगुरु कृपा ने दीन तराया ॥२१॥
भँवरगुफा के महल बिराजी। सत्तलोक चढ़ अचरज गाजी ॥२२॥
अलख लोक में सूरत साजी। अगम लोक को छिन में भाजी[3] ॥२३॥
पोहप[4] सिंहासन क्या कहुँ महिमा। जहाँ राधास्वामी ने धारे चरना ॥२४॥
उन चरनन पर जाय लिपटानी। आगे अकह की क्या कहुं बानी ॥२५॥
अब आरत मैं कीन्ही पूरी। भाखा भेद अगम गम मूरी ॥२६॥
राधास्वामी की चरन धूर धर। आय गई अपने मैं निज घर ॥२७॥

आरती परम पुरुष राधास्वामी

बचन ६ : शब्द ७

करूँ आरती राधास्वामी, तन मन सुरत लगाय।
थाल बना सत शब्द का, अलख जोत फहराय ॥१॥
हंस सभी आरत करे, सन्मुख दर्शन पाय।
राधास्वामी दया कर, दीन्हाँ अगम्म लखाय ॥२॥
अनहद धुन घंटा बजे संख बजे मिरदंग।
ओंकार मँडल बँधा, मेघनाद[5] गरजंत ॥३॥
सुन्न मँडल धुन सारँगी, किंगरी बजे अनूप[6]।

१. पाताल में। २. भीजी हुई। ३. भागी। ४. पुष्प, फूल। ५. बादल कीगरज।
६ उपमा रहित।

कोटि भान छबि रोम इक, ऐसा पुरुष स्वरूप ॥४॥
कँवलन की क्यारी बनी, भँवर करें गुंजार।
सेत सिंहासन बैठ कर, देखें पुरुष सम्हार ॥५॥
बीन बाँसरी मधुर धुन, बाजें पुरुष हुज़ूर।
सुन सुन हंसा मगन होयँ, पिवें अमीरस मूर[१] ॥६॥
रंग महल सतपुरुष का, शोभा अगम अपार।
हंस जहाँ आनँद करें, देखें बिमल[२] बहार ॥७॥
अब आरत पूरन भई, मन पाया बिसराम।
राधास्वामी चरन पर, कोटि कोटि परनाम ॥८॥

बिनती और प्रार्थना परम पुरुष राधास्वामी

बचन ७ : शब्द १

करूँ बेनती दोउ कर जोरी। अर्ज़[३] सुनो राधास्वामी मोरी ॥१॥
सत्त पुरुष तुम सतगुरु दाता। सब जीवन के पितु और माता ॥२॥
दया धार अपना कर लीजे। काल जाल से न्यारा कीजे ॥३॥
सतयुग त्रेता द्वापर बीता। काहु न जानी शब्द की रीता ॥४॥
कलियुग में स्वामी दया विचारी। परगट करके शब्द पुकारी ॥५॥
जीव काज स्वामी जग में आये। भौ सागर से पार लगाये ॥६॥
तीन[४] छोड़ चौथा[५] पद दीन्हा। सत्तनाम सतगुरु गत चीन्हा ॥७॥
जगमग जोत होत उजियारा। गगन सोत[६] पर चन्द्र निहारा ॥८॥
सेत सिंहासन छत्र बिराजे। अनहद शब्द गैब[७] धुन गाजे ॥९॥
क्षर[८] अक्षर[९] निःअक्षर[१०] पारा। बिनती करे जहाँ दास तुम्हारा ॥१०॥
लोक अलोक पाउं सुख धामा। चरन सरन दीजे बिसरामा ॥११॥

सतसंग महिमा और भेद सत्तनाम का

बचन ११ : शब्द १

कहाँ लग कहूं कुटिलता[११] मन की। कान[१२] न माने गुरुके बचन की ॥१॥
प्रेम गया और भक्ति छिपानी। बैर ईर्षा की खुली खानी ॥२॥
माया लाई छलबल अपना। काल दिया कलमल[१३] का ढकना ॥३॥

१. मूल, सार। २. निर्मल। ३. प्रार्थना। ४. त्रिलोकी। ५. सत्तलोक। ६. भंडार यानी दसवाँ द्वार। ७. गुप्त। ८. त्रिकुटी। ९. सुन्न। १०. महासुन्न। ११. दुष्टता, शरारत। १२. मर्यादा, कायदा। १३. अंधकार, तारीकी।

ज्ञान बुद्धि बल सतसंग भाई । क्षिमा मौज गुरु गई हिराई[1] ॥४॥
देखो अचरज कहा न जाई । कलियुग का परभाव[2] दिखाई ॥५॥
हैं गुर-बैहिन और गुर-भाई । तिण में निस दिन होत लड़ाई ॥६॥
काल दाव[3] अपना यों खेला । सतसंग में आय कीन्हों मेला ॥७॥
सेवा में घुस पैठ कराई । और तरह कोइ घात न पाई ॥८॥
सेवा में अस कीन्हा पेचा । मन को सब के धर धर खैंचा ॥९॥
गुरु ताड़ें सतसगी झींखें[4] । काल लगाई ऐसी लीकें[5] ॥१०॥
गुरु समझावें सीख न मानें । मन मत अपनी फिर फिर ठानें ॥११॥
गुरु को देवें दोष लगाई । फिर फिर चौरासी भरमाई ॥१२॥
इतने दिन सतसंग जो कीया । कुछ भी असर न उसका हुआ ॥१३॥
सतगुरु से अब करूँ पुकारा । काल मार मन लेव सुधारा ॥१४॥
तुम से काल ज़बर नहिं होई । काटो फंदा जम का सोई ॥१५॥
तुम्हरे चरन प्रीत होय गाढ़ी । सतसंगियन मन शुद्धता बाढ़ी ॥१६॥
हिल मिल कर सब करें अनन्दा । द्रोह घात[6] का काटो फंदा ॥१७॥
सतसंगी सब मिल कर चालें । प्रीत परस्पर पल पल पालें ॥१८॥
यही हुकुम अब सब को कीना । जो नहिं माने सो काल अधीना ॥१९॥
जो कोई माने हुकुम हमारा । पहुंचे वह सतगुरु दरबारा ॥२०॥
बुद्धि अपनी लेव सम्हारी । बचन गुरू यह मन में धारी ॥२१॥
जिनके मन को काल सम्हारा । सो नहिं माने बचन हमारा ॥२२॥
अब मन में चिन्ता मत राखो । सत्तनाम अब छिन छिन भाखो ॥२३॥
दीन हीन जानो अपने को । निपट नीच मानो अपने को ॥२४॥
अब अहंकार करो क्या किस से । मौत धार दम दम में बरसे ॥२५॥
जैसे जग में महा भिखारी । दीन ग़रीबी उन सब धारी ॥२६॥
कोई उसको कुछ कह लेवे । मन को अपने ज़रा न देवे ॥२७॥
तुम सतसंग कर क्या फल पाया । उनका सा भी मन न बनाया ॥२८॥
अब ऐसा तुम्हें करना चाहिये । अपने मन अधीनी धरिये ॥२९॥
हाहा खाओ[7] चरन पखालो[8] । आपस में तुम हिल मिल चालो ॥३०॥
जो कोई जिस से रूठे भाई । सोई तिसको लेय मनाई ॥३१॥
हाथ जोड़ बहु बिनती करे । करे खुशामद चरनन पड़े ॥३२॥
इतने पै जो माने नाहीं । गुनहकार सतगुरु का भाई ॥३३॥
जलन ईर्षा जिस घट आई । वह दुख कैसे जाय नसाई ॥३४॥

१. जाती रही । २. असर । ३. पेंच । ४. दुखित होना । ५. दाग । ६. शत्रुता और बैर । ७. दीनता के साथ क्षिमा माँगना । ८. धोओ ।

कर विवेक मन को समझावे। या सतगुरु की दया समावे ॥३५॥
सतगुरु दया बिना नहिं होई। बिन विवेक नहिं जावे खोई ॥३६॥
जो सतगुरु निज दया विचारें। तब यह दुरमत मन से टारें ॥३७॥
जो कोई दीन कपट से होई। ता का रोग कहो कस जाई ॥३८॥
कपटी को ऐसा अब चाही। करे सफ़ाई कपट नसाई ॥३९॥
जो बल उसका पेश न जावे। तो सतगुरु से बिनती लावे ॥४०॥
खोले कपट न राखे परदा। गुरु से खोले रख रख सरधा ॥४१॥
अपने औगुन उन से भाखे[1]। बार बार बिनती कर आखे[2] ॥४२॥
हे स्वामी! मेरी कपट निकारो। मैं बलहीन मोहिं तुम तारो ॥४३॥
तुम्हारी दया होय जब भारी। घट से निकसे कपट हमारी ॥४४॥
और उपाय न इसका कोई। बिना दया कोई जुक्ति न होई ॥४५॥
मन कपटी घट घट में पैठा। सब जीवन का पकड़ा फेंटा[3] ॥४६॥
कर सतसंग औ[4] भाव बसावे। गुरु की दया कपट नस[5] जावे ॥४७॥
जो गुरू आगे कपट न खोले। निष्कपटी अपने को बोले ॥४८॥
दोहरा कपट लिये है सोई। उसका जतन कभी नहिं होई ॥४९॥
वह सतसंग के लायक नाहीं। वह असाध रोगी जग माहीं ॥५०॥
पर जो सतगुरु समरथ पावे। और चरनन पर सीस नवावे ॥५१॥
पड़ा रहे सतसंग के माहीं। धीरे धीरे तो छुट जाई ॥५२॥
सतसंग जल जो कोई पावे। सब मैलाई कट कट जावे ॥५३॥
सतसंग महिमा कहा बखानू। अस सम यत्न और नहिं मानूँ ॥५४॥
कलजुग ख़ास यत्न कोई नाहीं। बिन सतसंग संत नहिं गाईं ॥५५॥
कर्म धर्म तप पूजा दाना। इस करनी से नित बढ़े माना ॥५६॥
और ज्यों की त्यों होय न आवे। तौ फल उलटा उसका पावे ॥५७॥
याते संतन काढ़ि निकारी। सतसंग की महिमा कहि भारी ॥५८॥

महिमा सतगुरु स्वरूप राधास्वामी की

बचन ८ : शब्द १७

काल ने जगत अजब भरमाया। मैं क्या क्या करूं बखान ॥१॥
जो साधन थे पिछले जुग के। सो कलजुग में किये प्रमान ॥२॥
मूरख प्रानी मन सैलानी। सो अटके जल और पाषान ॥३॥
बुद्धिमान अभिमानी जो नर। विद्या नारि के हुये गुलाम ॥४॥

१. बयान करे। २. कहे। ३. कमरबन्द। ४. [illegible] ५. [illegible]

बाकी जीव बीच के जितने । ना मूरख ना अति बुद्धिमान ॥५॥
जप तप व्रत संजम बहु धोखे । पंत्र अग्नि में जले निदान ॥६॥
देखो चरित्र काल करता के । कोई सिर कोई पैर रुंधान१ ॥७॥
भटक भटक भटकाया सब जग । कोई न लगाया ठौर ठिकाना ॥८॥
ऐसी हालत देख जगत की । संत सतगुरू प्रगटे आन ॥९॥
गुरु सेवा और नाम महातम । सतसंग सतगुरु किया बखान ॥१०॥
साधन तीन सार उन बरने । और साधन सब थोथे मान ॥११॥
वेद शास्त्र और स्मृत पुरान । पढ़ना इनका बिरथा जान ॥१२॥
पंडित भेख पेट के मारे । वे संतन पर करते तान ॥१३॥
हित कर संत उन्हें समझावें । वे मानी नहिं मानें आन ॥१४॥
उनके चाह मान और धन की । परमारथ से खाली जान ॥१५॥
वे चौरासी चक्कर मारें । फिर फिर गिरते चारों खान ॥१६॥
पिछले जुग की विद्या पढ़ते । कोई न्याय वेदान्त बखान ॥१७॥
ना साधन अधिकार न परखें । पढ़ने का करते अभिमान ॥१८॥
इस जुग की विद्या नहिं पढ़ते । तातें उलटे गिरें निदान ॥१९॥
दीन ग़रीबी मत इस जुग का । और गुरु भक्ती कर परमाण ॥२०॥
ताते निरमल निश्चल चित होय । गगन चढ़ाओ शब्द निशान ॥२१॥
सुरत शब्द मारग अंतरमुख । पाँच शब्द का गहो ठिकान ॥२२॥
शब्द शब्द पौड़ी२ पै चढ़ कर । पहुंचो सच्चखंड सतनाम ॥२३॥
ताते पहले गुरु को ध्याओ । और काम सब पीछे जान ॥२४॥
गुर की मूरत्त हृदे बसाओ । चंद्र चकोर प्रीत घट आन ॥२५॥
जब लग ऐसी प्रीत न होवे । तब लग साधन यही बखान ॥२६॥
गुरु भक्ति जब पूरन हो ले । तब सुर्त चढ़े अधर असमान ॥२७॥
गुरु भक्ति बिन शब्द में पचते । सो भी मानुष मूरख जान ॥२८॥
शब्द खुलेगा गुरू मेहर से । खैंचे सुरत गुरु बलवान ॥२९॥
गुरुमुखता बिन सुरत न चढ़ती । फूटे गगन न पावे नाम ॥३०॥
गुरुमुखता है मूल सबन की । और साधन सब शाखा जान ॥३१॥
माता को जस पुत्र प्यारा । और कामी को कामिन जान ॥३२॥
मछली को जस नीर अधारा । चात्रिक३ को जस स्वाँति समान ॥३३॥
ऐसा गुरु प्यारा जब होगा । तब कुछ आगे पंथ चलान ॥३४॥

१. कोई सिर से होड़े जाते हैं, कोई पैरों से मले दले जाते हैं। २. मंज़ल। ३. पपीहा।

कहना था सो सब कह दीन्हा। अब तू चाहे मान न मान ॥३५॥
यह आरत गुरुमुख की गाई। गुरुमुख होय सो करे प्रमाण ॥३६॥
राधास्वामी भक्ति बताई। गुरु की भक्ति करो यह जान ॥३७॥
और भक्ति सब दूर बहाओ। क्यों पड़ते चौरासी खान ॥३८॥
गुरु भक्ति सम और न कोई। राधास्वामी किया बखान ॥३९॥
गुरु का ध्यान करो तुम निस१ दिन। गुरु का शब्द सुनो नित कान ॥४०॥
नैन श्रवण और हिरदा तीनों। शीश महल सम निरमल जान ॥४१॥
राधास्वामी ज़ोर देय कर। गुरु भक्ति को कहें प्रमाण ॥४२॥

होली

बचन ३९ : शब्द ९

गुरु आन खिलाई घट में होली। धुन नाम लई तन अंतर खोली ॥१॥
मन मार लई तिल ताला तोड़ी। सुर्त फेर लई दल अंदर जोड़ी ॥२॥
जुग बाँध लई गुरु से पट फोड़ी। पद पाय गई त्रिकुटी गढ़ दौड़ी ॥३॥
सुन जाय रही सुर्त घर जब मोड़ी। घर आय गई अपने भई पोढ़ी ॥४॥

पंच इन्द्री पिचकारियाँ, भर उल्टी छोड़ी।
गुन तीनों की जेवरी२, छिन माहिं जलोरी ॥५॥
हौमैं ममता छोड़ कर, चढ़ गगन चलोरी।
बिखरी धुनें समेट कर, सब एक करो री ॥६॥
दृष्टि जोड़ नभ में धरो, तब जोत लखोरी।
जोत फाड़ आगे धसो, फिर सुन्न तकोरी ॥७॥
इस सुन्न की धुन सोध लो, जस शंख बजोरी।
राधास्वामी एक पद, यह कह्यो भलो री ॥८॥

चितावनी भाग दूसरा

बचन १५ : शब्द २१

गुरु कहें पुकार पुकार। समझ मन करलो सुमिरनियाँ ॥१॥
स्वाँसों स्वाँस घटे तेरी पूँजी। चली जाय यह उमरनियाँ ॥२॥
वक्त मिला यह तख़्तनशीनी। छोड़ बान३ अब घुरबिनियाँ४ ॥३॥
यह मारग अब गुरू बतावें। पकड़ गहो तुम उर५ धुनियाँ ॥४॥
शब्द संग तुम सुरत लगाओ। रहो नित्त गुरु मुजरनियाँ६ ॥५॥

१. रात। २. रस्सी। ३. आदत। ४. मुर्गी जो घूरा (कूड़ा) चुगती है। ५. अन्तरी। ६. हाज़िर।

दया लेव तुम हरदम उनकी। सरन पड़ो उन चरननियाँ ॥६॥
वह तो भेद बतावें घट का। पकड़ शब्द भौ तरननियाँ ॥७॥
लागी लगन बहुरि नहिं सूझे। सुरत अजर में जरननियाँ ॥८॥
जिन जिन संग करा गुरु पूरे। छुटा जन्म और मरननियाँ ॥९॥
जगत जार तज सार समझ तू। मिटे चौरासी भरमनियाँ ॥१०॥
सतसंग करो प्रीत घट धारो। देख रूप चढ़ दर्पनियाँ[1] ॥११॥
गगन गिरा[2] परखो धुन बानी। यही कमाई करननियाँ ॥१२॥
पहुंचो जाय अधर में प्यारी। गाँठ खुले तब तन मनियाँ ॥१३॥
या जग में कोई सुखी न देखो। गहो गुरू के बचननियाँ ॥१४॥
दुख के जाल फँसे सब मूरख। तू क्यों उन संग फँसननियाँ ॥१५॥
मैं तू मोर तोर सब त्यागो। गहो राधास्वामी सरननियाँ ॥१६॥

महिमा सतगुरु स्वरूप राधास्वामी की

बचन ८ : शब्द १२

गुरु चरन बसे अब मन में। मैं सेऊँ दम दम तन में ॥१॥
फिर प्रीत लगी घट धुन में। चढ़ पहुंची पहिली सुन में ॥२॥
अब सील क्षमा मन छाई। गइ तपन काम दुखदाई ॥३॥
फिर क्रोध लोभ भी भागे। अहंकार मोह सब त्यागे ॥४॥
धुन पाँच शब्द घट जागी। मन हुआ सहज बैरागी ॥५॥
गुरु किरपा सूर उगाना। अब हुआ जगत बेगाना ॥६॥
घट बैठी तारी[3] लाई। बाहर की किरिया[4] दूर बहाई ॥७॥
गुरु अद्भुत सुख दिखलाया। क्या महिमा जाय न गाया ॥८॥
जग जीव अभागी सारे। नर देही योंही[5] हारे ॥९॥
क्यों गुरु से प्रीत न करते। क्यों जम के किंकर रहते ॥१०॥
मैं किस से कहूं सुनाई। फिर अपना मन समझाई ॥११॥
तू गुरुमत दृढ़ कर भाई। अब छोड़ो तात[6] पराई ॥१२॥
चल रह तू त्रिकुटी घाटी। चढ़ सुन्न शिखर की बाटी[7] ॥१३॥
महासुन्न की तोड़ो टाटी[8]। जा भँवरगुफा की हाटी[9] ॥१४॥
फिर सत्तपुरुष घर पाया। धुन बीना जाय बजाया ॥१५॥
सुनी अलख अगम की बतियाँ[10]। शशि सूर खरब जहाँ थकियाँ[11] ॥१६॥
पिया परसे राधास्वामी। कुछ कहूं न पुरुष अनामी ॥१७॥

१. आईना, शीशा। २. वाणी, शब्द। ३ ध्यान। ४. करतूत। ५. अकार्थ। ६. चिन्ता। ७. रस्ता। ८. परदा। ९. बाज़रा। १० आवाज़। ११. लज्जित।

मेरी आरत सब से न्यारी। कोइ समझेगी पिया प्यारी ॥१८॥
यह भेद अथाह बखाना। बिन संत न कोई जाना ॥१९॥
करमी जीव जग के अंधे। सब फँसे काल के फँदे ॥२०॥
उन से नहिं कहना चाहिये। मत गूढ़ छिपाये रहिये ॥२१॥
सुर्त शब्द कमाई करना। सुमिरन में तन मन देना ॥२२॥
गुरु दर्शन बहुत निरखना। धुन अनहद नित्त परखना ॥२३॥
सतसंग की चाहत रखना। जब डौल[1] बने तब करना ॥२४॥
उपदेश किया यह टीका[2]। राधास्वामी नाम मैं सीखा ॥२५॥

महिमा सतगुरु स्वरूप राधास्वामी की

बचन ८ : शब्द ११

गुरु मेरे जान पिरान, शब्द का दीन्हा दाना।
शब्द मेरा आधार, शब्द का मर्म पिछाना ॥१॥
क्या गुण गाऊँ शब्द, शब्द का अगम ठिकाना।
बिना शब्द सब जीव, धुँध में फिरें भरमाना ॥२॥
जल पाषान पूजत रहें, रहें काग़ज़ अटकाना।
मन मत ठोकर खाय, गये चौरासी खाना ॥३॥
बहु विधि बिपता जीव को, बिन शब्द सुनाना।
सतगुरु की सेवा बिना, नहिं लगे ठिकाना ॥४॥
शब्द भेद बिन सतगुरू, क्या कहें अजाना।
मन इन्द्री बस में नहीं, तो काल चबाना ॥५॥
राधास्वामी सरन ले, सब भाँति बचाना।
मेहर दया छिन में करें, दें अगम ख़ज़ाना ॥६॥

बिनती और प्रार्थना सतगुरु

बचन २९ : शब्द ३

गुरू मैं गुनहागार[3] अति भारी ॥टेक॥
काम क्रोध और छल चतुराई। इन संग है मेरी यारी ॥१॥
लोभ मोह अहंकार ईर्षा। मान बड़ाई धारी ॥२॥
कपटी लम्पट[4] झूठा हिंसक[5]। अस अस पाप करा री ॥३॥

१. मौका २. सब से अच्छा। ३. पापी। ४. विषयी। ५. हत्यारा, कष्ट पहुंचाने वाला।

दुक्ख निरादर सहा न जाई। सुख आदर अभिलाष भरा री ॥४॥
बिंजन१ स्वाद अधिक रस चाहे। मन रसना यही चाट पड़ा री ॥५॥
धन और कामिन चित्त बसाये। पुत्र कलित्तर२ आस भरा री ॥६॥
नाना विधि दुख पावत पापी। तो भी यह करतूत न छाँड़ी ॥७॥
यह मन दुष्ट काल का चेरा। नित भरमावत निडर हुआ री ॥८॥
जब जब चोट पड़ी दुक्खन की। तब डर डर कर भजन करा री ॥९॥
देखो दया मेहर सतगुरु की। उसी भजन को मान लिया री ॥१०॥
बुद्धि चतुराई बचन बनावट। हार जीत की चरचा धारी ॥११॥
शेख़ी बहुत प्रीत नहिं अंतर। भोले भक्तन धोख दिया री ॥१२॥
नर नारी बहुतक बस कीन्हे। मान प्रतिष्ठा३ भोग किया री ॥१३॥
गुरु संग प्रीत कपट कुछ डर की। कभी थोड़ी कभी बहुत किया री ॥१४॥
कहँ लग औगुन बरनूँ अपने। याद न आवत भूल गया री ॥१५॥
चोर चुगल४ इन्द्री रस माता। मतलब की सब बात विचारी ॥१६॥
ख़ुद मतलबी निर्दई मानी। बहुतन का अपमान किया री ॥१७॥
कोटिन पाप किये बहुतेरे। कहूं कहाँ लग वार न पारी ॥१८॥
हे सतगुरु अब दया विचारो। क्या मुख ले मैं करूँ पुकारी ॥१९॥
नहिं परतीत प्रीत नहिं रंचक५। कस कस मेरा करो उबारी ॥२०॥
मो सा कुटिल और नहिं जग में। तुम सतगुरु मोहिं लेव सुधारी ॥२१॥
जतन करूँ तो बन नहिं आवत। हार हार अब सरन पड़ा री ॥२२॥
यह भी बात कही मैं मुँह से। मन से सरना कठिन भया री ॥२३॥
सरना लेना यह भी कहना। झूठ हुआ मुँह का कहना री ॥२४॥
तुम्हरी गति मति तुमहीं जानो। जस तस मेरा करो उबारी ॥२५॥
मैं तो नीच निपट संशय रत। लगे न चरनन प्रीत करारी ॥२६॥
मेरे रोग असाध भरे हैं। तुम बिन को अस करे दवा री ॥२७॥
जब चाहो जब छिन में टारो। मेहर दया की मौज निरारी६ ॥२८॥
बारम्बार करूँ मैं बिनती। और प्रार्थना करूँ तुम्हारी ॥२९॥
तुम बिन और न कोई दीखे। तुमहीं हो मेरे रखवारी ॥३०॥
बुरा बुरा फिर बुरा बुरा हूं। जैसा तैसा आन पड़ा री ॥३१॥
अब तो लाज तुम्हें है मेरी। राधास्वामी खेवो७ बला८ री ॥३२॥

१ अनेक प्रकार के भोजन, पकवान। २. स्त्री। ३. इज्ज़त। ४. निन्दक। ५. कुछ। ६. निराली। ७. दूर करो। ८. आफत।

आरत परम पुरुष पूरन धनी राधास्वामी

बचन ६ : शब्द ११

चरन गुरु हिरदे धार रही ॥ टेक ॥

भौ की धार कठिन अति भारी । सो अब उलट बही ॥१॥
गुरु बिन कौन सम्हारे मन को । सुरत उमँग अब शब्द गही ॥२॥
कोटिन जन्म भरमते बीते । काहु मेरी आन न बाँह गही ॥३॥
अब के सतगुरु मिले दया कर । शब्द भेद उन सार दई ॥४॥
नौ[१] को छोड़ द्वार दस लागी । अक्षर मथ नवनीत[२] लई ॥५॥
नौका पार चली अब गुरु बल । अगम पदार्थ लीन सही ॥६॥
क्या क्या कहूं कहन गति नाहीं । सुरत शब्द मिल एक हुई ॥७॥
रहन गहन की बात नियारी । संत बिना कोई नाहिं कही ॥८॥
सुन्न शिखर चढ़ महासुन्न लख । भँवरगुफा पर ठाट ठई[३] ॥९॥
सत्तनाम सत धाम निरख धुर । अलख अगम गति पाय गई ॥१०॥
सुरत निरत सँग चली अगाड़ी । राधास्वामी राधास्वामी चरन मई[४] ॥११॥
अब आरत सिंगार सुधारी । प्रेम उमंग भी बहुत चही ॥१२॥
काल कला सब दूर बिडारी[५] । दयाल सरन अब आन लई ॥१३॥
पचरँग बाना[६] पहन बिराजे । शोभा धारी आज नई ॥१४॥
जीव काज निज भवन छोड़ कर । जमा दूध फिर होत दही ॥१५॥
मथ मथ माखन काढ़ निकारा । बिरले गुरुमुख चाख चखी ॥१६॥
राधास्वामी दीन अवाजा । चढ़ो अधर निज धाम पई ॥१७॥

वर्णन महातम भक्ति का

बचन १२ : शब्द २

जगत भाव भय लज्जा छोड़ो । सुन प्यारे तू कर भक्ति ॥१॥
जाति बरन भय लज्जा त्यागो । सुन प्यारे तू कर भक्ति ॥२॥
शत्रु मित्र डर दूर हटाओ । सुन प्यारे तू कर भक्ति ॥३॥
मात पिता डर छोड़ गँवाओ । सुन प्यारे तू कर भक्ति ॥४॥
जोरू लड़के मत डर इनसे । सुन प्यारे तू कर भक्ति ॥५॥
भाई भतीजों का डर मत कर । सुन प्यारे तू कर भक्ति ॥६॥

१. नौ द्वार । २. मक्खन । ३. मुकाम किया । ४. मिल गई । ५. निकाल दी । ६. वस्त्र ।

सास ससुर डर मन से छोड़ो। सुन प्यारे तू कर भक्ति ॥७॥
बहू जमाई इन का डर तज। सुन प्यारे तू कर भक्ति ॥८॥
यार आशना[1] सब डर छोड़ो। सुन प्यारे तू कर भक्ति ॥९॥
नातेदार कुटुम्बी जितने। इनका डर तज कर भक्ति ॥१०॥
भक्ति अंग में जब तू बरते। छोड़ झिझक[2] इन कर भक्ति ॥११॥
जो मूरख हैं मर्म न जानें। इनका डर क्या, कर भक्ति ॥१२॥
इनका डर कुछ मत कर मन में। सुन प्यारे तू कर भक्ति ॥१३॥
भेष भेष को देख लजावे। सो भी कच्चा कर भक्ति ॥१४॥
जब लग सब से निडर न होवे। तब लग कच्चा कर भक्ति ॥१५॥
ज़िल्लत[3] इज़्ज़त[4] जो कुछ होवे। मौज विचारो कर भक्ति ॥१६॥
गुरु का बल हिरदे धर अपने। सुन प्यारे तू कर भक्ति ॥१७॥
यह बिगाड़ कुछ करें न तेरा। क्यों झिझके तू कर भक्ति ॥१८॥
बिना मौज गुरु कुछ नहिं होता। सुन प्यारे तू कर भक्ति ॥१९॥
तू कच्चा यह करे कचाई। और कहूं क्या कर भक्ति ॥२०॥
करते करते पक्का होगा। और उपाव न कर भक्ति ॥२१॥
कच्ची से पक्की होय इक दिन। छोड़ कपट तू कर भक्ति ॥२२॥
कपट भक्ति कुछ काम न आवे। सच्ची कच्ची कर भक्ति ॥२३॥
राधास्वामी कहत सुनाई। जैसी बने तैसी कर भक्ति ॥२४॥

चितावनी भाग दूसरा

बचन १५ : शब्द १६

जोड़ी री कोई सुरत नाम से ॥ टेक ॥

यह तन धन कुछ काम न आवे। पड़े लड़ाई जाम[5] से ॥१॥
अब तो समय मिला अति सुन्दर। सीतल हो बच घाम[6] से ॥२॥
सुमिरन कर सेवा कर सतगुरु। मनहि[7] हटाओ काम से ॥३॥
मन इन्द्री कुछ बस कर राखो। पियो घूँट गुरु जाम[8] से ॥४॥
लगे ठिकाना मिले मुकामा। छूटो मन के दाम[9] से ॥५॥
भजन करो छोड़ो सब आलस। निकर चलो कलि ग्राम[10] से ॥६॥
दम दम करो बेनती गुरु से। वही निकारें तन चाम से ॥७॥

१. दोस्त। २. डर और लज्जा। ३. निरादर। ४. आदर। ५. यमराज। ६. संसार की तपन। ७. मन को। ८. प्याला। ९. जाल। १०. काल के देश से निकालो।

और उपाव न ऐसा कोई। रटन करो सुबह शाम से ॥८॥
प्रीत लाय नित करो साध संग। हट रहो जग के ख़ासो आम से ॥९॥
राधास्वामी कहैं सुनाई। लगो जाय सतनाम से ॥१०॥

फ़र्याद और पुकार करना सतगुरु से

बचन ३३ : शब्द १०

तुम धुर से चल कर आये। अब क्यों ऐसी ढील[1] लगाये ॥१॥
जल्दी से काज सँवारो। तुम दाता देर न धारो ॥२॥
मैं आतुर[2] तुम्हें पुकारूँ। चित में कोई और न धारूँ ॥३॥
मेरा जीवन मूर अधारा[3]। जस सीपी स्वाँत निहारा ॥४॥
अब मुक्ता[4] नाम जमाओ। मेरे जी की आस पुराओ ॥५॥
मन सूरत अधर चढ़ाओ। अब के मेरी खेप निबाहो ॥६॥
भौसागर वार न पारा। डूबे सब उसकी धारा ॥७॥
है मिथ्या झूठ पसारा। धोखे को सच सा धारा ॥८॥
सतगुरु बिन धोख न जाई। बिन शब्द सुरत भरमाई ॥९॥
या ते तुम सरना ताकूँ। सोवत मैं क्यों कर जागूँ ॥१०॥
बिन मेहर जतन सब थाके। मैं कर कर बहु विधि त्यागे ॥११॥
बल पौरुष मोर न चाले। मैं पड़ी काल जंजाले ॥१२॥
बिनती अब करूँ बनाई। तुम सतगुरु करो सहाई ॥१३॥
मैं दीन अधीन तुम्हारी। तुम बिन अब कौन सम्हारी ॥१४॥
कुछ करो दिलासा मेरी। भरमों की पड़ी अँधेरी ॥१५॥
परकाश करो घट भाना। मिटे भर्म तिमिर अज्ञाना ॥१६॥
तुम तज अब किस पै जाऊँ। मैं कह कह तुम्हें सुनाऊँ ॥१७॥
जब चाहो तब ही देना। तुम बिन मोहिं किससे लेना ॥१८॥
मैं द्वारे पड़ी तुम्हारे। धीरज धर रहूं सम्हारे ॥१९॥
मन आतुर दुख न सहारे। उठ बारंबार पुकारे ॥२०॥
मैं सरन दयाल तुम्हारी। कर जल्दी लो निस्तारी ॥२१॥
घर तुम्हरे कमी न कोई। कहिं भाग ओछ[5] मेरा होई ॥२२॥
यह भी सब तुम्हरे हाथा। तुम चाहो करो सनाथा ॥२३॥
अब कहँ लग करूँ पुकारी। मैं हार हार अब हारी ॥२४॥

१. विलंब, देर। २. दुखी, घबराई हुई। ३. असली सहारा। ४. मोती। ५. छोटा।

तुम दाता दीन दयाला । राधास्वामी करो निहाला ॥२५॥
मैं आरत कीन्ह अधारी । तुम राधास्वामी सब पर भारी ॥२६॥

फ़र्याद और पुकार

बचन ३३ : शब्द २१

दर्शन की प्यास घनेरी१ । चित तपन समाई ॥१॥
जग भोग रोग सम दीखें । सतसंग में सुरत लगाई ॥२॥
गति अगम तुम्हारी समझी । पर दरस बिन तिरपत नहिं आई ॥३॥
गुरुमुखता बन नहिं पड़ती । फिर कैसे प्रत्यक्ष पाई ॥४॥
तुम गुप्त रहो जीवन से । संग सब के दूर न भाई ॥५॥
बिन किरपा सतगुरु पूरे । निज रूप न तुम दिखलाई ॥६॥
अब तरसूँ तड़पूँ बहु विधि । तुम निकट न होत रसाई२ ॥७॥
हो समरथ दाता सब के । मुझ को भी खैंच बुलाई ॥८॥
मैं कैसे देखूँ तुम को । कोई जतन न अब बन आई ॥९॥
घट का पट खोलो प्यारे । यह बात न कुछ कठिनाई ॥१०॥
तुम चाहो तो छिन में कर दो । नहिं जन्म जन्म भटकाई ॥११॥
अब दरस दिखादो जल्दी । मैं रहूं नित्त मुरझाई ॥१२॥
अब दया विचारो ऐसी । मैं रहूं चरन लौ लाई ॥१३॥
तुम बिन कोई और न ज़ानूं । तुमहीं से रहुं लिपटाई ॥१४॥
यह आरत अद्‌भुत गाई । सूरत मेरी शब्द समाई ॥१५॥
राधास्वामी कहत सुनाई । मैं दासन दास कहाई ॥१६॥

(प्रेम बाणी भाग १ में से)

वाणी राय साहिब सालिगराम जी

सतगुरु आय दिया जग हेला, जागो रे मेरे प्यारे जागो ॥१॥
काल शिकारी जग में ठाढा, भागो रे मेरे प्यारे भागो ॥२॥
गुर सरूप तेरे घट में बसता, झाँको रे मेरे प्यारे झाँको ॥३॥
मान मणी तज गुरु चरनन में, लागो रे मेरे प्यारे लागो ॥४॥
जगत भाव भोगन की आसा, त्यागो रे मेरे प्यारे त्यागो ॥५॥
नैन कंवल गुरु डगर पिया की, ताको रे मेरे प्यारे ताको ॥६॥

१. भारी । २. पहुँच ।

दृढ़ प्रतीत भरोस पिया की, राखो रे मेरे प्यारे राखो ॥७॥
राधास्वामी राधास्वामी छिन-छिन हिये से, भाखो रे मेरे प्यारे भाखो ॥८॥

गुरु और नाम भक्ति

बचन १९ : शब्द १९

समझ कर चल जगत खोटा। मान मद त्याग मन मोटा ॥१॥
खुदी१ को छोड़ नहिं टोटा२। भक्ति कर खाय क्यों सोटा ॥२॥
करो सतसंग गुरु केरा३। सुरत से लो गगन झोटा४ ॥३॥
मगन होय बैठ फिर घट में। फ़तह कर तिरकुटी कोटा५ ॥४॥
कुटुम्ब संग चार दिन नाता। मोह संग क्यों पड़ा लोटा ॥५॥
करो कुछ भजन अंतर में। गहो गुरु चरन की ओटा६ ॥६॥
गुरू बिन कोइ नहीं संगी। उन्हीं सँग बैठ मन घोटा७ ॥७॥
करेंगे काज वह तेरा। उतारें पाप की पोटा८ ॥८॥
मिले तब नाम की रंगत। शब्द की सेज जा लोटा ॥९॥
भाग तेरा बड़ा जागा। हुआ मन अर्श का तोता ॥१०॥
उठा फिर जाग इक छिन में। जुगन जुग से पड़ा सोता ॥११॥
जगत को देख तू मथ कर९। नहीं कुछ सार है थोथा ॥१२॥
उलट कर दिल मथो अपना। अमोलक वक्त क्यों खोता ॥१३॥
गुरू ने अब करी किरपा। दिया अब काल को ग़ोता ॥१४॥
कहें राधास्वामी यह तुम को। चलो सतलोक दूँ न्योता१० ॥१५॥

गुरु और नाम भक्ति

बचन १९ : शब्द १२

सुन रे मन अनहद बैन। घट में मठ११ निरखो नैन ॥१॥
गुरु शब्द गहो उपदेशा। रस पी पी करो प्रवेशा ॥२॥
चक्कर अब फेरो आई। धुन शब्द तभी खुल जाई ॥३॥
बिन नाम नहीं गति पाई। सतगुरु यों१२ कहैं बुझाई ॥४॥
सतसंग अब करो बनाई। गुरु गहो आन सरनाई ॥५॥

---

१. अहंकार। २. हानि। ३. का। ४. झोका झूले का। ५. क़िला। ६. सरन। ७. रगड़ा। ८. बोझ। ९. विचार कर, बिलो कर। १०. बुलावा। ११. मन्दिर। १२. इस प्रकार।

जग भोग रोग सम जानो। धन माल चाह दुख मानो ॥६॥
भौ सागर फाट[1] अपारा। डूबे सब उसकी धारा ॥७॥
गुरु बिन कोइ पार न पाया। बिन नाम न धीरज आया ॥८॥
अब सुरत सम्हालो आई। जो शब्द हाथ लग जाई ॥९॥
मन इन्द्री तन भरमाई। दुख सुख में गये भुलाई ॥१०॥
हौं हौं कर[2] जन्म बिताई। करता की बूझ न आई ॥११॥
अब सोच करो तुम मन में। कुछ रोको मन निज तन में ॥१२॥
राधास्वामी कहत बुझाई। तब सुरत शब्द घर पाई ॥१३॥

गुरु और नाम भक्ति

बचन १९ : शब्द ७

सुरत क्यों हुई दिवानी। तेरी बिरथा बैस[3] बिहानी[4] ॥१॥
जग भोग रोग दिन बीते। तू जाय दोऊ कर रीते[5] ॥२॥
जमपुर होय धूमा धामी। तू पड़े चौरासी खानी ॥३॥
वहाँ कौन सहाई तेरा। तू बचन मान अब मेरा ॥४॥
कर गुरु से हित चित लाई। सुन मान बचन गुरु भाई ॥५॥
सूरत जा शब्द मिलाई। कर निस दिन यही कमाई ॥६॥
तेरा भाग बढ़त नित जावे। फिर काल न तोहि सतावे ॥७॥
रस अगम शब्द का पावे। मन भोग सहज छुट जावे ॥८॥
चढ़ चढ़ नभ ऊपर धावे। दल सहस कँवल गति पावे ॥९॥
तिल मोड़े बिजली चमके। सुन शब्द अनाहद धमके ॥१०॥
फिर चाँद सुरज दोऊ दरसें। सुखमन मन सूरत परसें ॥११॥
गुरु मूरत अजब दिखाई। शोभा कुछ कही न जाई ॥१२॥
नर रूप दिखावें तब ही। मन खैंच चढ़ावें जब ही ॥१३॥
दे मदद बढ़ावें आगे। मन जुग जुग सोया जागे ॥१४॥
चढ़ बंक चले त्रिकुटी में। फिर सुन्न तके सरवर में ॥१५॥
जहँ शोभा हंसन भारी। वह भूमि लगे अति प्यारी ॥१६॥
धुन किंगरी बजे करारी। सुन सुरत हुई मतवारी ॥१७॥
फिर लगे महासुन्न तारी। जहँ दीप अचिंत सम्हारी ॥१८॥

१. चौड़ाई। २. अहंकार में। ३. उमर, आयु। ४. व्यतीत हो गई। ५. दोनों हाथ खाली।

लख भँवर गुफा हुई न्यारी। जहँ सेत सूर उजियारी ॥१६॥
चौथे पद करी तयारी। धुन बीन सुनी अति भारी ॥२०॥
लख अलख अगम्म लखा री। हुई राधास्वामी रूप निहारी ॥२१॥
महिमा उनकी क्या कहुं भारी। मुझ गरीब की बहुत सुधारी ॥२२॥

भेद काल मत व दयाल मत का

बचन २२ : शब्द २

सुरत बुन्द सत सिंध तज। आई दसवें द्वार ॥१॥
व्हाँ से उतरी पिंड में। बसी आय नौ वार ॥२॥
मन इन्द्री सम्बन्ध कर। पड़ी जगत को लार१ ॥३॥
जन्म जन्म दुख में रही। बही चौरासी धार ॥४॥
सुध भूली घर आदि की। सत्तपुरुष दरबार ॥५॥
नर देही जब जब मिली। किया न सतगुरु प्यार ॥६॥
संशय सोग भरमत रही। क्यों कर उतरे पार ॥७॥
सतगुरु संत दया करी। आये धर औतार ॥८॥
बहु विधि अब समझावहीं। मारग शब्द पुकार ॥९॥
काल बिछाया जाल अस। गुप्त किया मत सार ॥१०॥
करम भरम पाखंड का। कीन्हा बहुत पसार ॥११॥
विद्या रस ज्ञानी ठगे। बाचक अति अहंकार ॥१२॥
जड़ चेतन ग्रन्थी२ बँधे। थोथा३ करें विचार ॥१३॥
सुरत शब्द की राह को। करें न अंगीकार ॥१४॥
मन बैरी धोखा दिया। तजे न मूल विकार ॥१५॥
इन की संगत मत करो। यह मारें घेरा डार ॥१६॥
खोजी कोइ कोइ होयगा। बादी४ सब संसार ॥१७॥
रोजगारी भेखी सभी। मानी मान अधार ॥१८॥
राधास्वामी गाइया। इन से रहो हुशियार ॥१९॥
संत सरन दृढ़ कर गहो। काल बड़ा बरियार५ ॥२०॥
सुरत न पावे शब्द रस। तब लग रहे खुवार६ ॥२१॥
ता ते सतगुरु संग कर। पहुंचो निज घर बार ॥२२॥

१. संग। २. गाँठ। ३. खाली। ४. झगड़ा करने वाले। ५. बलवान।
६. जलील

उपदेश सुरत शब्द के अभ्यास का

बचन २०: शब्द २०

हंसनी छानो दूध और पानी ॥ टेक ॥

छोड़ो नीर पियो पय1 सारा । निस दिन रहो अघानी2 ॥१॥
जुक्ति जतन से घट में बैठो । सूरत शब्द समानी ॥२॥
खान पान निद्रा तज आलस । सुन ले अधर कहानी ॥३॥
फिर औसर नहिं हाथ पड़ेगा । भरमो चारों खानी ॥४॥
गुरु का कहना मान सखी री । देत सिखापन3 जानी ॥५॥
पाँचो इन्द्री उलटी तानो । इच्छा मार भवानी4 ॥६॥
मन को साध चढ़ो गगनापुर । सुनो अनाहद बानी ॥७॥
शोर होत तेरे घट के भीतर । तू क्यों रहे अलसानी ॥८॥
राधास्वामी टेरत तो को । कह कर अमृत बानी ॥९॥

बारहमासा

बचन ३८ : शब्द १

असाढ़ मास पहला

हाल दुख सुख सहने जीव का संसार में मन और माया के संग भरम कर और वर्णन कष्ट और क्लेश का जो कि बिना सतगुरु और नाम भक्ति के अन्त समय में जमदूतों के हाथ से सहता है ।

प्रथम असाढ़ मास जग छाया । आसा धर जिव गर्भ समाया ॥१॥
आस आड़ ले जीव भुलाया । घर को भूल दुक्ख अति पाया ॥२॥
कर्म वेग5 ने बाहर डाला । माया कीन्हा बहु जंजाला ॥३॥
बाल अवस्था अति दुख पावे । बेदन6 भारी नित्त सतावे ॥४॥
मुख बोले ना सैन चलावे । काहू दुख अपना न जनावे ॥५॥
दुख में रोवे अति बिल्लावे । मात पिता बुधि काम न आवे ॥६॥
दुख कुछ है औषध कुछ करि हैं । उलट पलट संतापे दे हैं ॥७॥
बालपना अति दुख में बीता । भई किशोर खेल मति लीता ॥८॥
मात पिता चाहें पढ़वाना । यह रहे निस दिन खेल दिवाना ॥९॥

१. अमृत, दूध । २. तृप्त । ३. शिक्षा । ४. संसार में लाने वाली । ५ जोर । ६. दुक्ख, दर्द ।

मार पीट पितु मात घनेरी। वह भी दुख की भारी ढेरी ॥१०॥
यह भी दिन दुख ग़फ़लत बीते। सुक्ख न पाया रहे अब रीते ॥११॥
तरुन अवस्था आवन लागी। मन तरंग अब छिन छिन जागी ॥१२॥
चाह उठी तब करी सगाई। ब्याह हुआ घर नारी आई ॥१३॥
नारि देख मन अति हरषाना। बेड़ी भारी सो नहिं जाना ॥१४॥
मात पिता का हक सब भूले। दिन और रात नारि संग झूले ॥१५॥
घटती चली लगन पितु माता। नारि पुत्र संग मन अति राता ॥१६॥
फ़िकर पड़ा उद्यम का जबही। दर दर भरमे दुख अति सहही ॥१७॥
स्वान समान करी गति अपनी। धन का सुमिरन धन की जपनी ॥१८॥
धन पाया तो हुआ अनंदा। अन-मिल्ते पड़ा दुख का फंदा ॥१९॥
गृह कारज अब नित्त सतावें। कुल और जाति बहुत भरमावें ॥२०॥
सब का बोझ भार सिर लीन्हा। अब तड़पे जस जल बिन मीना ॥२१॥
मूरख ने यह भार उठाया। अब दुक्खन से बहु घबराया ॥२२॥
भरमत फिरे सुक्ख के कारन। सुख नहिं मिला हुआ दुख दारुन ॥२३॥
किये अपने को बहु पछतावे। पर अब कछू पेश नहिं जावे ॥२४॥
कल कलेश बहु वर्षन लागे। वर्षा ऋतु असाढ़ अब जागे ॥२५॥
मोर पपीहा भर्म त्रास के। रोग सोग दुख मोह आस के ॥२६॥
बोलन लागे चहुंदिस घेरी। उमड़ी घटा मानो रात अँधेरी ॥२७॥
भक्ति चन्द्रमा सूरज ज्ञाना। छिप गये दोनों घोर समाना ॥२८॥
अज्ञान अँधेरा अति घट छाया। लोक गया परलोक गँवाया ॥२९॥
यह भी बीते दुख में सब दिन। वृद्ध अवस्था आई छिन छिन ॥३०॥

॥ दोहा ॥

वृद्धाई बादल उमड, घेर लिया तन खंड।
लोभ नदी बाढ़न लगी, तृष्णा अति परचंड ॥३१॥
बुद्धि हीन बल छीन होय, वर्षा तन से होत।
नैन नीर मुख नासिका, बहन लगे जस सोत ॥३२॥

सावन मास दूसरा

बचन ३८ : शब्द २

सावन आया मास दूसरा। सास[1] मरी घर आया ससुरा[2] ॥१॥
काली घटा श्याम मन हूआ। श्याम कंज में यह मन मूआ ॥२॥

१. माया, इच्छा। २. ब्रह्म।

गरजे बादल चमके बिजली। मनसा मोड़ी आसा बदली१ ॥३॥
सुरत निरत की झड़ियाँ लागीं। धुन अनंत शब्दन से चालीं ॥४॥
वृद्ध अवस्था चेतन लागी। काल आय जब सिर पर गाजी ॥५॥
जमपुर से अब सतगुरु राखें। बहुतक जीव मौत दर ताकें ॥६॥
काल घटा जब आकर छाई। धारा मौत अधिक बर्षाई ॥७॥
जीव अनेक रहे घबराई। काया गढ़ उन दीन्ह ढवाई ॥८॥
जमपुर जाय जीव पछतावें। जम के दूत तिन बहुत सतावें ॥९॥
नाना कष्ट देंहैं पल पल में। फिर फाँसी डालें गल गल में ॥१०॥
कुम्भी नर्क माहिं दें गोते। जीव सहें दुख अति कर रोते ॥११॥
वे निरदई२ दया नहिं लावें। अति त्रास से जिव मुरझावें ॥१२॥
अगिन खंभ से फिर लिपटावें। हाय हाय कर तब चिल्लावें ॥१३॥
सुने न कोई मुश्किल भारी। सर्पन माला ले गल डारी ॥१४॥
मार मार चहुं दिस से होई। पति गति अपनी सब बिधि खोई ॥१५॥
नर्कन में अति त्रास दिखावें। फिर चौरासी ले पहुंचावें ॥१६॥
गुरु भक्ती बिन यह गति पाई। नर देही सब बाद गँवाई३ ॥१७॥
जो जो भजन भक्ति से चूके। तिन के मुख जम पल पल थूके ॥१८॥
ऐसी कुगति होयगी सब की। जो नहिं धारें सतगुरु अब की ॥१९॥
सतगुरु बिना कोई नहिं बाचे। नाम बिना चौरासी नाचे ॥२०॥
धन्य भाग हम सतगुरु पाया। चढ़ी सुरत मन गगन समाया ॥२१॥
सुन्न मँडल जाय झूला झूली। सावन मास लिया फल मूली ॥२२॥
सखियाँ सब मिल गावन लागीं। माया ममता देखत भागीं ॥२३॥
सभी सुहागिन झूलें घर घर। पिया अपने को हिरदे धर धर ॥२४॥
पिया बिमुख तरसें बहु नारी। जिनके पति परदेश सिधारी ॥२५॥
तिनको सावन काला नागा। डस डस खावे लागे आगा ॥२६॥
बाहर वर्षा रिमझिम होई। घट में उनके अग्नि समोई ॥२७॥
अग्नि लगी मानो तन मन फूँका। उनके भावें पड़ गया सूखा ॥२८॥
तीज त्योहार कछू नहिं भावे। मन में दुख, नहिं हर्ष समावे ॥२९॥
पिया बिन सावन कैसा आया। जेठ तपन जस जीव जलाया ॥३०॥

॥ दोहा ॥

जीव जले विरह अग्नि में, क्योंकर शीतल होय।
बिन वर्षा पिया बचन के, गई तरावत खोय ॥३१॥

१. बदल गई। २. कठोर, बे-रहम। ३. व्यर्थ (बे फ़ायदा) खोई।

जिन को कंत मिलाप है, तिन मुख बरसत नूर।
घट सीतल हिरदा सुखी, बाजे अनहद तूर ॥३२॥

भादों मास तीसरा

बचन ३८ : शब्द ३

चेतावनी जीवों को कि मनमत कर्म और धर्म और जप तप और मूर्ति पूजा और तीर्थ व्रत से जीव की चौरासी नहीं छूटेगी जब तक कि संत सतगुरु और साध का संग और उनसे भेद नाम का लेकर अंतरमुख अभ्यास न करेंगे और वर्णन जुक्ति और भेद सुरत शब्द मार्ग का।

भादों मास तीसरा जारी। दौं[1] लागी सब जग को भारी ॥१॥
तीन ताप का बड़ा पसारा[2]। इक इक जीव घेर कर मारा ॥२॥
काम क्रोध मद लोभ सतावें। माया ममता आग लगावें ॥३॥
जल जल जीव पड़े घबरावें। छूटन की कोई जुगत न पावें ॥४॥
कोई कर्म कोई धर्म सम्हारे। कोई विद्या कोइ जप तप धारे ॥५॥
कोई मंदिर जा मूरत पूजे। कोइ तीरथ कोइ बर्त में जूझे ॥६॥
यह सब भूले भटका खावे। कोई न इनकी भूल मिटावें ॥७॥
क्या पंडित क्या भेख गृहस्ती। यह सब बसे काल की बस्ती ॥८॥
चौरासी में बहु भरमावें। नर्क स्वर्ग के धक्के खावें ॥९॥
जो कोइ उन से कहे समझाई। उल्टी मानें करें लड़ाई ॥१०॥
कलजुग कर्म धर्म नहिं कोई। नाम बिना उद्धार न होई ॥११॥
नाम भेद है अति कर झीना[3]। बिन सतगुरु काहू नहिं चीन्हा[4] ॥१२॥
जपने में सब गये भुलाई। नाम अगम कोई भेद न पाई ॥१३॥
जो सतगुरु पूरे मिल जाते। तो वे भेद नाम का गाते ॥१४॥
नाम रहे चौथे पद माहीं। यह ढूँढें तिरलोकी माहीं ॥१५॥
तीन लोक में नाम न पावें। चौथे लोक में संत बतावे ॥१६॥
तीन लोक में बसता काल। चौथे में रहे नाम दयाल ॥१७॥
सोई नाम संतन से पावे। बिना संत नहिं नाम समावे ॥१८॥
अब मारग का भेद बताऊँ। आँख खुले तो भेद लखाऊँ ॥१९॥
पहिले सुर्ती नैन जमावे। घेर फेर घट भीतर लावे ॥२०॥
विरह होय तो यह बन आवे। मेहनत करे तो कुछ फल पावे ॥२१॥

१. प्यास लगने से जो भटकी लगती है। २. फैलाव। ३. बारीक। ४. समझा।

देखे तिल पिल जोत समावे। अनहद सुन मन बस में आवे ॥२२॥
मन बस होय तो सूरत जागे। निरख अकाश आतमा पागे ॥२३॥
शब्द पकड़ परमातम निरखे। आतम जाय परमातम परखे ॥२४॥
परमातम से आगे जाई। सुन्न महल में बैठक पाई ॥२५॥
सुन्न के परे महासुन्न लेखा। महासुन्न पर खिड़की देखा ॥२६॥
खिड़की आगे चौक अपारा। चौक परे निरखा सत द्वारा ॥२७॥
सत्तपुरुष सतनाम कहाई। सत्तलोक निज पाया आई ॥२८॥
यह मारग संतन ने भाखा। भेद प्रगट कुछ गोय[1] न राखा ॥२९॥
लोक वेद बस जो जिव होई। सो परतीत न लावे कोई ॥३०॥

॥ दोहा ॥

लोक वेद में जो पड़े, नाग पाँच[2] डस खायँ।
जन्म जन्म दुख में रहें, रोवें और चिल्लायँ ॥३१॥
जिन सतगुरु के बचन की, करी नहीं परतीत।
नहिं संगत करी संत की, वे रोवें सिर पीट ॥३२॥

क्वार मास चौथा

बचन ३८ : शब्द ४

आसक्त होना जीवों का मन और इन्द्रियों के भोगों में और भूलना अपने सत्तकुल को और प्रगट होना सत्तपुरुष दयाल का संत सतगुरु रूप धारन करके वास्ते उनके उद्धार के और उपदेश करना सुरत शब्द मार्ग का

क्वार महीना चौथा आया। जिव भौ सागर वार रहाया ॥१॥
पार न जावे वार रहावे। साध संत संग प्रीत न लावे ॥२॥
जगत भोग में रहे अधीना। रोग सोग दुख सुक्ख मलीना ॥३॥
ज्ञान वैराग भक्ति नहिं धारी। मोह राग हंकार पचारी ॥४॥
क्वारी सुरत करे व्यभिचारा। मन इन्द्री संग फिरती लारा ॥५॥
काम क्रोध में भरमत डोले। जड़ चेतन की गाँठ न खोले ॥६॥
सतसंग करे न सतगुरु सेवें। भाव भक्ति में मन नहिं देवे ॥७॥
काल चक्र का पड़ा हिंडोला। ऊँच नीच खावे झकझोला ॥८॥

१ गुप्त। २. काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार।

जन्म अनेक भूलते बीते। जम झोटन के सहे फ़ज़ीते[१] ॥९॥
धर्मराय नित करे ख़ुवारी[२]। नर्कन में भोगे दुख भारी ॥१०॥
कर्म भार सिर ऊपर लादा। घेरे फिरे काल का प्यादा ॥११॥
प्यादों के संग इज़्ज़त खोती। सत्तनाम कुल की थी गोती ॥१२॥
गोत लजाया जाति गँवाई। तो भी मन में लाज न आई ॥१३॥
लाज करी तो मन के कुल की। सुध भूली सब अपने कुल की ॥१४॥
कुल इसका है सब से ऊँचा। संत बिना कोइ जहाँ न पहुंचा ॥१५॥
शेष महेश रहे सब नीचे। ब्रह्म और पारब्रह्म रहे बीचे ॥१६॥
सत्तपुरुष को लज्जा आई। संत औतार धरा जग माही ॥१७॥
संत रूप धर जिव उपदेशें। बानी नाव बना जिव खेवें ॥१८॥
सुरत अजान न बूझे बानी। फिर फिर डूबे कहा न मानी ॥१९॥
भौसागर में गोते खावे। मनमत ठान चौरासी धावे ॥२०॥
संत बतावें सत की रीत। यह नहिं माने कुछ परतीत ॥२१॥
बिन परतीत रीत नहिं पावे। जन्म जन्म चौरासी जावे ॥२२॥
चौरासी से संत बचावें। उनका बचन न मन ठहरावे ॥२३॥
मन के रंग फिरे बहुरंगी। ढंग न सीखे बड़ी कुढंगी ॥२४॥
साध संत का ढंग नहिं सीखे। भोगे दुख रस चाखे फीके ॥२५॥
रस फीके संसार के सबही। अंतर का रस अगम न लेही ॥२६॥
स्वाँति बदरिया अंतर बरसे। सुरत लगावे तो मन सरसे[३] ॥२७॥
शर्द चन्द्रमा अंतर दरसे। सुन्न की धुन्न जाय जब परसे ॥२८॥
मोती चुने मानसरवर के। भोगे भोग मराल[४] नगर के ॥२९॥
जो संतन के बचन सम्हाले। जाय त्रिवेनी होय निहाले ॥३०॥

॥ दोहा ॥

होय निहाल सुन्दर लखे, सुने किंगरी नाद।
नाद सुनत होवत मगन, फिर खोजत पद आद ॥३२॥
संत दया सतगुरु मया[५], पाया आद अनाद।
गति मति कहते ना बने, सुरत भई बिस्माद ॥३२॥

१ मुसीबतें। २ ख़राब। ३ खुश हो। ४ हंस। ५ कृपा।

कातिक मास पाँचवाँ

बचन ३८ : शब्द ५

वर्णन कँवलों का अंदर काया के और बड़ाई संत मते की

कातिक मास पाँचवाँ चला। सुरत शब्द गुरु चेला मिला ॥१॥
तक काया कँवलन विधि भाखी। कँवल दुवादस काया राखी ॥२॥
प्रथमे कँवल गनेश बिलासा। कँवल दूसरे ब्रह्मा बासा ॥३॥
कँवल तीसरे विष्णु प्रकाशा। चतुर्थ कँवल शिव शक्ति निवासा ॥४॥
आतम कँवल पाँचवाँ होई। छठा कँवल परमातम सोई ॥५॥
कँवल सातवें काल बसेरा। जोत निरंजन का वहाँ डेरा ॥६॥
कँवल आठवाँ त्रिकुटी माहीं। सूरज ब्रह्म बसे तेहि ठाहीं ॥७॥
नवाँ कँवल है दसवें द्वारे। पारब्रह्म जहँ बसे निरारे ॥८॥
महासुन्न में कँवल अचिंता। कँवल दसम का वहाँ बरतंता ॥९॥
कँवल इकादश भँवरगुफा पर। द्वादस कँवल सत्तपद अंतर ॥१०॥
खट चक्कर यह पिंड सँवारा। तीन चक्र ब्रह्मंड अधारा ॥११॥
तीन कँवल जो ऊपर रहे। संत बिना कोइ बरन न कहे ॥१२॥
खष्ट कँवल तक जोगी आसन। नवें कँवल जोगेश्वर बासन[1] ॥१३॥
पिंड ब्रह्मंड का इतना लेखा। योगी ज्ञानी यहाँ तक देखा ॥१४॥
आगे का कोई भेद न जाने। तीन कँवल सो संत बखाने ॥१५॥
कोइ छः तक कोइ नौ तक भाखे। सर्व मते इन भीतर थाके ॥१६॥
बड़ा संत मत सब से आगे। संत कृपा से कोइ कोइ जागे ॥१७॥
जो पहुंचे द्वादस अस्थाना। सोई कहिये संत सुजाना ॥१८॥
संतन का मत सब से ऊँचा। जो परखे सोई धुर पहुंचा ॥१९॥
पहुंचे की क्या करूँ बड़ाई। सब मत उसके नीचे आई ॥२०॥
जो मन में परतीत न देखे। तो कबीर गुरु[2] बानी पेखे ॥२१॥
तुलसी साहब का मत जोई। पलटू जगजीवन कहें सोई ॥२२॥
इन संतन का देऊँ प्रमाना। इनकी बानी साख[3] बखाना ॥२३॥
जोग ज्ञान मत इनहूं भाखा। पुनि संतन मत ऊँचा राखा ॥२४॥
जोगी और वेदान्ती भाई। संतन मत परतीत न लाई ॥२५॥
वेद कतेब[4] न पहुंचे तहँ हीं। थके बीच में रस्ते माहीं ॥२६॥
बार बार कह कर समझाऊँ। संतन का मत ऊँचा गाऊ ॥२७॥

१. बासा, ठहराव। २. गुरु नानक साहिब। ३. गवाही। ४ कुरान।

जो परतीत न लावे या की। जानो काल ग्रसी बुधि वा की ॥२८॥
वे कहा जानें मत संतन को। एक मिलावें काँच रतन को ॥२९॥
उनसे यह मत खोल न कहिये। सैन जनाय मौन गहि रहिये ॥३०॥

॥ दोहा ॥

संत मता सब से बड़ा, यह निश्चय कर जान।
सुफ़ी और वेदान्ती, दोनों नीचे मान ॥३१॥
संत दिवाली नित करें, सत्तलोक के माहिं।
और मते सब काल के, योंही धूल उड़ायँ ॥३२॥

अगहन मास छठवाँ

बचन ३८ : शब्द ६

महिमा सतगुरु की और विधि सतसंग और भक्ति की
और चढ़ कर पहुंचना सुरत का सत्तलोक
में उन की मेहर और दया से

आया मास अगहन अब छठा। अघ१ की हानि हुई मल घटा ॥१॥
मन हुआ निर्मल चित हुआ निश्चल। काम क्रोध गये इन्द्री निष्फल ॥२॥
धरन छोड़ सुर्त चढ़ी अकाशा। शब्द पाय आई महाकाशा ॥३॥
शब्द संग नित करे बिलासा। देखे अचरज बिमल तमाशा ॥४॥
छोड़ा यह घर पकड़ा वह घर। खोया जग को पाया सतगुरु ॥५॥
जब से सतगुरु सरना लीन्हा। सत्तनाम धुन घट में चीन्हा ॥६॥
धन सतगुरु धन उनकी संगत। जिन प्रताप पाई मैं यह गत ॥७॥
कर सतसंग काज किया पूरा। पाप नसे२ मानो खाया धतूरा ॥८॥
पाप पुन्य दोउ गये नसाई। भक्ति भाव जिव हृदय समाई ॥९॥
अब यह सतसंग गुरु का पावे। हिल मिल चरन माहिं लिपटावे ॥१०॥
चरन सेव चरनामृत पीवे। गुरु परशादी खा नित जीवे ॥११॥
दर्शन करे बचन पुनि सुने। फिर सुन सुन नित मन में गुने ॥१२॥
गुन गुन छाँट लेय उन सारा। सार धार तिस करे अहारा ॥१३॥
कर अहार पुष्ट हुआ भाई। जग भौ लाज अब गई नसाई ॥१४॥
गुरु भक्ती जानों इश्क़ गुरू का। मन में धसा सुरत में पक्का ॥१५॥
पक पक घट में गाड़ा थाना। थान गाड़ अब हुआ दिवाना ॥१६॥

१. पाप। २. नाश हुए।

गुरु का रूप लगे अस प्यारा। कामिन पति मीना जल धारा ॥१७॥
सतसंग करना ऐसा चाहिये। सतसंग का फल येही सही है ॥१८॥
सतसंग सतसंग मुख से गावें। करें नित्त फल कछू न पावें ॥१९॥
सतसंग महिमा है अति भारी। पर कोइ जीव मिले अधिकारी ॥२०॥
अधिकारी बिन प्रगट नहीं फल। सतसंग तौ कीन्हा सब चल चल ॥२१॥
चल चल आये सतगुरु आगे। बचन न पकड़ा दरस न लागे ॥२२॥
सतसंग और सतगुरु क्या करें। सो जिव भौजल कैसे तरें ॥२३॥
पत्थर पानी लेखा बरता। जल मिसरी सम मेल न करता ॥२४॥
बाहर का संग जब अस होई। सतगुरु सम प्रीतम नहिं कोई ॥२५॥
तब अंतर का सतसंग धारे। सुरत चढ़े असमान पुकारे ॥२६॥
बोले अर्श और गरजे गगना। बैठा कुरसी मन हुआ मगना ॥२७॥
ला-मुक़ाम पाया लाहूत। छोड़ा नासूत मलकूत जबरूत ॥२८॥
हाहूत का जाय खोला द्वारा। हूतलहूत और हूत सम्हारा ॥२९॥
हूत मुक़ाम फ़क़ीर अख़ीरी। रूह सुरत जहाँ देती फेरी ॥३०॥

॥ दोहा ॥

अल्लाहू त्रिकुटी लखा, जाय लखा हा सुन्न।
शब्द अनाहू पाइया, भँवरगुफा की धुन्न ॥३१॥
हक़्क़ हक़्क़ सतनाम धुन, पाई चढ़ सचखंड।
संत फ़क़र बोली जुगल, पद दोउ एक अखंड ॥३२॥

पूस मास सातवाँ

बचन ३८ : शब्द ७

वर्णन स्वरूप सुरत और शब्द का और उपदेश सतगुरु भक्ति और सतसंग का जो कि मुख्य उपाय प्राप्ति मेहर और दया का है

पूस महीना जाड़ा भारी। कर्म भर्म ज्यों फूस जला री ॥१॥
जल जल ढेर हुआ जब भारी। प्रेम पवन से तुरत उड़ा री ॥२॥
मोह सीत१ ने चित को घेरा। सूर विवेक२ किया घट फेरा ॥३॥
फेरा करत भक्ति गुरु जागी। सुरत भई अनहद अनुरागी ॥४॥
राग भोग सब दूर निकारा। विमल विरह वैराग सम्हारा ॥५॥
सहज जोग गुरु दिया बताई। सुरत शब्द मारग लखवाई ॥६॥

१. सरदी। २. विचार।

झीनी सुरत रूप नहिं दरसे। परसे शब्द जाय मन घर से ॥७॥
सुन्न शिखर जाय रूप दिखाना। गगन मंडल के पार ठिकाना ॥८॥
रूप सुरत का दरसा ऐसा। बिन अनुभव क्यों कर कहुं कैसा ॥९॥
अनुभव से वह जाना जाई। शब्द बिना अनुभव[1] नहिं पाई ॥१०॥
सुरत शब्द दोउ अनुभव रूपा। तू तो पड़ा भर्म के कूपा ॥११॥
करनी करकर सुरत चढ़ाओ। शब्द मिले अनुभव घर पाओ ॥१२॥
बिना शब्द अनुभव नहिं होई। अनुभव बिन समझे नहिं कोई ॥१३॥
सुरत शब्द दोउ रूप अमोला। सुन्न चढ़े जिन निज कर तोला ॥१४॥
ताते करनी गुरू बताई। सतगुरु दया लेव संग भाई ॥१५॥
मेहर दया करनी करवाई। करनी कर बहु मेहर बढ़ाई ॥१६॥
करनी मेहर संग दोउ चलते। तब फल पूरा चढ़ चढ़ लेते ॥१७॥
अस संजोग मौज से होई। मौज उपान नहीं अब कोई ॥१८॥
पच पच थक थक सब ही हारे। मौज बिना क्या करें बिचारे ॥१९॥
इक उपाव कुछ मन में आया। पर थोड़ा सा चित्त समाया ॥२०॥
जब जब संत जगत में आवें। ढूंढ भाल उनके ढिग जावें ॥२१॥
जाय करें नित सेवा दर्शन। हाज़िर रहें गिरें उन चरनन ॥२२॥
नित्त हाज़िरी उनकी करते। मन से दीन लीन होय रहते ॥२३॥
पर यह बात बड़ी अति झीनी। संत करावें निंदा अपनी ॥२४॥
निन्दा चौकीदार बिठाई। कोई जीव धसने नहिं पाई ॥२५॥
बिरला जीव होय अनुरागी। निंदा से वह छिन छिन भागी ॥२६॥
निंदा सुन सुन चित नहिं धारे। संतन की यह जुगत विचारे ॥२७॥
जस जाने तस मन समझावे। संतन सन्मुख ज्यों त्यों आवे ॥२८॥
ऐसी दृढ़ता जाकर होई। तो फिर संत मौज करें सोई ॥२९॥
संत मौज फिर कोइ न टारे। ईश्वर परमेश्वर सब हारे ॥३०॥

॥ दोहा ॥

संत डारिया बीज, घट धरती जेहि जीव के।
को अस समरथ होय, जो जारे उस बीज को ॥३१॥
कोई काल के माहिं, वह बीजा अंकुर गहे।
जब जब आवें संत, अंकूरी उन संग रहे ॥३२॥

१. प्रत्यक्ष।

सोरठा

वह सींचे निज पौद, होय भक्त वह पेड़ सम।
फल लागें अति से सरस, भोगें सतगुरु मेहर से ॥३३॥
कारज कीन्हा पूर, संत धूर हिरदे धरी।
सूर हुआ मन चूर, नूर तूर घट में प्रगट ॥३४॥

माघ मास आठवाँ

बचन ३८ : शब्द ८

वर्णन लीला और विलास मुक़ामात का और उनके रास्ते का

माघ महीना अति रस भरा। काया बन मन गुलशन[1] हरा ॥१॥
चमन[2] चमन फुलवारी खिली। बाग़ बाग़ नहरें अब चलीं ॥२॥
गुरु भक्ती और पौद प्रेम की। क्यारी धीरज दया नेम की ॥३॥
अस अस लीला देखी घट में। मन माली सींचे छिन छिन में ॥४॥
नैनन आगे पचरंग फूल। पल पल निरखत तिल तिल भूल[3] ॥५॥
तत्त्व पृथ्वी भिन्न होय दरसा। ऋतु बसंत फूली मन सरसा ॥६॥
झलक जोत और उमंड घटा की। रिमझिम बरसे बूंद अमी की ॥७॥
सहस धार दल सहस कँवल में। उठें तरंगें फैलें मन में ॥८॥
मन चढ़ चला महल अपने में। उलटा पहुंचा गगन मंडल में ॥९॥
गगन मंडल लीला इक न्यारी। शब्द गुरू की खिल रही क्यारी ॥१०॥
मूल नाम और शाखा धुन की। फूली जहँ फुलवार त्रिगुन की ॥११॥
यह लीला घट माहिं निहारी। महिमा नाम कहा कहुं भारी ॥१२॥
सरगुन नाम और सरगुन रूपा। वहाँ तक देखा मन का सूता ॥१३॥
अब आगे सूरत चढ़ चाली। पैठी[4] जाय सुखमना नाली ॥१४॥
सुखमन में निज मन दरसाना। निज मन आगे निरगुन जाना ॥१५॥
यह निरगुन वह सरगुन देखा। दोनों घाट भिन्न कर पेखा ॥१६॥
अब आगे पाँजी[5] इक गाऊँ। गंधर्प नाल के मध्य चढ़ाऊँ ॥१७॥
नाल भुवंगन बायें त्यागी। दहने नाल धुन्धरी जागी ॥१८॥
जगत नाल काल मुख मूंदा। घाट अठासी नाका रूँधा ॥१९॥
सिंह पौल[6] ढिग झँझरी निरखी। सेत पदमनी जाली परखी ॥२०॥

१. फुलवारी। २. बगीचा। ३. झूलती है। ४. धसी। ५. रास्ता। ६. दरवाजा।

सुन्न ताल जहँ धुन भंडारा। छजली कजली दीप निहारा ॥२१॥
सागर नागर जाकर झाँका। कुरम शेष अक्षर जहाँ थाका ॥२२॥
जहाँ सुरंगी दीप झरोखा। सुरत अड़ी जाय द्वारा रोका ॥२३॥
संदली चंदली चौकी डारी। सुरत मंडली पाट खुला री ॥२४॥
कुंडल दीप छबीली रमना। दामिन दीप सोत का झरना ॥२५॥
नीलम कुंड रतन नल पाल। महाकाल रचिया जहाँ जाल ॥२६॥
कंकन घाटी सुरत झुमाई। जाल काल सब दूर पड़ाई ॥२७॥
सेत धरन जहाँ लाल अकासा। हंस छावनी देख बिलासा ॥२८॥
यह पाँजी निरखी निज धामी। बिमल दीप बैठें जहाँ स्वामी ॥२९॥
पोहप नगर जहाँ अमृत धाम। हँस बसें पावें विश्राम ॥३०॥

॥ दोहा ॥

बैठक स्वामी अद्भुती, राधा निरख निहार।
और न कोइ लख सके, शोभा अगम अपार ॥३१॥
गुप्त रूप जहाँ धारिया, राधास्वामी नाम।
बिना मेहर नहिं पावई, जहाँ कोई विश्राम ॥३२॥

फागुन मास नवाँ

बचन ३८ : शब्द ९

उतरना सुरत का बीच नौ द्वार के और फँस जाना मन और इन्द्रियों का संग करके भोगों में और फिर आना सत्तपुरुष दयाल का संत सतगुरु रूप धार कर और पहुँचाना सुरत का निज घर में शब्द मार्ग की कमाई से और वर्णन भेद रास्ते और मुक़ामात का

फागुन मास रंगीला आया। धूम धाम जग में फैलाया ॥१॥
घर घर बाजे गाजे लाया। झाँझ मजीरा डफ़ बजाया ॥२॥
यह नर देही फागुन मास। सुरत सखी आइ करन बिलास ॥३॥
मन इन्द्री संग खेली फाग। उत से सोई इत को जाग ॥४॥
जग में आ संजोग मिलाया। लोक लाज कुल चाल चलाया ॥५॥
भोग रोग परिवार बँधानी। फगुआ खेली होली ठानी ॥६॥
धूल उड़ाई छानी ख़ाक। पाप पुन्य संग हुइ नापाक ॥७॥
इच्छा [illegible] गहीं ॥८॥

फल पाया भुगती चौरासी । काल देस जहँ बहुत तिरासी ॥९॥
आस त्रास माहिं अति फँसी । देख देख तिस माया हँसी ॥१०॥
हँस हँस माया जाल बिछाया । निकसन की कोइ राह न पाया ॥११॥
तब संतन चित दया समाई । सत्तलोक से पुनि चलि आई ॥१२॥
ज्यों त्यों चौरासी से काढ़ा । नर देही में फिर ले डाला ॥१३॥
चरन प्रताप सरन में आई । तब सतगुरु अतिकर समझाई ॥१४॥
तुझको फिर कर फागुन आया । सम्हल खेलियो हम समझाया ॥१५॥
सुरत कहे सुनो संत सुवामी । कस खेलूँ कहो अंतरजामी ॥१६॥
तब सतगुरु इक भेद लखाया । सुरत जोग मारग बतलाया ॥१७॥
सुरत चली अब खेलन होली । कर सिंगार बैठ धुन डोली ॥१८॥
विरह अनुराग रंग घट लीन्हा । मन को संग ले तन तज दीन्हा ॥१९॥
शब्द गुरू से पहले खेली । गगन चौक चढ़ त्रिकुटी लेली ॥२०॥
त्रिकुटी माहिं बहुत दिन खेली । ओंककार संग कीन्हा मेली ॥२१॥
लाल गुलाल रूप सुर्त पाया । तब सतगुरु सुन्न शब्द सुनाया ॥२२॥
आगे बढ़ी चढ़ी ऊँचे को । उलट न देखे अब नीचे को ॥२३॥
चल चल पहुंची सत्तलोक में । फगुवा माँगे सत्तनाम से ॥२४॥
गई जहाँ से फिर वहि आई । पद में अपने आन समाई ॥२५॥
रंग रंग नित खेलत होंली । जो होना था सो अब हो ली[1] ॥२६॥
छोड़ा पिंडा छोड़ा अंडा । खंड खंड कीन्हा ब्रह्मंडा ॥२७॥
निज घर अपने जाकर बसी । सत्त शब्द धुन बीना रसी[2] ॥२८॥
हंस रूप अब धारा असली । देह रूप धर बहुतक फँसली[3] ॥२९॥
काल निरंजन तोड़ी पसली । हो गइ सतनाम गल हँसली[4] ॥३०॥

॥ दोहा ॥

जब आवे सुर्त देह में, देह रूप ले ठान ।
जब चढ़ उलटे सुन्न को, हंस रूप पहिचान ॥३१॥
सुरत रूप अति अचरजी, वर्णन किया न जाय ।
देह रूप मिथ्या तजा, सत्त रूप हो जाय ॥३२॥

१. हो गया । २. रस से भरी । ३ फँसी । ४. नाम गहने का ।

चैत मास दसवाँ

बचन ३८ : शब्द १०

चैत महीना आया चेत। बाँधा सतगुरु भौ में सेत[१] ॥१॥
जीव चिताये जो थे वार[२]। भौसागर से कीन्हे पार ॥२॥
भौसागर अति गहिर गंभीर। सतगुरु पूरे बाँधी धीर ॥३॥
तन मन धन की लई जगात[३]। शिष्य उतारे गहिकर हाथ[४] ॥४॥
सुरत बहे थी नौ[५] की धार। ताहि चढ़ाया गगन मँझार ॥५॥
गगन जाय धुन शब्द सिहारी[६]। देखा रूप जोत अति भारी ॥६॥
जोत निहारे देखे तारा। बंक नाल का खोला द्वारा ॥७॥
संख सुना और धुन ओंकारा। शब्द गुरू का घाट निहारा ॥८॥
छोड़ा मन अब चेती सूरत। त्रिकुटी चढ़ निरखी गुरु मूरत ॥९॥
गुरु चेला मिल आगे चाली। मानसरोवर शब्द सम्हाली ॥१०॥
हंसन साथ करी जाय यारी। सुरत सखी हुइ सबकी प्यारी ॥११॥
सुन्न शहर में कुछ दिन बसी। फिर चढ़ ऊपर आगे धसी ॥१२॥
महासुन्न इक नगर अपारा। कहूं कहा अचरज बिस्तारा ॥१३॥
धुन जहाँ चार गुप्त अति झीनी। संत बिना कोइ परख न चीन्ही ॥१४॥
अचिंत दीप तहं दायें रहता। सहज दीप दस पालँग बसता ॥१५॥
महिमा दीप कहा कहुं भारी। संतोष दीप तहाँ बायें सँवारी ॥१६॥
तहँ इक झिरना अजब रन्नानी। सुरत निरत से गही निशानी ॥१७॥
देख निशान मध्य को धाई। भँवरगुफा की गली समाई ॥१८॥
तिस आगे मैदान दिखाना। सत्तलोक जहाँ पुरुष पुराना ॥१९॥
निज पद पाय पुरुष से मिली। देख गली आगे फिर चली ॥२०॥
अलख लोक में किया बसेरा। अगम लोक जाय डाला डेरा ॥२१॥
शोभा वहाँ की क्या कह गाउँ। अरब खरब शशि सूर लजाऊँ ॥२२॥
अब अनाम जहाँ रूप न नामा। संत करें जाय वहाँ विश्रामा ॥२३॥
सुरत चेत पाया बिसमाद[७]। नहिं जहाँ बानी नहिं जहाँ नाद ॥२४॥
आदि न अंत अनंत अपार। संतन का वह निज दरबार ॥२५॥
संत सभी वा घर से आवें। काल देश से जीव चितावें ॥२६॥
जो चेते तिस ले पहुंचावें। सुरत शब्द मारग बतलावें ॥२७॥

१. सतगुर ने भवसागर में पुल बाँधा। २. आर। ३. महसूल। ४. हाथ पकड़ कर। ५. नौ द्वार। ६. पकड़ी। ७. विशेष समाधि अवस्था।

जीव चेत जो माने कहना। ताको फिर दुख सुख नहिं सहना ॥२८॥
मानो बचन करो कुछ करनी। सुरत निरत की धारो रहनी ॥२९॥
सतसंग करो गहो गुरु रंग। सुरत चढ़ाओ गगन उमंग ॥३०॥

॥ दोहा ॥

सतगुरु संत दया करी, भेद बताया गूढ़[1]।
अब सुन जीव न चेतई, तो जानो अति मूढ़ ॥३१॥
भौसागर धारा अगम, खेवटिया गुरु पूर।
नाव बनाई शब्द की, चढ़ बैठे कोइ सूर ॥३२॥

बैसाख मास ग्यारहवाँ

बचन ३८ : शब्द ११

वर्णन भेद काल मत और दयाल मत का और प्रगट होना सत्तलोक का और रचना तीन लोक की और सबब फैलने काल मत का और गुप्त होना संत मते का

बैसाख महीना सिर पर आया। साख गई जिव हुआ पराया ॥१॥
काल पक्ष सब जीवन धारी। पुरुष दयाल की सुद्धि बिसारी ॥२॥
सुरत देश अपना बिसराना। काल देश इन अपना जाना ॥३॥
काल रची तिरलोकी सारी। दयाल रचा सतलोक सम्हारी ॥४॥
तीन लोक काल का थाना। चौथा लोक दयाल अस्थाना ॥५॥
काल दिया जीवन को धोका। चौथे पद से सब को रोका ॥६॥
दयाल पुरुष का भेद न दीना। कर्मकांड में जीव अधीना ॥७॥
अपनी पूजा सब विधि गाई। जीव चले चौरासी भाई ॥८॥
त्रैगुन रसरी जीव बँधाना। ब्रह्मा विष्णु महेश पुजाना ॥
देवी देवा पत्थर पानी। पाप पुन्य में जीव उरझानी ॥१०॥
काल धरे जग दस औतारा। कला दिखाय जीव धर मारा ॥११॥
आपहि राम आप हुआ रावन। आपहि कंस आप जसुनन्दन ॥१२॥
आपहि बल[2] और आपहि बावन। आपहि कच्छ मच्छ धर धारन ॥१३॥
परसराम और नरसिंह देख। प्रहलाद भक्त होय बाँधी टेक ॥१४॥
खंभ फाड़ बाहर होय निकला। रक्षक कला दिखाई सकला[3] ॥१५॥

१. गुप्त। २. एक दैत्यराज, वलि। ३. वंस।

चाँद सूर्य और गौर गनेशा । पुजवाये और राहु होय ग्रसा ॥१६॥
अस अस कला अनंत असंखा । कहाँ लग बरनूँ भेद सबन का ॥१७॥
काल लिया सब लोकन घेरी । दयाल पुर्ष कोइ मर्म न हेरी ॥१८॥
काल कला परचंड दिखाई । जीव चले सब उसकी राही ॥१९॥
संतन का कोइ भेद न जाना । संत मता रहा गुप्त छिपाना ॥२०॥
संत मता खुल कर अब गाऊँ । देकर कान सुनो समझाऊँ ॥२१॥
नहिं पताल नहिं मृत्त अकाशा । पांच तत्त्व नहिं तिरगुन स्वाँसा ॥२२॥
नहिं शिव शक्ति न पुरुष प्रकिरती । जोत निरंजन नहिं परकिरती ॥२३॥
तारा मंडल सूर न चंदा । पिंड ब्रह्मंड रचा नहिं अंडा ॥२४॥
कुरम न शेष नहीं ओंकारा । माया ब्रह्म न ईश्वर धारा ॥२५॥
आतम परमातम नहिं दोई । सुन्न महासुन रचा न सोई ॥२६॥
अल्ला ख़ुदा रसूल न होते । पीर मुरीद न दादा पोते ॥२७॥
वेद पुरान क़ुरान न कहते । मसजिद काबा बांग[1] न देते ॥२८॥
नहिं त्रिकाल सन्ध्या न नमाज़ा । तीरथ बर्त नेम नहिं रोज़ा ॥२९॥
कर्मी शरई थे नहि भाई । जोगी ज्ञानी खोज न पाई ॥३०॥

॥ दोहा ॥

तपसी[2] हबसी[3] ज़ाहिदा[4] नहिं आबिद[5] माबूद[6] ।
क़ुतुब पैग़म्बर औलिया, कोई न थे मौजूद ॥३१॥
स्वर्ग नर्क दोज़ख़[7] इरम[8], अर्ज़[9] समा[10] नहिं होय ।
मुसलमान हिन्दू नहिं, जैन न ईसा कोय ॥३२॥

जेठ मास बारहवाँ

बचन ३८ : शब्द १२

जेठ महीना जेठा भारी । जीवन हिरदे तपन करारी[11]॥१॥
संत दयाल जीव हितकारी । भेद कहें अब निज कर भारी ॥२॥
नहिं ख़ालिक़[12] मख़लूक़[13] न ख़िल्क़त । कर्ता कारन काज न दिक्क़त ॥३॥
दृष्टा दृष्टि नहिं कुछ दरसत । वाच[14]लक्ष[15]नहिं पद न पदारथ ॥४॥

---

१. अजान । २. तप करने वाला । ३. प्राणों को रोकने वाला । ४. जत्ती । ५ भक्त । ६. भगवंत । ७. नर्क । ८. स्वर्ग । ९. पृथ्वी । १०. आकाश । ११. सख्त । १२. पैदा करने वाला । १३. रचना । १४. जो वाणी द्वारा कहा जावे १५. जो देखा जावे ।

ज़ात सिफ़ात न अव्वल आख़िर। गुप्त न परगट बातिन ज़ाहिर ॥५॥
राम रहीम करीम न केशो। कुछ नहिं कुछ नहिं कुछ नहिं था सो ॥
सिमृति शास्त्र न गीता भागवत। कथा पुरान न वक्ता कीरत ॥७॥
सेवक सेव[1] न दास न स्वामी। नहिं सतनाम न नाम अनामी ॥८॥
कहाँ लग कहूं नहीं था कोई। चार लोक रचना नहिं होई ॥९॥
जो कुछ था सो अब कह भाखूँ। उनमुन सुन्न बिसमाधी राखूँ ॥१०॥
हैरत हैरत हैरत होई। हैरत रूप धरा इक सोई ॥११॥
उनमुन रूप सदा वह रहता। उनमुन दशा सदा वहि बरता ॥१२॥
वा की गति कोई नहिं जाने। वह अपनी गति आप बखाने ॥१३॥
संत रूप होय जग में आया। अपना भेद आप उन गाया ॥१४॥
आपहि आप न दूसर कोई। उठी मौज परगट सत सोई ॥१५॥
तीन देश मौज ने रचे। अगम अलख सतनाम होय हँसे ॥१६॥
धुन धधकार उठी इक भारी। सात सुरत रचना उन धारी ॥१७॥
सांचा बन जामन पुन दीन्हा। सुरत परस्पर रचना कीन्हा ॥१८॥
सोहं सुरत आदि यों बोली। सोहं सोहं सम्पट खोली ॥१९॥
सहज धीर जामन तहाँ दीन्हा। ओं सोहं गर्भ धुन चीन्हा ॥२०॥
मूल सुरत जहां पर प्रगटाई। मूल द्वार पर बैठी आई ॥२१॥
शांत सुरत तहं कीन्ह बिलासा। हंस रचे कर दीप निवासा।
दीपन शोभा क्या कहुं भारी। हंस कुतूहल[2] करें अपारी ॥२३॥
पुरुष दरस और लीला न्यारी। देख देख अनुभव गति धारी ॥२४॥
जुग केते और मुद्दत केती। कही न जावे उनकी गिनती ॥२५॥
रचना सत्य सत्य वह देशा। नहिं व्यापे जहाँ काल कलेशा ॥२६॥
हंस सभा समरथ तहँ बैठे। लीला देखें रहें इकट्ठे ॥२७॥
कँवल द्वार दल धारा निकसी। श्याम रूप अचरज होय दरसी ॥२८॥
पुरुष देख अचरज लौलीना। सेत माहिं जस श्याम नगीना ॥२९॥
सब हंसन मिल अर्जी कीन्हा। कौन कला यह हम नहिं चीन्हा ॥३०॥
पुरुष कहा तुम करो विलासा। यह कल रचिहै और तमाशा ॥३१॥

॥ दोहा ॥

हंसन मन अचरज भया, कहा करे विस्तार।
पुरुष सेव नित ही करै, मन कुछ और हि धार ॥३२॥

१. जिसकी सेवा की जाय। २. लीला।

धारा वह बढ़ती चली, कला न रोकी ताहि।
पुरुष मौज ऐसी हुई, बोली कला बनाय ॥३३॥

रचना रचूँ और मैं न्यारी। यह रचना मोहिं लगे न प्यारी ॥३४॥
तीन लोक रचना मैं करूँ। राज पाय ध्यान तुम धरूँ ॥३५॥
पुरुष कला को दिया निकासी। निकस कला कीन्हा अति त्रासी ॥३६॥
पुरुष दया कर जुगत बनाई। कला दूसरी और उपाई ॥३७॥
पीत वर्ण वह कला सिंगारी। दीन्ही अज्ञा पुरुष निहारी ॥३८॥
एक काल कुछ अंस दयाली। दोनों मिल कान्ही कुछ ख्याली ॥३९॥
आये मानसरोवर तीरा। अक्षर की देखी वहँ लीला ॥४०॥
लीला देख कला चित त्रासा। तब अक्षर ने दिया दिलासा ॥४१॥

॥ दोहा ॥

जोत निरंजन दोउ कला, मिल कर उत्पति कीन।
पांच तत्त्व और चार खान, रच लीन्हे गुन तीन ॥४२॥
गुन तीनों मिल जगत का, किया बहुत विस्तार।
ऋषी मुनी नरदेव अदेव१, रच बाढ़ो हंकार ॥४३॥

॥ सोरठा ॥

ब्रह्मा विष्णु महेष, और चौथी जोती मिली।
भर्म जाल की फांस, जीव न पावें निज गली ॥४४॥

आप निरंजन हुए नियारे। भार सृष्टि सब इन पर डारे ॥४५॥
दीप रचा इक अपना न्यारा। ता में कीन्हा बहु विस्तारा ॥४६॥
पालँग आठ दीप परमाना। जोग आरंभ कीन विधि नाना ॥४७॥
स्वाँस खैंच निज सुन्न चढ़ाये। धुन प्रगटी और वेद उपाये ॥४८॥
वेद मिले ब्रह्मा को आये। देख वेद ब्रह्मा हरखाये ॥४९॥
मुख चारों से धुन उचारी। ताते वेद हुए पुनि चारी ॥५०॥
ऋषि मुनि मिल फिर किया पसारा। कर्म धर्म और भर्म सम्हारा ॥५१॥
सिमृत शास्त्र बहु विधि रचे। कर्म धर्म में सब मिल पचे ॥५२॥
खोज निरंजन किनहुं न पाया। वेदहु नेति नेति गुहराया२ ॥५३॥

१. राक्षस। २. वर्णन किया।

।। दोहा ।।

दर्श निरंजन ना मिला, किया ज्ञान अनुमान[1] ।
फिर आगे सतपुरुष का, क्यों कर करें प्रमान ।।५४।।
ताते यह मत संत का, रहा गुप्त जग माहिं ।
गुन तीनों मानें नहीं, जीवहु मानें नाहिं ।।५५।।

।। सोरठा ।।

संत पुकारें भेद, वेद पशू मानें नहीं ।
अब क्या करें उपाय, जीव पड़े सब भर्म में ।।५६।।

तिरलोकी का नाथ कहाया । सो भी उनके हाथ न आया ।।५७।।
स्वर्ग नर्क चौरासी फेरा । जन्म जन्म पड़े काल के घेरा ।।५८।।
कोइ कोइ चेतन माहिं समाने । सो भी फिर जनमे भौ आने ।।५९।।
चौथा लोक संत दरबारा । निश्चय ता का काहू न धारा ।।६०।।
संत दया अपने चित धरें । जीव न मानें तो क्या करें ।।६१।।
भेद बतावें बानी कहें । देह धरें और जग में रहें ।।६२।।
जीव चितावें किरपा धार । बहुत उठावें जीवन भार ।।६३।।
तौ भी कोइ परतीत न लावे । चौथा पद आसा नहिं धारे ।।६४।।
बारह मास बखान पुकारे । कह कह कर अब हम भी हारे ।।६५।।
हार जीत कुछ हमरे नाहीं । मूरख पर इक तान चलाई ।।६६।।
सत्य सत्य सत्य मैं कही । अब कहने को कुछ न रही ।।६७।।
राधास्वामी नाम उचारो । भक्ति भाव अब मन मैं धारो ।।६८।।
संतन की जिन मन परतीत । और धारी जिन सतसंग रीत ।।६९।।
सतसंग करे नित्त जो आई । उन प्रति यह बानी हम गाई ।।७०।।

१. कयास ।

बाणी श्री गुरु ग्रन्थ साहिब

रागु बिलावलु महला ४ ।।

अंतरि पिआस उठी प्रभ केरी सुणि गुर बचन मनि तीर लगईआ ।।
मन की बिरथा मन ही जाणै अवरु कि जाणै को पीर परईआ ।।१।।
राम गुरि मोहनि मोहि मनु लईआ ।।
हउ आकल बिकल भई गुर देखे हउ लोट पोट होइ पईआ ।।१।। रहाउ ।।
हउ निरखत फिरउ सभि देस दिसंतर मै प्रभ देखण को बहुत मनि चईआ ।।
मनु तनु काटि देउ गुर आगै जिनि हरि प्रभ मारगु पंथु दिखईआ ।।२।।
कोई आणि सदेसा देइ प्रभ केरा रिद अंतिर मनि तनि मीठ लगईआ ।।
मसतकु काटि देउ चरणा तलि जो हरि प्रभु मेले मेलि मिलईआ ।।३।।
चलु चलु सखी हम प्रभु परबोधह गुण कामण करि हरि प्रभु लहीआ ।।
भगति वछलु उआ को नामु कहीअतु है सरणि प्रभू तिसु पाछै पईआ ।।४।।
खिमा सीगार करे प्रभ खुसीआ मनि दीपक गुर गिआनु बलईआ ।।
रसि रसि भोग करे प्रभु मेरा हम तिसु आगै जीउ कटि कटि पईआ ।।५।।
हरि हरि हारु कंठि है बनिआ मनु मोतीचूरु[1] वड गहन गहनईआ ।।
हरि हरि सरधा सेज विछाई प्रभु छोडि न सकै बहुतु मनि भईआ ।।६।।
कहै प्रभु अवरु अवरु किछु कीजै सभु बादि[2] सीगारु फोकट फोकटईआ ।।
कीओ सीगारु मिलण कै ताई प्रभु लीओ सुहागनि थूक मुखि पईआ ।।७।।
हम चेरी[3] तू अगम गुसाई किआ हम करह तेरै वसि पईआ ।।
दइआ दीन करहु रखि लेवहु नानक हरि गुर सरणि समईआ ।।८।।५।।

---

१ एक प्रकार का गहना । २. सब शृंगार व्यर्थ है । ३. दासी ।

मारू महला ५ ।।

अलह अगम खुदाई बंदे ।। छोडि खिआल दुनीआ के धंधे ।।
होइ पैखाक[1] फकीर मुसाफरु इहु दरवेसु कबूलु दरा[2] ।।१।।
सचु निवाजु[3] यकीन मुसला[4] ।। मनसा मारि निवारिह आसा[5] ।।
देह मसीति मनु मउलाणा कलम खुदाई पाकु खरा[6] ।।२।।
सरा सरीअति ले कंमावहु ।। तरीकति तरक खोजि टोलावहु ।।
मारफति मनु मारहु अबदाला मिलहु हकीकति जितु फिरि न मरा[7] ।।३।।
कुराणु कतेब दिल माहि कमाही[8] ।। दस अउरात रखहु बद राही[9] ।।
पंच मरद सिदकि ले बाधहु खैरि सबूरी कबूल परा[10] ।।४।।
मका मिहर रोजा पैखाका[11] ।। भिसतु पीर लफज कमाइ अंदाजा[12] ।।
हूर नूर मुसकु खुदाइआ बंदगी अलह आला हुजरा[13] ।।५।।
सचु कमावै सोई काजी ।। जो दिलु सोधै सोई हाजी[14] ।।
सो मुला मलऊन निवारै सो दरवेसु जिसु सिफति धरा ।।१५ ।।६।।

---

१. चरणों की धूलि। २. जो व्यक्ति चरणों की धूलि बनता है वही फ़कीर मालिक की दरगाह में परवान होता है। ३. सच की नमाज़। ४. विश्वास का मुसल्ला —मुसल्ला वह कपड़ा होता है जिह पर बैठ कर नमाज़ पढ़ी जाती है। ५. आसा-मनसा को दूर करो। ६. देह सच्ची मस्जिद है, मन सच्चा मौलवी (पुजारी) है, परमात्मा की दरगाह से उठ रहा कलमा (नाम अथवा शब्द) पवित्र है, अर्थात् हमारी देह के अन्दर ही शब्द रूपी निर्मल नाद, आकाशवाणी या क़लमा हो रहा है जो अति शुद्ध और निर्मल है। ७. शरीयत, तरीकत, मारफ़त और हकीकत सूफी फ़कीरों के चार दरजे अथता अवस्थाएं हैं। यहां गुरु साहिब संकेत कर रहे हैं कि अपने अंतर में हो रहे शब्द की कमाई करना ही सच्ची शरीयत है, मन के द्वारा सांसारिक वस्तुओं, आसा-मनसा का त्याग सच्ची तरीकत है, मन अथवा नफ़स को वश में करना सच्ची मारफत है और परमात्मा के साथ मिलाप करके जनम-मरण के चक्कर के मुक्त हो जाना सच्ची मुक्ति है। ८. दिल के अंतर ही परमात्मा की खोज करना कुरान-शरीफ़ का और चारों कतेबों का सच्चा पाठ है। ९. दस इन्द्रियों रूपी स्त्रियों को कुमार्ग पर जाने से रोको, अर्थात् पाँच स्थूल एवं पाँच सूक्ष्म इन दस इन्द्रियों को वश में करो। १०. काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार को सब्र, सन्तोष आदि गुणों द्वारा वश में कर लो ताकि मालिक की दरगाह में स्वीकार्य बन सको। ११. दया का मक्का बनाओ एवं नम्रता का रोज़ा रखो। १२ परि अर्थात् सतगुरु के वचनों को मानना तथा उन पर अमल करना सच्चा बहिश्त प्राप्त करने के समान है। १३. अंतर में परमात्मा के नूर एवं सुगन्ध की प्राप्ति स्वर्ग की अप्सराएं मिलने के समान हैं और अपने अन्दर मुकामे-अल्लाह (सहस्र-दल-कमल) रूपी रूहानी मंडलों पर पहुंचना वास्तिविक बन्दगी है। १४. जो शब्द या कलमा-रूपी सत्य की कमाई करता है, वह सच्चा काज़ी है, जो दिल की सफाई करता है, वह सच्चा हाजी है। १५. जो मन रूपी शैतान को मारता है, वह सच्चा मुल्ला है और जो परमात्मा की बन्दगी को अपना आधार बना ले, वह सच्चा फकीर या दरवेश है।

सभे वखत सभे करि वेला ॥ खालकु यादि दिलै महि मउला१ ॥
तसबी यादि करहु दस मरदनु सुंनति सीलु बंधानि बरा२ ॥७॥
दिल महि जानहु सभ फिलहाला ॥ खिलखाना बिरादर हमू जंजाला३ ॥
मीर मलक उमरे फानाइग्रा एक मुकाम खुदाइ दरा४ ॥८॥
अवलि सिफति दूजी साबूरी ॥ तीजै हलेमी चउथै खैरी ॥
पंजवै पंजे इकतु मुकामै एहि पंजि वखत तेरे अपरपरा५ ॥९॥
सगली जानि करहु मउदीफा ॥ बद अमल छोडि करहु हथि कूजा६ ॥
खुदाइ एकु बुझि देवहु बांगां बुरगू बरखुरदार खरा७ ॥१०॥
हकु हलालु बखोरहु खाणा ॥ दिल दरीआउ धोवहु मैलाणा८ ॥
पीरु पछाणै भिसती सोई अजराईलु न दोज ठरा९ ॥११॥
काइआ किरदार अउरत यकीना ॥ रंग तमासे माणि हकीना१० ॥
नापाक पाकु करि हदूरि हदीसा साबत सूरति दसतार सिरा११ ॥१२॥
मुसलमाणु मोम दिलि होवै ॥ अंतर की मलु दिल ते धोवै ॥
दुनीआ रंग न आवै नेड़ै जिउ कुसम पाटु घिउ पाकु हरा१२ ॥१३॥

---

१. केवल पाँच बार नियमित समय पर नमाज़ ही न पढ़ो बल्कि हर घड़ी, प्रत्येक क्षण उस खुदा को याद रखो। २. परमात्मा की याद सच्ची तसबीह (माला) है; पाँच प्राणी एवं पांच उप-प्राणों (दस) को वश में करके परमात्मा की याद में लीन रहना ही सच्ची माला फेरना है; तथा शील और संयम के नियमों में रहना ही फकीरों की श्रेष्ठ सुन्नत है। ३. दिल में समझ लेना चाहिए कि सभी वस्तुएं, कुल घरबार, भाई-बंद नाशवान हैं और एक जंजाल (बन्धन) हैं। ४. सिवाय खुदा के दरवार के सब कुछ—धनी, बादशाह आदि नश्वर हैं। ५. शरीयत वाले पाँच समय नमाज़ पढ़ते हैं। गुरु साहिब फ़रमाते हैं कि सुमिरन (जिक्र या स्तुति) पहली नमाज़ है; सबर, सन्तोष दूसरी नमाज़ है; नम्रता तीसरी; खैर अथवा दान देना चौथी तथा देह के अन्दर हो रहे पाँच शब्दों को एक कर लेना अर्थात् सचखण्ड पहुँच जाना पाँचवी नमाज़ है। ये अद्भुत एवं अपरम्पार नमाज़ें हैं। ६. नियमानुसार भजन करो तथा कुकर्मों का त्याग रूपी वज़ू (नमाज़ पढ़ने से पहले हाथ पांव साफ करना) करने का लोटा हाथ में लो। ७. जो व्यक्ति आंतरिक मुकामे-हक से आने वाली शब्द-रूपी आवाज़ के साथ एकाकार हो जाए, वही सच्चा बरखुरदार है। ८. हक-हलाल की (नेक) कमाई द्वारा अपनी आजीविका कमाओ, अन्तर में शब्द का स्नान करके (दसवें द्वार के अमृतसर, मानसरोवर अथवा हौज़े-कौसर में स्नान करने की ओर संकेत है) पवित्र हो जाओ। ९. जिसको पूर्ण गुरु मिल जाएगा, वह बहिश्त (अर्थात् सच्चखण्ड) में जाएगा, उसको अजराइल (यमदूत) नर्क में नहीं ले जा सकेगा। १०. उच्च आचरण एवं विश्वास को धारण करना, कर्मों तथा सांसारिक रंग-तमाशों को हीन समझना। ११. मलिन मन को साफ करके खुदा के हज़ूर की हदीस (पैगम्बर साहिब के कलाम अथवा उपदेश पर चलने की रहिनी का धर्म ग्रन्थ बनाओ और यही दस्तार सिर पर सजाकर मान-सम्मान के साथ खुदा की दरगाह का मार्ग अपनाओ। १२. अभ्यासी को कोमल चित धारण करना चाहिए तथा हृदय को आन्तरिक मलों से रहित करना चाहिए। जिस प्रकार पुष्प, रेशम, घृत और मृग के चाम से छूत नहीं आती, उसी प्रकार हृदय निर्मल होना चाहिए।

जा कउ मिहर मिहर मिहरवाना ।। सोई मरदु मरदु मरदाना ।।
सोई सेखु मसाइकु हाजी सो बंदा जिसु नजरि नरा[1] ।।१४।।
कुदरति कादर करण करीमा ।। सिफति मुहबति अथाह रहीमा ।।
हकु हुकमु सचु खुदाइआ बुझि नानक बंदि खलास तरा[2] ।।१५।।३।।१२।।

राग मारू सोलहे महला १ ।।

असुर सघारण[3] रामु हमारा ।। घटि घटि रमईआ रामु पिआरा ।।
नाले अलखु न लखीऐ मूले गुरमुखि लिखु वीचारा हे ।।१।।
गुरमुखि साधू सरणि तुमारी ।। करि किरपा प्रभि पारि उतारी ।।
अगनि पाणी सागरु अति गहरा गुरु सतिगुरु पारि उतारा हे ।।२।।
मनमुख अंधुले सोझी नाही ।। आवहि जाहि मरहि मरि जाही ।।
पूरबि लिखिआ लेखु न मिटई जम दरि अंधु खुआरा हे ।।३।।
इकि आवहि जावहि घरि वासु न पावहि ।। किरत के बाधे पाप कमावहि ।।
अंधुले सोझी बूझ न काई लोभु बुरा अहँकारा हे ।।४।।
पिर बिनु किआ तिसु धन सीगारा ।। परपिर राती खसमु विसारा ।।
जिउ बेसुआ पूत बापु को कहीऐ तिउ फोकट कार विकारा हे ।।५।।
प्रेत पिंजर महि दूख घनेरे ।। नरकि पचहि अगिआन अंधेरे ।।
धरमराइ की बाकी लीजै जिनि हरि का नामु विसारा हे ।।६।।
सूरजु तपै अगनि बिखु झाला ।। अपतु पसू मनमुख बेताला ।।
आसा मनसा कूड़ु कमावहि रोगु बुरा बुरिआरा हे ।।७।।
मसतकि भारु कलर सिरि भारा ।। किउकरि भवजलु लंघसि पारा ।।
सतिगुरु बोहिथु आदि जुगादी रामनामि निसतारा हे ।।८।।
पुत्र कलत्र जगि हेतु पिआरा ।। माइआ मोहु पसरिआ पासारा ।।
जम के फाहे सतिगुरि तोड़े गुरमुखि ततु बीचारा हे ।।९।।
कूड़ि मुठी चालै बहु राही ।। मनमुख दाझै पड़ि पड़ि भाही ।।
अंमृत नामु गुरू वड दाना नामु जपहु सुख सारा हे ।।१०।।

१. जिस व्यक्ति पर उस दयाल प्रभु की दया हो जाए, वही सूरमा संसार की बाजी जीत ले जाता है तथा जिस पर उस कुल मालिक की दया-मेहर हो जाती है, वही सच्चा शेख, सच्चा हाजी, सच्चा बन्दा (सेवक, दास) है। २. वह परमात्मा कर्त्तापुरुष है, सब कुछ उसकी रचना है। वह प्रेम-मूर्ति है, प्रेम उसका गुण अथवा स्वभाव है, वह रहम का समुद्र है, उसकी दया अथाह है। वह खुदा भी सत्य है, उसका हुकम भी सत्य है। उसका बोध प्राप्त करके ही मुक्ति प्राप्त हो सकती है। ३. राक्षसों का अथवा विकारों का नाश करने वाला।

सतिगुरु तुठा सचु दृड़ाए ॥ सभि दुख मेटें मारगि पाए ॥
कंडा पाए न गडई मूले जिसु सतिगुरु राखणहारा हे ॥११॥
खेहू खेह रलै तनु छीजै ॥ मनमुखु पाथरु सैलु न भीजै ॥
करण पलाव करे बहुतेरे नरकि सुरगि अवतारा हे ॥१२॥
माइआ बिखु भुइअंगम नाले ॥ इनि दुबिधा घर बहुते गाले ॥
सतिगुरू बाझहु प्रीति ना ऊपजै भगति रते पतीआरा हे ॥१३॥
साकत माइआ कउ बहु धावहि ॥ नामु विसारि कहा सुख पावहि ॥
तिहु गुण अंतिर खपहि खपावहि नाही पारि उतारा हे ॥१४॥
कूकर सूकर कहीअहि कूड़िआरा ॥भउकि मरहि भउ भउ भउहारा ॥
मनि तनि झूठे कूड़ु कमावहि दुरमति दरगह हारा हे ॥१५॥
सतिगुरू मिलै त मनूआ टेकै ॥ रामनामु दे सरणि परेकै ॥
हरि धनु नामु अमोलकु देवै हरि जसु दरगह पिआरा हे ॥१६॥
रामनामु साधू सरणाई ॥ सतिगुर बचनी गति मिति पाई ॥
नानक हरि जपि हरि मन मेरे हरि मेले मेलणहारा हे ॥१७॥३॥६॥

मारू मः ३ ॥

काइआ कंचनु सबदु वीचारा¹ ॥ तिथै हरि वसै जिसदा अंतु न पारावारा ॥
अनदिनु हरि सेविहु सची बाणी हरि जीउ सबदि मिलाइदा ॥१॥
हरि चेतहि तिन बलिहारै जाउ ॥ गुर कै सबदि तिन मेलि मिलाउ ॥
तिन की धूरि लाई मुखि मसतकि सतसंगति बहि गुण गाइदा ॥२॥
हरि के गुण गावा जे हरि प्रभ भावा ॥ अंतरि हरिनामु सबदि सुहावा ॥
गुरबाणी चहु कुंडी सुणीऐ साचै नामि समाइदा ॥३॥
सो जनु साचा जि अंतरु भाले ॥ गुर कै सबदि हरि नदरि निहाले ॥
गिआन अंजनु पाए गुर सबदी नदरी नदरि मिलाइदा ॥४॥
वडै भागि इहु सरीरु पाइआ ॥ माणस जनमि सबदि चितु लाइआ ॥
बिनु सबदै सभु अंध अंधेरा गुरमुखि किसहि बुझाइदा ॥५॥
इकि कितु आए जनमु गवाए ॥ मनमुख लागे दूजै भाए ॥
एह वेला फिरि हाथि न आवै पगि खिसिए पछुताइदा ॥६॥
गुर कै सबदि पवित्रु सरीरा ॥ तिसु विचि वसै सचु गुणी गहीरा ॥
सचो सचु वेखै सभ थाई सचु सुणि मंनि वसाइदा ॥७॥
हउमै गणत गुर सबदि निवारे ॥ हरि जीउ हिरदै रखहु उरधारे ॥

1. जिस काया में शब्द की कमाई हो रही है, वह काया सोने की है।

गुर कै सबदि सदा सालाहे मिलि साचे सुखु पाइदा ॥८॥
सो चेते जिसु आपि चेताए ॥ गुर कै सबदि वसै मनि आए ॥
आपे वेखै आपे बूझै आपै आपु समाइदा ॥६॥
जिनि मन विचि वथु पाई सोई जाणै ॥ गुर कै सबदे आपु पछाणै ॥
आपु पछाणै सोई जनु निरमलु बाणी सबदु सुणाइदा ॥१०॥
एह काइआ पवितु है सरीरु ॥ गुर सबदि चेतै गुणी गहीरु१ ॥
अनदिनु गुण गावै रंगि राता गुण कहि गुणी२ समाइदा ॥११॥
एहु सरीरु सभ मूलु है माइआ ॥ दूजै भाइ भरमि भुलाइआ ॥
हरि न चेतै सदा दुखु पाए बिनु हरि चेते दुखु पाइदा ॥१२॥
जि सतिगुरु सेवे सो परवाणु ॥ काइआ हंसु निरमलु दरि सचै जाणु ॥
हरि सेवे हरि मंनि वसाए सोहै हरि गुण गाइदा ॥१३॥
बिनु भागा गुरु सेविआ न जाइ ॥ मनमुख भूले मुए बिललाइ ॥
जिन कउ नदरि होवै गुर केरी हरि जीउ आपि मिलाइदा ॥१४॥
काइआ कोटु पके हटनाले ॥ गुरमुखि लेवै वसतु समाले ॥
हरि का नामु धिआइ दिनु राती ऊतम पदवी पाइदा ॥१५॥
आपे सचा है सुखदाता ॥ पूरे गुर कै सबदि पछाता ॥
नानक नामु सलाहे साचा पूरै भागि को पाइदा ॥१६॥७॥ २१

सिरीरागु मः ३ घरु १ असटपदीआ

१ ओ सतिगुर प्रसादि ॥

गुरमुखि कृपा करे भगति कीजै बिनु गुर भगति न होइ ॥
आपै आपु मिलाए बूझै ता निरमलु होवै कोइ ॥
हरि जीउ सचा सची बाणी सबदि मिलावा होइ ॥१॥
भाई रे भगति हीणु काहे जगि आइआ ॥
पूरे गुर की सेव न कीनी बिरथा जनमु गवाइआ ॥१॥रहाउ॥
आपे हरि जगजीवनु दाता आपे बखसि मिलाए ॥
जीअ जंत ए किआ वेचारे किआ को आखि सुणाए ॥
गुरमुखि आपे दे वडिआई आपे सेव कराए ॥२॥
देखि कुटंबु मोहि लोभाणा चलदिआ नालि न जाई ॥
सतिगुरु सेवि गुण निधानु पाइआ तिस की कीमं न पाई ॥

१. गुणों का भण्डार। २. परमात्मा।

प्रभु सखा हरि जीउ मेरा अंते होइ सखाई ॥३॥
पेईअड़ै जगजीवनु दाता मनमुखि पति गवाई ॥
बिनु सतिगुर को मगु न जाणै अंधे ठउर न काई ॥
हरि सुखदाता मनि नही वसिआ अंति गइआ पछुताई ॥४॥
पेईअड़ै जगजीवनु दाता गुरमति मंनि वसाइआ ॥
अनदिनु भगति करहि दिनु राती हउमै मोहु चुकाइआ ॥
जिसु सिउ राता तैसो होवै सचे सचि समाइआ ॥५॥
आपे नदरि करे भाउ लाए गुरसबदी बीचारि ॥
सतिगुरु सेविऐ सहजु ऊपजै हउमै त्रिसना मारि ॥
हरि गुणदाता सद मनि वसै सचु रखिआ उरधारि ॥६॥
प्रभु मेरा सदा निरमला मनि निरमलि पाइआ जाइ ॥
नामु निधानु हरि मनि वसै हउमै दुखु सभु जाइ ॥
सतिगुरि सबदु सुणाइआ हउ सद बलिहारै जाउ ॥७॥
आपणै मनि चिति कहै कहाए बिनु गुर आपु न जाई ॥
हरि जीउ भगति वछलु सुखदाता करि किरपा मंनि वसाई ॥
नानक सोभा सुरति देइ प्रभु आपे गुरमुखि दे वडिआई ॥८॥१॥१८॥

गउड़ी की वार मः ४ ॥

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए सु भलके उठि हरिनामु धिआवै ॥
उदमु करे भलके परभाती इसनानु करे अंमृतसरि नावै ॥
उपदेसि गुरू हरि हरि जपु जापै सभि किलविख पाप दोख लहि जावै ॥
फिरि चड़ै दिवसु गुरबाणी गावै बहदिआ उठदिआ हरिनामु धिआवै ॥
जो सासि गिरासि धिआए मेरा हरि हरि सो गुरसिखु गुरू मनि भावै ॥
जिसनो दइआलु होवै मेरा सुआमी तिसु गुरसिख गुरू उपदेसु सुणावै ॥
जन नानकु धूड़ि मंगै तिसु गुरसिख की जो आपि जपै अवरह नामु जपावै ॥१॥

भैरउ बाणी भगता की ॥ कबीर जीउ घरु१

੧ ओ सतिगुर प्रसादि

गुर सेवा ते भगति कमाई ॥ तब इह मानस देही पाई ॥
इस देही कउ सिमरहि देव ॥ सो देही भजु हरि की सेव ॥१॥
भजहु गोबिंद भूलि मत जाहु ॥ मानस जनम का एही लाहु ॥१॥रहाउ॥

जब लगु जरा रोगु नही आइआ ।। जब लग कालि ग्रसी नही काइआ ।।
जब लगु बिकल भई नही बानी ।। भज लेहि रे मन सारिगपानी[1] ।।२।।
अब न भजसि भजसि कब भाई ।। आवै अंतु न भजिआ जाई ।।
जो किछु करहि सोई अब सारु ।। फिरि पछुताहु न पावहु पारु ।।३।।
सो सेवकु जो लाइआ सेव ।। तिन ही पाए निरंजन देव ।।
गुर मिलि ता के खुल्हे कपाट ।। बहुरि न आवै जोनी बाट ।।४।।
इही तेरा अउसरु इह तेरी बार ।। घट भीतरि तू देखु बिचारि ।।
कहत कबीरु जोति कै हारि ।। बहु बिधि कहिओ पुकारि पुकारि ।।५।।१।।६।।

आसा महला १ इकतुकी ।।

गुरू सेवे सो ठाकुर जानै ।। दूख मिटै सचु सबदि पछानै ।।
रामु जपहु मेरी सखी सखैनी ।। सतिगुरु सेवि देखहु प्रभु नैनी ।।१।।रहाउ।।
बंधन मात पिता संसारि ।। बंधन सुत कंनिआ अरु नारि[2] ।।२।।
बंधन करम धरम हउ कीआ ।। बंधन पुतु कलतु मनि बीआ ।।३।।
बंधन किरखी करहि किरसान ।। हउमै डंनु सहै राजा मंगै दान ।।४।।
बंधक सउदा अण वीचारी ।। तिपति नाही माइआ मोह पसारी ।।५।।
बंधन साह संचहि[3] धनु जाइ ।। बिनु हरि भगति न पवई थाइ ।।६।।
बंधन बेदु बादु अहंकार ।। बंधनि बिनसै मोह विकार ।।७।।
नानक राम नाम सरणाई ।। सतिगुरि राखे बंधु न पाई ।।८।।१०।।

बिलावलु मः ५।।

चरन भए संत बोहिथा[4] तरे सागरु जेत ।।
मारग पाए उदिआन[5] महि गुरि दसे भेत ।।१।।
हरि हरि हरि हरि हरि हरे हरि हरि हरि हेत ।।
ऊठत बैठत सोवते हरि हरि हरि चेत ।।१।।रहाउ।।
पंच चोर आगै भगे जब साध संगेत ।।
पूंजी साबतु घणो लाभु गृहि सोभा सेत ।।२।।
निहचल आसणु मिटी चिंत नाही डोलेत ।।
भरमु भुलावा मिटि गइआ प्रभ पेखत नेत[6] ।।३।।
गुण गभीर गुण नाइका गुण कहीअहि केत ।।
नानक पाइआ साध संगि हरि हरि अंम्रेत[7] ।।४।।६।।३६।।

१. सारिंग = पपीहा, जिस प्रकार पपीहा स्वांति बूंद के लिये पुकार करता है, इसी प्रकार प्रभु का जाप कर। २ स्त्री। ३. माया इकट्ठी करना। ४. जहाज। ५. उजाड़। ६. नेत्रों द्वारा प्रभु के दर्शन हो गए ७. अमृत।

सिरि रागु महला ३ ॥

जगि हउमै मैलु दुखु पाइआ मलु लागी दूजै भाइ ॥
मलु हउमै धोती किवै न उतरै जे सउ तीरथ नाइ ॥
बहु बिधि करम कमावदे दूणी मलु लागी आइ१ ॥
पड़िऐ मैलु न उतरै पूछहु गिआनीआ जाइ ॥१॥
मन मेरे गुर सरणि आवै ता निरमलु होइ ॥
मनमुख हरि हरि करि थके मैलु न सकी धोइ ॥१॥रहाउ॥
मनि मैलै भगति न होवई नामु न पाइआ जाइ ॥
मनमुख मैले मैले मुए जासनि पति गवाइ ॥
गुरपरसादि मन तसै मलु हउमै जाइ समाइ ॥
जिउ अंधेरै दीपकु बालीऐ तिउ गुर गिआन अगिआन तजाइ ॥
हम कीआ हम करहगे हम मूरख गावार ॥
करणैवाला विसरिआ दूजे भाइ पिआरु२ ॥
माइआ जेवडु दुखु नही सभि भवि थके संसारु ॥
गुरमती सुखु पाईऐ सचु नामु उरधारि ॥३॥
जिसनो मेले सो मिलै हउ तिस बलिहारै जाउ ॥
ए मनि भगती रतिआ सचु बाणी निज थाउ ॥
मनि रते जिहवा रती हरि गुण सचे गाउ ॥
नानक नामु न वीसरै सचे माहि समाउ ॥४॥३१॥६४॥

सूही महला १ सुचजी ॥

जा तू ता मै सभु को तू साहिबु मेरो रासि जीउ३ ॥
तुधु अंतरि हउ सुखि वसा तूं अंतरि साबासि जीउ४ ॥
भाणै तखति वडाईआ भाणै भीख उदासि जीउ५ ॥
भाणै थल सिरि सरु वहै कमलु फुलै आकासि जीउ६ ॥

१. जगत को हौमैं (अहं) का मल लगा हुआ है जो सैंकड़ों तीर्थों पर नहाने से भी नहीं उतरता। जितने अधिक धर्म किये जाते हैं, हौमैं का मल बढ़ता ही जाता है। २. जो लोग कहते हैं, हमने इस प्रकार किया है, हम इस प्रकार करेंगे, वे सभी मूर्ख हैं क्योंकि उन्होंने उस सच्चे कर्त्ता (परमेश्वर) को विसार कर अन्यत्र प्यार लगा लिया है। ३. अगर तू है तो मेरे लिये सब कुछ है, तू ही मेरी सच्ची सम्पत्ति है। ४. तू मेरे अंतर में रह और मैं तुझ में लीन रहूँ तभी मेरी बड़ाई है, मेरे लिये सच्चा सुख है। ५. तेरे भाणे अथवा हुकम से राज सिंहासन अथवा ऊँचे पद का सम्मान प्राप्त होता है, भाणे से ही भीख माँगनी पड़ती है। ६. भाणे द्वारा ही मरुस्थल में नदियां बहने लगती हैं तथा आकाश में फूल खिल जाते हैं।

भाणै भवजलु लंघीऐ भाणै मंझि भरीआसि जीउ[1] ॥
भाणै सो सहु रंगुला सिफति रता गुणतासि जीउ[2] ॥
भाणै सहु भीहावला हउ आवणि जाणि मुईआसि जीउ[3] ॥
तू सहु अगमु अतोलवा हउ कहि कहि ढहि पईआसि जीउ ॥
किआ मागउ किआ कहि सुणी मै दरसन भूख पिआसि जीउ ॥
गुर सबदी सहु पाइआ सचु नानक की अरदासि जीउ ॥२॥

गउड़ी बैरागणि मः ४ ॥

जिउ जननी सुतु जणि पालती राखै नदरि मझारि[4] ॥
अंतरि बाहरि मुखि दे गिरासु खिनु खिनु पोचारि[5] ॥
तिउ सतिगुरु गुरसिख राखता हरि प्रीति पिआरि ॥
मेरे राम हम बारिक हरि प्रभ के है इआणे ॥
धंनु धंनु गुरू गुरु सतिगुरु पाधा ॥
जिनि हरि उपदेसु दे कीए सिआणे ॥१॥रहाउ॥
जैसी गगनि फिरंती ऊडती कपरे बागे वाली ॥
ओह राखै चीतु पोछै बिचि बचरे नित हिरदै सारि समाली[6] ॥
तिउ सतिगुर सिख प्रीति हरि हरि की गुरु सिख रखै जीअ नाली॥२॥
जैसे काती तीस बतीस है विचि राखैं रसना मास रतु केरी ॥
कोई जाणहु मास काती कै किछु हाथि है सभ वसगति है हरि केरी ॥
तिउ संत जना की नर निंदा करहि हरि राखै पैज जन केरी ॥३॥
भाई मत कोई जाणहु किसी कै किछु हाथि है सभ करे कराइआ ॥
जरा मरा तापु सिरति सापु सभु हरि कै वसि है[7]
कोई लागि ना सकै बिनु हरि का लाइआ ॥
ऐसा हरिनामु मनि चिति निति धिआवहु
जन नानक जो अंती अउसरि लए छडाइआ ॥४॥७॥१३॥५१॥

१. भाणे द्वारा ही संसार रूपी सागर को पार किया जा सकता है तथा भाणे द्वारा ही लोग इसमें डूब जाते हैं। २. भाणे द्वारा ही प्रभु सुन्दर एवं गुणों का भंडार लगता है। ३. भाणे द्वारा ही प्रभु भयदायी लगने लगता है। भाणे द्वारा ही जीव आवागमन में फँसा रहता है। ४. जिस प्रकार माता पुत्र को जन्म देकर उसका लालन-पालन करती है तथा उसे सदा अपनी दृष्टि में रखती है। ५. अन्दर-बाहर जाती हुई उसे ग्रास (भोजन, दूध आदि) देती है तथा प्यार के साथ पुचकारती तथा संवारती है। ६. श्वेत परों वाली कूंज आकाश में उड़ती फिरती है, परन्तु अपना ध्यान पीछे दूर छोड़कर आये बच्चों में रखती है। ७. जिस प्रकार तीस बत्तीस दाँतों की कैंची के बीच में मांस की बनी जिह्वा सलामत रहती है। ८. बुढ़ापा (जरा), मृत्यु, सिर-पीड़ा, तापादि हरि के वश में हैं।

सोरठि महला १ ॥

जिसु जल निधि कारणि तुम जगि आए सो अंमृतु गुर पाही जीउ[1] ॥
छोडहु वेसु भेख चतुराई दुबिधा इहु फलु नाही जीउ ॥१॥
मन रे थिरु रहु मतु कत जाही जीउ ॥
बाहिर ढूढत बहुत दुख पावहि घर अंमृत घट माही जीउ ॥ रहाउ ॥
अवगुण छोडि गुणा कउ धावहु करि अवगुंण पछुताही जीउ ॥
सर[1] अपसर की सार न जाणहि फिरि फिरि कीच बुडाही जीउ ॥२।
अंतरि मैलु लोभ बहु झूठे बाहरि नावहु काही जीउ ॥
निरमल नामु जपहु सद गुरमुखि अंतर की गति ताही जीउ ॥३॥
परहरि लोभु निंदा कूड़ु तिआगहु सचु गुर बचनी फलु पाही जीउ ॥
जिउ भावै तिउ राखहु हरि जीउ जन नानक सबदि सलाही जीउ ॥४॥६॥

मारू मः ३ ॥

जिस नो प्रेमु मंनि वसाए ॥ साचै सबदि सहजि सुभाए ॥
एहा वेदन सोई जाणै अवरु कि जाणै कारी जीउ ॥१॥
आपे मेले आपि मिलाए ॥ आपणा पिआरु आपे लाए ॥
प्रेम की सार सोई जाणै जिस नो नदरि तुमारी जीउ ॥ रहाउ॥
दिब दृसटि जागै भरमु चुकाए ॥ गुर परसादि परम पदु पाए ॥
सो जोगी इह जुगति पछाणै गुर कै सबदि बीचारी जीउ ॥२॥
संजोगी धन पिर मेला होवै ॥ गुरमति विचहु दुरमति खोवै ॥
रंगि सिउ नित रलीआ माणै अपणे कंत पिआरी जीउ ॥३॥
सतिगुर बाझहु वैदु न कोई ॥ आपे आपि निरंजनु सोई ॥
सतिगुर मिलिऐ मरै मंदा होवै गिआन बीचारी जीउ ॥४॥
एहु सबदु सारु जिस नो लाए ॥ गुरमुखि तृसना भुख गवाए ॥
आपण लीआ किछू न पाईऐ करि किरपा कलधारी जीउ ॥५॥
अगम निगमु सतिगुरू दिखाइआ ॥ करि किरपा अपनै घरि आइआ ॥
अंजन माहि निरंजनु जाता जिन कउ नदरि तुमारी जीउ ॥६॥
गुरमुखि होवै सो ततु पाए ॥ आपणा आपु विचहु गवाए ॥
सतिगुर बाझहु सभु धंधु कमावै वेखहु मनि वीचारी जीउ ॥७॥

---

१. जिस नाम रूपी अमृत के खजाने की प्राप्ति के लिए तुम संसार में आये हो, वह नाम रूपी अमृत सतगुरु से प्राप्त होता है।

इक भ्रमि भुले फिरहि अंहकारी ॥ इकना गुरमुखि हउमै मारी ॥
सचै सबदि रते बैरागी होरि भरमि भुले गावारी जीउ ॥८॥
गुरमुखि जिनी नामु न पाइआ ॥ मनमुखि बिरथा जनमु गवाइआ ॥
अगै विणु नावै को बेली नाही बूझै गुर बीचारी जीउ ॥९॥
अंमृत नामु सदा सुखदाता ॥ गुरि पूरै जुग चारे जाता ॥
जिसु तू देवहि सोई पाए नानक ततु बीचारी जीउ ॥१०॥१॥

रागु गौंड चउपदे महला ४ घरु १ ॥

जे मनि चिति आस रखहि हरि ऊपरि ता मन चिंदे अनेक अनेक फल पाई ॥
हरि जाणै सभु किछु जो जीइ वरतै प्रभु घालिआ किसै का इकु तिलु न गवाई ॥
हरि तिसकी आस कीजै मन मेरे जो सभ महि सुआमी रहिआ समाइ ॥१॥
मेरे मन आसा करि जगदीस गुसाई ॥
जो बिनु हरि आस अवर काहू की कीजै सा निहफल आस सभ बिरथी जाई ॥ रहाउ॥
जो दीसै माइआ मोह कुटंबु सभु मत तिसकी आस लगि जनमु गवाई ॥
इन्ह कै किछु हाथि नही कहा करहि इहि बपुड़े इन का वाहिआ कछु ना वसाइ ॥
मेरे मन आस करि हरि प्रीतम अपुने की जो तुझु तारे तेरा कुटंबु सभु छडाई ॥२॥
जे किछु आस अवर करहि परमित्री मत तूं जाणहि तेरै कितै कंमि आई ॥
इह आस परमित्री भाउ दूजा है खिन महि झूठु बिनसि सभ जाई ॥
मेरे मन आसा करि हरि प्रीतम साचे की जो तेरा घालिआ सभु थाइ पाई ॥३॥
आसा मनसा सभ तेरी मेरे सुआमी जैसी तू आस करावहि तैसी को आस कराई ॥
किछु किसी कै हथि नाही मेरे सुआमी ऐसी मेरै सतिगुरि बूझ बुझाई ॥
जन नानक की आस तू जाणहि हरि दरसनु देखि हरि दरसनि तृपताई ॥४॥१॥

रामकली महला ४ ॥ घरु १ ॥

जे वडभाग होवहि वडभागी ता हरि हरिनामु धिआवै ॥
नामु जपत नामे सुखु पावै हरि नामे नामि समावै ॥१॥
गुरमुखि भगति करहु सद प्राणी ॥
हिरदै प्रगासु होवै लिव लागै गुरमति हरि हरि नामि समाणी ॥१॥रहाउ॥
हीरा रतन जवेहर माणक बहु सागर भरपूरु कीआ ॥
जिसु वडभागु होवै वड मसतकि तिनि गुरमति कढि कढि लीआ ॥२॥
रतनु जवेहरु लालु हरिनामा गुरि काढि काढि दिखलाइआ ॥
भागहीण१ मनमुखि नही लीआ तृण ओल्है लाखु छपाइआ ॥३॥

१. वह लाखों की सम्पत्ति हमारे शरीर में मौजूद है, जैसे तिनके को ओट में लाखों का धन छिपा हो, ... भाग्यहीन मनमुखों को यह सम्पत्ति नहीं मिलती।

मसतकि भागु होवै धुरु लिखिआ ता सतगुरु सेवा लाए ।।
नानक रतन जवेहर पावै धनु धनु गुरमति हरि पाए ।।४।।१।।

सूही मः ३ ।।

दुनीआ न सालाहि जो मरि वंञसी ।।
लोका न सालाहि जो मरि खाकु थीई ।।१।।
वाहु मेरे साहिबा वाहु ।।
गुरमुखि सदा सलाहीऐ सचा वेपरवाहु ।।१।। रहाउ ।।
दुनीआ केरी दोसती मनमुख दझि मरंनि ।।
जमपुरि बधे मारीअहि वेला न लाहंनि ।।२।।
गुरमुखि जनमु सकारथा सचै सबदि लगंनि ।।
आतम रामु प्रगासिआ सहजे सुखि रहंनि ।।३।।
गुर का सबदु विसारिआ दूजै भाइ रचंनि ।।
तिसना भुख न उतरै अनदिनु जलत फिरंनि ।।४।।
दुसटा नालि दोसती नालि संता वैरु करंनि ।।
आपि डुबे कुटंब सिउ सगले कुल डोबंनि ।।५।।
निंदा भली किसै की नाही मनमुख मुगध करंनि ।।
मुह काले तिन निंदका नरके घोरि पवंनि ।।६।।
ए मन जैसा सेवहि तैसा होवहि तेहे करम कमाइ ।।
आपि बीजि आपे ही खावणा कहना किछु न जाइ ।।७।।
महापुरखा का बोलणा होवै कितै परथाइ ।।
ओइ अंमृत भरे भरपूर हहि ओना तिलु न तमाइ ।।८।।
गुणकारी गुण संघरै अवरा उपदेसेनि ।।
से वडभागी जि ओना मिलि रहे अनदिनु नामु लएनि ।।९।।
देसी रिजकु संबाहि जिनि उपाई मेदनी ।।
एको है दातारु सचा आपि धणी ।।१०।।
सो सचु तेरै नालि है गुरमुखि नदरि निहालि ।।
आपे बखसे मेलि लए सो प्रभु सदा समालि ।।११।।
मनु मैला सचु निरमला किउकरि मिलिआ जाइ ।।
प्रभु मेले ता मिल रहै हउमै सबदि जलाइ ।।१२।।
सो सहु सचा वीसरै धृगु जीवणु संसारि ।।
नदरि करे न वीसरै गुरमती वीचारि ।।१३।।

सतिगुरु मेले ता मिलि रहा साचु रखा उरधारि ॥
मिलिआ होइ न वीछुड़ै गुर कै हेति पिआरि ॥१४॥
पिरु सलाही आपणा गुर कै संबदि वीचारि ॥
मिलि प्रीतम सुखु पाइआ सोभावंती नारि ॥१५॥
मनमुख मनु न भिजई अति मैले चिति कठोर ॥
सपै दुधु पीआईऐ अंदरि विसु निकोर ॥१६॥
आपि करे किसु आखीऐ आपे बखसणहारु ॥
गुर सबदी मैलु उतरै ता सचु बणिआ सीगारु ॥१७॥
सचा साहु सचे वणजारे ओथै कूड़े ना टिकंनि ॥
ओन्हा सचु न भावई दुख ही माहि पचंनि ॥१८॥
हउमै मैला जगु फिरै मरि जंमै वारो वार ॥
पइऐ किरति कमावणा कोइ न मेटणहार ॥१६॥
संता संगति मिलि रहै ता सचि लगै पिआरु ॥
सचु सलाही सचु मनि दरि सचै सचिआरु ॥२०॥
गुर पूरे पूरी मति है अहिनिसि नामु धिआइ ॥
हउमै मेरा वड रोगु है विचहु ठाकि रहाइ ॥२१॥
गुरु सालाही आपणा निवि निवि लागा पाइ ॥
तनु मनु सउपी आगै धरी विचहु आपु गवाइ ॥२२॥
खिंचो ताणि विगुचीऐ एकसु सिउ लिव लाइ ॥
हउमै मेरा छडि तू ता सचि रहै समाइ ॥२३॥
सतिगुर नो मिले सि भाइरा सचै सबदि लगंनि ॥
सचि मिले से न विछुड़हि दरि सचै दिसंनि ॥२४॥
से भाई से सजणा जो सचा सेवंनि ॥
अवगण विकणि पल्हरनि गुण की साझ करंनि ॥२५॥
गुण की साझ सुखु ऊपजै सची भगति करेनि ॥
सचु वणंजहि गुर सबद सिउ लाहा नामु लऐनि ॥२६॥
सुइना रुपा पाप करि करि संचीऐ चलै न चलदिआ नालि ॥
विणु नावै नालि न चलसी सभ मुठी जमकालि ॥२७॥
मन का तोसा हरिनामु है हिरदै रखहु सम्हालि ॥
ऐहु खरचु अखुटु है गुरमुखि निबहै नालि ॥२८॥
ऐ मन मूलहु भुलिआ जासहि पति गवाइ ॥
इहु जगतु मोहि दूजै विआपिआ गुरमती सचु धिआइ ॥२६॥

हरि की कीमति ना पवै हरि जसु लिखणु न जाइ ॥
गुर कै सबदि मनु तनु रपै हरि सिउ रहै समाइ ॥३०॥
सो सहु मेरा रंगुला रंगे सहजि सुभाइ ॥
कामणि रंगु ता चड़ै जा पिर कै अंकि समाइ ॥३१॥
चिरी विछुंने भी मिलनि जो सतिगुरु सेवंनि ॥
अंतरि नवनिधि नामु है
खानि खरचनि न निखुटई हरि गुण सहजि रवंनि ॥३२॥
ना ओइ जनमहि ना मरहि ना ओइ दुख सहंनि ॥
गुरि राखे सो उबरे हरि सिउ केल करंनि ॥३३॥
सजण मिले न विछुड़हि जि अनदिनु मिले रहंनि ॥
इसु जग महि विरले जाणीअहि नानक सचु लहंनि ॥३४॥१॥३॥

प्रभाती असटपदीआ महला १ ॥

दुबिधा बउरी मनु बउराइआ ॥ झूठै लालचि जनमु गवाइआ ॥
लपटि रही फुनि बंधु न पाइआ ॥ सतिगुरि राखे नामु दृड़ाइआ ॥१॥
ना मनु मरै न माइआ मरै ॥
जिनि किछु कीआ सोई जाणै सबदु वीचारि भउ सागरु तरै ॥१॥रहाउ॥
माइआ संचि राजे अहंकारी ॥ माइआ साथि न चलै पिआरी ॥
माइआ ममता है बहु रंगी ॥ बिनु नावै को साथि न संगी ॥२॥
जिउ मनु देखहि पर मनु तैसा ॥ जैसी मनसा तैसी दसा ॥
जैसा करमु तैसी लिव लावै ॥ सतिगुरु पूछि सहज धरु पावै ॥३॥
रागि नादि मनु दूजै भाइ ॥ अंतरि कपटु महा दुखु पाइ ॥
सतिगुरु भेटै सोझी पाइ ॥ सचै नामि रहै लिव लाइ ॥४॥
सचै सबदि सचु कमावै ॥ सच्ची बाणी हरि गुण गावै ॥
निज घरि वासु अमर पदु पावै ॥ ता दरि साचै सोभा पावै ॥५॥
गुर सेवा बिनु भगति न होई ॥ अनेक जतन करै जे कोई ॥
हउमै मेरा सबदे खोई ॥ निरमल नामु वसै मनि सोई ॥६॥
इसु जग महि सबदु करणी है सारु ॥ बिनु सबदै होरु मोहु गुबारु ॥
सबदे नामु रखै उरिधारि ॥ सबदे गति मति मोख दुआरु ॥७॥
अवरु नाही करि देखणहारो ॥ साचा आपि अनूपु अपारो ॥
राम नाम ऊतम गति होई ॥ नानक खोजि लहै जनु कोई ॥८॥१॥

मलार महला १ असटपदीआ घरु १ ॥

१ ओ सतिगुर प्रसादि ॥

चकवी नैन नींद नहि चाहै बिनु पिर नींद न पाई ॥
सूरु चरै प्रिउ देखै नैनी निवि निवि लागै पांई ॥ १॥
पिर भावै प्रेमु सखाई ॥
तिसु बिनु घड़ी नही जगि जीवा ऐसी पिआस तिसाई ॥ १॥ रहाउ ॥
सरवरि कमलु किरणि आकासी बिगसै सहजि सुभाई ॥
प्रीतम प्रीति बनी अभि ऐसी जोती जोति मिलाई ॥ २॥
चातृकु जल बिनु प्रिउ टेरै[1] बिलप करै[2] बिललाई ॥
घनहर घोर दसौ दिसि बरसै बिनु जल पिआस न जाई ॥ ३॥
मीन निवास उपजै जल ही ते सुख दुख पुरबि कमाई ॥
खिनु तिलु रहि न सकै पलु जल बिनु मरनु जीवनु तिसु तांई ॥ ४॥
धन[3] वांढी पिरु देस निवासि सचे गुर पहि सबदु पठांई ॥
गुण संग्रहि प्रभु रिदै निवासि भगती रती हरखाई ॥ ५॥
प्रिउ प्रिउ करै सभै है जेती गुर भावै प्रिउ पाईं ॥
प्रिउ नाले सद ही सचि संगे नदरी मेलि मिलाई ॥ ६॥
सभ महि जीउ जीउ है सोई घटि घटि रहिआ समाई ॥
गुर परसादि घर ही परगासिआ सहजे सहजि समाई ॥ ७॥
अपना काजु सवारहु आपे सुखदाते गोसांई ॥
गुरपरसादि घर ही पिरु पाइआ तउ नानक तपति बुझाई ॥८॥

रागु मारू मः ३ ॥

नदरी भगता लैहु मिलाए ॥भगत सलाहनि सदा लिव लाए ॥
तउ सरणाई उबरहि करते आपे मेलि मिलाइआ ॥ १॥
पूरै सबदि भगति सुहाई ॥ अंतरि सुखु तेरै मनि भाई ॥
मनु तनु सची भगती राता सचे सिउ चितु लाइआ ॥ २॥
हउमै विचि सद जलै सरीरा ॥ करमु होवै भेटे गुरु पूरा ॥
अंतरि अगिआनु सबदि बुझाए सतिगुर ते सुखु पाइआ ॥ ३॥
मनमुखु अंधा अंधु कमाए ॥ बहु संकट जोनी भरमाए ॥
जम का जेवड़ा कदे न काटै अंते बहु दुखु पाइआ ॥ ४॥

१. पुकारता है। २. विलाप करता है। ३. स्त्री विदेश गई।

आवण जाणा सबदि निवारे ॥ सचु नामु रखै उरधारे ॥
गुर कै सबदि मरै मनु मारे हउमै जाइ समाइआ ॥ ५॥
आवण जाणै परज विगोई ॥ बिनु सतिगुर थिरु कोइ न होई ॥
अंतरि जोति सबदि सुखु वसिआ जोती जोति मिलाइआ ॥ ६॥
पंच दूत चितवहि विकारा ॥ माइआ मोह का एहु पसारा ॥
सतिगुरु सेवे ता मुकतु होवै पंच दूत वसि आइआ ॥ ७॥
बाझु गुरू है मोहु गुबारा ॥ फिरि फिरि डुबै वारोवारा ॥
सतिगुर भेटे सचु दृड़ाए सचु नामु मनि भाइआ ॥ ८॥
साचा दरु साचा दरवारा ॥ सचे सेवहि सबदि पिआरा ॥
सची धुनि सचे गुण गावा सचे माहि समाइआ ॥ ६॥
घरै अंदरि को घरु पाए ॥ गुर कै सबदि सहजि सुभाए ॥
ओथै सोगु विजोगु न विआपै सहजे सहजि समाइआ ॥१०॥
दूजै भाइ दुसटा का वासा ॥ भउदे फिरहि बहु मोह पिआसा ॥
कुसंगति बहहि सदा दुखु पावहि दुखो दुखु कमाइआ ॥११॥
सतिगुर बाझहु संगति न होई ॥ बिनु सबदे पारु न पाए कोई ॥
सहजे गुण रवहि दिनु राती जोती जोति मिलाइआ ॥१२॥
काइआ बिरखु पंखी विचि वासा ॥ अंमृतु चुगहि गुर सबदि निवासा ॥
उडहि न मूले न आवहि न जाही निज घरि वासा पाइआ ॥१३॥
काइआ सोधहि सबदु वीचारहि ॥ मोह ठगउरी भरमु निवारहि ॥
आपे कृपा करे सुखुदाता आपे मेलि मिलाइआ ॥१४॥
सद ही नेड़ै दूरि न जाणहु ॥ गुर कै सबदि नजीकि पछाणहु ॥
बिगसै कमलु किरणि परगासै परगटु करि देखाइआ ॥१५॥
आपे करता सचा सोई ॥ आपे मारि जीवाले अवरु न कोई ॥
नानक नामु मिलै वडिआई आपु गवाइ सुखु पाइआ ॥१६॥२॥२४॥

रागु मारू महला १ ॥

ना भैणा भरजाईआ ना से ससुड़ीआह ॥
सचा साकु न तुटई गुरु मेले सहीआह ॥ १॥
बलिहारी गुर आपणे सद बलिहारै जाउ ॥
गुर बिनु एता भवि थकी गुर पिरु मेलिमु दितमु मिलाइ ॥ १॥रहाउ॥
फुफी नानी मासीआ देर जेठानड़ीआह ॥
आवनि वंञनि ना रहनि पूर भरे पहीआह ॥ २॥

मामे तै मामाणीआ भाइर बाप न माउ ॥
साथ लडे तिन नाठीआ भीड़ घणी दरीआउ ॥ ३॥
साचउ रंगि रंगावलो सखी हमारो कंतु ॥
सचि विछोड़ा ना थीऐ सो सहु रंगि रवंतु ॥ ४॥
सभे रुती चंगीआ जितु सचे सिउ नेहु ॥
सा धन कंतु पछाणिआ सुखि सुती निसि डेहु ॥ ५॥
पतणि कूके पातणी वंञहु ध्रुकि विलाड़ि ॥
पारि पवंदड़े डिठु मै सतिगुर बोहिथि चाड़ि ॥ ६॥
हिकनी लदिआ हिकि लदि गए हिकि भारे भरनालि ॥
जिनी सचु वणंजिआ से सचे प्रभ नालि ॥ ७॥
ना हम चंगे आखीअह बुरा न दिसै कोइ ॥
नानक हउमै मारीऐ सचे जेहड़ा सोइ ॥ ८॥२॥१०॥

रामकली महला ५ ॥

पंच सबद तह पूरन नाद ॥ अनहद बाजे अचरज बिसमाद ॥
केल करहि संत हरि लोग ॥ पारब्रहम पूरन निरजोग ॥१॥
सूख सहज आनंद भवन ॥
साध संगि बैसि गुण गावहि तह रोग सोग नही जनम मरन ॥१॥रहाउ॥
ऊहा सिमरहि केवल नामु ॥ बिरले पावहि ओहु बिस्रामु ॥
भोजनु भाउ कीरतन आधारु ॥ निहचल आसनु बे सुमारु ॥२॥
डिगि न डोलै कतहू न धावै ॥ गुर प्रसादि को इहु महलु पावै ॥
भ्रम भै मोह न माइआ जाल ॥ सुंन समाधि प्रभू किरपाल ॥३॥
ता का अंतु न पारावारु ॥ आपे गुपतु आपे पासारु ॥
जा कै अंतरि हरि हरि सुआदु ॥ कहनु न जाई नानक बिसमादु ॥४॥९॥२०॥

बिलावलु मः ५ ॥

पिंगलु[1] परबत पारि परे खल[2] चतुर बकीता ॥
अंधुले त्रिभवण सूझिआ गुर भेटि पुनीता ॥
महिमा साधू संग की सुनहु मेरे मीता ॥
मैलु खोई कोटि अघ[3] हरे निरमल भए चीता ॥१॥रहाउ॥
ऐसी भगति गोविंद की कीटि हसती[4] जीता ॥
जो जो कीनो आपनो तिसु अभै दानु दीता ॥२॥

१. लंगड़ा-लूला। २. मूर्ख। ३. पाप। ४. हाथी।

सिंघु बिलाई होइ गइओ तृणु मेरु[1] दिखीता ॥
स्रमु करते दम आढ कउ ते गनी धनीता[2] ॥३॥
कवन वडाई कहि सकउ बेअंत गुनीता ॥
करि किरपा मुहि नामु देहु नानक दरस रीता[3] ॥४॥७॥३७॥

बिलावलु महला ५ ॥

बिखै बनु फीका तिआगि री सखीए नामु महारसु पीओ ॥
बिनु रस चाखे बुढि गई सगली सुखी न होवत जीओ ॥
मानु महतु न सकति ही काई साधा दासी थीओ ॥
नानक से दरि सोभावंते जो प्रभि अपुनै कीओ ॥१॥
हरि चंदउरी[4] चित भ्रमु सखीए मृग तृसना द्रुम छाइआ[5] ॥
चंचलि संगि न चालती सखीए अंति तजि जावत माइआ ॥
रसि भोगण अति रूप रस माते इन संगि सूखु न पाइआ ॥
धंनि धंनि हरि साध जन सखीए नानक जिन्ही नामु धिआइआ ॥२॥
जाइ बसहु वडभागणी सखीए संता संगि समाईऐ ॥
तह दूख न भूख न रोगु बिआपै चरन कमल लिव लाईऐ ॥
तह जनम न मरणु न आवण जाणा निहचलु सरणी पाईऐ ॥
प्रेम बिछोहु न मोहु बिआपै नानक हरि एकु धिआईऐ ॥३॥
दृसटि धारि मनु बेधिआ पिआरे रतड़े सहजि सुभाए ॥
सेज सुहावी संगि मिलि प्रीतम अनद मंगल गुण गाए ॥
सखी सहेली राम रंगि राती मन तन इछ पुजाए ॥
नानक अचरजु अचरज सिउ मिलिआ कहणा कछू न जाए ॥४॥२॥५॥

रागु कानड़ा महला ५ ॥

बिसरि गई सभ ताति पराई ॥ जब ते साध संगति मोहि पाई ॥१॥रहाउ॥
ना को बैरी नही बिगाना सगल संगि हम कउ बनि आई ॥१॥
जो प्रभ कीनो सो भल मानिओ एह सुमति साधू ते पाई ॥२॥
सभ महि रवि रहिआ प्रभु एकै पेखि पेखि नानक बिगसाई ॥३॥८॥

---

१. सुमेर पर्वत। २. जो आधी दमड़ी के लिए कठोर परिश्रम करते फिरते थे, वे साहूकार अथवा धनाढ्य बन गये। ३. मैं दर्शनों से वंचित हूं, कृपा करके मुझे दर्शन दो। ४. मृगतृष्णा। ५. वृक्ष की छाया जो [illegible] रहती है।

आसा महला ५ दुपदे ॥

भई परापति मानुख देहुरीग्रा१ ॥
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीग्रा२ ॥
ग्रवरि काज तेरै कितै न काम ॥
मिलु साध संगति भजु केवल३ नाम ॥१॥
सरंजामि४ लागु भवजल तरन कै ॥
जनमु बृथा जात रंगि माइग्रा कै ॥१॥ रहाउ ॥
जपु तपु संजमु धरमु न कमाइग्रा ॥
सेवा साध न जानिग्रा हरि राइग्रा ॥
कहु नानक हम नीच करंमा ॥
सरणि परे की राखहु सरमा५ ॥२॥२९॥

रागु बिलावलु महला ५ ॥

भूले मारगु जिनहि बताइग्रा ॥ ऐसा गुरु वडभागी पाइग्रा ॥१॥
सिमरि मना रामनामु चितारे ॥ बसि रहे हिरदै गुर चरन पिग्रारे ॥१॥ रहाउ॥
कामि क्रोधि लोभि मोहि मनु लीना ॥ बंधन काटि मुकति गुरि कीना ॥२॥
दुख सुख करत जनमि फुनि मूग्रा ॥ चरन कमल गुरि ग्रास्रमु दीग्रा ॥३॥
ग्रगनि सागर बूडत संसारा ॥ नानक बाह पकरि सतिगुरि निसतारा ॥४॥३॥८॥

रागु सूही महला १ः कुचजी ॥

मंञु कुचजी ग्रंमावणि डोसड़े हउ किउ सहु रावणि जाउ जीउ ॥
इकदू इकि चड़ंदीग्रा कउणु जाणै मेरा नाउ जीउ६ ॥
जिन्ही सखी सहु राविग्रा से ग्रंबी छावड़ीएहि जीउ ॥
से गुण मंञु न ग्रावनी हउ कै जी दोस धरेउ जीउ७ ॥
किग्रा गुण तेरे विथरा हउ किग्रा किग्रा घिना तेरा नाउ जीउ८ ॥
इकतु टोलि न ग्रंबड़ा हउ सद कुरबाणै तेरै जाउ जीउ ॥

---

१. देह, शरीर। २. वारी, क्रम, समय। ३. सिर्फ, केवल। ४. उद्यम, बन्दोबस्त। ५. लज्जा। ६. मुझमें इतने अवगुण है कि वे मेरे अन्दर समाते भी नहीं हैं, फिर मैं अपने प्रियतम से किस प्रकार मिलाप प्राप्त कर सकती हूं ? प्रियतम के अन्य प्रेमी एक से एक बढ़कर हैं, मेरा तो कोई नाम भी नहीं जानता। ७. जिन्होंने अपने प्रियतम के साथ मिलाप किया, वे आम की छाया (सुख) का अनुभव करती है, परन्तु मुझ में वे गुण नहीं हैं। मैं किसे दोष दूं ? ८. मैं तेये गुणों का निस प्रकार बिस्तार करूं मुझे तो तेरा एक गुण भी वर्णन करना नहीं आता, मेरे प्रियतम।

सुइना रुपा रंगुला मोती तै माणिकु जीउ ॥
से वसतू सहि दितीआ मै तिन्ह सिउ लाइआ चितु जीउ ॥
मंदर मिटी संदड़े पथर कीते रासि जीउ१ ॥
हउ एनी टोली भुलीअसु तिसु कंत न बैठी पासि जीउ ॥
अंबरि कूंजा कुरलीआ बग बहिठे आइ जीउ ॥
सा धन चली साहुरै किआ मुहु देसी अगै जाइ जीउ२ ॥
सुती सुती झालु थीआ भुली वाटड़ीआसु जीउ३ ॥
तैं सह नालहु मुतीअसु दुखा कूं धरीआसु जीउ ॥
तुधु गुण मै सभि अवगणा इक नानक की अरदासि जीउ ॥
सभि राती सोहागणी मै डोहागणि काई राति जीउ४ ॥१॥

रागु मारू महला १ ॥

मनमुखु लहरि घरु तजि विगूचै अवरा के घर हेरै ॥
गृह धरमु गवाए सतिगुरु न भेटै दुरमति घूमन घेरै ॥
दिसंतरु भवै पाठ पड़ि थाका तृसना होइ वधेरै ॥
काची पिंडी सबदु न चीनै उदरु भरै जैसे ढोरै ॥१॥
बाबा ऐसी रवत रवै संनिआसी ॥
गुर कै सबदि एक लिव लागी तेरै नामि रते तृपतासी ॥१॥रहाउ॥
धोली गेरू रंगु चड़ाइआ वसत्र भेख भेखारी ॥
कापड़ फारि बनाई खिथा झोली माइआधारी ॥
घरि घरि मागै जगु परबोधै५ मनि अंधै पति हारी ॥
भरमि भुलाणा सबदु न चीनै जूऐ बाजी हारी ॥२॥
अंतरि अगनि न गुर बिनु बूझै बाहरि पूअर६ तापै ॥
गुर सेवा बिनु भगति न होवी किउकरि चीनसि आपै ॥
निंदा करि करि नरक निवासी अंतरि आतम जापै ॥
अठसठि तीरथ भरमि विगूचहि किउ मलु धोपै पापै ॥३॥
छाणी खाकु बिभूत चढ़ाई माइआ का मगु जोहै ॥
अंतरि बाहरि एकु न जाणै साचु कहे ते छोहै ॥

१. परमेश्वर ने मुझे जो धन-दौलत, हीरे जवाहरात आदि दिये थे, मैंने उन में अपना चित्त लगा लिया तथा मिट्टी के महलों से प्यार लगा लिया, परन्तु प्रियतम के पास न बैठी। २. बुढ़ापा आ गया है, अन्त समय नज़दीक आ गया है, अब मैं ससुराल में जा कर क्या मुंह दिखाऊंगी। ३. सोयी पड़ी को सवेरा हो गया, मार्ग भूल गई अर्थात् अचेतावस्था में ही सारा समय व्यर्थ गंवा दिया। ४. शेष सभी ने प्रियतम के साथ मिलाप कर लिया, परन्तु मैं अभागिन ही उस के प्रेम से वंचित रह गई। मेरी प्रार्थना है कि कभी मुझे भी उस के दर्शन हों। ५. संसार को उपदेश देता है। ६. धूनी।

पाठु पड़ै मुखि झूठो बोलै निगुरे की मति ओहै ॥
नामु न जपई किउ सुखु पावै बिनु नावै किउ सोहै ॥४॥
मूंडु मुडाइ जटा सिख बाधी मोनि रहै अभिमाना ॥
मनूआ डोलै दहदिस धावै बिनु रत आतम गिआना ॥
अंमृतु छोडि महा बिखु पीवै माइआ का देवाना ॥
किरतु न मिटई हुकमु न बूझै पसूआ माहि समाना ॥५॥
हाथि कमंडलु कापड़ीआ मनि तृसना उपजी भारी ॥
इसत्री तजि करि कामि विआपिआ चितु लाइआ पर नारी ॥
सिख करे करि सबदु न चीनै लंपटु है बाजारी ॥
अंतरि बिखु बाहरि निभराती ता जमु करे खुआरी ॥६॥
सो संनिआसी जो सतिगुर सेवै विचहु आपु गवाए ॥
छादन भोजन की आस न करई अचिंतु मिलै सो पाए ॥
बकै न बोलै खिमा धनु संग्रहै तामसु नामि जलाए ॥
धनु गिरही संनिआसी जोगी जि हरि चरणी चितु लाए ॥७॥
आस निरास रहै सनिआसी एकसु सिउ लिव लाए ॥
हरि रसु पीवै ता साति आवै निजघरि ताड़ी लाए ॥
मनूआ न डोलै गुरमुखि बूझै धावतु वरजि रहाए ॥
गृहु सरीरु गुरमती खोजे नामु पदारथु पाए ॥८॥
ब्रहमा बिसनु महेसु सरेसट नामि रते वीचारी ॥
खाणी बाणी गगन पताली जंता जोति तुमारी ॥
सभि सुख मुकति नाम धुनि बाणी सचु नामु उरधारी ॥
नाम बिना नही छूटसि नानक साची तरु तू तारी ॥९॥७॥

आसा महला १ ॥

मनु मैगलु साकतु देवाना ॥ बनखंडि माइआ मोहि हैराना ॥
इत उत जाहि काल के चापे ॥ गुरमुखि खोजि लहै घरु आपे ॥१॥
बिनु गुर सबदै मनु नही ठउरा ॥
सिमरहु राम नामु अति निरमलु अवर तिआगहु हउमै कउरा ॥१॥रहाउ॥
इहु मनु मुगधु कहहु किउ रहसी ॥ बिनु समझे जम का दुख सहसी ॥
आपे बखसे सतिगुरु मेलै ॥ कालु कंटकु मारे सचु पेलै ॥२॥
इहु मनु करमा इहु मनु धरमा ॥ इहु मनु पंच ततु ते जनमा ॥
साकतु लोभी इहु मनु मूड़ा ॥ गुरमुखि नाम जपै मनु रूड़ा ॥३॥

गुरमुखि मनु असथाने सोई ॥ गुरमुखि त्रिभवणि सोझी होई ॥
इहु मनु जोगी भोगी तपु तापै ॥ गुरमुखि चीन्है हरि प्रभु आपै ॥४॥
मनु बैरागी हउमै तिआगी ॥ घटि घटि मनसा दुबिधा लागी ॥
राम रसाइणु गुरमुखि चाखै ॥ दरि घरि महली हरि पति राखै ॥५॥
इहु मनु राजा सूर संग्रामि ॥ इहु मनु निरभउ गुरमुखि नामि ॥
मारे पंच अपुनै वसि कीए ॥ हउमै ग्रासि इकतु थाइ कीए ॥६॥
गुरमुखि राग सुआद अन तिआगे ॥ गुरमुखि इहु मनु भगती जागे ॥
अनहद सुणि मानिआ सबदु वीचारी ॥ आतमु चीन्हि भए निरंकारी ॥७॥
इहु मनु निरमलु दरि घरि सोई ॥ गुरमुखि भगति भाउ धुनि होई ॥
अहिनिस हरि जसु गुर परसादि ॥ घटि घटि सो प्रभु आदि जुगादि ॥८॥
राम रसाइणि इहु मनु माता ॥ सरब रसाइणु गुरमुखि जाता ॥
भगति हेतु गुर चरण निवासा ॥ नानक हरि जन के दासनि दासा ॥९॥८॥

माझ महला ५ चउपदे घरु १ ॥

मेरा मनु लोचै[1] गुर दरसन ताई ॥
बिलप[2] करे चात्रिक[3] की निआई ॥
तृखा न उतरै सांति न आवै बिनु दरसन संत पिआरे जीउ ॥१॥
हउ घोली[4] जीउ घोलि घुमाई गुरु दरसन संत पिआरे जीउ ॥१॥रहाउ॥
तेरा मुखु सुहावा जीउ सहज धुनि बाणी ॥
चिरु होआ देखे सारिंगपाणी[5] ॥
धंनु सु देसु जहा तूं वसिआ मेरे सजण मीत मुरारे जीउ ॥२॥
हउ घोलि हउ घोलि घुमाई गुर सजण मीत मुरारे जीउ ॥१॥रहाउ॥
इक घड़ी न मिलते ता कलिजुगु होता ॥
हुणि कदि मिलीऐ प्रिअ तुधु भगवंता ॥
मोहि रैणि न विहावै नीद न आवै बिनु देखे गुर दरबारे जीउ ॥३॥
हउ घोली जीउ घोलि घुमाई तिसु सचे गुर दरबारे जीउ ॥१॥रहाउ॥
भागु होआ गुरि संतु मिलाइआ ॥
प्रभु अबिनासी घर महि पाइआ ॥
सेव करी पलु चसा[6] न विछुड़ा जन नानक दास तुमारे जीउ ॥४॥
हउ घोली जीउ घोलि घुमाई जन नानक दास तुमारे जीउ ॥रहाउ॥१॥८॥

---

१. चाहता है । २. विलाप । ३. पपीहा । ४. बलिहार । ५. परमात्मा । ६. क्षण भर भी ।

वडहंसु महला ५ घरु २

१ ओं सतिगुर प्रसादि ॥

मेरै अंतरि लोचा मिलण की पिआरे हउ किउ पाई गुर पूरे ॥
जे सउ खेल खेलाईऐ बालकु रहि न सकै बिनु खीरे ॥
मेरै अंतरि भुख न उतरै अंमाली[1] जे सउ भोजन मै नीरे ॥
मेरै मनि तनि प्रेमु पिरंम का बिनु दरसन किउ मनु धीरे ॥१॥
सुणि सजण मेरे प्रीतम भाई मै मेलिहु मित्रु सुखादाता ॥
ओहु जीअ की मेरी सभ बेदन[2] जाणै नित सुणावै हरि कीआ बाता ॥
हउ इकु खिनु तिसु बिनु रहि न सका जिउ चातृकु जल कउ बिललाता ॥
हउ किआ गुण तेरे सारि समाली मै निरगुण कउ रखि लेता ॥२॥
हउ भई उडीणी[3] कंत कउ अंमाली सो पिरु कदि नैणी देखा ॥
सभि रस भोगण विसरे बिनु पिर कितै न लेखा ॥
इहु कापड़ु तनि न सुखावई करि न सकउ हउ वेसा ॥
जिनी सखी लालु राविआ पिआरा तिन आगै हम आदेसा ॥३॥
मै सभि सीगार बणाइआ अंमाली बिनु पिर कामि न आए ॥
जा सहि बात न पुछीआ अंमाली ता बिरथा जोबनु सभु जाए ॥
धनु धनु ते सोहागणी अंमाली जिन सहु रहिआ समाए ॥
हउ वारिआ तिन सोहागणी अंमाली तिन के धोवा सद पाए ॥
जिचरु दूजा भरमु सा अंमाली तिचरु मै जाणिआ प्रभु दूरे ॥
जा मिलिआ पूरा सतिगुरू अंमाली ता आसा मनसा सभ पूरे ॥
मै सरब सुखा सुख पाइआ अंमाली पिरु सरब रहिआ भरपूरे ॥
जन नानक हरि रंगु माणिआ अंमाली गुर सतिगुर कै लगि पैरै ॥५॥१॥६॥

१. हे [illegible] । २. पीड़ा । ३. उदास, व्याकुल

चउबेले महला ५ ॥

संमन जउ इस प्रेम की दमक्यिहु होती साट ॥
रावन हुते सु रंक नहि जिनि सिर दीने काटि१ ॥ १॥
प्रीति प्रेम तनु खचि रहिआ बीचु न राई होत ॥
चरन कमल मनु बेधिओ बूझनु सुरति संजोग२ ॥ २॥
सागर मेर उदिआन बन नवखंड बसुधा भरम ॥
मूसन प्रेम पिरंम कै गनउ एक करि करम३ ॥ ३॥
मूसन मसकर प्रेम की रही जु अंबरु छाइ ॥
बीधे बांधे कमल महि भवर रहे लपटाइ४ ॥ ४॥
जप तप संजम हरख सुख मान महत अरु गरब ॥
मूसन निमखक प्रेम परि वारि वारि देंउ सरब५ ॥ ५॥
मूसन मरमु न, जानई मरत हिरत संसार ॥
प्रेम पिरंम न बेधिओ उरझिओ मिथ बिउहार६ ॥ ६॥
घबु दबु जब जारीऐ बिछुरत प्रेम बिहाल ॥
मूसन तब ही मूसीऐ बिसरत पुरख दइआल७ ॥ ७॥
जा को प्रेम सुआउ है चरन चितव मन माहि ॥
नानक बिरही ब्रहम के आन न कतहू जाहि८ ॥ ८॥
लख घाटीं ऊंचौ घनो चंचल चीत बिहाल ॥
नीच कीच निमृत घनी करनी कमल जमाल९ ॥ ९॥

१. गुरु साहिब फ़रमाते हैं कि अगर प्रेम मोल विकता हो तो सोने की लंका का मालिक रावण कोई कंगाल न था जिसने अपने गुरु को प्रसन्न करने के लिए दस बार अपना सिर काट कर भेंट किया। २. जिनका हृदय प्रेम से परिपूर्ण हो जाता है, उनका मन और उनकी आत्मा इस प्रकार हरि चरणों के साथ जुड़ जाते हैं (विंध जाते हैं) कि बीच में राई जितना भी अन्तर नहीं रहता। ३. प्रेमी अपने प्रियतम के मिलाप के मार्ग में आने वाले सागर, पर्वत, जंगल, बियाबान, नव-खण्ड तथा समस्त धरती की यात्रा तक को एक करम (पाँच फुट) के बराबर समझता है। ४. जिनके हृदय रूपी आकाश में प्रेम की सुगन्धि छा जाती है, वह भ्रमर के समान (बिना अपनी जान की परवाह किये) सदैव प्रेम में लिप्त रहते हैं। ५. जप-तप, सयम, धन-दौलत के अम्बार रत्ती भर प्रेम की तुलना में तुच्छ हैं। ६. परन्तु जिन मनुष्यों को प्रेम की महिमा का ज्ञान नहीं, वे अज्ञानी के झूठे व्यवहार में उलझे रहते हैं। ७. लोक, धन-दौलत, राजपाट, घरबार के छिन जाने पर विह्वल होते हैं, परन्तु दुखी तो परमेश्वर के प्रेम से वंचित हो जाने पर होना चाहिए। ८. जिनके हृदय में परमेश्वर के प्रेम की पीड़ा है, वे किसी दूसरी ओर नहीं देखते। ९. प्रेम के बिना मार्ग लाखों अगम्य घाटियों से भरा हुआ अति कठिन लगता है और मन चंचल बना रहता है; परन्तु प्रेम होने पर वह दूरी उसी प्रकार मिट जाती है जिस प्रकार कमल का फूल सूर्य से बहुत दूर होते हुए भी, नीच उत्पत्ति वाला होते हुए भी, कीचड़ और पानी के बीच रहते हुए भी सूर्य की किरणों को देखते ही अपने सम्पूर्ण जमाल में खिल उठता है।

कमल नैन अंजन सिआम चंद्रबदन चित चार ॥
मूसनु मगन मरंम सिउ खंड खंड करि हार[1] ॥१०॥
मगनु भइओ प्रिअ प्रेम सिउ सूध न सिमरत अंग ॥
प्रगटि भइओ सभ लोअ महि नानक अधम पतंग[2] ॥११॥

रागु आसा महला १ ॥

सभि जप सभि तप सभ चतुराई ॥ ऊझड़ि भरमै राहि न पाई ॥
बिनु बूझे को थाइ न पाई ॥ नाम बिहूणैं माथे छाई ॥१॥
साच धणी जगु आइ बिनासा ॥ छूटसि प्राणी गुरमुखि दासा ॥१॥रहाउ॥
जगु मोहि बाधा बहुती आसा ॥ गुरमती इकि भए उदासा ॥
अंतरि नामु कमलु परगासा ॥ तिन्ह कउ नाही जम की त्रासा[3] ॥२॥
जग त्रिअ जितु कामणि हितकारी ॥ पुत्र कलत्र लगि नामु विसारी ॥
बिरथा जनमु गवाइआ बाजी हारी ॥ सतिगुरु सेवे करणी सारी ॥३॥
बाहरहु हउमै कहै कहाए ॥ अंदरहु मुकतु लेपु कदे न लाए ॥
माइआ मोहु गुर सबदि जलाए ॥ निरमल नामु सद हिरदै धिआए ॥४॥
धावतु राखै ठाकि रहाए ॥ सिख संगति करमि मिलाए ॥
गुर बिनु भूलो आवै जाए ॥ नदरि करे संजोगि मिलाए ॥५॥
रूड़ो कहउ न कहिआ जाई ॥ अकथ कथउ नह कीमति पाई ॥
सभ दुख तेरे सूख रजाई ॥ सभि दुख मेटे साचै नाई ॥६॥
कर बिनु वाजा पग बिनु ताला ॥ जे सबदु बुझै तां सचु निहाला ॥
अंतरि साचु सभे सुख नाला ॥ नदरि करे राखै रखवाला ॥७॥
त्रिभवण सूझै आपु गवावै ॥ बाणी बूझै सचि समावै ॥
सबदु वीचारे एक लिवतारा ॥ नानक धंनु सवारणहारा ॥८॥२॥

मारू महला १ ॥

सरणि परे गुरदेव तुमारी ॥ तू समरथु दइआलु मुरारी ॥
तेरे चोज न जाणै कोई तू पूरा पुरखु बिधाता हे ॥ १॥
तू आदि जुगादि करहि प्रतिपाला ॥ घटि घटि रूपु अनूपु दइआला ॥
जिउ तुधु भावै तिवै चलावहि सभु तेरो कीआ कमाता हे ॥ २॥

१. सुरमे के साथ संवारे कमलनयन, चन्द्र के समान सुन्दर मुख तथा चावपूर्ण किया गया शृंगार आदि सब कुछ प्रेम की मगनता पर न्योछावर कर दो। २. जिनका हृदय प्रियतम के प्रेम में मग्न रहता है, उनको अपने आप की सुधि नहीं रहती, बल्कि पतंगे की भांति हीन जाति में जन्म लेकर भी ऐसे प्रेमी प्रेम के कारण सारे संसार में प्रसिद्ध हो जाते हैं। ३. भय, त्रास, सच्चा नाम।

अंतरि जोति भली जग जीवन ।। सभि घट भोगै हरि रसु पीवन ।।
आपे लेवै आपे देवै तिहु लोई जगत पित दाता हे ।। ३।।
जगतु उपाइ खेलु रचाइआ ।। पवणै पाणी अगनी जीउ पाइआ ।।
देही नगरी नउ दरवाजे सो दसवा गुपतु रहाता हे ।। ४।।
चारि नदी अगनी असराला ।। कोई गुरमुखि बूझै सबदि निराला ।।
साकत दुरमति डूबहि दाझहि गुरि राखे हरि लिव राता हे ।। ५।।
अपु तेजु वाइ पृथमी आकासा[1] ।। तिन महि पंच ततु घरि वासा ।।
सतिगुर सबदि रहहि रंगि राता तजि माइआ हउमै भ्राता हे ।। ६।।
इहु मनु भीजै सबदि पतीजै ।। बिनु नावै किआ टेक टिकीजै ।।
अंतरि चोरु मुहै घरु मंदरु इनि साकति दूतु न जाता हे ।। ७।।
दुंदर[2] दूत भूत भीहाले ।। खिंचोताणि करहि बेताले ।।
सबद सुरति बिनु आवै जावै पति खोई आवत जाता हे ।। ८।।
कूड़ु कलरु तनु भसमै ढेरी ।। बिनु नावै कैसी पति तेरी ।।
बाधे मुकति नाही जुग चारे ।। जम कंकरि कालि पराता हे ।। ९।।
जम दरि बाधे मिलहि सजाई ।। तिसु अपराधी गति नही काई ।।
करण पलाव करे बिललावै जिउ कुंडी मीनु पराता हे[3] ।।१०।।
साकतु फासी पड़ै इकेला ।। जम वसि कीआ अंधु दुहेला ।।
राम नाम बिनु मुकति न सूझै आजु कालि पचि जाता हे ।।११।।
सतिगुर बाझु न बेली कोई ।। ऐथै ओथै राखा प्रभु सोई ।।
राम नामु देवै करि किरपा इउ सललै सलल मिलाता हे ।।१२।।
भूले सिख गुरू समझाए ।। उझड़ि जादे मारगि पाए ।।
तिसु गुर सेवि सदा दिनु राती दुख भंजन संगि सखाता हे ।।१३।।
गुर की भगति करहि किआ प्राणी ।। ब्रहमै इंद्र महेसि न जाणी ।।
सतिगुरु अलखु कहहु किउ लखीऐ जिसु बखसे तिसहि पछाता हे ।।१४।।
अंतरि प्रेमु परापति दरसनु ।। गुरबाणी सिउ प्रीति सुपरसनु ।।
अहिनिसि[4] निरमल जोति सबाई घटि दीपकु गुरमुखि जाता हे ।।१५।।
भोजन गिआनु महा रसु मीठा ।।जिनि चाखिआ तिनि दरसनु डीठा ।।
दरसनु देखि मिले बैरागी मनु मनसा मारि समाता हे ।।१६।।
सतिगुरु सेवहि से परधाना ।। तिन घट घट अंतरि ब्रहमु पछाना ।।
नानक हरि जसु हरिजन की संगति दीजै जिन सतिगुरु हरिप्रभु जाता हे ।।१७।।५।।

१. जल, अग्नि, वायु, पृथ्वी और आकाश । २. झगड़ालू । ३. कुंडी में फंसी मछली की भांति तड़पता है । ४. दिन-रात ।

रागु गउड़ी महला ५ ॥

सुणि सखीए मिलि उदमु करेहा मनाइ लैहि हरि कंतै ॥
मानु तिआगि करि भगति ठगउरी मोहह साधू मंतै ॥
सखी वसि आइआ फिरि छोडि न जाई इह रीति भली भगवंतै ॥
नानक जरा मरण भै नरक निवारै पुनीत करै तिसु जंतै ॥१॥
सुणि सखीए इह भली बिनंती एहु मतांतु पकाईऐ ॥
सहजि सुभाइ उपाधि रहत होइ गीत गोविंदहि गाईऐ ॥
कलि कलेस मिटहि भ्रम नासहि मनिचिंदिआ फलु पाईऐ ॥
पारब्रहम पूरन परमेसर नानक नामु धिआईऐ ॥२॥
सखी इछ करी नित सुख मनाई प्रभ मेरी आस पुजाए ॥
चरन पिआसी दरस बैरागनि पेखउ थान सबाए ॥
खोजि लहउ हरि संत जना संगु संम्रिथ पुरख मिलाइ ॥
नानक तिन मिलिआ सुरिजनु सुखदाता से वडभागी माए ॥३॥
सखी नालि वसा अपुने नाह पिआरे मेरा मनु तनु हरि संगि हिलिआ ॥
सुणि सखीए मेरी नीद भली मै आपनड़ा पिरु मिलिआ ॥
भ्रमु खोइओ साँति सहजि सुआमी परगासु भइआ कउलु खिलिआ ॥
वरु पाइआ प्रभु अतरिजामी नानक सोहागु न टलिआ ॥४॥२॥५॥११॥

सिरी रागु महला ३ ॥

सुणि सुणि काम गहेलीए किआ चलहि बाह लुडाइ ॥
आपणा पिरु न पछाणहि किआ मुहु देसहि जाइ[1] ॥
जिनी सखी कंतु पछाणिआ हउ तिन कै लागउ पाइ ॥
तिनही जैसी थी रहा सतसंगति मेलि मिलाइ ॥१॥
मुंधे कूड़ि मुठी कूड़िआरि ॥
पिरु प्रभु साचा सोहणा पाईऐ गुर बीचारि ॥१॥रहाउ॥
मनमुखि कंतु न पछाणई तिन किउ रैणि विहाइ ॥
गरबि अटीआ तृसना जलहि[2] दुखु पावहि दूजै भाइ ॥
सबदि रतीआ सोहागणी तिन विचहु हउमै जाइ ॥
सदा पिरु रावहि आपणा तिना सुखे सुखि विहाइ ॥२॥

---

१. सांसारिक कार्यों में बुरी तरह लिप्त जीवात्मा को संबोधित करते हुए कहते हैं—हे कामिनी ! तू क्या मस्ती में बाहें हिला हिलाकर चलती है ? तूने अपने प्रियतम को नहीं पहचाना, आगे जाकर क्या मुँह दिखाएगी ? २. (मनमुख आत्मा) अहंकार की भरी हुई तृष्णा की अग्नि में जलती है ।

गिश्रान विहूणी पिर मुतीथा पिरमु न पाइश्रा जाइ१ ॥
श्रगिश्रान मती श्रंधेरु है बिनु पिर देखे भुख न जाइ ॥
श्रावहु मिलहु सहेलीहो मै पिरु देहु मिलाइ ॥
पूरै भागि सतिगुरु मिलै पिरु पाइश्रा सचि समाइ ॥३॥
से सहीश्रा सोहागणी जिन कउ नदरि करेइ ॥
खसमु पछाणहि श्रापणा तनु मनु श्रागै देइ ॥
घरि वरु पाइश्रा श्रपणा हउमैं दूरि करेइ ॥
नानक सोभावंतीश्रा सोहागणी श्रनदिनु भगति करेइ ॥४॥२८॥६१॥

रागु सोरठि महला ५ ॥

हम संतन की रेनु पिश्रारे हम संतन की सरणा ॥
संत हमारी श्रोट सताणी संत हमारा गहणा ॥१॥
हम संतन सिउ बणि श्राई ॥ पूरबि लिखिश्रा पाई ॥
इहु मनु तेरा भाई ॥ रहाउ ॥
संतन सिउ मेरी लेवा देवी संतन सिउ बिउहारा ॥
संतन सिउ हम लाहा खाटिश्रा हरि भगति भरे भंडारा ॥२॥
संतन मो कउ पूंजी सउपी तउ उतरिश्रा मन का धोखा ॥
धरमराइ श्रब कहा करैगो जउ फाटिश्रो सगलो लेखा ॥३॥
महा श्रनंद भए सुखु पाइश्रा संतन कै परसादे ॥
कहु नानक हरि सिउ मनु मानिश्रा रंगि रते बिसमादे ॥४॥८॥१९॥

रागु गोंड महला ४ ॥

हरि दरसन कउ मेरा मनु बहु तपतै जिउ तृखावंतु बिनु नीर ॥
मेरै मनि प्रेमु लगो हरि तीर ॥
हमरी बेदन हरि प्रभु जानै मेरे मन श्रंतर की पीर ॥१॥रहाउ॥
मेरे हरि प्रीतम की कोई बात सुनावै सो भाई सो मेरा बीर ॥२॥
मिलु मिलु सखी गुण कहु मेरे प्रभ के ले सतिगुर की मति धीर ॥३॥
जन नानक की हरि श्रास पुजावहु हरि दरसनि साँति सरीर ॥४॥६॥छका१

१. अज्ञानी नारियां अपने प्रियतम से बिछुड़ी हुई हैं उनको प्रेम की सार नहीं होती।

गउड़ी की वार महला ४ ।।

होदै परतखि गुरू जो विछुड़े तिन कउ दरि ढोई नाही[1] ।।
कोई जाइ मिलै तिन निंदका मुह फिके थुक थुक मुहि पाही ।।
जो सतिगुरि फिटके से सभ जगति फिटके नित भंभल भूसे खाही[2] ।।
जिन गुरु गोपिआ आपणा से लैदे ढहा फिराही[3] ।।
तिन की भुख कदे न उतरै नित भुखा भुख कूकाही ।।
ओन्हा दा आखिआ को ना सुणै नित हउले हउलि मराही ।।
सतिगुरि की वडिआई वेखि न सकनी ओन्हा अगै पिछै थाउ नाही[4] ।।
जो सतिगुरि मारे तिन जाए मिलहि रहदी खुहदी सभ पति गवाही ।।
ओइ अगै कुसटी गुर के फिटके जि ओसु मिलै तिसु कुसटु उठाही[5] ।।
हरि तिन का दरसनु ना करहु जो दूजै भाइ चितु लाही ।।
धुरि करतै आपि लिखि पाइआ तिसु नालि किहु चारा नाही ।।
जन नानक नामु अराधि तू तिसु अपड़ि को न सकाही ।।
नावै की वडिआऊ वडी है नित सवाई चड़ै चड़ाही ।।२।।

१. जो सतगुरु के प्रत्यक्ष होने पर भी उससे विमुख रहते हैं, उनको दरगाह में सहारा नहीं मिलता। २. सतगुरु के धिक्कारे हुए जीवों को सारा संसार धिक्कारता है। उनको मार्ग नहीं मिलता तथा सदैव डाँवाडोल फिरते हैं। ३. जो अपना सतगुरु छिपा कर रखते हैं उनको कहीं आसरा नहीं मिलता। ४. जो सतगुरु से ईर्ष्या करते हैं, उनको कहीं भी स्थान नहीं मिलता। ५. वे कोढ़ी हैं तथा उनसे मेल-मिलाप रखने वाले भी कोढ़ी बनते हैं।

तुलसी साहिब के शब्द

मरने के समय सुरत कैसे खिचती है और संत अपनी शरणागत सुरत की कैसे रक्षा करते हैं।

॥ चौपाई ॥

संत जीव की विपति छुड़ावें। कर्मी जीव जक्त को चावें ॥
याको फल चौरासी माहीं। भिन्न भिन्न तोहि कहूं सुनाई ॥
जब जीवनि करि देह दरसाऊं। वोहि समय की समझ सुनाऊं ॥
निकरि जीव तन छूटे भाई। जब की बातें कहूं बुझाई ॥
सिमटि अकास भास जब जावे। जब नाड़ी में सीत समावे ॥
जस रबि अस्त होये अंधियारा। प्रान पती तन धुक धुक धारा ॥
जम रबि भास गये उजियासी। धुक धुक प्रान बसे तन बासी ॥
निकसे स्वांस भास कून प्राना। येरे सिमटि कहो कहां समाना ॥
जो वो ठांव जौन से ठाइं। दसवां द्वार ब्रह्म के माहीं ॥
सूरज ब्रह्म द्वार दस माहीं। उन से किरन अंड में आई ॥
किरन पांच तत प्रान कहाया। तत मिलि पांच अकास जगाया ॥
आतम सब में भास प्रकासा। सोई भास किया तन बासा ॥
मारग भास जोई मग आया। तरक तालुवे राह समाया ॥
ज्यों प्रतिबिंब पड़े जल जाई। ऐसे भास नाभ के माहीं ॥
नाभ तेज तन माहिं समाना। रोमहि रोम बदन में जाना ॥
भास तेज चेतन भई काया। यहि भीतर में बरनि बताया ॥
जिन घट सैल करी काया की। भीतर भेद कहै जोई भाखी ॥
ऊपर की कहनी नहिं मानूं। अंदर उदय होय घट भानू ॥

॥ दोहा ॥

अंदर भानु उदै बिना, भीतर की का कहेन।
बैन बचन झूंठे कहे, बिना अंदर नहिं ऐन ॥

॥ चौपाई ॥

ब्रह्म जीव कून प्रान कहाया। यह काया में भाखि बताया ॥
ठीक ठौर अरु ठाम ठिकाना। अंदर कोई परखि पहिचाना ॥
यह सब बैन बदन में भाखी। सुनकरि साध देइंगे साखी ॥
निकरे प्रान बदन से जावे। जाहि समय की संत सुनावें ॥

जा का अब दृस्टांत सुनाऊँ। नकल माहिं मैं असल दिखाऊँ ॥
जैसे पतंग गगन चढ़ि जावे। डोरी देत देत बढ़ि जावे ॥
जब डोरी वह खैंचि खिलाड़ी। खैंचि डोरि भूमी पर डारी ॥
सिमटी डोरि किया उन पिंडा। यहि बिधि सुरति खिचै ब्रह्मंडा ॥
रोम रोम से तेज खिचाना। सिमटि सिमटि नाभी में आना ॥
नाभि तेज से भास उठाया। जब तन मद्ध तालुवे आया ॥
तालुवे से जब डोरि खिचानी। जब तत पाँच अंड में आनी ॥
खैंचे डोरि प्रान इँचि आवे। काल कान पर आसन लावे ॥
काल कान के मारग लाई। या बिधि तन के माहिं समाई ॥
जब वा डोरि को पकड़े जाई। संत सुरति की बैठक वाही ॥
वहीं सतगुरु की बैठक पासा। डोरि छांड़ि होई काल निरासा ॥
प्रानी सतगुरु की सुधि लावे। डोरी छाँड़ि काल अलगावे ॥
जो सतगुरु सुधि बिसरे भाई। जबहिं काल घर बजत बधाई ॥
जिनके हृदय संत लौ लागी। सतगुरु साँच प्रीति अनुरागी ॥
जिनके काल निकट नहिं आवे। डोरि छाँड़ि के दूर परावे ॥
काल ठिकाने अपने आवे। सूरति में सूरति लिपटावे ॥
अपनी सुरति सुरति में डाली। ज्यों बंसी मच्छी खिचि चाली ॥
बंसी में मच्छी खिंचि आवे। ज्यों सतगुरु में सुरति समावे ॥
सुरति डोरि पोढ़ मजबूती। जबहिं काल सिर मारे जूती ॥

॥ दोहा ॥

सुरति डोरि सतगुरु गहे, रहे चरन के माहिं ॥
सुन्न सुरति सब्दै मिली, डोरी डोरि समाय ॥
काल रहा झख मारि के, गयो जो दावा चूक ॥
निर्मल होइ आगे चले, कर्म काल मुख थूक ॥

॥ चौपाई ॥

जे सतगुरु सज्जन अनुरागी। संत चरन सूरति बडभागी।
कहुँ उनका यहि यों बरतंता। सुरति बसे सरन में संता ॥
जो कोई ऐसी लगन लगावे। सो सूरति सतगुरु में आवे ॥
वार काल जहँ बसे ठिकाना। काल पार सतगुरु का थाना ॥
जेहि के मद्ध सूरति का बासा। सज्जन जो कोइ करे निवासा ॥
अष्ट कंवल पखड़ी दल माहीं। जो जेहि आस रहे जहँ जाई ॥
काल स्याम के बीच रहाई। सेत सुरति सतगुरु की भाई ॥

बूझे यहि कोइ समझ लखावे। याकी बूझ समझ कोइ पावे ॥
या में जिव का लगे ठिकाना। यह मारग सज्जन का जाना ॥

॥ सोरठा ॥

नैन स्याम सेत के, मद्ध सुरति की लाग।
जो जैसे सतगुरु मिले, तैसे तिन के भाग ॥

॥ चौपाई ॥

जो सूरति सतगुरु को चाही। जैसी डोरी ऊँट की नाई ॥
जैसे ऊँट अगाड़ी जावे। सब करतार पीछे चलि आवे।
बाँधि डोरि पूँछि के माहों। सब कतार पीछे चलि आई ॥
सतगुरु सूरति मूल ठिकाने। ज्यों करतार जिव सूरति समाने ॥
जो सूरति सतगुरु दृढ़ लावे। सुनु हिरदे वहि वही समावे ॥
यही भाँति से चले न दावा। और भाँति सब मार गिरावा ॥
तप संजम जोगी बहु पाले। ये मारग में भये बिहाले ॥
जो कोई समझ करे यह लेखा। बिन सतगुरु नहिं मिले बिवेका ॥

॥ दोहा ॥

ज्यों करतार रहे ऊंट की, अगले ऊंट बंधाय ॥
यों सूरति सतगुरु कहें, सब जिव वहीं समाय ॥

(हिरदे वाच) ॥ चौपाई ॥

यह स्वामी सज्जन की बाता। यहि बिधि भाखैं सभी सनाथा ॥
सभ संतन की देखी बानी। सब ने कही बिमल मति छानी ॥
अब वह मोको भेद बताओ। करमी जीव काल को दावो ॥
सज्जन का भाखा निरबारा। करमी जीव काल को जारा ॥
उनके प्रान कहाँ होइ जाई। कहो स्वामी मोहिं बरनि सुनाई ॥
काल घाट रोके केहि द्वारे। सभ जीवन को खाय बिडारे ॥
कौन राह से जीव नसावे। कैसे सकल जगत को खावे ॥
यह तन में केहि भाँति समावे। बदन बीच वह क्योंकर आवे ॥

॥ दोहा ॥

प्रान निकारे आय के, घेरे घट के माहिं।
एक जीव बाचे नहीं, धर धर सबको खाय ॥

॥ चौपाई ॥

करता कौन जीव का होई। बिन जाने जग जाय बिगोई ॥
कहँ से आय कौन उपजाया। क्योंकर देह धरी जग काया ॥

पांच तत तन रहा बंधाई। उपजि मरे चौरासी माहीं ॥
या को सब यहि सबब सुनावो। स्वामी यह धोखा दरसावो ॥
पत मत हीन दीन हौं दासा। चरन कंवल की निस दिन आसा ॥
और आस बिस्वास न आवे। निस दिन सूरति चरन समावे ॥
ज्ञान बिबेक एक नहिं जानी। ऊपर चरन सूरति कुरबानी ॥
दिल दृढ़ मेहर सरन में होई। चित संसय मेटो प्रभु सोई ॥

॥ दोहा ॥

दिल दुबिधा मोरे भई, स्वामी सरन तुम्हार।
जार जक्त कैसे पड़े, कैसे जीव उबार ॥

॥ चौपाई ॥

काल बली परचंड कहावे। या से जीव बचन नहिं पावे ॥
छल बल दांव करे कई भांती। करे कोप जिव पर दिन राती ॥
नहिं कोई ठौर बचन जिव पावे। जहां जाय तहं जाय समावै ॥
स्वर्ग मिर्त्त पाताल न बाचे। को है जाबर सरन जेहिं याचे ॥
भटकत फिरे जुगन के माहीं। काल बली से पार न पाई ॥
यह कइ दांव लगावे फंदा। कर्मी जीव जक्त का अंधा ॥
मारे जो जोरावर कोई। ज़बर संग कछु जोर न होई ॥
काल बड़ा बरियार कहावे। बिकट बिपति करि जीव सतावे ॥

॥ दोहा ॥

काल ज़बर जुलमी बड़ा, खड़ा रहे मैदान।
कर कमान खैंचे फिरे, मारे गोसा तान ॥

॥ चौपाई ॥

ज्यों बन भेड़ी सिंघ अहारा। जैसे जीव काल का चारा ॥
डाके सिंघ भेड़ के माहीं। ऐसे डाक काल जिव खाई ॥
यह स्वामी मोहिं कहो बुझाई। कौन चरित्तर काल कसाई ॥
या की कर कूंची बतलाओ। भिन्न भिन्न कहि कर समझाओ ॥
केहि बिधि जाय जीव को घेरे। केहि मारग से सूरति फेरे ॥

[१०]

(जीव सत्-पुरुष का अंश)

हे हिरदे तोहिं आदि सुनाऊँ। जीव सुरति की संधि लखाऊँ ॥
चौथे महल पुरुष एक स्वामी। जीव अंस नहिं अन्तर जामी ॥

उन की अंस जीव जग आया। करता पाँच तत्त में लाया ॥

॥ दोहा ॥

करता ने काया रची, जुग जुग जग बिस्तार ॥
सार दियो बिसराय के, घर घर करत पुकार ॥

(कर्म काया का संग)

॥ चौपाई ॥

पिंड प्रधान बसे तन माहीं। करता ने काया उपजाई ॥
बेद पुरान कर्म उपराजा। यासे करे जीव जग काजा ॥
करता करम किया बिस्तारा। लख चौरासी रूप सँवारा ॥
काल अपर्बल जाल पसारा। उन सब घेरि जीव को मारा ॥
कर्म कलन्दर आप नचावे। बाजी लाय जीव भटकावे ॥
कई बंधन से बाँधे भाई। ऐसे बंध अनेक लगाई ॥
कोई दाँव नहिं मारग पावे। धरि धरि देही जन्म सिरावे ॥
चौरासी से निकरि न पावे। बार बार वहि माहिं समावे ॥

॥ दोहा ॥

कर्म सारनी बुधि बसी, सूरति रही अधीन।
आसा के बस में पड़ी, बासा बिपति मलीन ॥

॥ चौपाई ॥

कर्म अपरबल भारी भोगू। सब जग जार जबर यह रोगू ॥
बिना करम कोई काया नाहीं। जग बस रहा कर्म के माहीं ॥
काया बिना कर्म नहिं होई। कर्म बिना काया नहिं सोई ॥
यह अनादि से रचना भाई। जुगन जुगन ऐसे चलि आई ॥
कर्म भूत सब जग को लागा। यासे बची नहीं कोई जागा ॥
कीट पतंग संग सब केरे। तीन लोक अंडा सब घेरे ॥
सात दीप नव खंड कहावे। चौदह लोक कर्म बस गावे ॥
चन्द्र सूर अरु दस औतारा। यह सब बँधे कर्म की जारा ॥

॥ दोहा ॥

अंड खंड ब्रह्मण्ड लों, लोक सकल जग जाल ॥
काल कर्म सिर ऊपरे, जुग जुग फिरत बेहाल ॥

(काल के चरित्र)

॥ चौपाई ॥

अब यह काल चरित्र लखाऊँ। अंदर प्रान बसे जेहि ठाऊँ ॥
काया मद्धे काल सतावे। जब वह प्रान लेने को आवे ॥

सिमटत भास स्वाँस उठि जावे । प्रान पती जब सिमटि समावे ।।
भास अकास तत्त में जाई । तत्त अकास अंड के माहीं ।।
जब यह कर्म कला उपजावे । बुद्धि सुरति को आन दबावे ।।
मैली बुद्धि सुरति के माहीं । वही समय में जाय समाई ।।
कर्म अनुसार बसे मन आसा । सरति मन बुधि बंधन फाँसा ।।
सुनत अवाज़ स्याम सठ गाँसा । घर घुमरि लावे जहँ स्वाँसा ।।

।। दोहा ।।

कर्म सारनी बुधि बसैं, आसा बास निदान ।।
यह नव द्वारा पिंड में, निकसि जाय ज्यों प्रान ।।

।। चौपाई ।।

यह तो कर्म बुद्धि अनुसारा । अब सुनियो यह काल पसारा ।।
अष्ट कँवल दल अन्दर माहीं । ह्वाँ छिपि बैठा काल कसाई ।।
जब सब भास सिमटि करि आवे । जब सूरति पै बुद्धि पहुँचावे ।।
कँवल द्वार पखड़ी को रोके । उलटी सुरति काल मुख-सोखे ।।
काल दाढ़ में आन चबानी । जब ढरके नैनन से पानी ।।
लगे टकटकी दिखे न भाई । वाहि समय को करे सहाई ।।
जम के दूत घेर चहुं फेरा । निकसे प्रान छोड़ करि डेरा ।।

(जहाँ आसा तहाँ बासा)

कर्म सारनी बुद्धि कहाई । जहँ भइ आस बास जेहि माहीं ।।

।। दोहा ।।

कर्म आस की बास में, जोनि जोनि समाय ।
जो जैसी करनी करे, सो तैसे फल खाय ।।

(नरकों के दुःख)

।। चौपाई ।।

जम का जुलम जोर दरसाऊँ । मारग में जिव बिपति बताऊँ ।।
लोह के खंभ तपत के माहीं । जहाँ जीव को ले चिपटाई ।।
तड़प तड़प जिव जुलम दुखारी । तपत खंभ दुख उपजे भारी ।।
वाहि समय की कहा सुनाई । लोहा अगिन धमन धौंकाई ।।
ज्यों धम्मन से धौंकि लुहारा । लोहा जो अगिनि में डारा ।।
ऐसे कस्ट जले जिव भाई । वही समय की बिपति बताई ।।
पाया भोग सोग सोइ जाना । छटपट करे जीव बिलखाना ।।
अब नरकन का सुनो सुभावा । कर्मी जीव सहें दुख दावा ।।

।। दोहा ।।

कर्म्मी नरक निदान यह, पड़े जीव जब जाय ।।

सिर समैंत बूड़ा रहे, सदा नरक के माहिँ ॥

॥ चौपाई ॥

जबहि नर्क सिर ऊपर काढ़े । जिव ऊपर जूती जम मारे ॥
डूबा रहे नर्क के माहीं । सिर काढ़े जम मारे भाई ॥
कुम्भी नर्क कल्प लौं रहे बासा । मुख में नर्क नाक में स्वाँसा ॥
कई जुगन लौं रहे बिहाला । फिर अघोर नर्क लै डाला ॥
ह्वाँको कठिन भोग दुखदाई । तन सड़ि मरै उपजि वहि माहीं ॥
निकसि न होय कधी निरबारा । गाढ़े बंध बँधे चौधारा ॥
पापी जीव अधम है सोई । करम भोग भुगते जो कोई ॥
करनी कीन्ह मलीन बनाई । जिन की दसा भोग दरसाई ॥

॥ सोरठा ॥

नरक अनेकन और हैं, कहँ लग करूँ बयान ॥
दुख भुगते यह जीव ज्यों, जाने जो भोग समान ॥

(खानि योनि के कष्ट)

॥ चौपाई ॥

ये भुगताय बहुरि सुनु भाई । जोनी खानि जुलम दुखदाई ॥
खानि खानि का कहूँ निबेरा । लख चौरासी जीव बसेरा ॥
भवसागर जल भरा अथाही । अंडा जीव पड़े सब माहीं ॥
अंडा मद्धे जीव बिचारा । सो सब बहे चौरासी धारा ॥
धार धार का कहूं बिबेका । तो लिखने नहिं लागै लेखा ॥
हे हिरदे यह अद्‌भुत बाता । लख पावे नहिं करम बिधाता ॥
ब्रह्मा बासन गढ़ै कुम्हारा । वोहु पुनि कर्म जोग अनुसारा ॥
सिव जोगी भिच्छा में राजे । बिस्नु भोग बैकुंठ बिराजे ॥

॥ दोहा ॥

करम भोग अरु राग में, माया का बिस्तार ।
तीन त्रिया तीनों लई, कर्म जोग अनुसार ॥

॥ चौपाई ॥

यहि बिधि जक्त चलाई बाटा । इन भुलाय दीन्हा घर घाटा ॥
सब दुनिया मारग यहि लागी । भवसागर जिव भया अभागी ॥
जग में जीव करै ब्योहारा । घटी वढ़ी कछु नाहिं सिहारा ॥
आवागवन भया बिस्तारा । भवसागर यों जीव बिचारा ॥

(संत छाप के एक जीव ने नरक में पड़ कर सब नर्क वासियों का उद्धार किया)

अब वह कथा कहूं बिस्तारी। हिरदे सुनिये ज्ञान बिचारी ॥
संत छाप जेहि जिव पै लागी। कोई जिव भूलि गया अनुरागी ॥
कुसंगति से भूल समानी। जाकी कहूं सुनो सहदानी ॥
जो कदाचि नरक में जावे। सन्त जाय के जहाँ छुड़ावें ॥

॥ दोहा ॥

साह असामी पै करज, जाय लेइ जहँ होय।
ऐसे संत सुभाव को, परख लीजिये सोय ॥

॥ चौपाई ॥

माहर छाप के काज सिधावें। नरक माहिं वे जीव छुड़ावें ॥
अंगूठा बोरि नरक के माहिं। वहि तत्त-छिन में नरक सुखाई ॥
जोनी छूटि नरक से आवे। फिरि नर देही जोनि जड़ावे ॥
एक जीव कारन उपकारी। सब छूटे भये जीव सुखारी ॥
अब नानक की साख सुनाऊं। सोदर पौड़ी में समझाऊं ॥

(संत की अनूठी दया)

॥ दोहा ॥

धन धन राजा जनक है, जिन सुमिरन किया बिबेक।
एक घड़ी के सुमिरते, पापी तरे अनेक ॥
ऐसा सुमिरन जानि के, संत न पकड़ी टेक।
नानक सुमिरन सार है, बिसरे घड़ी न एक ॥

॥ चौपाई ॥

नानक जाय अँगूठा बोरा। नरक जीव के बंधन तोड़ा ॥
ऐसी साख समझ कोई बूझे। तिमिर जाय आँखी से सूझे ॥
साखी देन का कारन नाहीं। अँधे जीव भरम के माहीं ॥
जो बड़ भाग दया वे करई। तो कदाचि बँधन निरबरई ॥
जुग जुग भूले जीव अनेका। दया भाव सतगुरु से ठेका ॥
संत दया की रीति नियारी। बार बार चरनन पर वारी ॥
जो कछु करें करें सोई संता। संत बिना नहिं पावे पंथा ॥
सतगुरु सो जोइ राह बतावें। भूल को मारग दरसावे ॥

॥ दोहा ॥

सतगुरु संत दयाल से, कर्म रेख मिटि जाय।
मन तन सूरति साँच से ज्यों का त्यों रहि जाय ॥

। छंद ॥

हिरदे अजब वोहि रीति घर की संत से नाहीं बड़ी ।
जहँ लौं निगम कहे बाक बानी, सो सभी नीचे पड़ी ॥
आगे अगम बेअंत मारग, सुरति वहि जा कर अड़ी ।
जहँ लोक लखद अलोक लखि कर, गगन पर सूरति चढ़ी ॥
तक सूर सन्मुख दृस्टि धरि कर, नेह निसाने पै गड़ी ।
सूरति सिखर के पार होई कर, कँवल पखड़ी से कढ़ी ॥
चढ़ते पलक नहिं बार उनको, निमख नहिं लागे घड़ी ।
छोड़े सकल संग साथ सबको, फौज तजि पहुँची छड़ी ॥
सबको दिये छिटकाय करिके, सुरति सत मत से लड़ी ।
यहि भाँति साथ जड़ाव कुन्दन, नग अंगूठो ज्यों जड़ी ॥
अंदर अलख के पार पद में, पुरुष के आगे खड़ी ।
भयो मेल मिलन मिलाप पिव को, संत के सरने पड़ी ॥
सत पुरुष संत दयाल दिल ले, सुरति सज्जन की बड़ी ।
कैसे नरक दुख खानि में से काढ़ि लें वोही घड़ी ॥
ऐसे पुकारें साख सब कहें, संत की बातें बड़ी ।
सब सुन स्रवन पर हाथ डारे, संत पट खोलें कड़ी ॥

॥ दोहा ॥

संत सरन जो जिव रहे, गहे जो उनकी बाँह।
थाह बतावैं समुंद की, बल्ली भव जल माहिं ॥

॥ चौपाई ॥

ऐसे हिरदे संत मुभावा । भवजल पार लगावें थावा ॥
जहाज सुरति उनकी नित चाले । समुंदर पार भरावें माले ॥
भरती भरें सुरति की डोरी । पहुँचे पार जहाज को छोड़ी ॥
माल बिलायत में जा बेंचें । मेवा आनि खरीदी खेंचें ॥
जम्बू दीप मुलुक के माहीं । खलक माल को चीन्हे नाहीं ॥
गली गली में ले दरसावें । मेवा ल्यौ जो जिनको चावे ॥
बार बार कहि कर गोहरावें । कोई मेवा के पास न आवें ॥

देखे सुने समझ कर कहते । यह तो माल बड़ा कछु लेते ॥
भाव सुने पर मूड हिलावें । साँची मानि बहुरि नहिं आवें ॥

॥ दोहा ॥

तन मन से साँची कहैं, खरी खरी बतलान ।
पल्ले में डालैं जबै, खैंचै खूँट निदान ॥

॥ चौपाई ॥

कदर बिना नहिं माल बिकाना । संत दिसावर बड़ी न जाना ॥
मेवा मोल खरीदी नाहीं । वह सवाद कहो क्योंकर पाई ॥
देखे सुने खाय मुख माहीं । सो कीमत को जाने भाई ॥
लिया दिया देखा नहिं आँखी । वह कहा परख कहेंगे भाखी ॥
यह संतन का माल अगूढ़ा । सो का जाने जग मन मूढ़ा ॥
यह तौ नाज खरीदा चावे । धर गठरी सिर ऊपर लावे ॥
धड़ा पसेरी तोल पिछाने । यहि विधि माल संत का जाने ॥
गठरी बाँधि लेउँ सब सारी । यह जाने यों माल अनारी ॥

॥ सोरठा ॥

संत मता दुरलभ कहैं, सतसंग में गोहराय ॥
बड़े बड़े हारे सभी, संतन की गति गाय ॥

[११]

(अथ घट रामायण रचित परम सन्त तुलसी साहिब जी)

भेद पिण्ड और ब्राह्माण्ड का

सोरठा

सुति बुंद सिंध मिलाप, आप अधर चढ़ि चाखिया ।
भाखा भोर भियान, भेद भान गुरु सुति लखा ॥

॥ छन्द सुति सिंध ॥

सत सुरति समझि सिहार साधो । निरखि नित नैनन रहौ ॥
धुनि धधक धीर गँभीर मुरली । मरम मग मारग गहौ ॥१॥
सम सील लील अपील पेलै । खेल खुलि खुलि लखि परै ॥
नित नेम प्रेम पियार पिउ कर । सुरति सजि पल पल भरै ॥
धरि गगन डोरि अपोर परखै । पकरि पट पिउ पिउ करै ॥२॥
[illegible] जब सिर थुवा ॥

जहँ रूप रेख न भेष काया । मन न माया तन जुवा ॥३॥
अलि अंत मूल अतूल कँवला । फूल फिरि फिरि धरि धसै ॥
तुलसि तार निहार सूरति । सैल सत मत मन बसै ॥४॥

॥ छन्द २ ॥

हिये नैन सैन सुचैन सुन्दरि । साजि स्रुति पिउ पै चली ॥
गिर गवन गोह गुहारि मारग । चढ़त गढ़ गगना गली ॥१॥
जहँ ताल तट पट पार प्रीतम । परसि पद आगे अली ॥
घट घोर सोर सिहर सुनि के । सिंध सलिता जस मिली ॥२॥
जब ठाट घाट बैराट कीन्हा । मीन जल कँवला कली ॥
अली अस सिंध सिहार अपन । खलक लखि सुपना छली ॥३॥
अस सार पार सम्हारि सूरति । समझि जग जुग जुग जली ॥
गुरु ज्ञान ध्यान प्रमान पद बिन । भटकि तुलसी भौ मिली ॥४॥

॥ छन्द ३ ॥

अलि अधर धार निहारि निज कै । निकरि सिखर चढ़ावही ॥
जहँ गगन गंगा सुरति जमुना । जतन धार बहावही ॥१॥
जहँ पदम प्रेम प्रयाग सुरसरि । धुर गुरू गति गावही ॥
जहँ संत आस बिलास बेनी । बिमल अजब अन्हावही ॥२॥
कृत कुमति काग सुभाग कलिमल । कर्म धोइ बहावही ॥
हिये हेरि हरष निहारि घर कौ । पार हंस कहावही ॥३॥
मिलि तूल मूल अतूल स्वामी । धाम अबिचल बसि रही ॥
अलि आदि अंत बिचारि पद कौ । तुलसि तब पिव की भई ॥४॥

तुलसी दास जी के शब्द

(अथ तुलसी कृत रामायण—उत्तरकाण्ड)

॥ दोहा ॥

भगतिपच्छ हठ करि रहेउं, दीन्ह महाऋषि साप ॥
पुनि दुर्लभ बर पायउं, देखहु भजन प्रताप ॥

॥ चौपाई ॥

जे अास भगति जानि परिहरहीं । केवल ज्ञान हेतु स्रम करहीं ॥ १॥
ते जड़ कामधेनु गृह त्यागी । खोजत आक फिरहिं पय लागी ॥ २॥
सुनु खगेस हरिभगति बिहाई । जे सुख चाहहिं आन उपाई ॥ ३॥
ते जड़ महासिन्धु बिनु तरनी । पैरि पार चाहहि जड़ करनी ॥ ४॥
सुनि भुसुण्डि के बचन भवानी । बोलउ गरुड़ हर्षि मृदुबानी ॥ ५॥
तुव प्रसाद प्रभु मम उरमाहीं । संसय सोक मोह भ्रम नाही ॥ ६॥
सुनेउं पुनीत राम गुन ग्रामा । तुम्हरी कृपा लहउं बिसरामा ॥ ७॥
एक बात प्रभु पूछौं तोहीं । कहहु बुझाय कृपा निधि मोहीं ॥ ८॥
कहहिं सन्त मुनि बेद पुराना । नहिं कछु दुर्लभ ज्ञान समाना ॥ ९॥
सोइ मुनि तुम सन कहेउ गोसाईं । नहिं आदरेउ भगति की नाईं ॥१०॥
ज्ञानहिं भक्तिहिं अन्तर केता । सकल कहहु प्रभु कृपा निकेता ॥११॥
सुनि उरगारि बचन सुख माना । सादर बोलउ काग सुजाना ॥१२॥
ज्ञानहिं भगतिहिं नहिं कछु भेदा । उभय हरहिं भव संभव खेदा ॥१३॥
नाथ मुनीस कहहिं कछु अन्तर । सावधान होइ सुनु बिहंगबर ॥१४॥
ज्ञान बिराग जोग बिज्ञाना । यें सब पुरूष सुनहु हरियाना ॥१५॥
पुरूष प्रताप प्रबल सब भांती । अबला अबल सहज जड़ जाती ॥१६॥

॥ दोहा ॥

पुरुष त्यागि सक नारि कहं, जो बिरक्त मतिधीर ।
नतु कामी जो बिषय बस, बिमुख जे पद रघुबीर ॥१७९॥

॥ सोरठा ॥

सोइ मुनि ज्ञाननिधान, मृगनयनी बिधु मुख निरखि ।
बिकल होहिं हरियान, नारि बिस्व माया प्रगट ॥

इहां न पच्छपात कछु राखौं । बेद पुरान सन्त मत भाखौं ॥ १॥

मोह न नारि नारि के रूपा। पन्नगारि नीति अनूपा ॥ २॥
माया भगति सुनहु प्रभु दोऊ। नारि बर्ग जानै सब कोऊ ॥ ३॥
पुनि रघुबीरहिं भगति पियारी। माया खलु नर्तकी बिचारी ॥ ४॥
भगतिहिं सानुकूल रघुराया। ताते तेहिं डरपति अति माया ॥ ५॥
राम भगति निरूपम निरूपाधी। बसै जासु उर सदा अबाधी ॥ ६॥
तेहि बिलोकि माया सकुचाई। करि न सकै कछु निज प्रभुताई ॥ ७॥
अस बिचारि जे मुनि बिज्ञानी। जाचहिं भगति सकल गुन खानी ॥ ८॥

॥ दोहा ॥

यह रहस्य रघुनाथ कर, बेगि न जानै कोय।
जो जानै रघुपति कृपा, सपनेहु मोह न होय ॥१८०॥
औरौ ज्ञान अरू भगति कर, भेद सुनहु परबीन ॥
जो सुनि होय रामपद, प्रीति सदा अवछीन ॥१८१॥

सत्संग अनुक्रमणिका

हुज़ूर महाराज सावन सिंह जी, सरदार बहादुर जगत सिंह जी महाराज तथा हुज़ूर चरन सिंह जी महाराज द्वारा फ़रमाए गए और प्रकाशित सत्संगों की यह अनुक्रमणिका है । इसमें सत्संग में लिया गया शब्द, किस गुरु, संत महात्मा की वाणी या किस ग्रंथ में से यह शब्द लिया गया है, उसके विषय में विवरण दिया गया है । इसके साथ ही सत्संग फ़रमाने वाले संत-सत्गुरु और जिस पुस्तक में उनका यह सत्संग छपा है, उसका भी उल्लेख किया गया है ताकि अलग-अलग पुस्तकों में अलग-अलग शब्दों पर आधारित सत्संग ढूंढने में सुविधा हो सके :

१. सन्तमत प्रकाश — स.म.प्र.
२. सन्तमत दर्शन — स.म.द.
३. हुज़ूरी सत्संग — हु. सत्संग
४. सत्संग संग्रह — स. संग्रह
५. सत्संग आगरा में — स. आगरा में
६. रूहानी फूल — रू. फूल
७. सत्संग भक्ति महातम — स.भ.म.

शब्द	वाणी	सत्गुरु	पुस्तक
१. अमां ! मेरा दिल लगा	पलटू साहिब	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
२. अटक तू क्यों रहा जग में	सार बचन	म. चरन सिंह जी	सत्संग-४
३. अंतरि पिआस उठी प्रभ केरी	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-६
४. अनंद भइआ मेरी माए	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-५
५. अलह अगम खुदाई बंदे	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	सत्संग
६. अलह अगम खुदाई बंदे	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
७. असुर सघारण रामु हमारा	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-६
८. आज साज कर आरत लाई	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-५
९. आठ पहर निरखत रहै	पलटू साहिब	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
१०. आतम महि रामु राम	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
११. आतम महि रामु राम	आदि ग्रंथ	म. चरन सिंह जी	हु. सत्संग
१२. आदि निरंजनु प्रभु निरंकारा	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-४
१३. आदि निरंजनु प्रभु निरंकारा	आदि ग्रंथ	म. चरन सिंह जी	सत्संग-२१
१४. आप वञाए ता सभ	आदि ग्रंथ	म. चरन सिंह जी	सत्संग-१४
१५. आपे करता पुरखु विधाता	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-५
१६. आपे करता पुरख विधाता	आदि ग्रंथ	म. जगत सिंह जी	रू. फूल
१७. आमद नदाए बेचूं	शमस तबरेज	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-५
१८. आया मास अगहन अब छठा	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-३
१९. आशिके यारम मरा	ख्वाजा हाफिज	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-१
२०. आशिके यारम मरा	ख्वाजा हाफिज	म. सावन सिंह जी	स. संग्रह
२१. इसु गुफा महि अखुट भंडारा	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-२
२२. इसु गुफा महि अखुट भंडारा	आदि ग्रंथ	म. चरन सिंह जी	सत्संग-१३
२३. उलटा कूवा गगन में	पलटू साहिब	म. चरन सिंह जी	हु. सत्संग
२४. उलटा कूवा गगन में	पलटू साहिब	म. चरन सिंह जी	स.म.प्र.-१
२५. उलटा कवा गगन में	पलटू साहिब	म. चरनसिंह जी	सत्संग-६

२६. कर नैनों दीदार महल में प्यारा है	कबीर साहिब	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-१
२७. कर नैनों दीदार महल में प्यारा है	कबीर साहिब	म. सावन सिंह जी	सत्संग-संग्रह
२८. कर नैनों दीदार महल में प्यारा है	कबीर साहिब	म. सावन सिंह जी	सत्संग
२९. करमु होवै सतिगुरू मिलाए	आदि ग्रंथ	म. चरन सिंह जी	स.म.द.-२
३०. करमु होवै सतिगुरू मिलाए	आदि ग्रंथ	म. चरन सिंह जी	स. आगरा में
३१. करो री कोई सतसंग आज	सार बचन	म. चरन सिंह जी	सत्संग-९
३२. कहां लग कहूं कुटलता	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
३३. काइआ कंचनु सबदं	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
३४. काइआ कामणि अति	आदि ग्रंथ	म. चरन सिंह जी	सत्संग-२
३५. काइआ कामणि अति	आदि ग्रंथ	म. जगत सिंह जी	रू. फूल
३६. काइआ कामणि अति	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-१
३७. काइआ कामणि अति	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	सत्संग संग्रह
३८. कार्तिक मास पांचवां चला	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-३
३९. कामु क्रोधु परहरु पर निंदा	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-१
४०. कामु क्रोधु परहरु पर निंदा	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	सत्संग संग्रह
४१. कामी का गुरु कामिनी	कबीर साहिब	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-५
४२. काल ने जगत अजब	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-५
४३. काल ने जगत अजब	सार बचन	म. सावन सिंह जी	सत्संग
४४. क्यों फिरत भुलानी जगत में	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-६
४५. कि इशक आसान नाबद	ख्वाजा हाफिज	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-५
४६. किन बिधि मिलै गुसाईं	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
४७. किन बिधि मिलै गुसाईं	आदि ग्रंथ	म. चरन सिंह जी	सत्संग-१७
४८. किन बिधि मिलै गुसाईं	आदि ग्रंथ	म. चरन सिंह जी	हु. सत्संग
४९. किरति करम के वीछुड़े	आदि ग्रंथ	म. चरन सिंह जी	सत्संग-१५
५०. किरति करम के वीछुड़े	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-३
५१. क्वार महीना चौथा आया	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-३
५२. कुदरति करनैहार अपारा	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-६
५३. कोई आणि मिलावै मेरा	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-५
५४. कोमल चित्त दया मन धारो	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
५५. खोजत रही पिया पंथ	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-४
५६. गुन गोविंद गाइओ नही	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
५७. गुर की मूरति मन महि	आदि ग्रंथ	म. चरन सिंह जी	सत्संग-२७
५८. गुर चरन बसे अब मन में	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-४
५९. गुर परसादी वेखु तू	आदि ग्रंथ	म. चरन सिंह जी	सत्संग-२०
६०. गुरमुखि कृपा करे भगति	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
६१. गुर सतिगुर का जो सिख	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
६२. गुर सेवे सो ठाकुर जाने	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-४
६३. गुरु आन खिलाई घट में हाली	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-५
६४. गुरु आरत तू कर ले सजनी	सार बचन	म. जगत सिंह जी	रूहानी फूल
६५. गुरु क्यों न सम्हार	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-६
६६ गुरु क्यों न सम्हार	सार बचन	म. जगत सिंह जी	रूहानी फूल
६७. गुरु कहें खोल कर भाई	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-२

६८. गुरु कहें खोल कर भाई	सार बचन	म. चरन सिंह जी	स. आगरा
६९. गुरु कहें खोल कर भाई	सार बचन	म. चरन सिंह जी	स.म.द.-२
७०. गुरु कहें खोल कर भाई	सार बचन	म. चरन सिंह जी	सत्संग-२५
७१. गुरु कहें जगत सब अंधा	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-२
७२. गुरु का दरस तू देख री	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-५
७३. गुरु गोपालु गुरु गोविंदा	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-४
७४. गुरु चरन धूर कर अंजन	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-१
७५. गुरु चरन धूर कर अंजन	सार बचन	म. सावन सिंह जी	सत्संग संग्रह
७६. गुरु चरन पकड़ दृढ़ भाई	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-५
७७. गुरु परमेसर पूजीए	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-४
७८. गुरु मता अनोखा दरसा	सार बचन	म. जगत सिंह जी	रूहानी फूल
७९. गुरु मता अनोखा दरसा	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-६
८०. गुरु मेरे जान पिरान	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
८१. गुरु से लगन कठिन है भाई	कबीर साहिब	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-४
८२. गुरू का ध्यान कर प्यारे	सार बचन	म. चरन सिंह जी	सत्संग-२२
८३. गुरू का ध्यान कर प्यारे	सार बचन	म. चरन सिंह जी	हुज़ूरी सत्संग
८४. गुरू का ध्यान कर प्यारे	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-५
८५. गुरू गुरू गुरु करि मनमोर	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-२
८६. गुरू गुरू मैं हिरदे धरती	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-६
८७. गुरू मैं गुनहगार अति भारी	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
८८. गुरू मोहि अपना रूप दिखाओ	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-५
८९. गुरू सोई जो शब्द सनेही	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-४
९०. घर महि घरु देखाइ देइ	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-२
९१. घरि रहु रे मन मुगध	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-६
९२. घरै अंदरि सभु वथु है	आदि ग्रंथ	म. चरन सिंह जी	सत्संग-१९
९३. चरन गुरु हिरदे धार रही	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-४
९४. चरन भए संत बोहिथा	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
९५. चैत महीना आया चेत	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-३
९६. जग जीवनु साचा एको दाता	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-४
९७. जग जीवनु साचा एको दाता	आदि ग्रंथ	म. चरन सिंह जी	सत्संग-२८
९८. जगत भाव भय लज्जा छोड़ो	सार बचन	म. जगत सिंह जी	स.भ.म.
९९. जगत भाव भय लज्जा छोड़ो	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
१००. जग में घोर अंधेरा भारी	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-१
१०१. जग में घोर अंधेरा भारी	सार बचन	म. सावन सिंह जी	सत्संग संग्रह
१०२. जगि हउमै मैलु दुखु दुखू	आदि ग्रंथ	म. जगत सिंह जी	रूहानी फूल
१०३. जह देखा तह दीन दइआला	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-५
१०४. जा तू ता मैं सभु को	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-१
१०५. जा तू ता मैं सभु को	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	सत्संग संग्रह
१०६. जानै अंतरजामी	दादू साहिब	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-२
१०७. जिउ जननी सुतु जणि पालती	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-६
१०८. जिनि तुम भेजे तिनहि बुलाए	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-६
१०९. जिस जल निधि कारणि	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-४

१५२.	पंच सबद तह पूरन नादे	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-५
१५३.	परथम बन्दौं सतगुरु	तुलसी साहिब	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-४
१५४.	प्रथम आसाढ़ मास जग छाया	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-३
१५५.	पाठ पड़िओ अरु बेदु बीचारिओ	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-४
१५६.	पिया को खोजन मैं चली	पलटू साहिब	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
१५७.	पिंगलु परबत पारि परे	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
१५८.	पूस महीना जाड़ा भारी	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-३
१५९.	फागुन मास रंगीला	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-३
१६०.	बड़ा होय तेहि पूजिये	पलटू साहिब	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-१
१६१.	बड़ा होय तेहि पूजिये	पलटू साहिब	म. सावन सिंह जी	सत्संग संग्रह
१६२.	बिखु बोहिथा लादिआ	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-१
१६३.	बिखु बोहिथा लादिआ	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	सत्संग संग्रह
१६४.	बिखै बनु फीका तिआगि री	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-५
१६५.	बिंदु बिंदु सभ कोई कहे	प्राण संगली	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-६
१६६.	बिसरि गई सभ ताति पराई	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
१६७.	बैसाख महीना सिर पर आया	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-३
१६८.	भक्ति महात्म सुन मेरे भाई	सार बचन	म. जगत सिंह जी	स.भ.म.
१६९.	भगति पच्छ हठ करि रहेंउ	तुलसी दास	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-६
१७०.	भजन कर मगन रहो मन में	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-४
१७१.	भादों मास तीसरा जारी	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-३
१७२.	भूले मारगु जिनहि बताइआ	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-६
१७३.	मगन भई मेरी माई जी	पलटू साहिब	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
१७४.	मंत्रु कुचजी अंमावाणी	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-१
१७५.	मंत्रु कुचजी अमावाणी	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	सत्संग संग्रह
१७६.	मनमुखु लहरि घरु तजि विगूचै	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-४
१७७.	मन रे क्यों गुमान अब करना	सार बचन	म. चरन सिंह जी	सत्संग-१
१७८.	मन रे क्यों गुमान अब करना	सार बचन	म. चरन सिंह जी	स.म.द.-१
१७९.	मन रे क्यों गुमान अब करना	सार बचन	म. चरन सिंह जी	हजूरी सत्संग
१८०.	मन खिनुखिनु भरमि भरमि	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-६
१८१.	मनु मैगलु साकत देवाना	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-६
१८२.	माघ महीना अति रस भरा	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-३
१८३.	मित्र तेरा कोई नहीं	सार बचन	म. चरन सिंह जी	सत्संग-२ ४
१८४.	मिली नर देह यह तुमको	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-१
१८५.	मिली नर देह यह तुमको	सार बचन	म. सावन सिंह जी	सत्संग संग्रह
१८६.	मीठ बहुत सतनाम है	पलटू साहिब	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-६
१८७.	मेरे तन मन लग गई	पलटू साहिब	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
१८८.	मोती त मंदर ऊसरहि	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-५
१८९.	यह जग कोठी काठ की	कबीर साहिब	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-६
१९०.	यह तन दुर्लभ तुमने पाया	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-४
१९१.	यह तो घर है प्रेम का	पलटू साहिब	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-१
१९२.	यह तो घर है प्रेम का	पलटू साहिब	म. सावन सिंह जी	सत्संग संग्रह
१९३.	राधास्वामी धरा नर रूप जगत में	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-५

२३६. साहिब के दरबार में	पलटू साहिब	म. चरन सिंह जी	हुजूरी सत्संग
२३७ साहिब के दरबार में	पलटू साहिब	म. चरन सिंह जी	स.म.प्र.-१
२३८. सुमिरन से सुख होत है	कबीर साहिब	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-१
२३९. सुमिरन से सुख होत है	कबीर साहिब	म. सावन सिंह जी	सत्संग संग्रह
२४०. सुमिरन से सुख होत है	कबीर साहिब	म. सावन सिंह जी	सत्संग
२४१. सीस उतारे हाथ से	पलटू साहिब	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-६
२४२. सुणि सखीए मिलि उदामु	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
२४३. सुणि सुणि काम गहेलीए	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-६
२४४. सुन रे मन अनहद बैन	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-६
२४५. सुरत क्यों हुई दिवानी	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
२४६. सुरत बंद सत सिंध तज	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-५
२४७. सुति बुंद सिंध मिलाप	तुलसी साहिब	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-६
२४८. सु सबद का कहा वासु	गुरु नानक	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-५
२४९. सुरत सुन बात री	सार बचन	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
२५०. सुरत सुन बात री	सार बचन	म. चरन सिंह जी	सत्संग-३
२५१. सुरति देखि न भूलु गवारा	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
२५२. हंसनी क्यों पीर्व तू पानी	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
२५३. हंसनी छानो दूध और पानी	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
२५४. हम संतन की रेनु पिआरे	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-६
२५५. हरि कीआ कथा कहाणीआ	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-५
२५६. हरि की पूजा दुर्लभ है	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-४
२५७. हरि की पूजा दुर्लभ है	आदि ग्रंथ	म. चरन सिंह जी	स.म.द.-१
२५८. हरि धनु संचहु रेजन भाई	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-७
२५९. हुकमी सहजे सृसटि उपाई	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-५
२६०. हे हिरदे तोहि आदि सुनाऊं	तुलसी साहिब	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-१
२६१. हे हिरदे तोहि आदि सुनाऊं	तुलसी साहिब	म. सावन सिंह जी	सत्संग संग्रह
२६२. होदै परतखि गुरू जो विछुड़े	आदि ग्रंथ	म. सावन सिंह जी	स.म.प्र.-६

हमारे कुछ प्रकाशन

१. सार बचन छन्द बन्द (नज़म) — हुज़ूर स्वामीजी महाराज
२. सार बचन वार्तिक — " "
३. सार बचन संग्रह — " "
४. परमार्थी पत्र, भाग १ — हुज़ूर महाराज बाबा जैमलसिंह जी
५. अमृत वचन — " "
६. परमार्थी पत्र, भाग २ — हुज़ूर महाराज बाबा सावनसिंह जी
७. शब्द की महिमा के शब्द — " "
८. शब्द सार — " "
९. गुरुमत सिद्धान्त, भाग १ व २ — " "
१०. गुरुमत सिद्धान्त ८४ विषयों वाला — " "
११. परमार्थी साखियां — " "
१२. सत्संग-संग्रह — " "
१३. सन्त-मत प्रकाश, भाग १ से ७ — " "
१४. गुरुमत सार, भाग १ व २ — " "
१५. अमृत वचन — " "
१६. आत्म-ज्ञान — हुज़ूर सरदार बहादुर जगतसिंह जी महाराज
१७. रूहानी फूल — " "
१८. रूहानी गुलदस्ता — " "
१९. सन्तों की बानी — हुज़ूर महाराज चरनसिंह जी
२०. सन्त-मार्ग — " "
२१. सन्त-मत दर्शन, भाग १ से ३ — " "
२२. सत्संग १ से ३० — " "
२३. सन्त-संवाद, भाग १ व २ — " "
२४. हुज़ूरी सत्संग — " "

२५. सत्संग आगरा में (१९७८) — हुज़ूर महाराज चरनसिंह जी
२६. विनती और प्रार्थना के शब्द — ,, ,,
२७. रूहनी डायरी, भाग १ से ३ — रायसाहिब मुंशीराम
२८. धरती पर स्वर्ग — दीवान दरियाई लाल
२९. सन्त-समागम — ,, ,, ,,
३०. सन्त-सन्देश — श्रीमती शान्ति सेठी
३१. गुरुमत, भाग १ से ४ — श्री लेखराज पुरी
३२. अन्तर की आवाज़ — कर्नल सांडर्स
३३. नाम सिद्धान्त — डॉ० शंगारी, डॉ० 'खाक', डॉ० भण्डारी, डॉ० सहगल
३४. सन्त-मत विचार — डॉ० टी० आर० शंगारी व डॉ० के० एस० खाक
३५. हंसा हीरा मोती चुगना — स. संतोखसिंह, डॉ० टी० आर० शंगारी
३६. मेरा सतगुरु — डॉ० जूलियन पी० जानसन
३७. सन्त नामदेव जी — प्रो० पुरी, प्रो० सेठी
३८. गुरु नानक का रूहानी उपदेश — प्रो० जनक पुरी
३९. सन्त तुलसी साहिब जी — प्रो० जे० आर० तथा श्री वी० के० सेठी
४०. (i) सन्त दादू दयाल (ii) गुरु रविदास — डॉ० के० एन० उपाध्याय
४१. सन्त पलटू — श्री आइज़िक्लि
४२. मीरा-प्रेम दिवानी — श्री वीरेन्द्र सेठी
४३. साईं बुल्लेशाह — प्रो० जे० आर० पुरी, डॉ० टी० आर० शंगारी
४४. सन्त कबीर — श्री वीरेन्द्र सेठी
४५. सत्संग—'भक्ति महातम,' 'नाम मार्ग', 'नाम भक्ति और गुरु का महत्व', 'सन्त जीव की विपति छुड़ावै', 'सुमिरन से सुख होत है', 'कामु क्रोध परहरु पर निंदा', 'कर नैनों दीदार', 'अल्ला अगम खुदाइ बन्दे', 'नाम निर्णय करूँ भाई'।

ऊपर लिखी पुस्तकें हिन्दी, उर्दू, पंजाबी अंग्रेजी एवं अन्य भाषाओं में डेरा बुक स्टाल, ब्यास अथवा सत्संग-घरों से मिल सकती हैं।

Rs. 8.00